ЗАПИСКИ ОХОТНИКА

ИЗДАТЕЛЬСТВО
ЛИТЕРАТУРЫ НА ИНОСТРАННЫХ ЯЗЫКАХ
МОСКВА

शिकारी के शब्द-चित्र
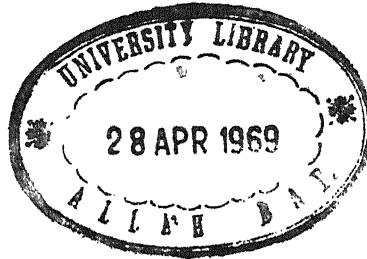
विदेशी भाषा प्रकाशन गृह

मास्को

अनुवादक : नरोत्तम नागर

विषय-सूची

पृष्ठ

खोर और कालीनिच

बोल्खोव ज़िले में से होकर जीज़्द्रा ज़िले में जाने का जिस किसी को भी मौक़ा मिला है, वह ओरेल प्रान्त में बसनेवाले लोगों और कालूगा प्रान्त की आबादी के बीच की भिन्नता को देखे बिना नहीं रह सकता। ओरेल के किसान का क़द छोटा है, बदन झुका हुआ और चेहरे से उदासी तथा शक टपकता है। ऐस्पन लकड़ी के बने छोटे छोटे मनहूस घरों में वह रहता है, और खेतों में बेगार के काम पर पसीना बहाता है। और किसी तरह का व्यापार नहीं करता। वह भूखे पेट रहता है और छाल की चप्पलें पहनता है। दूसरी तरफ़ कालूगा का लगान अदा करनेवाला किसान, चीढ़-वृक्ष की बनी चौड़ी-चकली झोंपड़ियों में रहता है. क़द का लम्बा, साहसी, प्रसन्न वदन है और चेहरा साफ़-सुथरा। मक्खन और तारकोल का व्यापार करता है, और छुट्टियों के दिन ऊंचे जूते पहनता है। ओरेल प्रान्त का गांव आम तौर पर जोते हुए खेतों के बीच, किसी खाई-खड्ड के किनारे, जो अब गन्दे पानी के जोहड़ का काम देता है, स्थित होता है (गबेर्निया के पूर्वी भाग का हम अब ज़िक्र कर रहे हैं)। गिने-चुने बेंत-वृक्षों और दो या तीन मरियल-से बर्च-वृक्षों के सिवा मील-भर के एटे-पेटे में कोई दूसरा पेड़ दिखाई नहीं देता। झोंपड़ियां एक-दूसरी से सटी और उनकी छतें गले-सड़े फूस से ढकी हुईं... इसके उलट कालूगा के गांव के इर्द-गिर्द, आम तौर पर चारों तरफ़ जंगल होते हैं। झोंपड़ियां एक-दूसरी से दूर दूर, अधिक पायदार और तख़्तों के पटाववाली होती

हैं; फाटक कसकर बंद होते हैं, टट्टर टूटे-फूटे और धूल चूमते नज़र नहीं आते। उनमें ऐसे छिद्र नहीं होते कि राह चलते सुअर अनायास भीतर घुस आयं... और शिकारी के लिए तो कालूगा प्रान्त कहीं अधिक अच्छा है। ओरेल प्रान्त में जंगल और झाड़ियों के बचे-खुचे अवशेष पांच साल के अन्दर ख़त्म हो जायेंगे, और दलदली इलाक़े का तो अब कोई निशान भी बाक़ी नहीं रहा। इसके प्रतिकूल, कालूगा में, दलदली इलाक़ा मीलों तक और जंगल सैकड़ों मीलों तक फैले हुए हैं। और वहां शिकार के लिए वह शानदार पक्षी, ग्राउज़ आज भी बड़ी तादाद में मिलता है। इसके अलावा एक और बढ़िया चाहा-पक्षी भी वहां बहुतायत में पाया जाता है, और जब तीतर ज़ोरों से पर फड़फड़ाता हुआ अचानक ऊपर की ओर उड़ान भरता है तो शिकारी और उसका कुत्ता चौंक उठते हैं और खुशी से फूले नहीं समाते।

शिकार की खोज में एक बार जब मैं जीज़्द्रा ज़िले में गया तो वहां खेतों में जाते हुए कालूगा प्रान्त के एक छोटे ज़मींदार से मेरी मुलाक़ात हुई और उससे परिचय हो गया। पोलुतीकिन उसका नाम था। उसे भी शिकार की धुन थी और इसी लिए ज़ाहिर है वह एक बहुत बढ़िया आदमी था। फिर भी उसमें कुछ कमज़ोरियां भी थीं। मिसाल के लिए वह प्रान्त की हर अविवाहित लड़की से जो किसी ज़मींदारी की उत्तराधिकारिणी होती विवाह का प्रस्ताव करता, और जब वह उसका प्रस्ताव ठुकरा देती और उसका घर पर भी आना बन्द कर देती तो वह, टूटे दिल अपने तमाम मित्रों और परिचितों के सामने अपना दुखड़ा रोता फिरता और बराबर उस युवती के सगे-संबंधियों को अपने बाग़ के खट्टे आड़ुओं तथा अन्य कच्चे फलों के तोहफ़े भेजता रहता। जब भी होता, बड़े चाव के साथ वह एक ही कहानी कहता। लेकिन, बावजूद इसके कि अपनी कहानी की ख़ूबियों पर वह स्वयं मुग्ध था, और किसी की उसमें रुचि न होती। अकीम नाखीमोव की कृतियों और 'पिन्ना' नामक

उपन्यास का वह प्रेमी था; बोलने में वह हकलाता था; अपने कुत्ते का नाम उसने नजूमी रख छोड़ा था; और 'तथापि' की जगह 'कदापि' कहा करता था। अपने घर में भोजन पकाने की उसने फ़ान्सीसी पद्धति स्थापित कर रखी थी, और उसके बावरची के कथनानुसार इस पद्धति की विशेषता यह है कि हर पदार्थ का असली ज़ायक़ा बदल जाता है। इस कला-कर्मी के हाथों का स्पर्श पाकर मांस से मछली का स्वाद आता था, मछली से कुकुरमुत्ते का, और सेंवइयों से बारूद का। रही सही कसर इस बात से पूरी हो जाती कि शोरबे में एक भी ऐसी गाजर न डाली जाती जिसने तुल्य चतुर्भुज या समलंब का आकार न धारण कर लिया होता। लेकिन, इन इक्की-दुक्की और मामूली-सी कमज़ोरियों को छोड़कर, मिस्टर पोलुतीकिन, जैसा कि हम कह चुके हैं, बहुत ही बढ़िया जीव था।

जान-पहचान के पहले ही दिन पोलुतीकिन ने मुझे रात को अपने घर ठहरने के लिए आमंत्रित किया।

"मेरा घर यहां से पांच-एक मील आगे है," उसने कहा, "पैदल जाने में काफ़ी दूर पड़ेगा। सो चलो, पहले खोर के यहां होते चलें।" (पाठक उसका हकलाना नज़रन्दाज़ करने के लिए मुझे क्षमा करेंगे।)

"खोर कौन है?"

"मेरा एक काश्तकार है। यहीं, एकदम पास रहता है।"

हम लोग उस ओर चल पड़े। जंगल के बीच एक ख़ूब साफ़ और जोते-बोये हिस्से में खोर का एकाकी घर खड़ा था। चीढ़ लकड़ी की बनी कई एक इमारतें थीं जो एक दूसरी के साथ तख़्तों के बाड़ों से जुड़ी हुई थीं। मुख्य इमारत के सामने पतली टेकों पर खड़ा एक द्वार-मण्डप फैला था। हम भीतर गये। बीस बरस का एक लम्बा और ख़ूबसूरत नौजवान हमें दिखाई पड़ा।

"अरे, फ़ेद्या! खोर घर पर है?" पोलुतीकिन ने पूछा।

"नहीं। खोर तो शहर चले गये हैं," मुसकराते और बर्फ़ जैसे सफ़ेद दांतों को झलकाते हुए लड़के ने जवाब दिया, "आपके लिए छोटी गाड़ी निकलवा दूं?"

"हां, मुनुवा, छोटी गाड़ी। और थोड़ी क्वास* भी लेते आओ।"

हमने घर में पांव रखा। दीवारों के साफ़-सुथरे तख़्तों पर सुज़्दल के घटिया छपे काग़ज़ का एक भी टुकड़ा नहीं था; एक कोने में, चांदी के चौखटेवाली बोझल देव-प्रतिमा के सामने, दिया जल रहा था। लीपा लकड़ी की बनी मेज़ को हाल ही में खरोंच खरोंचकर साफ़ किया गया था। खिड़कियों के चौखटों के जोड़ों और दरारों में न तो चपल गोबरैले इधर से उधर दौड़ते नज़र आते थे और न मनहूस तिलचट्टे दुबके दिखाई देते थे। लड़का देखते न देखते बढ़िया क्वास से भरा सफ़ेद रंग का बड़ा-सा बरतन, गेहूं की पावरोटी का एक मोटा और भारी-सा टुकड़ा और लकड़ी के कटोरे में नमक लगे एक दरजन खीरे लिये आ हाज़िर हुआ। इन सब चीज़ों को उसने मेज़ पर रख दिया और फिर, दरवाज़े से पीठ लगाये, मुस्कराता हुआ हमें देखने लगा। हम लोग अभी जलपान से निबट भी न पाये थे, कि चूं चूं करती गाड़ी दरवाज़े पर आ खड़ी हुई। हम लोग बाहर निकले। पन्द्रह बरस का एक लड़का—बाल घुंघराले और गाल गुलाबी—गाड़ीवान की जगह बैठा था और बड़ी मुश्किल से काली-सफ़ेद चित्तीवाले हृष्ट-पुष्ट घोड़े की रास थामे था। गाड़ी के इर्द-गिर्द हट्टे-कट्टे छः जवान खड़े थे, जो शकल-सूरत से एक-दूसरे से और फ़ेद्या से बहुत कुछ मिलते थे। "खोर के बेटे हैं ये सब," पोलुतीकिन ने कहा।

"सब खोरकी हैं," (अर्थात्, जंगली बिलाव—खोर—के बेटे), फ़ेद्या ने कहा। वह हमारे पीछे पीछे सीढ़ियों पर निकल आया था। "लेकिन इनके अलावा और भी हैं—पोताप जंगल में है, और सीदोर बूढ़े खोर के साथ शहर चला गया है। और देख वास्या," गाड़ीवान को

* रूस का एक पेय जो काली पावरोटी से तैयार किया जाता है।

सम्बोधन करते हुए उसने कहा, "हवा की तरह ले जाना, समझे? मालिक को ले जा रहा है। और देख, ज़्यादा मस्ताना नहीं, उबड़-खाबड़ राह-बाट में ज़रा संभलकर चलाना। ऐसा न हो कि गाड़ी उलट दे और मालिक के पेट में गड़बड़ हो जाय।" फ़ेद्या के वाक्-विलास पर अन्य खोरकी हंस पड़े। "नजूमी को उठाकर गाड़ी में बैठा दो!" पोलुतीकिन ने शान के साथ फ़रमान जारी किया। फ़ेद्या ने, रस लेते हुए नजूमी को जो ज़बर्दस्ती मुंह पर मुसकान लादे था, हवा में उठाकर गाड़ी की तलहटी में बिठा दिया। वास्या ने घोड़े की लगाम ढीली की। हम लोग चल पड़े।

"यह रहा मेरा हिसाब-घर," नीची छतवाले एक छोटे-से घर की ओर संकेत करते हुए सहसा पोलुतीकिन ने मुझसे कहा।

"अन्दर चलोगे न?"

"ज़रूर!"

"अब यहां काम नहीं होता," भीतर पांव रखते हुए उसने कहा, "फिर भी जगह देखने लायक़ है।"

हिसाब-घर में दो सूने-से कमरे थे। उसका रखवाला एक काना बूढ़ा था जो आंगन में से लपककर बाहर आया।

"कहो कैसे हो, मिन्याइच?" पोलुतीकिन ने कहा। "यह क्या बात है कि तुम पानी नहीं रखते?"

काना बूढ़ा कहीं लोप हो गया और तुरत पानी की एक बोतल तथा दो गिलास लिये आ पहुंचा।

"ज़रा चखकर देखो," पोलुतीकिन ने कहा, "यह हमारे झरने का लाजवाब पानी है।"

हम दोनों ने एक एक गिलास पानी पिया। बुढ़ऊ इस बीच नत-मुद्रा में खड़ा रहा।

"हां तो, मैं सोचता हूं अब चलें," मेरे नये मित्र ने कहा।

"इस हिसाब-घर में ही सौदागर अलिलूयेव के हाथों मैंने बड़े अच्छे दामों चार एकड़ जंगली ज़मीन बेची थी।"

हम लोग गाड़ी में बैठ गये और आध घंटे में ही गढ़ी के अहाते में आ पहुंचे।

"कृपा कर ज़रा यह तो बताइये," सांझ के भोजन के समय मैंने पोलुतीकिन से पूछा, "यह खोर आपके दूसरे काश्तकारों से अलग-थलग क्यों रहता है?"

"कारण यह है कि वह एक चतुर किसान है। पच्चीस साल पहले उसकी झोंपड़ी जला डाली गयी थी। सो वह मेरे स्वर्गीय पिता के सामने हाज़िर हुआ। 'मेरी अर्ज़ मंज़ूर हो, निकोलाई कुज़्मीच,' उसने कहा, 'मुझे अपने जंगल में दलदलवाले हिस्से पर बसने की इजाज़त दे दीजिये, मैं लगान अच्छा दूंगा।'

'लेकिन दलदली भूमि पर तुम क्यों बसना चाहते हो?'

'मेरी ऐसी ही कुछ इच्छा है। सिर्फ़, मेरे मालिक, निकोलाई कुज़्मीच, इतनी दया करना कि मुझसे मज़दूरी न करवाना, बल्कि जितना भी आप ठीक समझें, लगान नियत कर दें।'

'साल में पचास रूबल।'

'अच्छी बात है। मुझे मंज़ूर है।'

'लेकिन देखो, बक़ाया न चढ़ने पाये!'

'बेशक, बक़ाया नहीं चढ़ेगा।'

सो वह दलदली भूमि में बस गया, और तभी से लोग उसे खोर (अर्थात्, जंगली बिलाव) कहते हैं।"

"अच्छा। तो क्या वह काफ़ी अमीर हो गया है?" मैंने पूछा।

"हां, अमीर हो गया है। अब सौ रूबल का लगान देता है, पर मैं और भी बढ़ाऊंगा। कई दफ़े मैं उससे कह चुका हूं—'तुम अपनी आज़ादी ख़रीद लो, खोर, बहुत अच्छा रहेगा, आज़ादी ख़रीद लो...' लेकिन वह—काइयां कहीं का—कहता है कि यह उसके बूते का नहीं; उसके पास पैसा नहीं हैं, मगर यह कौन मानेगा..."

अगले दिन, सुबह की चाय के बाद ही, हम लोग फिर शिकार के लिए निकल पड़े। हम लोग गांव में से गुज़र रहे थे कि एक नीची झोंपड़ी के सामने पोलुतीकिन ने अपने कोचवान को रुक जाने को कहा और फिर ज़ोरों से हांक लगायी – "कालीनिच्च!"

"आया, मालिक, अभी आया!" आंगन में से आवाज़ आयी। "जूते कस रहा हूं।"

हम लोग टहलते हुए आगे बढ़े। क़रीब चालीस वर्ष की उम्र का एक आदमी गांव के छोर पर हमारे साथ आ मिला। क़द का लम्बा और छरहरा, और छोटा, पीछे की ओर झुका हुआ सिर। यही था कालीनिच। उसका ख़ुशमिजाज सांवला चेहरा, कुछ कुछ चेचक के हल्के दाग लिये, पहली नज़र में ही मुझे भला लगा। कालीनिच (जैसा कि मुझे बाद में मालूम हुआ) अपने मालिक के साथ हर रोज़ शिकार पर जाता था। कभी उसका थैला और कभी उसकी बन्दूक़ संभाले वह उसके साथ रहता था, वही टोह लगाता कि शिकार कहां मिलेगा, पानी लाकर देता, शिकार के लिए झोंपड़ियां बनाता, स्ट्राबेरी बटोरता, और गाड़ी के पीछे पीछे दौड़ता था। पोलुतीकिन उसके बिना एक क़दम भी नहीं बढ़ सकता था। कालीनिच बहुत ही ख़ुश और अत्यन्त कोमल मिज़ाज का आदमी था। हर घड़ी कोई धुन वह धीमी धीमी आवाज़ में गुनगुनाता रहता और लापरवाही के साथ अपने इर्द-गिर्द देखता रहता। वह कुछ बुदबुदाकर बोलता था, और बोलते वक़्त उसकी हल्की नीली आंखों में हंसी की चमक रहती। उसका हाथ आदतन उसकी मुख़्तसर-सी खूंटे-नुमा दाढ़ी को सहलाता रहता। वह तेज़ी से तो नहीं, लेकिन लम्बे डग भरता हुआ चलता था, टेक के लिए एक लम्बी पतली छड़ी पर थोड़ा झुकते हुए। दिन-भर में दो-एक बार वह मेरी ओर मुख़ातिब हुआ, और बिना किसी चाटुकारिता के मेरी सेवा में लगा रहा, लेकिन अपने मालिक की देखभाल वह ऐसे करता था जैसे वह कोई छोटा बच्चा हो। दोपहर के समय असह्य गर्मी

से घबराकर जब हम छांह के लिए उतावले हो उठे, तो वह हमें अपने मधुमक्खी-उद्यान में – जो ठीक जंगल के बीचोंबीच था – ले गया। कालीनिच ने हमारे लिए यहां एक नन्ही-सी झोंपड़ी के पट खोल दिये जिसके चारों तरफ़ सूखी और सुगंधित जड़ी-बूटियां लटक रही थीं। सूखी घास बिछाकर उसने हमें आराम से बैठा दिया और इसके बाद, अपने सिर पर जालीदार-सा एक झोला डाला, एक चाकू, छोटा-सा एक बरतन और जलती हुई एक खपची उठायी और हमारे लिए शहद का एकाध छत्ता [illegible] लाने के लिए चल दिया। ताज़ा और स्वच्छ, पारदर्शी शहद खाने के बाद हम लोगों ने झरने का पानी पिया और मधुमक्खियों की सुस्त भनभनाहट और पत्तों की सरसराहट के बीच निद्रा देवी की गोद में खो गये।

हवा के एक हल्के झोंके ने मुझे जगा दिया... मैंने अपनी आंखें खोलीं। कालीनिच पर मेरी नज़र पड़ी। अधखुले दरवाज़े की देहली पर बैठा वह चाकू से लकड़ी को छील छीलकर चम्मच बनाता रहा था। मैं बड़ी देर तक उसके चेहरे को जो मधुर और निर्मल था, मुग्ध भाव से देखता रहा। पोलुतीकिन की भी आंखें खुल गयीं। लेकिन हम एकदम उठ नहीं बैठे। इतनी दूर तक चलने और गहरी नींद के बाद, बिना हिले-डुले, सूखी घास पर पड़े रहना बड़ा सुखद लग रहा था। हाथ-पांवों और शरीर में विचित्र प्रकार की शिथिलता आ गयी थी। हमारे चेहरे गर्मी के कारण लाल हो रहे थे और आंखें मधुर अलसाहट से मुंदी हुई थीं। आख़िर हम लोग उठ खड़े हुए और सांझ तक के लिए फिर घूमने निकल पड़े। ब्यालू के समय मैंने फिर खोर और कालीनिच की चर्चा छेड़ दी।

"कालीनिच भला किसान है," पोलुतीकिन ने बताया, "बड़ा फ़रमानबरदार और काम आनेवाला। लेकिन वह अपनी ज़मीन पर ढंग से काश्त नहीं कर पाता। मैं हमेशा उसे वहां से खींचता रहता हूं। हर

रोज़ वह मेरे साथ शिकार पर जाता है... अब खुद ही सोच लो कि उसकी काश्त कैसी चलती होगी!"

मैंने उससे सहमति प्रकट की, और हम सोने के लिए चल दिये।

अगले दिन पोलुतीकिन को अपने पड़ोसी, पिचुकोव के सम्बन्ध में किसी काम शहर जाना पड़ा। इस पड़ोसी पिचुकोव ने पोलुतीकिन की कुछ ज़मीन को जोत लिया था और ज़मीन के इसी हिस्से पर उसकी एक किसान औरत को कोड़ों से पीटा था। सो, शिकार के लिए मैं अकेले ही निकल पड़ा, और सांझ से पहले खोर के घर जा पहुंचा। झोंपड़ी की ड्योढ़ी पर एक बूढ़े आदमी से मेरी मुलाक़ात हुई—गंजा सिर, नाटा क़द, चौड़े कंधे, और हट्टा-कट्टा मज़बूत आदमी था। यही खोर था। मैंने बड़े ध्यान से उसे देखा। उसका चेहरा सुकरात के चेहरे से मिलता-जुलता था। वैसा ही ऊंचा और प्रशस्त माथा, वैसी ही छोटी छोटी आंखें, वैसी ही चपटी नाक। हम दोनों साथ साथ ही झोंपड़ी के अन्दर गये। उसी फ़ेद्या ने थोड़ा दूध और रई की रोटी लाकर मुझे दी। खोर एक बेंच पर बैठ गया, और शान्त भाव से अपनी घुंघराली दाढ़ी को सहलाते हुए, मेरे साथ बातें करने लगा। ऐसा लगता था जैसे वह अपनी क़द्र जानता है। उसके बोलने और चाल-ढाल में एक थिरता थी। रह रहकर, उसकी लम्बी मूछों के बीच से दबी हंसी फूट पड़ती।

हम लोग बोवाई, फ़सल और किसानों की ज़िन्दगी के बारे में बातें करते रहे... वह हर बात में मुझसे सहमत मालूम होता था। केवल बाद में मुझे कुछ बेतुकेपन का बोध हुआ और लगा कि मैं मूर्खतापूर्ण बातें कर रहा हूं... इस तरह हमारी बातचीत कुछ अजीब ढंग से चल रही थी। खोर, बड़ी सावधानी से बात करता और कभी कभी उसकी बातें बड़ी अस्पष्ट-सी रहतीं। हमारी बातचीत का एक नमूना देखिये।

"यह तो बताओ, खोर," मैंने उससे पूछा, "तुम अपने मालिक को कुछ देकर अपनी आज़ादी क्यों नहीं ख़रीद लेते?"

"भला, किस लिए ख़रीदूं मैं अपनी आज़ादी? अब मैं अपने मालिक को भी जानता हूं, और अपना लगान भी मुझे मालूम है... बहुत भला मालिक मिला है हमें।"

"आज़ाद होना हमेशा अच्छा होता है," मैंने अपना मत प्रकट किया।

संदिग्ध नज़र से खोर ने मेरी ओर देखा।

"सो तो है ही," वह बोला।

"तो? फिर क्यों नहीं तुम अपनी आज़ादी ख़रीद लेते?"

खोर ने सिर हिलाया।

"लेकिन, श्रीमान, आज़ादी ख़रीदने के लिए मेरे पल्ले है क्या?"

"अरे रहने दो, बुढ़ऊ! ज़्यादा बनो नहीं।"

"अगर खोर को आज़ाद लोगों के बीच फेंक दिया जाय," दबे स्वर में, जैसे अपने-आप से ही, वह कहता गया, "तो हर अनदाढ़िया खोर को मात करने लगे।"

"तो तुम भी दाढ़ी मुंडवा डालो!"

"दाढ़ी आख़िर है क्या? निरी घास! जब चाहो काट डालो।"

"तो फिर?"

"लेकिन खोर सीधा सौदागर बनेगा, और सौदागर लोग बड़े मज़े की ज़िन्दगी बिताते हैं, और उनके दाढ़ी भी होती है।"

"तो क्या थोड़ा-बहुत व्यापार भी तुम करते हो?" मैंने उससे पूछा।

"बस थोड़े मक्खन और थोड़े तारकोल का व्यापार... आपके लिए गाड़ी जोतवा दूं न?"

"तुम बड़े चालाक आदमी हो। अपनी ज़बान पर लगाम कसे रहते हो," मैंने मन ही मन कहा। फिर प्रकट रूप में बोला, "नहीं। गाड़ी नहीं चाहिए। कल तुम्हारे घर के पास ही शिकार खेलूंगा। और अगर तुम इजाज़त दो तो रात मैं तुम्हारे पुआल-घर में ही सो रहूं।"

"बड़ी ख़ुशी से। लेकिन क्या, पुग्राल-घर में ग्राप ग्राराम से सो पायेंगे? ग्रौरतों से कहे देता हूं कि ग्रापके लिए वहां एक चादर बिछा दें ग्रौर तकिया लगा दें... सुनती हो?" ग्रपनी जगह से उठते हुए वह चिल्लाया, "इधर ग्राग्रो... ग्रौर तुम, फ़ेद्या, तुम भी उनके साथ चले जाग्रो। ग्राप जानते ही हैं, ग्रौरतें बेवक़ूफ़ होती हैं।"

पाव घंटे बाद फ़ेद्या एक लालटेन उठाये मुझे पुग्राल-घर में लिवा ले गया। मैं सोंधी पुग्राल पर पसर गया। मेरा कुत्ता पांवों के पास दबक गया। फ़ेद्या ने सलाम किया। दरवाज़ा चरमराया ग्रौर बन्द हो गया। बहुत देर तक मेरी पलकें नहीं झपकीं। एक गाय दरवाज़े तक ग्रायी ग्रौर दो बार उसने भारी उसासें छोड़ीं; कुत्ता भी बड़े रोब से उसपर गुर्राया; एक सुग्रर भी चिन्ताशील ग्रावाज़ में किकियाता हुग्रा उधर से गुज़रा; पास ही एक घोड़ा घास चबा रहा था ग्रौर नथुनों को फरफरा रहा था... ग्राख़िर नींद ने मुझे ग्रा घेरा।

सूरज निकलते ही फ़ेद्या ने ग्राकर मुझे जगा दिया। यह चपल लड़का मुझे पसन्द ग्राया; ग्रौर जहां तक मैं देख सका, वह वृद्ध खोर का भी लाड़ला था। बड़े मित्रतापूर्ण ढंग से, वे ग्रापस में चोंचें लड़ाते। वृद्ध भी मुझसे मिलने चला ग्राया। या तो इसलिए कि मैंने उसके घर में रात बितायी थी, या किसी ग्रौर कारण से, पहले दिन की बनिस्बत खोर ग्राज निश्चय ही ग्रधिक हार्दिकता से मेरे साथ पेश ग्राया।

"समोवार तैयार है," मुसकराते हुए उसने मुझे सूचना दी। "चलिये, चाय पी ली जाय।"

हम लोग मेज़ पर ग्रा बैठे, एक हृष्ट-पुष्ट दिखनेवाली किसान ग्रौरत, उसकी बहुग्रों में से एक, लोटे में दूध ले ग्रायी। धीरे धीरे एक एक करके उसके सब बेटे भी झोंपड़ी में जमा हो गये।

"ग्रापके बेटे खूब हट्टे-कट्टे जवान हैं!" मैंने बुढ़ऊ से कहा।

"भला, किस लिए ख़रीदूं मै अपनी आज़ादी? अब मैं अपने मालिक को भी जानता हूं, और अपना लगान भी मुझे मालूम है... बहुत भला मालिक मिला है हमें।"

"आज़ाद होना हमेशा अच्छा होता है," मैंने अपना मत प्रकट किया।

संदिग्ध नज़र से खोर ने मेरी ओर देखा।

"सो तो है ही," वह बोला।

"तो? फिर क्यों नहीं तुम अपनी आज़ादी ख़रीद लेते?"

खोर ने सिर हिलाया।

"लेकिन, श्रीमान, आज़ादी ख़रीदने के लिए मेरे पल्ले है क्या?"

"अरे रहने दो, बुढ़ऊ! ज़्यादा बनो नहीं।"

"अगर खोर को आज़ाद लोगों के बीच फेंक दिया जाय," दबे स्वर में, जैसे अपने-आप से ही, वह कहता गया, "तो हर अनदाढ़िया खोर को मात करने लगे।"

"तो तुम भी दाढ़ी मुंडवा डालो!"

"दाढ़ी आख़िर है क्या? निरी घास! जब चाहो काट डालो।"

"तो फिर?"

"लेकिन खोर सीधा सौदागर बनेगा, और सौदागर लोग बड़े मज़े की ज़िन्दगी बिताते हैं, और उनके दाढ़ी भी होती है।"

"तो क्या थोड़ा-बहुत व्यापार भी तुम करते हो?" मैंने उससे पूछा।

"बस थोड़े मक्खन और थोड़े तारकोल का व्यापार... आपके लिए गाड़ी जोतवा दूं न?"

"तुम बड़े चालाक आदमी हो। अपनी ज़बान पर लगाम कसे रहते हो," मैंने मन ही मन कहा। फिर प्रकट रूप में बोला, "नहीं। गाड़ी नहीं चाहिए। कल तुम्हारे घर के पास ही शिकार खेलूंगा। और अगर तुम इजाज़त दो तो रात मैं तुम्हारे पुआल-घर में ही सो रहूं।"

"बड़ी खुशी से। लेकिन क्या, पुत्राल-घर में आप आराम से सो पायेंगे? औरतों से कहे देता हूं कि आपके लिए वहां एक चादर बिछा दें और तकिया लगा दें... सुनती हो?" अपनी जगह से उठते हुए वह चिल्लाया, "इधर आओ... और तुम, फ़ेद्या, तुम भी उनके साथ चले जाओ। आप जानते ही हैं, औरतें बेवक़ूफ़ होती हैं।"

पाव घंटे बाद फ़ेद्या एक लालटेन उठाये मुझे पुआल-घर में लिवा ले गया। मैं सोंधी पुआल पर पसर गया। मेरा कुत्ता पांवों के पास दबक गया। फ़ेद्या ने सलाम किया। दरवाज़ा चरमराया और बन्द हो गया। बहुत देर तक मेरी पलकें नहीं झपकीं। एक गाय दरवाज़े तक आयी और दो बार उसने भारी उसासें छोड़ीं; कुत्ता भी बड़े रोब से उसपर गुर्राया; एक सुअर भी चिन्ताशील आवाज़ में किकियाता हुआ उधर से गुज़रा; पास ही एक घोड़ा घास चबा रहा था और नथुनों को फरफरा रहा था... आख़िर नींद ने मुझे आ घेरा।

सूरज निकलते ही फ़ेद्या ने आकर मुझे जगा दिया। यह चपल लड़का मुझे पसन्द आया; और जहां तक मैं देख सका, वह वृद्ध खोर का भी लाड़ला था। बड़े मित्रतापूर्ण ढंग से, वे आपस में चोंचें लड़ाते। वृद्ध भी मुझसे मिलने चला आया। या तो इसलिए कि मैंने उसके घर में रात बितायी थी, या किसी और कारण से, पहले दिन की बनिस्बत खोर आज निश्चय ही अधिक हार्दिकता से मेरे साथ पेश आया।

"समोवार तैयार है," मुसकराते हुए उसने मुझे सूचना दी। "चलिये, चाय पी ली जाय।"

हम लोग मेज़ पर आ बैठे, एक हृष्ट-पुष्ट दिखनेवाली किसान औरत, उसकी बहुओं में से एक, लोटे में दूध ले आयी। धीरे धीरे एक एक करके उसके सब बेटे भी झोंपड़ी में जमा हो गये।

"आपके बेटे खूब हट्टे-कट्टे जवान हैं!" मैंने बुढ़ऊ से कहा।

"हां," चीनी की एक छोटी-सी डली दांतों से तोड़ते हुए उसने कहा, "ऊपर से देखने में तो यही जान पड़ता है कि इन्हें मुझसे और मेरी बुढ़िया से, कोई शिकायत नहीं।"

"क्या ये सब तुम्हारे साथ ही रहते हैं?"

"हां, खुद अपनी मर्ज़ी से इन्होंने यहां रहना पसन्द किया, सो यहीं रहते हैं।"

"क्या सभी का ब्याह हो चुका है?"

"सिर्फ़ यही एक है जिसने ब्याह नहीं किया—पाजी कहीं का!" फ़ेद्या की ओर इशारा करते हुए जो पहले की ही भांति दरवाज़े का सहारा लिये खड़ा था, उसने जवाब दिया, "और वास्या अभी बहुत छोटा है। उसके ब्याह की अभी जल्दी नहीं है।"

"और ब्याह मैं भला करूं क्यों?" फ़ेद्या ने जवाब दिया। "मैं ऐसे ही ठीक हूं। किस लिए लाऊं जोरू? हाथों की खुजली उतारने के लिए, क्यों?"

"बस बस, तू... ओह, मै तेरी नस नस पहचानता हूं! तू चांदी का छल्ला चमकाता है... घर की दासियों का एक घड़ी पीछा नहीं छोड़ता..." फिर गृह-दासियों की नक़ल उतारते हुए बोला, "'अरे अब तो बस करो, शरम खाओ! छोड़ो!' अरे मैं तुझे जानता हूं कि कैसा शरीफ़-ज़ादा है तू!"

"किसान औरत और भला होती किस लिए है?"

"किसान औरत—मज़दूर होती है," खोर ने गम्भीर अन्दाज़ में कहा। "वह किसान की नौकर होती है।"

"मज़दूर को पल्ले बांधकर मैं क्या करूंगा?"

"वही तो। तुझ जैसे ख़ुद तो आग से खेलेंगे और दूसरों को हाथ जलाने के लिए छोड़ देंगे। तेरे जैसे छोकरों को मैं पहचानता हूं।"

"तो कर दो न मेरी शादी! अब जवाब क्यों नहीं देते?"

"बस बस! काफ़ी हो चुका, झक्की कहीं का! देखता नहीं, हम इन महानुभाव को भी परेशान किये हुए हैं। तेरी शादी तो मैं करूंगा ही, समझ ले... और आप, श्रीमान, इसका बुरा न मानें। अभी बच्चा ही है आख़िर! अभी इसे कुछ अक़ल बटोरने का मौक़ा नहीं मिला।"

फ़ेद्या ने अपना सिर हिलाया। "खोर हैं घर पर?" एक सुपरिचित आवाज़ सुनाई दी और कालीनिच झोंपड़ी में आ खड़ा हुआ। अपने हाथ में वह स्ट्राबेरियों का एक गुच्छा लिये था जिसे वह अपने मित्र खोर के लिए तोड़ लाया था। वृद्ध ने समूचे हृदय से उसका स्वागत किया। मैंने आश्चर्य से कालीनिच की ओर देखा। मैं क़बूल करता हूं कि मुझे यह उम्मीद क़तई नहीं थी कि कोई किसान इतनी कोमल भावनाओं का परिचय दे सकता है।

उस दिन हस्बमामूल चार घंटों के बाद मैं शिकार के लिए रवाना हुआ और अगले तीन दिन खोर के यहां ही बिताये। अपने नये मित्रों में मेरा मन रम गया। पता नहीं कैसे मैंने उनका विश्वास प्राप्त किया, लेकिन वे अब बिना किसी झिझक के मुझसे बातें करते थे। मैंने बड़ी ख़ुशी से उनकी बातें सुनीं और उन्हें देखता रहा। दोनों मित्रों में ज़रा भी समानता नहीं थी। खोर स्थिर-चित्त, व्यवहारिक, प्रबंध करने में दक्ष और समझ से काम लेनेवाला आदमी था; कालीनिच, उसके प्रतिकूल, आदर्शवादियों और सपने देखनेवालों की श्रेणी में से था, रोमांटिकता और उछाह-उमंगों का पुतला। खोर वास्तविकता को पकड़ना जानता था; मतलब यह कि अपना घर-बाहर बना लिया था, अपने पल्ले कुछ जमा-जथा भी कर ली थी, मालिक और दूसरे अधिकारियों को ख़ुश रखता था। कालीनिच छाल की चप्पलें पहनता था, और हर दिन के खाने की जुगार नये सिरे से करता था। खोर ने काफ़ी बड़ा कुनबा पाल रखा था जो उसका हुक्म माननेवाला और सुसम्बद्ध था। कालीनिच के भी एक जमाने बीवी थी, जिससे वह डरता था, और कोई बाल-बच्चे न थे। खोर से पोलुतीकिन

का कुछ भी नहीं छिपा था। कालीनिच अपने मालिक को श्रद्धा की नज़र से देखता था। खोर कालीनिच को प्यार करता था और संरक्षक की भांति उसका ख़याल रखता था। कालीनिच खोर को प्यार करता था और उसका आदर करता था। खोर कम बोलता था, दबे दबे हंसता था, और मन ही मन सोचता था; कालीनिच अपने को भावुकता के साथ व्यक्त करता था, हालांकि कारख़ाने में काम करनेवाले चपल मज़दूर की भाषा जैसा उसकी भाषा में प्रवाह नहीं था। लेकिन कालीनिच को कुछ ऐसी सिद्धियां प्राप्त थीं कि खोर भी उसकी इज़्ज़त करता था। वह रक्त स्रावों, दौरों, पागलपन और कीड़े-मकोड़ों को झाड़-फूंककर दूर कर सकता था, उसकी मधुमक्खियां कभी गड़बड़ नहीं करती थीं, और वह हाथ का बड़ा कुशल था। खोर ने मेरे सामने ही नये ख़रीदे एक घोड़े को अस्तबल में ले जाने के लिए उससे अनुरोध किया। कालीनिच ने बड़ी गम्भीरता से उस अविश्वासी बूढ़े के अनुरोध का पालन लिया। कालीनिच का संबंध प्रकृति से अधिक गहरा था; खोर का आदमियों और समाज से। कालीनिच बहस-मुबाहसों के झगड़े में नहीं पड़ता था, आंखें बंद करके हर चीज़ में विश्वास कर लेता था। खोर का जीवन के प्रति रवैया व्यंग का रूप धारण कर चुका था। उसने बहुत कुछ देखा और अनुभव किया था, और मैंने उससे बहुत कुछ सीखा। मिसाल के लिए, उसकी बातों से मुझे मालूम हुआ कि हर साल, कटाई से पहले, एक छोटी अजीब-सी गाड़ी देहातों में नमूदार होती है। इस गाड़ी में लम्बा कोट पहने एक आदमी बैठा रहता है, जो दरांतियां बेचता है। वह एक दरांती का एक रूबल और पचीस कोपेक – नोटों के रूप में डेढ़ रूबल – वसूल करता है। अगर सौदा नक़द लेना हो, तो उधार लेने पर पूरे चार रूबल पर बेचता है। सभी किसान, कहने की ज़रूरत नहीं, उससे दरांती लेते हैं, उधार में। दो या तीन हफ़्तों बाद वह फिर नमूदार होता है, और पैसों के लिए तक़ाज़ा करता है। और चूंकि किसान ने अभी अभी अपनी जई काटी होती है, सो वह

अदा करने की सामर्थ्य रखता है। सौदागर के साथ वह शराबख़ाने में जाता है और वहां क़र्ज़ चुकता हो जाता है। कुछ ज़मींदारों ने मन में सोचा कि वे ख़ुद ही नक़द दाम देकर दरांतियां ख़रीद लें और उन्हीं दामों पर किसानों को उधार दें। लेकिन किसानों को इससे कुछ संतोष नहीं हुआ, वे निराश तक हो गये। वह मज़ा अब जाता रहा जो दरांती को बार बार अपने हाथों में उलटते-पलटते हुए उसे टंकारने तथा धातु की गूंज सुनने, और शहर के चालाक व्यापारी को बीस बार यह जताने में मिलता है: "समझे दोस्त इस दरांती में कोई धोखा तो नहीं है न?"

हंसियों की बिक्री में भी यही पत्तेबाज़ी चलती। अन्तर केवल इतना होता है कि तब सौदे में स्त्रियों का हाथ रहता है, और वे कभी कभी व्यापारी के लिए यह ज़रूरी बना देती हैं कि वह उन्हें – बेशक उनके भले के लिए ही – पीट तक दे। लेकिन स्त्रियों को इन अधोलिखित परिस्थितियों के कारण सबसे अधिक दुर्व्यवहार का शिकार होना पड़ता है। काग़ज़ की फ़ैक्टरियों को रद्दी माल सप्लाई करने के लिए ठेकेदार एक ख़ास क़िस्म के लोगों को नियुक्त करते हैं जो कुछ ज़िलों में 'उक़ाव' कहलाते हैं। इनका काम चिथड़े ख़रीदना होता है। ऐसे किसी 'उक़ाब' को सौदागर दो सौ रूबल के नोट देता है और यह अपने शिकार की खोज में निकल पड़ता है। लेकिन उस पक्षी-श्रेष्ठ से भिन्न – जिसका उसने नाम धारण किया है – वह सीधा और बहादुरी के साथ अपने शिकार पर नहीं झपटता, बल्कि इससे एकदम प्रतिकूल, 'उक़ाब' धोखा-धड़ी और फ़रेब से काम लेता है। गांव के पास किसी झाड़ी की ओट में वह अपनी गाड़ी छोड़ देता है। योंही किसी राह-चलते या निरे आवारा आदमी की भांति अहातों या पिछले दरवाज़ों पर चक्कर लगाता रहता है। उसकी मौजूदगी की गंध पाकर स्त्रियां चोरी-छिपे उससे मिलने निकल आती हैं। जल्दबाज़ी में सौदा तय होता है। ताम्बे के कुछ सिक्कों के लिए स्त्रियां न केवल अपना प्रत्येक बेकार चिथड़ा, बल्कि अक्सर अपने पति की क़मीज़ और अपना

पेटीकोट तक 'उक़ाब' को दे डालती है। इधर स्त्रियों ने एक और लाभप्रद तरीक़ा सोच निकाला है–ख़ुद अपने ही घर से चोरी करके चिथड़ों की भांति वे सन भी बेचने लगी हैं। इससे 'उक़ाबों' के व्यापार में और भी बढ़ती होती है, वह और भी फैलता है। लेकिन इसका मुक़ाबिला करने के लिए किसान अपनी ओर से और भी चालाक हो गये हैं। जरा-सा भी शक होने पर, 'उक़ाब' के फटकने की उड़ती हुई अफ़वाह भी मिलने पर वे तुरंत और तेज़ी के साथ हिफ़ाज़त और रोक-थाम की कार्रवाई करते हैं। और, सचमुच क्या यह लज्जास्पद नहीं है? सन बेचना मर्दों का धंधा था–और वे निश्चय ही उसे बेचते–शहर में नहीं (क्योंकि वहां उन्हें उसे ख़ुद लादकर ले जाना पड़ता), बल्कि यहीं–उन व्यापारियों के हाथ जो उनके लिए फेरी लगाते हैं, और तराजू के अभाव में जो एक पूड के लिए चालीस मुट्ठी-भर सन धरवा लेते हैं–और यह तो आप जानते ही हैं कि रूसी के हाथ की मुट्ठी में क्या कुछ समा सकता है, ख़ास तौर से उस समय जबकि वह अपनी 'पूरी सकत' से काम लेता है!

चूंकि मुझे इस सबका कोई अनुभव नहीं था और देहात में जन्मा पला नहीं था, सो इस तरह के ढेर सारे वर्णन मैंने सुने। लेकिन खोर सदा अपने को वर्णन तक ही सीमित नहीं करता था, वह मुझसे भी बहुत-सी चीज़ों के बारे में सवाल करता था। यह मालूम होने पर कि मैं विदेशों में घूम चुका हूं, उसकी उत्सुकता जाग्रत हो उठी ... यों उत्सुकता में कालीनिच भी उससे कम नहीं था, लेकिन प्रकृति का, पहाड़ों और जलप्रपातों का, असाधारण इमारतों और बड़े बड़े नगरों का वर्णन उसे अधिक आकर्षित करता था। खोर की दिलचस्पी सरकार और शासन संबंधी मसलों में थी। हर चीज़ को वह बड़े ग़ौर और ढंग से सुनने-समझने की कोशिश करता था। "हां तो उनका वही हाल है जो हमारा, या कुछ फ़रक़ है? बताओ न, श्रीमान, ऐसा है तो क्यों है?" जब मैं कहानी कह रहा होता तो कालीनिच के मुंह से निकलता, "हे प्रभु, जैसी तेरी

इच्छा! जैसा तू चाहे, करे!" खोर कुछ न कहता, लेकिन अपनी झाड़ीनुमा भौंहों को सिकोड़ लेता, और कभी कभी केवल इतना ही उसके मुंह से निकलता, "नहीं, इसका हमारे लिए कोई उपयोग नहीं। और यह अच्छी चीज़ है, सही चीज़ है।"

उसकी सारी पूछ-ताछ का यहां मैं वर्णन नहीं कर सकता, और यह अनावश्यक भी है। लेकिन इस सारी बातचीत से एक बात का मुझे पक्का यक़ीन हो गया – एक ऐसी बात का जो पाठकों की पूर्व-कल्पना से निश्चय ही परे है ... वह यह कि पीटर महान् प्रमुखतः एक रूसी था – सर्वोपरि अपने सुधारों में रूसी था। अपने बल और शक्ति का रूसी इतना क़ायल होता है कि वह कठिन से कठिन बोझ उठाने से नहीं डरता। अतीत में वह बहुत कम दिलचस्पी लेता है और साहस के साथ आगे की ओर देखता है। जो शुभ है उसे वह पसन्द करता है, जो युक्तियुक्त है उसे वह लेकर रहता है, जहां से भी वह प्राप्त हो। उसकी कर्मठ सहज बुद्धि जर्मनी की बारीकियों का उपहास करने में रस लेती है; लेकिन खोर के शब्दों में, "जर्मन विलक्षण जीव होते हैं," और वह उनसे थोड़ा-बहुत सीखने के लिए तैयार था। अपनी विशिष्ट स्थिति और व्यावहारिक स्वतंत्रता की बदौलत खोर ने मुझे काफ़ी ऐसी बातें बतायीं जिन्हें आसानी से नहीं कहलवाया जा सकता था – जैसा कि किसान कहते हैं – कोल्हू में पीरकर भी नहीं निकलवाया जा सकता। वह अपनी स्थिति को समझता था, इसमें शक नहीं। खोर से बातें करने के दौरान में, पहली बार, रूसी किसान की सीधी-सच्ची और समझदारी से भरी बातें सुनने का मुझे मौक़ा मिला। उसका ज्ञान, खुद उसी के अनुसार, काफ़ी व्यापक था; लेकिन वह पढ़ना-लिखना नहीं जानता था, हालांकि कालीनिच जानता था।

"यह निखट्टू पढ़ा-लिखा भी है," खोर ने अपनी सम्मति प्रकट की, "और उसकी मधुमक्खियां कभी जाड़ों में नहीं मरतीं।"

"लेकिन तुमने तो अपने बच्चों को पढ़ना सिखाया है न?"

एक मिनट तक ख़ोर चुप रहा। फिर बोला–

"फ़ेद्या पढ़ सकता है।"

"और दूसरे?"

"दूसरे नहीं पढ़ सकते।"

"सो क्यों?"

बुढ़ऊ ने कोई उत्तर नहीं दिया, और बातचीत का रुख़ बदल दिया। समझदार वह काफ़ी था फिर भी उसमें अनेक पूर्वग्रह मौजूद थे। अंधविश्वासी भी वह था। मिसाल के लिए, वह अपनी आत्मा की समूची गहराई से स्त्रियों से घृणा करता था, और जब प्रसन्न अवस्था में होता, उनका मज़ाक़ उड़ाने में कभी न चूकता। उसकी बुढ़िया पत्नी स्वभाव की चिड़चिड़ी थी और दिन-भर स्टोव के चबूतरे पर पड़ी रहती थी। उसका झींकना और झिड़कना एक क्षण के लिए न रुकता। उसके बेटे उसकी ओर ध्यान न देते, लेकिन बहुओं को वह ख़ुदा के ख़ौफ़ से सदा डराये रखती। रूसी आल्हा में सास का यह गीत बहुत ही अर्थसूचक है–"तू कैसा निखट्टू पूत है! क्या घर का पुरखा बनेगा! तू अपनी जोरू को तो पीटता नहीं, तू अपनी जवान जोरू को पीटता ही नहीं!" एक बार मैंने बहुओं का पक्ष लेने का प्रयत्न किया, और खोर के हृदय में सहानुभूति उपजानी चाही। लेकिन बड़े शान्त भाव से उसने मुझे जवाब दिया–"आप क्यों मुझे इस तरह की ... ओछी बातों में ... घसीटते हैं ... औरतें अपने-आप निबट लेंगी ... कोई उन्हें छुड़ाने की कोशिश करता है तब मामला और तूल पकड़ लेता है ... उनके पचड़े में पड़कर क्यों बेकार अपने हाथ गंदे किये जायं।"

कभी कभी कुढ़न और खीझ से भरी बुढ़िया तन्दूर से उतरती और गला फाड़कर अहाते के कुत्ते को बाहर बुलाती–"आ! आ! कुतुआ!" फिर उसकी पतली कमर को चिमटे से धुनने लगती, या फिर ओसारे में खड़ी हो जाती और, खोर के शब्दों में, जो भी उधर से

गुज़रता उसपर 'भौंकने लगती'; लेकिन, अपने पति से वह भय खाती थी और उसकी फटकार सुनते ही फिर अपने तन्दूर पर जा लेटती। जब कभी पोलुतीकिन का प्रसंग आता तो खोर और कालीनिच का विचित्र वाद-विवाद सुनते बनता।

"बस बस, खोर! उन्हें बीच में न घसीटो," कालीनिच कहता।

"लेकिन वह तुम्हारे लिए जूते क्यों नहीं ख़रीद देते?" खोर जवाब देता।

"अरे, जूते! जूतों को मुझे क्या करना है? मैं ठहरा देहाती किसान!"

"इससे क्या? किसान तो मैं भी हूं। लेकिन यह देखो!" और खोर टांग उठाकर अपने जूते दिखाता जो मानों भीमकाय हाथी के चमड़े को काटकर बनाये गये हों।

"जैसे तुममें और मुझमें कोई फ़रक़ न हो!" कालीनिच जवाब देता।

"जो हो! तुम्हारी छाल की चप्पलों का पैसा तो वह दे ही सकता है। रोज़ तुम उसके साथ शिकार पर जाते हो। तुम्हें एक जोड़ी चप्पल तो रोज़ चाहिए।"

"छाल की चप्पलों के लिए तो वह कुछ न कुछ देते ही हैं।"

"हां, हां देते हैं। पिछले साल दस कोपेक तुम्हारे हाथ पर रख दिये थे।"

कालीनिच खीझकर मुंह फेर लेता और खोर निःशब्द हंसी हंसता जिसमें उसकी छोटी छोटी आंखें पूर्णतया विलीन हो जातीं।

कालीनिच का गला अपेक्षाकृत मधुर था और वह बलालाइका* भी थोड़ा-बहुत बजा लेता था। खोर उसका गाना सुनते कभी न अघाता— अनायास ही उसका सिर एक ओर को झुक जाता और उदास आवाज़ में वह भी स्वर में स्वर मिलाने लगता। 'हाय, मेरी क़िस्मत!' वाला गीत

---

*तीन तारों वाला रूसी बाजा।

उसे विशेष प्रिय था। फ़ेद्या अपने पिता की हंसी उड़ाने से कभी न चूकता। कहता, "इतने उदास क्यों हो रहे हो बुढ़ऊ!" लेकिन खोर अपना गाल हथेली पर टिकाये, आंखें मूंदे अपनी क़िस्मत को बिसूरा करता ... लेकिन अन्य मौक़ों पर क्रियाशीलता में उसे मात करना असम्भव था, वह हमेशा किसी न किसी काम में व्यस्त रहता – कभी गाड़ी की मरम्मत करता, तो कभी बाड़े को जोड़ता, कभी जोत की देख-संभार में लगा रहता। लेकिन स्वच्छता और सफ़ाई का उसका स्तर कुछ बहुत ऊंचा नहीं था, वह इसपर ज़ोर भी नहीं देता था और एक बार जब मैंने उसे टोका तो जवाब में वह बोला – "वह भी कोई घर है जो गंधाये नहीं? आख़िर कुछ तो पता चले कि यहां कोई रहता है!"

"देखो न," मैंने जवाब दिया, "कालीनिच के मधुमक्खी-उद्यान में कैसी सफ़ाई रहती है।"

"सफ़ाई न हो तो मधुमक्खियां वहां टिकें नहीं, श्रीमान!" उसास छोड़ते हुए उसने कहा।

"अच्छा तो यह बताइये," एक दूसरे मौक़े पर उसने मुझसे पूछा, "क्या आपके पास अपनी जागीर है?"

"हां, है।"

"यहां से बहुत दूर है?"

"होगी कोई सौ मील।"

"आप अपनी ज़मीन पर ही रहते हैं, श्रीमान?"

"हां।"

"लेकिन, अगर मैं ग़लत नहीं कहता तो, आप अपनी बन्दूक़ को ही सबसे ज़्यादा प्यार करते हैं।"

"हां, मुझे मानना पड़ता है कि बात ऐसी ही है।"

"और यही अच्छा भी है, श्रीमान! जी भरकर आउज़-पक्षियों का शिकार करो और मुखिये को बदलते रहो!"

चौथे दिन, सांझ के समय पोलुतीकिन का बुलावा आ गया। बुढ़ऊ से जुदा होते मुझे बड़ा दुःख हो रहा था। कालीनिच के साथ मैं गाड़ी में जा बैठा।

"अच्छा तो विदा, खोर! भगवान तुम्हें खुश रखे!" मैंने कहा, "विदा, फ़ेद्या!"

"विदा, श्रीमान, विदा। हमें भूलना नहीं।"

हम लोग चल पड़े। सूर्यास्त की पहली दमक से आसमान लाल हो रहा था।

"कल दिन बढ़िया रहेगा," स्वच्छ आकाश की ओर देखते हुए मैंने कहा।

"जी नहीं; बारिश होगी," कालीनिच ने जवाब दिया। "वहां बतखें छपछपा रही हैं, और घास की गंध भी काफ़ी तेज़ है।"

हमारी गाड़ी जंगल में बढ़ चली। कालीनिच कोचवान की सीट पर बैठा हिचकोले खाता हुआ दबे-से स्वर में कुछ गुनगुनाता रहा, और सारा वक़्त अस्तप्राय सूर्य पर आंखें गाड़े रहा ...

अगले दिन मैं पोलुतीकिन के आतिथ्यपूर्ण घर से विदा हो गया।

येरमोलाई और चक्कीवाले की पत्नी

एक सांझ शिकारी येरमोलाई के साथ मैं 'त्यागा'* शिकार के लिए गया। हो सकता है कि हमारे सभी पाठक यह न जानते हों कि 'त्यागा' शिकार क्या चीज़ है। सो मैं पहले यह बता दूं।

वसन्त के दिनों में सूरज छिपने से पाव घंटा पहले आप जंगल में जाते हैं–अपनी बन्दूक़ साथ में लिये, लेकिन बिना कुत्ते के। जंगल के छोर पर आप अपने लिए कोई एक जगह चुन लेते हैं, इर्द-गिर्द नजर डालते हैं, अपनी बन्दूक़ की पिस्टन जांचते और अपने साथी की ओर देखकर आंखें मिचमिचाते हैं। पन्द्रह मिनट इस तरह गुज़र जाते हैं। सूरज छिप चुका है, लेकिन जंगल में अभी उजाला फैला है। हवा साफ़ और पारदर्शी है। पक्षी चहचहा और बतिया रहे हैं। नई घास मरकतमणि की तरह चमक रही है... आप अभी रुके हैं। धीरे धीरे जंगल के खलारों में अंधेरा हो चलता है। सांझ के आकाश की ख़ूनी लाल दमक धीरे धीरे जड़ों और पेड़ों के तनों पर रेंगती उत्तरोत्तर ऊपर सरकती जाती है, और निचली–अभी प्रायः पत्तों से ख़ाली–टहनियों पर से होती पेड़ों की स्थिर, तन्द्रिल, चोटियों पर पहुंच जाती है ... और अब पेड़ों की चोटियां अंधेरी हो चली हैं, गुलाबी आकाश क्रमशः धुंधला होकर काला-नीला पड़ गया है। जंगल की गंध ज़ोर पकड़ती है। नम धरती और उमस की गंध

---

*एक प्रकार का शिकार, जब वसन्त में नर पक्षी मादा पक्षियों को मिलने के लिए उड़ते हुए किसी विशेष स्थान की ओर जा रहे होते हैं।

वातावरण में भर जाती है। फरफराती हुई हवा पास आते न आते दम तोड़ने लगती है। पक्षी नींद की गोद में चले जाते हैं – सब एक साथ नहीं – बल्कि बारी बारी से, जातिवार। पहले फ़िन्च-पक्षी सन्नाटा खींचते हैं, कुछ मिनट बाद वार्बलर उनका अनुसरण करती हैं, और उनके बाद पीले बन्टिंग चुप हो जाते हैं। जंगल अंधेरे की परतों के नीचे ढकता जाता है। पेड़ एकाकार होकर भीमाकार काले समूहों का रूप धारण कर लेते हैं। काले-नीले आकाश में पहले तारे सहमे से टिमटिमाने लगते हैं। सभी पक्षी सो गये हैं। केवल रेड स्टार्ट और छोटे कठफोड़े अभी भी उनीदे से चीं-ची कर रहे हैं ... और अब तो वे भी मौन हो गये हैं। पीविट की अन्तिम गूंजदार गुहार हमारे सिरों के ऊपर से घूम जाती है, कहीं दूर ओरियोल पक्षी की उदास पुकार सुनाई देती है और इसके साथ ही बुलबुल का पहला स्वर लहरा उठता है। प्रतीक्षा करते करते आप उकता जाते हैं, तभी सहसा – लेकिन मेरी इस बात को सिर्फ़ शिकारी ही समझ सकते हैं – गहरे सन्नाटे के बीच टर्र् टर्र् और घर्राटे की विचित्र आवाज़ और तेज़ पंखों की ताल-युक्त फरफराहट सुनाई देती है, और स्नाइप-पक्षी, अपनी लम्बी चोंच को बड़ी नफ़ासत से झुकाये, एक काली झाड़ी के पीछे से सफ़ाई के साथ बाहर उड़ता हुआ ऐन आपकी गोली का निशाना बनने के लिए सामने आ जाता है।

यही है 'त्यागा' शिकार।

सो मैं येरमोलाई के साथ 'त्यागा' शिकार के लिए निकला था। लेकिन, पाठक, क्षमा करें, यह ज़रूरी है कि पहले येरमोलाई से आपका परिचय करा दूं।

कल्पना कीजिये कि पैंतालीस वर्ष का एक आदमी है – लम्बा और पतला। लम्बी पतली नाक। सकरा माथा। छोटी भूरी आंखें। सुअर की भांति कड़े बालों वाला सिर और मोटे मोटे होंठों पर व्यंग का भाव। यह आदमी – जाड़ा हो, चाहे गर्मी – जर्मन काट का नानकिन का पीला कोट

पहनता था, और कमर में पटका कसे रहता था। नीली पतलून और अस्त्राखान टोपी पहने रहता जो मौज में आकर एक दीवालिया ज़मींदार ने उसे भेंट कर दी थी। उसके कमरबन्द से दो थैलियां बंधी रहती थीं—एक आगे की ओर, बड़ी दक्षता से दो भागों में कसी—बारूद और गोली के लिए। दूसरी पीछे की ओर शिकार रखने के लिए। डट्टे वह अपनी टोपी में से निकालता था जिसकी थाह का प्रत्यक्षतः कोई अन्त नहीं मालूम होता था। शिकार बेचकर जो पैसे वह बनाता, उससे वह आसानी से कारतूस बक्स और बारूद का डिब्बा ख़रीद सकता था। लेकिन यह बात कभी, एक बार भी, उसके दिमाग़ में नहीं आयी, और पुराने ढंग से ही वह अपनी बन्दूक़ को भरता रहा। उसकी दक्षता को—जिससे कि वह बारूद और कारतूसों को बिखरने या मिल जाने के ख़तरे से बचाता था—लोग मुग्ध भाव से देखते रह जाते। उसकी बन्दूक़ एक-नलीवाली थी और पथरी-चिंगारी से चलती थी और बड़ी बेरहमी के साथ 'झटका देने' की उसे आदत पड़ गयी थी। नतीजा यह कि येरमोलाई का दाहिना गाल, बाएं गाल की अपेक्षा हमेशा सूजा रहता था। इस बन्दूक़ से किस प्रकार वह कोई शिकार मारने में सफल होता था, कोई तेज़ बुद्धि आदमी भी इसका कारण नहीं बता सकता था—लेकिन इसमें शक नहीं कि उसका निशाना ठिकाने पर बैठता था। उसके पास एक शिकारी कुत्ता भी था, जिसका नाम वालेत्का था। कुत्ता क्या था, वह एक असाधारण जीव था। येरमोलाई कभी उसे खाना नहीं देता था। "मैं, और कुत्ते को खाना खिलाऊं?" वह तर्क करता। "अरे कुत्ता बड़ा चालाक जानवर होता है। अपना पेट भरने के साधन वह ख़ूब जानता है।" और सचमुच, यद्यपि वालेत्का की अत्यन्त क्षीण काया किसी भी तटस्थ दर्शक को द्रवित कर देती फिर भी वह जीवित था और लम्बी आयुवाला था। अपनी इस दयनीय अवस्था के बावजूद, वह कभी एक बार भी गुम नहीं हुआ था और न ही अपने मालिक को दग़ा देकर छोड़ जाने की बात कभी उसके मन में आयी

थी। हां, अपनी जवानी के दिनों में, ज़रूर एक बार वह दो दिन के लिए कहीं चला गया था, किसी अपनी प्रेमिका के साथ। लेकिन इस खुराफ़ात से जल्दी ही उसे छुटकारा मिल गया। वालेत्का की सबसे उल्लेखनीय विशेषता थी, दुनिया की हर चीज़ के प्रति उसकी अविचल उदासीनता... यदि मैं इस समय एक कुत्ते का ज़िक्र न कर रहा होता तो मैं अवश्य कहता कि वह प्राणी विरक्त हो चुका था। अपनी बूची दुम को नीचे दबाये वह आम तौर से बस बैठा रहता। बीच बीच में, कभी कभी चौंक पड़ता और मुंह सिकोड़ लेता, लेकिन कभी मुसकराता नहीं। (यह तो सर्वविदित है कि कुत्ते मुसकरा सकते हैं और बहुत ही प्यारा मुसकराते हैं।) वह बेहद बदसूरत था और ज़मींदार के निठल्ले नौकर-चाकर, उसकी भद्दी शकल पर धूर्तता से उसे चिढ़ाने का मौक़ा कभी न चूकते यहां तक कि मार-पीट को भी वालेत्का आश्चर्यजनक वैराग्य से सहन कर लेता। बावर्चियों के लिए तो वह विशेष आमोद का साधन बन गया था। बावर्चीख़ाने की गरमाई और लार टपकानेवाली गंधों से आकर्षित होकर – और यह कमज़ोरी केवल कुत्तों तक ही सीमित नहीं है – वह जैसे ही अपनी थूथनी रसोई के अधखुले दरवाज़े में घुसेड़ता, वे सब के सब अपना काम छोड़ एकदम चीख़ते-चिल्लाते तथा गालियां देते उसके पीछे पड़ जाते। शिकार का पीछा करने में अपनी अथक शक्ति का परिचय देकर उसने अपना गौरव बढ़ाया था, उसकी घ्राण-शक्ति भी बहुत अच्छी थी। लेकिन, संयोगवश, यदि कभी कोई ज़ख़्मी ख़रगोश उसकी पकड़ में आ जाता तो वह हरी झाड़ियों की ठंडी छांव में येरमोलाई से काफ़ी दूर, बड़े स्वाद से उसकी आख़िरी हड्डी तक चाट जाता, और येरमोलाई उसे हर ज्ञात-अज्ञात भाषा में गालियां देता रहता।

येरमोलाई पुरानी चाल के मेरे एक पड़ोसी ज़मींदार के यहां बन्धक था। पुरानी चाल के ज़मींदार शिकार के चक्कर में नहीं पड़ते, घरेलू पक्षियों पर सन्तुष्ट रहना ज़्यादा पसन्द करते हैं। केवल असाधारण मौक़ों पर

ही – जैसे जन्म-दिवसों, नामकरण-दिवसों और चुनावों के अवसरों पर – पुरानी चाल के ज़मींदारों के बावर्ची लम्बी चोंचवाले किन्हीं पक्षियों को पकाने-रांधने में जुटते हैं और जब उत्तेजित हो उठते हैं, जो कि रूसियों की एक अपनी विशेषता है जिसका परिचय वे उस समय देते हैं जब उन्हें ठीक से मालूम नहीं होता कि कैसे क्या करना चाहिए – तो ऐसी अपूर्व अचार-चटनियां तैयार करते हैं कि मेहमान परसी हुई रिकाबियों को बस उत्सुकता और ध्यान से देखते रह जाते हैं, और विरले ही उन्हें चखने का साहस करते हैं। येरमोलाई को, अपने मालिक के आदेश पर महीने में एक बार ग्राउज़ तथा तीतर के दो जोड़े रसोई में देने पड़ते थे। इसके बाद चाहे जहां घूमे उसे खुली छूट थी। 'काहिल की औलाद' कहकर उसे पुकारते थे। उन्होंने यह समझ लिया कि वह बिल्कुल निकम्मा आदमी है इसलिए उसकी ओर ध्यान देना छोड़ दिया था। कहने की ज़रूरत नहीं कि गोली और बारूद की, वह उसके लिए व्यवस्था नहीं करते थे। इस मामले में उनका भी ठीक वह सिद्धान्त था जो येरमोलाई का अपने कुत्ते के भोजन के बारे में था। येरमोलाई एक बहुत विचित्र क़िस्म का जीव था। पक्षी की भांति लापरवाह, बातें करने का काफ़ी शौकीन, बेढब और खोया खोया-सा। पीने का वह बेहद शौकीन था, और एक लम्बे अर्से तक कभी चुपचाप नहीं बैठ सकता था। दाएं-बाएं डोलता हुआ, वह लचक कर चलता था। और इसी लचकती-डोलती चाल के साथ वह एक दिन में पचास मील से भी ऊपर चल लेता था। अत्यन्त विभिन्न प्रकार की दुस्साहसिकताओं को वह अपने ऊपर ओटता था – दलदलों में, पेड़ों पर, छतों पर या पुलों के नीचे वह यों ही रात बिता देता था। एक से अधिक बार वह अटारियों, तहख़ानों या खत्तियों में बंद हो चुका था। कभी उसकी बन्दूक़, कभी उसका कुत्ता, उसके अत्यन्त अनिवार्य कपड़े तक गुम हो जाते, कड़ी और लम्बी मार वह खाता, लेकिन अन्त में – कुछ समय बाद – अपने कपड़े पहने, और अपनी बन्दूक़ तथा अपने कुत्ते को साथ लिये ही

हमेशा घर लौटता। कोई भी उसे ख़ुशमिज़ाज नहीं कह सकता था, हालांकि उसका मस्तिष्क प्राय: हमेशा एकरस रहता था। आम तौर से लोग उसे मौजी आदमी समझते थे। अगर अच्छा साथी मिल जाय तो येरमोलाई थोड़ी गपशप कर लेता था, ख़ास तौर से उस समय जब साथ में पीने के लिए भी कुछ हो, लेकिन वह देर तक एक जगह टिक नहीं सकता था – सहसा उठकर चल देता। "अरे, अब कहां चल दिये? बाहर घुप्प अंधेरा है।" – "चाप्लिनो जा रहा हूं।" – "चाप्लिनो जाने की ऐसी क्या पड़ी है – दस मील दूर?" – "रात वहीं, सोफ़ोन के यहां, बिताऊंगा।" – "लेकिन रात को यहीं रह जाओ न!" – "नहीं, यह नहीं हो सकता।" और येरमोलाई, अपने वालेत्का के साथ, अंधेरी रात में चल देता, जंगल और नालों के बीच से, और ऐन मुमकिन है कि किसान सोफ़ोन अपने घर में उसे घुसने ही न दे। इतना ही नहीं बल्कि इस बात का भी डर रहता था कि कहीं वह उसके एकाध जड़ न दे, यह सबक़ सिखाने के लिए कि "भले आदमियों को नाहक़ परेशान करने" का फल यह होता है। लेकिन वसन्त के दिनों में गहरे पानी में मछली पकड़ने में येरमोलाई की दक्षता की कोई बराबरी नहीं कर सकता था। केकड़ों को हाथ से पकड़ने, गंध से शिकार का पीछा करने, लवा-पक्षियों को पास बुलाने, बाजों को साधने, और अधिकाधिक विविध स्वरों में गानेवाली बुलबुलों को पकड़ने में वह अपना सानी नहीं रखता था ... एक काम वह नहीं कर सकता था – कुत्ते को ट्रेन नहीं कर सकता था। उसमें इतना धीरज नहीं था। उसके एक पत्नी भी थी। सप्ताह में एक बार वह उसे देखने जाता था। बेचारी एक मनहूस-सी, गिरी-पड़ी, छोटी-सी झोंपड़ी में रहती थी, और बड़ी मुश्किल से गुज़र करती थी। अगले दिन का भरोसा नहीं कि कल कुछ पेट में डालने को मिलेगा या नहीं। उसका भाग्य, हर पहलू से, सचमुच दयनीय था। येरमोलाई जो इतना बेफ़िक्र और नेकदिल मालूम होता था, पत्नी के साथ बड़ी क्रूरता और सख़्ती से पेश आता था। ख़ुद

अपने घर में वह कठोर और भयावना रूप धारण कर लेता था। बेचारी पत्नी उसे खुश करने में कोई कसर न छोड़ती, जब वह उसकी ओर देखता तो कांपकर रह जाती, और उसके लिए वोद्का खरीदने के लिए आखिरी छदाम तक निकालकर दे देती। और जब वह शाही अन्दाज़ में स्टोव के चबूतरे पर जाकर लेटता और वीर योद्धा की भांति सो जाता तो वह, बड़ी कर्तव्यनिष्ठा से, उसपर अपने ओढ़ने की भेड़ की खाल डाल देती। खुद मुझे भी, एक से अधिक बार, उसके चेहरे पर बर्बर क्रूरता की अप्रत्याशित झलक देखने का मौक़ा मिल चुका था। जब वह किसी ज़ख्मी पक्षी को दांतों में दबा लेता तो उसके चेहरे का भाव मुझे बड़ा घिनौना लगता था। लेकिन येरमोलाई अपने घर पर एक दिन से ज़्यादा कभी नहीं टिकता था। घर से दूर होने पर वह फिर वही 'येरमोल्का' बन जाता था। सौ मील के एटे-पेटे में वह इसी नाम से प्रसिद्ध था, और कभी कभी खुद भी वह अपने आपको इसी नाम से पुकारता था। हीन से हीन दास भी आवारगी के इस पुतले से अपने आपको श्रेष्ठ मानता – और शायद ठीक इसी कारण उसके साथ मित्रता से पेश आता था। पहले तो किसानों को उसके पीछे भागने और खरगोश की भांति उसे खुले मैदान में भगाने में बड़ा मज़ा आता था, लेकिन बाद में उन्होंने उसे भगवान के भरोसे छोड़ दिया। और एक बार यह समझ लेने पर कि वह कुछ निराला है, उन्होंने उसे यंत्रणाएं देना बंद कर दिया। इतना ही नहीं, वे उसे रोटी देने और उसके साथ बातचीत भी करने लगे ... यही था वह आदमी जिसे मैंने शिकार के लिए अपना साथी बनाया, और इसी के साथ इस्ता के तटवर्ती बर्च-वृक्षों के भारी जंगल की ओर 'त्यागा' शिकार के लिए मैंने प्रयाण किया।

रूस की बहुत-सी नदियां वोल्गा की भांति, एक ओर तो टेढ़े-मेढ़े चट्टानी कगारों से और दूसरी ओर समतल चरागाहों से घिरी हैं। इस्ता नदी भी ऐसी ही है। छोटी-सी यह नदी अत्यन्त अविश्वसनीय ढंग से

तुड़ती-मुड़ती सांप की भांति बल खाती बहती है। आधे मील का रास्ता भी वह सीधे नहीं बहती। कहीं कहीं तो किसी ऊंचे ढलुवान की चोटी पर से, दस मील दूर तक नदी को देखा जा सकता है—उसके बांध, तालाब और पन-चक्कियां, सरपत से घिरे तटवर्ती बाग़ और फूलों के घने उद्यान नज़र आते हैं। इस्ता में अनगिनत मछलियां हैं, ख़ास तौर से रोच-मछलियां (गर्मियों में किसान उन्हें झाड़ियों के नीचे से यों ही हाथों से पकड़ लेते हैं)। तटवर्ती पहाड़ी ढलुवानों पर, जिन पर ठंडे निर्मल झरनों की रेखाएं खिंची हैं, सीटी-सी बजाती छोटी छोटी टिटिहरियां फरफराती हैं; जंगली बत्तखें तालों के बीच में डुबकियां लगातीं और अपने इर्द-गिर्द सावधानी से देखती हैं; आगे को निकली चट्टानों के नीचे खोहों की छांव में बगुले खड़े हैं... क़रीब एक घंटे तक हम लोग छिपे हुए खड़े रहे, दो जोड़ी स्नाइप-पक्षियों का हमने शिकार किया, और सूर्योदय के समय चूंकि हम फिर अपना भाग्य आज़माना चाहते थे ('त्यागा' शिकार सुबह तड़के भी किया जा सकता है), इसलिए हम लोगों ने तय किया कि रात सबसे नज़दीकवाली पन-चक्की में बितायी जाय। हम लोग जंगल से बाहर आ गये और ढलुवान पर से नीचे उतरने लगे। नदी का काला-नीला जल नीचे बह रहा था। हवा धुंध से भरी थी। हमने दरवाज़ा खटखटाया। अहाते में कुत्तों ने भौंकना शुरू कर दिया।

"कौन है?" किसी ने भरभरायी और उनींदी आवाज़ में पूछा।

"हम शिकारी हैं। रात-भर के लिए ठौर-ठिकाना चाहिए।"

कोई जवाब नहीं।

"हम पैसे देंगे।"

"मैं जाकर मालिक से पूछता हूं। शिः, ये कम्बख़्त कुत्ते! जाने कहां से आ मरे!"

हम लोग कान लगाये सुनते रहे। नौकर घर के भीतर गया। फिर जल्दी ही लौटकर दरवाज़े पर आया।

"नहीं!" उसने कहा। "मालिक ने आपको जगह देने से मुझे मना किया है।"

"सो क्यों?"

"उन्हें डर लगता है—आप लोग शिकारी हैं। कौन जाने, पन-चक्की को फूंक डालें। ज़रूर आप लोगों के पास गोला-बारूद होगा।"

"लेकिन, यह तो बेकार की बकवास है!"

"दो साल हुए ऐसे ही हमारी पन-चक्की में आग लग गयी थी। रात को कुछ मछलियां बेचनेवाले आकर टिके और जाने कैसे उन्होंने चक्की में आग लगा दी।"

"लेकिन, दोस्त मेरे, हम लोग खुले में सो भी तो नहीं सकते!"

"यह आप जाने," उसने कहा और जूतों को खटखटाता हुआ चला गया।

येरमोलाई ने अनेक अशुभ भविष्यवाणियों की उसपर बौछार की और अन्त में, उसास छोड़ते हुए, बोला—"चलो, गांव चलें।"

लेकिन गांव था दो मील दूर।

"अच्छा हो कि रात यहीं—खुले में—काट दें," मैंने कहा। "बड़ी सुहावनी रात है। पैसे देने पर पन-चक्की का मालिक थोड़ा पुआल दे ही देगा।"

येरमोलाई, बिना बहस किये, सहमत हो गया। हमने फिर खटखटाना शुरू किया।

"अरे! अब क्या चाहते हो?" नौकर की आवाज़ फिर सुनाई दी। "कह तो दिया कि हम जगह नहीं दे सकते!"

हम लोगों ने समझाकर उसे बताया कि हम क्या चाहते हैं। वह घर के मालिक से पूछने चला गया, और उसे साथ लिये लौटा। बग़ल का छोटा-सा दरवाज़ा चरमराया। उसी में से चक्की का मालिक प्रकट हुआ—लम्बा, पिलपिले चेहरेवाला आदमी, सांड़ जैसी गरदन, गोल-मटोल

तोन्द, स्थूल-काय। मेरे प्रस्ताव पर वह सहमत हो गया। चक्की से सौ क़दम दूर एक छोटी-सी झोंपड़ी थी जो चारों ओर से खुली थी। पुआल और सूखी घास ले जाकर उन्होंने हमारे लिए वहीं डाल दी। नौकर ने नदी के निकट घास पर समोवार जमा दिया, और एड़ियों के बल पसरकर ज़ोरों से उसकी नलका में फूंकने लगा। अंगारे दमक उठे और उनकी रोशनी उसके युवा चेहरे पर पड़ने लगी। चक्की का मालिक लपका हुआ अपनी पत्नी को जगाने गया और अन्त में आकर सुझाव दिया कि मैं घर में चलकर सो सकता हूं; लेकिन मैंने बाहर खुले में ही रहना पसन्द किया। चक्कीवाले की पत्नी हमारे लिए दूध, अंडे, आलू और रोटी ले आयी। समोवार का पानी जल्दी ही खौल गया और हमने चाय पीना शुरू किया। नदी के ऊपर धुंध छायी थी। हवा बन्द थी। कार्न-क्रैकों के चिचियाने की आवाज़ चारों ओर से गूंज उठी। साथ ही पन-चक्की के पहियों से पैडलों पर से गिरती बूंदों की धीमी टप टप और बांध की छड़ों के बीच से कलकल करते पानी की आवाज़ आ रही थी। हमने ज़मीन पर एक छोटा-सा अलाव जला लिया। येरमोलाई अंगारों में आलू भूनने लगा, और इसी बीच मेरी आंखें झपक गयीं। जब मेरी नींद टूटी तो पास में ही किसी की सतर्क, दबी हुई, फुसफुसाहट की आवाज़ आ रही थी। मैंने अपना सिर उठाया तो देखा कि अलाव के सामने, उल्टी रखी एक नांद पर बैठी, चक्कीवाले की पत्नी मेरे शिकारी-अर्दली के साथ बतिया रही है। उसके कपड़ों से, उसके हाव-भाव और बोलने के ढंग से यह तो मैं पहले ही भांप चुका था कि वह घरेलू नौकरानी रह चुकी है, और यह कि न तो वह किसान औरत है, और न शहरी। लेकिन उसकी मुख-मुद्रा को पहली बार अब मैंने स्पष्टता से देखा। उसकी उम्र तीस के क़रीब मालूम होती थी। उसका दुबला-पतला सफ़ेद चेहरा अब भी ग़ज़ब की सुन्दरता के चिन्ह छिपाये था। विशेषकर उसकी आंखों ने, जो बड़ी बड़ी और उदास थीं – मुझे खास तौर से मुग्ध किया था। अपनी

कोहनियां वह घुटनों पर टिकाये थी, और उसका चेहरा अपनी हथेली पर टिका था। येरमोलाई मेरी ओर पीठ किये बैठा था और अलाव में लकड़ियां झोंक रहा था।

"जेल्तूखिनो में ढोर-डंगरों में फिर प्लेग फैल रहा है," चक्कीवाले की पत्नी कह रही थी, "पादरी इवान की दो गाएं मर गयीं, भगवान रहम करे हम पर!"

"तुम्हारे सुअरों का अब क्या हाल है?" कुछ रुककर येरमोलाई ने पूछा।

"जिन्दा हैं।"

"तब तो तुम्हें चाहिए कि सुअर का एक दूध-पीता बच्चा मुझे भेंट कर दो।"

चक्कीवाले की पत्नी कुछ देर चुप रही। फिर उसके मुंह से एक उसास निकली।

"तुम्हारे साथ यह और कौन है?" उसने पूछा।

"कोस्तोमारोवो के एक सज्जन हैं।"

येरमोलाई ने फिर कुछ टहनियां आग में झोंकीं। टहनियां तुरंत जल उठीं और सफ़ेद धुआं फुफकारता हुआ उसके मुंह से आ टकराया।

"तुम्हारे पति ने हमें कोठरी में क्यों नहीं ठहरने दिया?"

"डरता है।"

"डरता है, मोटा सांड डरता है। अरीना तिमोफ़ेयेवना, मेरी चुन्नो-गुन्नो, गला तर करने के लिए ज़रा-सी गिलास में ढाल लाओ न!"

चक्कीवाले की पत्नी उठी और अंधेरे में ओझल हो गयी। येरमोलाई दबे स्वर में गुनगुनाने लगा –

जब मैं अपनी प्यारी से मिलने जाता रहा
तो मेरे सब जूते घिसकर छलनी हो गये ...

अरीना एक छोटी-सी सुराही और एक गिलास लिये हुए लौट आयी। येरमोलाई उठा, क्रॉस का चिन्ह् बनाया, और एक ही घूंट में गट गट करके पी गया।

"अच्छी है!" उसके मुंह् से निकला।

चक्कीवाले की पत्नी फिर नांद पर बैठ गयी।

"हां तो अरीना तिमोफ़ेयेवना, क्या तुम अब भी बीमार हो?"

"हां।"

"क्या तकलीफ़ है?"

"वही मेरी खांसी रात-भर चैन नहीं लेने देती।"

"लगता है, यह साहब तो सो गये," थोड़ी ख़ामोशी के बाद येरमोलाई ने कहा। "डाक्टर के चक्कर में न पड़ना अरीना; उसके चक्कर में पड़ीं तो मुसीबत में फंस जाओगी।"

"अच्छी बात है। डाक्टर के चक्कर में नहीं पड़ूंगी।"

"ऐसी भी क्या, मुझसे मिलने आया करो न!"

अरीना ने सिर लटका लिया।

"जब तुम आओगी तो मैं अपनी घरवाली को उस दिन के लिए निकाल बाहर कर दूंगा," येरमोलाई कहता गया, "क़सम से, ज़रूर निकाल दूंगा।"

"अच्छा हो कि अब तुम अपने इन साहब को जगा दो, येरमोलाई पेत्रोविच। देखो न, आलू भुन गये हैं।"

"ओह, उसे खर्राटे भरने दो," मेरे फ़रमानबरदार सेवक ने उपेक्षा के भाव से कहा। "चल चलकर थक गया है, सो घोड़े बेचकर सोया है।"

मैंने सूखी घास में करवट बदली। येरमोलाई उठा, और मेरे पास आया।

"आलू तैयार हैं। ब्यालू तो करेंगे न? उठिये!"

मैं झोंपड़ी से बाहर निकला। चक्कीवाले की पत्नी नांद पर से उठी और जाने को हुई। मैंने उससे कहा—

"इस चक्की को क्या तुम काफ़ी दिनों से संभाले हो?"

"दो साल से। ट्रिनिटी-पर्व के दिन से।"

"और तुम्हारा पति कहां से आया है?"

मेरा प्रश्न अरीना ने नहीं सुना।

"तुम्हारा खाविन्द कहां से आया है?" अपनी आवाज़ को ऊंचा करते हुए येरमोलाई ने दोहराया।

"बेलेव से। वह बेलेव नगर का रहनेवाला है।"

"और क्या तुम भी बेलेव की रहनेवाली हो?"

"नहीं, मैं बंधक हूं, मैं बंधक थी।"

"किसकी?"

"ज़्वेरकोव था मेरा मालिक। अब मैं आज़ाद हूं।"

"कौन ज़्वेरकोव?"

"अलेक्सान्द्र सीलिच।"

"कहीं तुम्हीं तो उसकी पत्नी की दासी नहीं थीं?"

"हां, मैं ही थी। आपने कैसे जाना?"

दुगनी उत्सुकता और संवेदना के साथ मैंने अरीना पर नज़र डाली।

"मैं तुम्हारे मालिक को जानता हूं," मैंने सिलसिला जारी रखा।

"सचमुच?" धीमी आवाज में उसने जवाब दिया, और उसने अपना सिर झुका लिया।

पाठकों को यह बताना मेरा फ़र्ज़ है, कि अरीना की ओर इतनी संवेदना के साथ मेरी नज़र क्यों घूमी। पीटर्सबर्ग में अपने आवास के दौरान में, संयोगवश, ज़्वेरकोव से मेरी जान-पहचान हो गयी थी। वह काफ़ी प्रभावशाली व्यक्ति था तथा शिक्षित समझदार आदमी के नाते प्रसिद्ध भी था। उसकी पत्नी गोल-मटोल, भावुक,

बात बात में आंसू बहानेवाली और कुत्सा से भरी स्त्री थी—बहुत ही ओछी और अरुचिकर जीव। उसके एक लड़का भी था—आज की ऐंठ-अकड़ युवा पीढ़ी का बिल्कुल नमूना—सिरचढ़ा और मूर्ख। ज्वेरकोव के बाह्य आकार-प्रकार को देखकर उसके बारे में प्रभाव अच्छा नहीं बैठता था। उसकी छोटी छोटी चूहे जैसी आंखें चौड़े और क़रीब क़रीब चौरस चेहरे में से धूर्तता के साथ झांकती जान पड़ती थीं; उसकी नाक पैनी और लम्बी थी—नथुने फैले हुए। उसके बारीक छंटे हुए सफ़ेद बाल छितरी हुई भौंहों पर ब्रुश की तरह सीधे खड़े रहते, पतले होंठ मीठी मुसकान लिये, हर घड़ी बल खाते। ज्वेरकोव की आदत थी कि वह अपनी ठिंगनी टांगों को चौड़ा करके और पतलून की जेबों में छोटे-छोटे हाथों को खोंसकर खड़ा होता था। एक बार वह और मैं अकेले शहर से बाहर गाड़ी में हवा खाने निकले। कुछ बातचीत छिड़ गयी। अनुभव प्राप्त और पारखी आदमी की हैसियत से ज्वेरकोव ने मुझे 'सचाई की राह' दिखानी शुरू कर दी।

"मैं कहता हूं कि तुम सब युवा लोग," अन्त में उसने स्वर अलापा, "यों ही जल्दबाज़ी में हर चीज़ की आलोचना और उसके बारे में फ़तवे जारी कर देते हो। ख़ुद अपने देश के बारे में तुम्हारी जानकारी न के बराबर है। रूस तुम नौजवानों के लिए एक अनजान देश है। हां, अनजान देश ... दिन-रात तुम जर्मन पढ़ते हो। मिसाल के लिए इसके, उसके और दुनिया-भर की चीज़ों के बारे में बातें बघारते हो। जैसे घरेलू दासों को ही लो ... मैं मानता हूं कि यह सब बहुत अच्छा है। लेकिन तुम उन्हें नहीं जानते, तुम नहीं जानते कि वे किस ढंग के लोग हैं।" (ज्वेरकोव ने बड़े ज़ोरों से नाक झिड़की और एक चुटकी सुंघनी सुटकी।) "अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए मैं एक छोटी-सी घटना तुम्हें बताता हूं। शायद तुम्हें दिलचस्प लगे। (ज्वेरकोव ने खखारकर अपना गला साफ़ किया।) बेशक, तुमसे यह छिपा नहीं है कि मेरी पत्नी कैसी है। मेरी समझ में, यह तुम भी मानोगे कि उससे ज्यादा रहमदिल औरत

दूसरी मुश्किल से ही दिखाई देगी। उसकी सेवा करनेवाली दासियों का जीवन तो जैसे स्वर्ग का जीवन है। इस बारे में कोई मत-भेद नहीं हो सकता... लेकिन मेरी पत्नी ने नियम बना रखा है कि वह विवाहित दासियों को कभी नहीं रखेगी। और सचमुच, विवाहित दासियों से काम चल भी नहीं सकता। बच्चे हो जाते हैं ... और भी कितनी ही बातें उठ खड़ी होती हैं। ऐसी हालत में दासी अपनी मालकिन की उतनी सेवा भला कैसे कर सकती है जितनी उसे करनी चाहिए, जितनी कि मालकिन को ज़रूरत होती है। उसके लिए अब ऐसा करना मुमकिन नहीं होता। उसका दिमाग़ दूसरी ही चीज़ों में उलझा रहता है। मानवीय प्रकृति को ध्यान में रखकर ही हमें चीज़ों पर नज़र डालनी चाहिए। एक बार ऐसा हुआ कि हमारी गाड़ी गांव में से गुज़र रही थी। यही कोई आज से—ठीक—पन्द्रह साल पहले की बात होगी। कारिन्दे के यहां एक नौजवान लड़की—उसकी बेटी—हमें दिखाई दी। सचमुच वह बड़ी सुन्दर थी। इतना ही नहीं, तुम जानो, इतनी सलीक़ेदार कि लगा, वह एक अच्छी दासी बन सकती है। सो मेरी पत्नी ने मुझसे कहा—'कोको,'—तुम समझ गये होगे कि वह इसी दुलार के नाम से मुझे पुकारती थी—'इस लड़की को अपने साथ पीटर्सबर्ग ले चलें। यह मुझे पसन्द है, कोको।' मैंने कहा—'बिल्कुल ठीक, इसे अपने साथ ले चलो।' कारिन्दे ने, कहने की ज़रूरत नहीं, मेरे पांव चूमे। उसे उम्मीद तक नहीं थी कि उसका भाग्य यूं चमक उठेगा। तुम खुद सोचो ... लेकिन लड़की ज़रूर बेवक़ूफ़ों की तरह आंसू बहाने लगी। बेशक, शुरू शुरू में उसे भारी मालूम हुआ। मां-बाप का घर ... और इसी तरह की और और बातें... उसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। लेकिन वह बड़ी जल्दी हमसे अभ्यस्त हो गयी। शुरू में हमने उसे दासियों के कमरे में रखा। उसे, कहने की ज़रूरत नहीं, ट्रेन किया। और जानते हो लड़की ने अद्भुत उन्नति कर दिखायी। मेरी पत्नी तो जैसे उसपर मुग्ध हो गयी, और अन्त में उसे और सबों से

ऊपर उठाकर अपनी खास दासी बना लिया ... समझे ... और न्याय का तक़ाज़ा मुझे मजबूर करता है कि मैं कहूं कि मेरी पत्नी को ऐसी दासी पहले कभी नहीं मिली थी। नहीं, नाम को भी नही। बहुत ही दत्तचित्त, विनम्र और फ़रमानबरदार — जो चाहिए वह सब उसमें था। मेरी पत्नी बहुत ही अच्छी तरह उसे रखती, बल्कि कहना चाहिए कि उसने उसे सिर पर चढ़ा लिया था। वह उसे अच्छा पहनने को देती, अपनी मेज़ पर से उसे खाना खाने को देती, पीने के लिए उसे चाय देती आदि आदि, जैसा कि तुम खुद सोच सकते हो। हां तो दस साल तक वह इसी प्रकार मेरी पत्नी की सेवा करती रही। फिर यकायक, सुबह के सुहावने वातावरण में — ज़रा कल्पना तो करो — एक दिन बिना कोई सूचना दिये अरीना — उसका नाम अरीना था — मेरे कमरे में भागी हुई आयी और मेरे पांवों पर गिर पड़ी। यही वह चीज़ है जो, यह मैं बिना किसी लाग-लपेट के तुमसे कह रहा हूं, मैं सहन नहीं कर सकता। किसी भी मनुष्य को कभी भी अपनी निजी प्रतिष्ठा को आंखों से ओझल नहीं करना चाहिए। क्यों, क्या मेरी बात ठीक नहीं? मैंने उससे कहा — 'बोलो, क्या चाहती हो?' — 'अलेक्सान्द्र सीलिच, मेरे मालिक, आप मुझपर एक मेहरबानी कीजिये।' — 'क्या?' — 'मुझे ब्याह करने की इजाज़त दे दीजिये।' मैं क़बूल करता हूं कि उसकी यह बात सुनकर मैं हक्का-बक्का रह गया। 'लेकिन, पगली, क्या यह नहीं जानती कि तेरी मालकिन के पास दूसरी कोई दासी नहीं है?' — 'मालकिन की सेवा मैं वैसे ही करती रहूंगी जैसे अब तक करती आयी हूं।' — 'बेमतलब की बात मत करो! तेरी मालकिन ब्याही दासियों को रखना बरदाश्त नहीं कर सकती।' — 'मलान्या मेरी जगह ले सकती है।' — 'बस, बस, मुझसे ज्यादा बहस न कर।' — 'जैसी मालिक की मर्ज़ी ...' मैं मानता हूं कि उसने मुझे एकदम स्तब्ध कर दिया था। सच मानो, मेरा स्वभाव कुछ ऐसा ही है, कोई भी चीज़ मेरे हृदय को उतना — यह मैं दावे के साथ कह

सकता हूं–हां, उतना गहरा आघात नहीं पहुंचा सकती जितनी कि कृतघ्नता। तुम्हें बताने की ज़रूरत नहीं–तुम जानते ही हो–कि मेरी पत्नी कैसी है। जैसे ज़मीन पर फ़रिश्ता, भलाई की ज़िन्दा मिसाल। बुरे से बुरा आदमी भी उसका जी दुखाते हिचकेगा। हां तो मैंने अरीना को टाल दिया। मैंने सोचा, हो सकता है कि उसके अक़ल आ जाय। सच मानो, मैं यह यक़ीन करने के लिए तैयार नहीं था कि कृतघ्नता जैसी कुत्सित, काली चीज़ भी किसी में हो सकती है। लेकिन, जानते हो, हुआ क्या? छः महीने के भीतर ही वह फिर वही अनुरोध लिये मेरे सामने हाज़िर हो गयी। मैं स्वीकार करता हूं कि इस बार ग़ुस्से में आकर मैंने उसे कमरे से बाहर निकाल दिया और उसे धमकी दी कि मैं सारा क़िस्सा अपनी पत्नी से कह दूंगा। मैं भिन्ना उठा। लेकिन, इसके कुछ दिन बाद, मेरे अचरज की कल्पना करो जब मैंने देखा कि मेरी पत्नी, आंखों से आंसू बहाती, मेरे सामने आ मौजूद हुई। वह इतनी विचलित थी कि मैं सचमुच घबरा गया। 'अरे, हुआ क्या?'–'अरीना ... समझो न ... ओह, कहते शर्म मालूम होती है।'–'असम्भव! कौन है वह आदमी?'–'पेत्रूश्का, हमारा प्यादा।' मेरे विक्षोभ का बांध अब टूट पड़ा। मैं ऐसा ही आदमी हूं। अधूरी कार्रवाई मैं पसन्द नहीं करता। पेत्रूश्का ... नहीं, उसका भला क्या क़सूर? हम उसके कोड़े लगवा सकते हैं, लेकिन मेरी राय में क़सूर उसका नहीं है। अरीना ... ठीक, कहने-सुनने को अब और क्या रह गया है। मैंने, बेशक हुक्म दे दिया कि उसके बाल काट डाले जायं, उसे टाट के कपड़े पहनाय जायं, और उसे उसके गांव में वापस भेज दिया जाय। मेरी पत्नी को एक बहुत ही बढ़िया दासी से हाथ धोना पड़ा। लेकिन और कोई चारा भी नहीं था। जो हो, घर में अनैतिकता को किसी प्रकार भी सहन नहीं किया जा सकता। अच्छा यही है कि रोगी अंग को काटकर तुरंत अलग कर दिया जाय। सो यह है सारा मामला। अब तुम खुद फ़ैसला करो। तुम्हें मालूम है कि मेरी पत्नी

कैसी है ... हां, हां! बिलाशक ... एकदम फ़रिश्ता है! अरीना उसके मन में बस गयी थी। और अरीना यह जानती थी। और वह इतना साहस... बोलो, अब क्या कहते हो? और कोई चारा न था। उस लड़की की कृतघ्नता का घाव एक लम्बे अर्से तक टीस देता रहा। तुम कुछ भी कहो— इन लोगों से संवेदन की, हृदय की आशा करना बेकार है। भेड़िये को चाहे जितना खिलाओ-पिलाओ, जंगल की ललक उसके हृदय से कभी नहीं निकलेगी। उसने मुझे एक अच्छा सबक़ दिया। मैं तो बस तुम्हारे सामने केवल एक मिसाल रखना चाहता था ..."

और ज़्वेरकोव ने, अपने वाक्य को पूरा किये बिना ही, अपना सिर मोड़ लिया और अपने चोगे को बदन के इर्द-गिर्द और अधिक कसते हुए, मर्द की भांति अपने भावों को प्रकट नहीं होने दिया जो अनायास ही उसके दिल में उठने लगे थे।

पाठक संभवतः अब समझ गये होंगे मैंने क्यों संवेदनापूर्ण उत्सुकता से अरीना की ओर देखा। "चक्कीवाले से तुम्हारा ब्याह हुए क्या बहुत अर्सा हुआ है?" मैंने आखिर उससे पूछा।

"दो साल।"

"लेकिन यह सम्भव कैसे हुआ? क्या तुम्हारे मालिक ने विवाह करने की इजाज़त दे दी थी?"

"इन्होंने धन देकर मुझे मुक्त करा लिया।"

"इन्होंने, किसने?"

"सावेली अलेक्सेयेविच ने।"

"यह कौन है?"

"मेरे पति।" (येरमोलाई मन ही मन मुसकरा उठा।) "मेरे मालिक ने मेरे बारे में कभी आपसे कुछ कहा हो ... क्यों?" कुछ रुककर अरीना ने पूछा।

उसके इस सवाल का मुझसे कोई जवाब नहीं देते बना।

"अरीना!" दूर से चक्कीवाले ने पुकारा। वह उठी और चल दी।

"इसका पति क्या भला आदमी है?" मैंने येरमोलाई से पूछा।

"ऐसा ही है।"

"इनके बाल-बच्चे भी हैं?"

"एक था। लेकिन मर गया।"

"सो कैसे? चक्कीवाले को क्या इससे प्रेम हो गया था? क्या इसे मुक्त कराने के लिए उसे ज्यादा रक़म देनी पड़ी थी?"

"पता नहीं। यह पढ़-लिख सकती है। इनके कारबार के लिए यह फ़ायदे की चीज़ है। मेरा ख़याल है शायद वह इसे चाहता भी था।"

"और क्या तुम इसे बहुत दिनों से जानते हो?"

"हां। मैं इसके मालिक के यहां जाया करता था। उनकी जागीर यहां से दूर नहीं है।"

"और क्या तुम प्यादे पेत्रूश्का को भी जानते हो?"

"यानी प्योत्र वासील्येविच को? बेशक, मैं उसे जानता था।"

"वह अब कहां है?"

"उसे फ़ौज में भेज दिया गया था।"

कुछ देर हम चुप रहे।

"क्यों यह कुछ ऐसी ही मालूम होती है, जैसे बीमार हो?" अन्त में येरमोलाई से मैंने पूछा।

"होगी... लेकिन, मैं कहता हूं, कल शिकार की मौज रहेगी। सो क्या हरज है, अब थोड़ा सो लिया जाय।"

जंगली बत्तख़ों का एक दल हमारे सिरों के ऊपर से सनसनाता हुआ गुज़रा और पास ही नदी के पानी में छपाक से उनके उतरने की आवाज़ सुनाई दी। अब अंधेरा पूरी तरह घिर आया था, और ठंड पड़ने लगी थी। बुलबुल का मधुर संगीत झुरमुट में गूंज उठा। पुआल में हमने अपना बदन छिपाया और सो गये।

रसभरी का झरना

अगस्त के शुरू में गर्मी इतनी तेज़ पड़ने लगती है कि बहुधा सही नहीं जा सकती। इस मौसम में बारह और तीन बजे के बीच, दृढ़ से दृढ़ और धुनी शिकारी भी हार मान जाता है और फ़रमानबरदार से फ़रमानबरदार कुत्ता भी अपने मालिक की 'एड़ियां चाटना' शुरू कर देका है—अर्थात अपनी आंखों को दुःखद ढंग से मिचमिचाने और अपनी जीभ को जरूरत से ज्यादा बाहर लटकाये, अपने मालिक से चिपका रहता है। मालिक की झिड़कियों के जवाब में दीनता से वह दुम हिलाता है। उसके चेहरे पर विमूढ़ता छा जाती है। लेकिन आगे की ओर लपकने से कन्नी कतराता है। ठीक ऐसे ही एक दिन शिकार के लिए मुझे जाना पड़ा। जी चाहता था कि कहीं, कम से कम क्षण-भर के लिए, छांह में चलकर लेट लूं। लेकिन मैं अपने मन को रोके था और काफ़ी देर से उससे संघर्ष कर रहा था। मेरा कुत्ता, जो कभी हार नहीं मानता, काफ़ी देर से इधर-उधर झाड़ियों में भटक रहा था, हालांकि वह जानता था कि उसकी इस भाग-दौड़ से उसकी मुराद पूरी होने की ज्यादा उम्मीद नहीं। लेकिन गर्मी इतनी दमघोट थी कि आखिर मैं यह सोचने के लिए मजबूर हो गया कि चेतनता और शक्ति बटोरने के लिए थोड़ा सुस्ता लिया जाय। नन्ही इस्ता नदी तक, जिससे हमारे उदार पाठक पहले ही परिचित हैं, जैसे-तैसे मैं पहुंचा, तट के तीखे कगार से नीचे उतरा और गीले, पीतवर्ण रेत पर से होता हुआ उस झरने की दिशा में बढ़ा जो आस-पास के सभी क्षेत्रों में 'रसभरी के झरने' के नाम से प्रसिद्ध है। तट में एक दरार है

जो क्रमश: एक छोटे किन्तु गहरे नाले के रूप में चौड़ी होती गयी है। झरना इसी दरार में से फूटता है। और उससे बीस क़दम की दूरी पर झरना छलछलाता, किलकारियां भरता, नदी में गिरता है। नाले की ढलानों पर ओक-वृक्ष खड़े हैं, झरने के इर्द-गिर्द छोटी छोटी मख़मली घास की हरियाली बिछी है, और उसके ठंडे रुपहले पानी की सतह को सूरज की किरनें मुश्किल से ही कभी छू पाती हैं। आगे बढ़ता मैं झरने के निकट तक जा पहुंचा। घास पर बर्च की लकड़ी का एक प्याला पड़ा था जिसे कोई राह-चलता किसान, लोगों के भले के लिए, छोड़ गया था। मैंने अपनी प्यास बुझायी, वहीं छांह में पसर गया, और अपने इर्द-गिर्द नज़र डाली। उस खाड़ी में, जो नदी की ओर जाते जल-प्रवाह से बन गयी थी, और उस कारण लहरियों के चिन्ह जिसपर सदा अंकित होते रहते थे, मेरी ओर पीठ किये दो वृद्ध बैठे थे। उनमें से एक जो अपेक्षाकृत मज़बूत तथा लम्बे क़द का था और गहरे हरे रंग का साफ़-सुथरा लम्बा कोट तथा एक रोएंदार टोपी पहने था, मछलियां पकड़ रहा था। दूसरा आदमी दुबला-पतला और छोटे क़द का था। वह मोटे सूती कपड़े का थेगलीदार कोट पहने था और सिर से नंगा था। अपने घुटनों पर कीटों से भरा एक छोटा-सा बरतन थामे था, और कभी कभी अपना हाथ उठाकर अपने छोटे-से पके बालों वाले सिर के ऊपर इस तरह ले जाता था जैसे सूरज की धूप से उसे बचाना चाहता हो। मैंने उसे ज़रा ध्यान से देखा और झट पहचान लिया कि अरे, यह तो स्त्योपुश्का है, शुमीखिनो का रहनेवाला। पाठक मुझे इजाज़त दें कि मैं उनसे उसका परिचय करा दूं।

मेरे घर से कुछ मील दूर एक बड़ा-सा गांव है। गांव का नाम है शुमीखिनो। सन्त कोज़मा और सन्त दामिआन की मानता में यहां एक पत्थर का गिरजा बना है। इस गिरजे के मुंह दर मुंह कभी एक बहुत बड़ी गढ़ी थी जो विभिन्न नौकरों के घरों, आउट हाउसों, मरम्मतख़ानों, अस्तबलों और गाड़ीघरों, हम्माम और अस्थाई बावर्चीख़ानों, आगन्तुकों

तथा ओवरसीयरों के लिए उपगृहों, पौधाघरों, लोगों के लिए हिण्डोलों तथा कमोबेश उपयोगी अन्य भवनों से घिरी थी। इस गढ़ी में धनी ज़मीनदारों का एक परिवार रहता था। वे मज़े से जीवन बिता रहे थे कि एक सुबह, अचानक, यह सारी सम्पन्नता स्वाहा हो गयी। मालिक दूसरे घर में चले गये, और यह जगह जन-शून्य हो गयी। भीमाकार घर की भूमि को जो जलकर राख हो चुका था, साग-भाजी उगाने की जगह बना लिया गया, जहां-तहां पुरानी नींवों के अवशेषों के रूप में ईंटों के ढूह नज़र आते थे। आग की भेंट चढ़ने से बची कड़ियों को किसी न किसी तरह जोड़-तोड़कर एक छोटी-सी झोंपड़ी बना ली गयी थी। इसकी छत उन लट्ठों से डाली गयी थी जो, दस साल पहले, गौथिक शैली का एक मेहराबदार मण्डप बनाने के लिए ख़रीदे गये थे। माली मित्रोफ़ान, उसकी पत्नी अक्सीन्या और उनके सात बच्चे इसमें रहते थे। मित्रोफ़ान के लिए हुक्म था कि वह, इस जगह से कोई डेढ़ सौ मील दूर, अपने मालिक के दस्तरख़ान के लिए हरी सब्ज़ी और बाग़ की अन्य उपज भेजा करे। अक्सीन्या के ज़िम्मे एक तिरोल गाय की देख-भाल का काम था। यह गाय, ऊंचे दाम देकर, मास्को में ख़रीदी गयी थी। लेकिन वह बांझ निकली; फलतः जब से वह आयी थी, उसने एक बूंद भी दूध नहीं दिया था। 'ज़मीनदार' के एकमात्र पक्षी, सलेटी रंग के एक कलगीदार नर-हंस की देख-भाल भी उसे ही सौंपी गयी थी। बच्चों के लिए, उनकी मासूम उम्र का ख़याल करके, कोई ख़ास काम नहीं नियत किया गया था। इस तथ्य ने, बिना किसी रोक-टोक के, उन्हें और भी आलसी बना दिया। दो बार, संयोगवश, इसी माली के यहां मुझे रात बितानी पड़ी थी, और जब कभी मैं इधर से गुज़रता था तो वह मुझे खीरे दिया करता था। यह खीरे भी अजीब थे—जाने क्या बात थी, गर्मियों तक में ख़ूब बड़े बड़े, बेज़ायका और पनियल, पीले रंग के और मोटे छिलकेवाले। स्त्योपुश्का को पहले-पहल वहीं मैंने देखा। मित्रोफ़ान और उसके परिवार को, और

गिरजे के मुखिया वृद्ध गेरासिम को छोड़कर – जो बहरा था और जिसे, पुण्य का काम समझकर, सैनिक की एक आंखवाली पत्नी के साथ एक छोटे-से कमरे में जगह दे दी गयी थी – गृह-दासों में से एक भी जीव अब शुमीखिनो में नहीं रहा था। रहा स्त्योपुश्का, जिससे पाठकों का मैं परिचय कराना चाहता हूं। सो उसे मानव जाति में नहीं गिना जा सकता, और गृह-दासों की कोटि में उसका शुमार करना तो और भी दूर की बात है।

हर आदमी का समाज में कोई न कोई स्थान होता है, कम से कम किसी न किसी प्रकार के नातों में वह गुंथा होता है। प्रत्येक गृह-दास, मज़दूरी न सही, कम से कम तथाकथित 'राशन' पाता है। स्त्योपुश्का के पास जीविका के क़तई कोई साधन नहीं थे। किसी के साथ उसका कोई नाता-रिश्ता नहीं था। उसके अस्तित्व का किसी को कोई आभास नहीं था। इस आदमी का कोई अतीत तक नहीं था। किसी के मुंह से उसका कोई क़िस्सा सुनने में नहीं आता था। मर्दुमशुमारी-खाते में भी सम्भवतः कभी उसका नाम नहीं चढ़ा था। बस धुंधली-सी अफ़वाह थी कि किसी ज़माने में वह किसी का अरदली रह चुका था, लेकिन वह कौन था, कहां से आया था, किस बाप का बेटा था, और किस प्रकार वह शुमीखिनो के लोगों में आ मिला, कैसे उसे वह मोटे कपड़े का लम्बा कोट हाथ लगा जिसे वह युगों-युगों से पहनता आ रहा था, कहां वह रहता था और क्या उसके जीवन का अवलम्ब था, इन सब सवालों के बारे में कोई भी कुछ नहीं जानता था। और सच पूछो तो इस विषय में कभी कोई दिलचस्पी भी नहीं लेता था। अलबत्ता दादा त्रोफ़ीमिच ही एक ऐसे थे जिन्हें सभी गृह-दासों की चार पीढ़ियों को उनके पुरखों की सीधी परम्परा तक का सारा हाल मालूम था। कहते हैं कि एक बार उन्होंने, अपनी याद को टटोलते हुए, यह बताया था कि स्त्योपुश्का एक तुर्की औरत का रिश्तेदार था जिसे स्वर्गीय

मालिक – ब्रिगेडियर अलेक्सेई रोमानिच – किसी लड़ाई में से एक माल-गाड़ी में लाद लाये थे। पुराने रूसी रिवाज के अनुसार पर्व-त्योहारों पर दान-दक्षिणा तथा मोथी के बड़ों और वोद्का की बहार होती है – ऐसे दिनों में भी स्त्योपुश्का न तो खाने की मेज़ों के निकट दिखाई देता था, और न शराब के पीपों के निकट, न तो वह मालिक को सलामी देता था, न उनका हाथ चूमता था और न ही मालिक की नजरों की छत्रछाया में उनके स्वास्थ्य के लिए कारिन्दे के गावदुम हाथों से भरकर दिया गया जाम छलकाता था। पास से गुज़रती कोई दयालु आत्मा इस बेचारे को मालपूवे का अध-खाया टुकड़ा अगर उसके आगे डाल देती हो तो अलग बात है। ईस्टर के दिन लोग उससे कहते "प्रभु ईसा जी उठे हैं" लेकिन उसकी चीकट आस्तीन ऊपर न उठती, और अपनी जेब की गहराइयों में से कोई रंगीन अण्डा न निकाल पाता जो वह आंखें मिचमिचाते और हांफते हुए, अपने छोटे मालिकों या ख़ुद मालकिन को भेंट कर सके। गर्मियों में वह मुर्ग़ीघर के पीछे एक छोटी-सी खपरैल में पड़ा रहता, और जाड़ों में हम्माम की बग़लवाली छोटी-सी कोठरी में। गहरे बर्फ़-पाले में रात को वह पुआल-घर में जा पड़ता। गृह-दास उसे देखने के आदी हो गये थे। कभी कभी वे उसे लतिया भले ही देते, लेकिन उसका हाल-चाल पूछने की बात कभी किसी के दिमाग़ में न आती। और जहां तक ख़ुद उसकी बात है, वह तो ऐसा मालूम होता था जैसे ओंठ बन्द किये ही उसने जन्म लिया हो। अग्निकाण्ड के बाद इस सर्व-परित्यक्त जीव ने मित्रोफ़ान माली की शरण ली। माली ने उसे अपने हाल पर छोड़ दिया। उसने उससे न तो यह कहा कि "मेरे साथ रहो", और न ही उसे वहां से खदेड़कर बाहर निकाला। और वह स्त्योपुश्का माली के यहां नहीं, बल्कि बाग़ में रहता था। एकदम निःशब्द वह इधर से उधर गश्त लगाता, जब कभी छींक या खांसी आती तो मुंह पर हाथ अड़ा लेता, जैसे उसे छींकते या खांसते कुछ डर मालूम होता हो। हर घड़ी वह व्यस्त रहता।

चींटी की भांति दबे-पांव, बिना कोई खटका किये, इधर से उधर टुकरता रहता। और यह सब इस लिए कि कुछ खाना हाथ लग जाय, केवल पेट में डालने के लिए कुछ मिल जाय। और सचमुच, पेट भरने के लिए अगर वह सुबह से रात तक इस तरह न भटकता, तो हमारे इस दयनीय मित्र का निश्चय ही भूख से अन्त हो गया होता। इससे दुःखद और क्या होगा कि सुबह उठो तो यह भी न मालूम हो कि आज रात तक खाने को क्या होगा। बाड़े की ओट में बैठकर कभी स्त्योपुश्का मूली में दांत गड़ाता, या गाजर को चबाता, या गोभी के गंदे डंठलों को चीथता। कभी वह, जाने किस लिए, पानी का डोल लिये घिसटता कांखता और कराहता नज़र आता, या किसी छोटे-से बरतन के नीचे आग जलाते और अपने कोट की तलहटी में से छोटे छोटे काले टूकड़े-से निकालकर बर्तन में छोड़ता दिखाई देता। या वह काठ के अपने छोटे-से घरौंदे में खटपट करता रहता – कोई कील गाड़ता, रोटी रखने के लिए तख़्ता लगा रहा होता। और यह सब वह चुपचाप करता, मानो चोरी कर रहा हो। इससे पहले कि आप घूम कर देखें, वह फिर दुबक जाता। कभी कभी, यकायक, दो-चार दिन के लिए वह ग़ायब हो जाता, लेकिन उसकी गैरहाज़िरी की ओर, कहने की आवश्यकता नहीं, किसी का ध्यान नहीं जाता था ... फिर, वह अचानक दिखाई देने लगता – किसी बाड़े की ओट में लुका-छिपा, टहनियां बटोरकर पतीली के नीचे आग सुलगाते हुए। छोटा-सा उसका मुंह था, पीली पीली आंखें, बाल भौंहों तक नीचे लटके हुए, नुकीली नाक, बड़े बड़े पारदर्शी कान – चमगादड़ जैसे, और वह दाढ़ी जो सदा, एक पखवारे से बढ़ी मालूम होती थी। यह दाढ़ी न घटती थी, न बढ़ती थी। हां तो यह था वह स्त्योपुश्का जो इस्ता के तट पर एक अन्य वृद्ध के संग मुझे दिखाई दिया।

मैं आगे बढ़ा, उनसे बन्दगी-सलाम की, और उनके पास बैठ गया। स्त्योपुश्का का संगी भी मेरा परिचित निकला। मैंने उसे पहचान लिया।

वह काउण्ट प्योत्र इल्यीच क० का दास हुआ करता था – मिखाइलो सावेल्येव, उपनाम – तुमान (मतलब, कोहरा) – जो अब उन्मुक्त हो गया था। वह तपेदिक के एक मरीज़, बोल्खोव के नगरवासी के साथ रहता था। यह नगरवासी एक सराय का मालिक था जिसमें मैं कई बार ठहर चुका था। ओरेल राजपथ से सफ़र करनेवाले युवा अफ़सर तथा सैलानी तबीयत के अन्य लोग (धारीदार मुलायम कम्बलों में दुबके सौदागरों को दूसरे ही काम रहते हैं) ओइत्स्कोये नामक बड़े गांव से थोड़ी ही दूर, क़रीब क़रीब राजपथ से लगी, लकड़ी की एक काफ़ी बड़ी दो मंज़िला इमारत आज दिन भी देख सकते हैं। इमारत एकदम वीरान पड़ी है, इसकी छत टूट-फूट गयी है और खिड़कियों में तख़्ते जड़े हैं। दोपहर के समय जब उजली रुपहली धूप खिली होती है, तो इस खण्डहर से अधिक उदास किसी अन्य चीज़ की कल्पना नहीं की जा सकती। इसी जगह कभी काउण्ट प्योत्र इल्यीच रहा करता था। वह पुराने ज़माने का रईस था। उसकी मेहमाननेवाज़ी की शोहरत थी। एक समय था जब समूचा प्रान्त उसके घर पर जमा हुआ करता था, नाच-गाने की महफ़िल लगती थी – और घर पर ही सिखाये गये आर्केस्ट्रा की तेज़ ऊंची आवाज़ तथा आतिशबाज़ी और रोशनियां हुआ करतीं; लोग जी भरकर जशन मनाते थे। और, इसमें शक नहीं कि वृद्धा स्त्रियां जब उधर से गुज़रती हैं तो जागीरदार की वीरान हवेली को देखकर एक से अधिक के मुंह से आह निकल जाती है,. पुराने दिनों और अपनी बीती हुई युवावस्था की याद उनके हृदय को मथ डालती है। काउण्ट एक लम्बे अर्से तक महफ़िलों का यह समा बांधते रहे और चेहरे पर सुहावनी मुसकान लिये जी-हुज़ूर मेहमानों के बीच कभी यहां तो कभी वहां छाये रहे। लेकिन उनकी मिल्कियत, दुर्भाग्य से, इतनी नहीं थी कि जीवन भर उनका साथ देती। सब कुछ नष्ट कर देने के बाद अपने लिए किसी नौकरी की खोज में, वह पीटर्सबर्ग के लिए रवाना हुए और, अपनी कोशिशों का कोई फल

पाये बिना, किसी होटल के एक कमरे म उनकी मृत्यु हो गयी। तुमान उन्हीं का एक भण्डारी था, और काउण्ट के जीवन-काल में ही उसने अपनी आज़ादी प्राप्त कर ली थी। क़रीब सत्तर वर्ष की उसकी आयु थी। सुडौल और आह्लादपूर्ण उसका चेहरा था। वह बराबर मुसकराता रहता, वैसे ही जैसे केवल कैथरीन के काल के लोग मुसकरा सकते हैं—एक साथ राजसी और अनुग्रह से भरी मुसकान। बोलते समय वह धीमे से अपने होंठों को खोलता और धीमे से ही बंद करता था, मग्न भाव से अपनी आंखों को मिचमिचाता था और कुछ गुनगुनाकर बोलता था। नाक साफ़ करने और हुलास की चुटकी लेने का काम भी वह इत्मीनान के साथ ही करता था, इस प्रकार जैसे वह कोई भारी महत्व का काम कर रहा हो।

"हां तो मिखाइलो सावेलिच," मैंने कहना शुरू किया, "अभी तक एकाध मछली हाथ आयी या नहीं?"

"यह देखिये, ज़रा मेरी डलिया में झांकने की कृपा कीजिये। दो पर्च और पांच रोच मछलियां मैंने पकड़ी हैं... ज़रा इन्हें दिखाओ तो, स्त्योपुश्का।"

स्त्योपुश्का ने डलिया मेरी ओर बढ़ा दी।

"और कहो, स्तेपान, तुम्हारे क्या हाल-चाल हैं?" मैंने उससे पूछा।

"ओह... ओह... बुरा... बहुत बुरा तो नहीं, हुज़ूर," स्तेपान ने हकलाते हुए कहा, जैसे उसकी जीभ पर कोई भारी बोझ लदा हो।

"और मित्रोफ़ान... वह तो अच्छी तरह है न?"

"अरे... हां... हां, हां, मालिक।"

बेचारे ने मुंह फेर लिया।

"लेकिन ज़्यादा मछलियां नहीं फंस रहीं," तुमान ने कहा, "बेहिसाब गर्मी है। मछलियां निढाल होकर झाड़ियों में दुबकी सो रही हैं। स्त्योपा,

कांटे में केंचवा तो लगाओ। (स्त्योपुश्का ने एक कीड़ा बाहर निकाला, अपनी खुली हथेली पर उसे रखा, दो या तीन बार उसे ठोका, कांटे में उसे लगा दिया, उसके ऊपर थूका, और तुमान को दे दिया।) धन्यवाद, स्त्योपा... और आप, मालिक, आप," मेरी ओर मुड़ते हुए उसने कहना जारी रखा, "आपने क्या शिकार के लिए इधर आने की किरपा की है, मालिक?"

"जो समझो।"

"ओह... और वह आपका कुत्ता है, अंग्रेजी है कि जरमन?"

वृद्ध को, कभी कभी अपनी बड़ाई करने का शौक था। वह जैसे प्रकट करना चाहता था, "ऐसा-वैसा न समझना, मैंने भी दुनिया देखी है"।

"इसकी नसल-वसल का तो कुछ पता नहीं, लेकिन यों कुत्ता अच्छा है।"

"ओह... और शिकारी कुत्तों से भी तो शिकार करते होंगे आप?"

"हां, कुत्तों के दो झुंड मेरे पास हैं।"

तुमान ने मुसकराकर अपना सिर हिलाया।

"ठीक ऐसा ही। एक आदमी है जो कुत्तों पर जान देता है, और दूसरा है कि किसी भाव भी उन्हें नहीं लेना चाहता। मेरे तो हक़ीर ख़याल में कुत्तों से ज़रा रोब पड़ता है, और इस लिए उन्हें रखना भी चाहिए... और सभी कुछ ढंग का हो—चकाचक! घोड़े भी चकाचक, शिकार हांकनेवाले भी चकाचक पूरी तरह से लैस जैसा कि उन्हें होना चाहिए, और बाक़ी सब भी चकाचक। स्वर्गीय काउण्ट—भगवान शांति दें उन्हें—मैं मानता हूं, शिकार से कोई ख़ास वास्ता नहीं रखते थे। नहीं, कभी नहीं। लेकिन फिर भी उनके पास कुत्ते थे, और साल में दो बार वह उनके साथ बाहर निकलते थे। शिकार हांकनेवाले, महीन गोटेदार लाल रंग के चोगे पहने, अहाते में जमा हो जाते, और अपने सिंघे बजाते।

साहिब बाहर जाने की किरपा करते, और साहिब का घोड़ा उनके पास ले जाया जाता। साहिब घोड़े पर सवार होते, शिकार हांकनेवालों का मुखिया रकाब में उनके पांव डालता, टोपी उतारकर उन्हें सलामी झुकाता, और लगाम अपने टोप में अड़ाकर साहिब को भेंट करता। साहिब, किरपा कर, यों अपना चाबुक चटकारते, शिकार हांकनेवाले हांक लगाते, और वे फाटक से बाहर हो जाते। एक शिकारिया, मालिक के दो प्रिय कुत्तों को रेशमी रस्सी से थामे, काउण्ट के पीछे घोड़े पर सवार है, और आप जानें, वह कुत्तों का पूरा ख़याल रखता है... और शिकारिया, कज़ाक काठी पर ऐसा तनकर बैठा है जैसे वही राजा हो, ख़ूब लाल उसके गाल थे, और अपनी आंखों को ऐसे मटकाता... और ऐसे मौक़ों पर, आप जानो, मेहमान भी मौजूद होते, मौज-मज़े उड़ाते, मान-मर्जाद से सब कृत्य संपन्न होते... ओह! वह चलती बनी, शैतान!" बातों का सिलसिला तोड़ते हुए अचानक अपनी डोरी को उसने खींचा।

"कहते हैं कि काउण्ट अपने ज़माने में काफ़ी आज़ाद जीवन बिताते थे?"

वृद्ध ने कीड़े के ऊपर थूका, और डोरी को फिर पानी में डाल दिया।

"दुनिया जानती है, वह बहुत ऊंचे कुलीन थे। कहते हैं पीटर्सबर्ग के चोटी के आदमी उनसे मिलने आया करते। सीने पर नीले फ़ीते लगाये वे मेज़ पर बैठते और खाना खाते। और सच, वह उनकी तबीयत ख़ुश करना जानते थे। कभी कभी वह मुझे बुला भेजते। 'तुमान,' वह कहते, 'मुझे कल ज़िन्दा स्टर्जन मछलियां दरकार हैं। सो देखना, वे हाज़िर रहें। सुन लिया न?'—'हां, हुज़ूर सुन लिया।' ज़री के लम्बे कोट, बनावटी बाल, छड़ियां, इत्र-फुलेल, बढ़िया क़िस्म का ओडीकोलोन, सुंघनी की डिबियां, बहुत बड़ी बड़ी तस्वीरें—ये सब वह ख़ुद पेरिस से मंगवाते थे। जब वह कोई दावत देते तो, बाप रे, मेरा करतार गवाह

है, खूब आतिशबाज़ियां छूटतीं, और गाड़ियों का तांता लग जाता। तोपें तक दगतीं। एकदम चालीस आदमी आर्केस्ट्रा बजाते। उन्होंने एक जर्मन बैण्डमास्टर रख छोड़ा था। लेकिन वह जर्मन था भयानक नक-चढ़ा। वह भी उसी मेज़ पर मालिक के साथ बैठकर खाना खाना चाहता। सो हुज़ूर ने उसे धता बताने का हुक्म जारी कर दिया। 'हमारे बाजा बजानेवाले बैण्डमास्टर के बिना भी अपना काम चला सकते हैं,' उन्होंने कहा। मालिक हो तो ऐसा। हां तो फिर नाच शुरू होता, और वे सुबह तक नाचते रहते, ख़ास तौर से इकोस्साइसे मात्रादूर... ओह... अरे वाह! पकड़ लिया!" (वृद्ध ने डोरी खींचकर एक छोटी पर्च-मछली पानी से बाहर निकाली।) "यह लो, स्त्योपा! मालिक सोलहों आना मालिक थे, जैसा कि एक मालिक को होना चाहिए," अपनी डोरी को फिर पानी में छोड़ते हुए वृद्ध कहता गया, "और दिल के भी वह मेहरबान थे। कभी कभी वह घूंसा भी दे बैठते, मगर इससे पहले कि आप पलटकर देखें, वे उसे भूल भी जाते। बस, उनमें एक ही बात थी—वे रखेलियों के शौक़ीन थे। उफ़, वे रखेलियां! खुदा उन्हें माफ़ करें। उन्होंने ही मालिक को बरबाद भी किया। फिर भी, आप जानें, ज़्यादातर नीचे दर्जे से ही वे उन्हें चुनते थे। आप सोचते होंगे कि उन लौण्डियों की ज़रूरतें ही क्या होती होंगी? ऐसा नहीं, सारे यूरोप में जो भी सबसे क़ीमती चीज़ें हैं, उनमें से हर चीज़ उन्हें ज़रूर चाहिए। कहने को कह सकते हैं—'जैसा जिसको अच्छा लगे, क्यों न वह वैसा ही जीवन बिताय! मालिक की बात मालिक जानें'... लेकिन अपने को बरबाद करने की भला क्या ज़रूरत थी? उनकी रखेलियों में एक ख़ास थी। अकुलीना उसका नाम था। वह अब ज़िन्दा नहीं रही—खुदा उसकी आत्मा को राहत दें। सीतोवो के एक कान्स्टेबल की लड़की थी। बाप रे, पूरी हर्राफा। काउण्ट को चपतियाने तक से नहीं चूकती थी! जादू कर रखा था उनपर! मेरे भतीजे को उसने फ़ौज में भेजवा दिया। भला क्यों? इसलिए

कि उसने उसकी नयी पोशाक पर चाकलेट गिरा दी थी... और अकेले उसी के साथ उसने ऐसी हरकत नहीं की, फिर भी, ओह, क्या दिन थे वह!" गहरी उसास छोड़ते हुए अन्त में वृद्ध ने कहा। उसका सिर आगे की ओर लटक आया, और वह चुप हो गया।

"तो यह कहो कि तुम्हारे मालिक बड़े सख़्त थे?" कुछ चुप रहने के बाद मैंने कहना शुरू किया।

"उन दिनों का चलन ही ऐसा था, श्रीमान।" अपना सिर हिलाते हुए उसने जवाब दिया।

"मतलब कि आज यह सब कोई नहीं करता, क्यों?" मैंने टिप्पणी की, और उसके चेहरे पर अपनी आंखें जमाये रहा।.

उसने मेरी ओर देखा।

"बेशक, अब पहले से कुछ बेहतर है।" वह बुदबुदाया, और अपनी डोरी में उसने और ढील दे दी।

हम छांह में बैठे थे, लेकिन छांह में भी गर्मी के मारे दम घुटा जा रहा था। बोझिल और धुंधली उमस से वातावरण भरा था। चुनचुनाते चेहरे को बेचैनी से हम ऊपर उठाते, इस उम्मीद से कि हवा के स्पर्श का कुछ अनुभव होगा, लेकिन हवा थी कहां। नीले और गहरे आकाश में सूरज तप रहा था। हमारे ठीक सामने, तट के दूसरी ओर, जई का सुनहरा खेत फैला था जिसमें, जहां-तहां, नागदौने के पौदे उग आये थे। जई की बालों में ज़रा भी कम्पन नहीं था—वे एकदम स्थिर थीं। कुछ और नीचे किसी किसान का एक घोड़ा घुटनों तक नदी के पानी में खड़ा अलस भाव से अपनी गीली दुम धीरे धीरे हिला रहा था। छाते-सी छायी एक झाड़ी के नीचे, रह रहकर, एक बड़ी मछली तिरकर ऊपर आती, और पानी की सतह पर बुलबुले नाचने लगते, और फिर अपने पीछे हल्की लहरियां छोड़ती, धीरे से तलहटी में लौट जाती। झुलसी हुई घास में टिड्डे शोर मचा रहे थे। लवा-पक्षी बेदम और अनमने से टिटिया रहे

थे। बाज़-पक्षी, निर्बाध गति से, चरागाहों के ऊपर तैर रहे थे। रह रहकर वे एक जगह पर स्थिर हो जाते, अपने परों को जल्दी जल्दी फड़फड़ाते और दुम को पंखे की तरह फैलाते। गर्मी से सुन्न हम निश्चल बैठे थे। सहसा अपने पीछे नाले में, हमें आहट सुनाई दी। कोई झरने की ओर आ रहा था। मैंने घूमकर देखा। क़रीब पचास वर्ष की आयु के एक किसान पर मेरी नज़र पड़ी। वह धूल से पटा था, बदन पर फतुरी और पांव में छाल की चप्पलें पहने था। हाथ में वह एक बेंत का झावा लिये था और कंधे पर अपना कोट डाले था। वह झरने के किनारे पहुंचा, जी भरकर उसने पानी पिया और फिर सीधा खड़ा हो गया।

"अरे, व्लास! " उसकी ओर ताकते हुए तुमान ने चिल्लाकर कहा। "मज़े में तो हो, दोस्त! यहां कहां से टपक पड़े ? "

"और तुम... तुम भी तो मज़े में हो न, मिखाइलो सावेलिच! " हमारे अधिकाधिक निकट आते हुए किसान ने कहा। "काले कोसों से आ रहा हूं।"

"भई वाह, कहां चले गये थे तुम ? " तुमान ने उससे पूछा।

"अरे, मास्को गया था, अपने मालिक के पास।"

"क्यों, कुछ काम था क्या ? "

"हां, गया था कि मुझपर कुछ इनायत कर दें।"

"किस सिलसिले में ? "

"यही कि मेरा लगान घटा दें, या उसके बदले बेगार ले लें, या मुझे कोई दूसरी ज़मीन दे दें, या ऐसे ही कुछ और रास्ता निकाल दें। मेरा लड़का मर गया है, सो अकेले पूरा नहीं पड़ता।"

"तुम्हारा लड़का मर गया ? "

"हां, मर गया," कुछ रुककर किसान ने कहा, "मेरा लड़का... मास्को में गाड़ी हांकने का धंधा करता था। सच पूछो तो मेरे लगान को भी वही पूरा पाटता था।"

"अरे, तो क्या तुम अब लगान देते हो?"

"हां हम लगान देते हैं।"

"तो तुम्हारे मालिक ने क्या कहा?"

"मालिक ने क्या कहा? बाहिर निकाल दिया। कहने लगे, 'सीधे मेरे सिर पर चढ़े चले आये, क्यों? इन कामों के लिए कारिन्दा मौजूद है। तुम्हें पहले कारिन्दे से अर्ज़ करनी चाहिए... और तुम्हारे लिए दूसरी ज़मीन क्या मै आसमान से लाकर दूंगा? तुम पर जो रक़म निकलती है, पहले उसका तो भुगतान करो।' बहुत ग़ुस्से हुआ।"

"तो फिर... तुम लौट आये?"

"हां, मैं लौट आया। मुझे यह मालूम करना था कि मेरा लड़का कोई अपना सामान तो नहीं छोड़ गया। लेकिन मुझे कोई सीधा जवाब नहीं मिला। मैंने उसके मालिक से कहा, 'मैं फ़िलीप का बाप हूं।' और वह बोला, 'मैं क्या जानूं? और तुम्हारा लड़का,' उसने कहा, 'वह कुछ नहीं छोड़ गया। उल्टे कुछ मेरे पैसे उसकी तरफ़ बनते थे।' सो मैं वहां से भी चला आया।"

मुसकराते हुए वह इस सब का ऐसे वर्णन कर रहा था, जैसे वह किसी और के बारे में बातें कर रहा हो। लेकिन उसकी छोटी, सकुची-सिमटी आंखों से आंसू झांक रहे थे और उसके होंठ कांप रहे थे।

"तो क्या तुम अब अपने घर जा रहे हो?"

"और कहां जाऊं? बेशक, घर ही जा रहा हूं। घरवाली भूखों मर रही होगी।"

"तब तो तुम..." सहसा स्त्योपुश्का के मुंह से निकला, लेकिन कुछ विमूढ़-सा होकर चुप हो रहा, और अपना कीड़ों वाला बरतन टटोलने लगा।

"क्या तुम कारिन्दे के पास जाओगे?" कुछ अचरज के साथ स्त्योपुश्का की ओर देखते हुए तुमान कहता गया।

"उसके पास जाकर क्या करूंगा? यूं भी तो बक़ाया सिर पर चढ़ा है। मरने से पहले साल-भर मेरा लड़का बीमार पड़ा रहा। वह अपना लगान तक नहीं अदा कर पाया, लेकिन उसकी मुझे चिन्ता नहीं। वे मुझसे कुछ वसूल नहीं कर सकते... हां, मेरे दोस्त चाहे, जितनी चालाकी दिखायं—मेरे पास देने को है ही क्या!" (किसान हंसने लगा।) "किन्तिल्यान सेम्योनिच का सारा काइयांपन..."

व्लास फिर हंसा।

"ओह, भइया व्लास, ज़माना बहुत बुरा आ गया है," तुमान ने सप्रयास कहा।

"बुरा! अरे नहीं!" (व्लास की आवाज़ चरचरा उठी।) "उफ़, कितनी गर्मी है!" आस्तीन से अपने चेहरे को पोंछते हुए उसने फिर कहा।

"तुम्हारे मालिक का क्या नाम है?" मैंने उससे पूछा।

"काउण्ट ***, वालेर्यान पेत्रोविच।"

"प्योत्र इल्यीच का लड़का, वही न?"

"हां, प्योत्र इल्यीच का लड़का," तुमान ने जवाब दिया, "अपने जीते-जी ही प्योत्र इल्यीच ने उन्हें व्लासवाला गांव दे दिया था।"

"उसका स्वास्थ्य तो ठीक है?"

"हां, ख़ुदा का शुक्र है," व्लास ने जवाब दिया। "एकदम लाल भभूका हो गया है। चेहरे से ऐसा लगता है जैसे उसमें गद्दियां भरी हों!"

"देखिये न, सरकार," मेरी ओर मुड़ते हुए तुमान ने कहना जारी रखा, "मास्को के आस-पास भले ही अच्छा हो, लेकिन यहां का तो हाल ही कुछ दूसरा है। लगान तक का जुगाड़ नहीं हो पाता।"

"कुल कितना लगान तुम्हारे सिर निकलता है?"

"पचानवे रूबल," व्लास बुदबुदाया।

"देखा आपने! और ज़मीन भी वह कितनी ज़रा-सी है! सब ओर तो मालिक का जंगल फैला है।"

"और वह भी, कहते हैं, उन्होंने बेच डाली है," किसान ने कहा।

"अब आप ही देखिये। स्त्योपुश्का, मुझे एक कीड़ा तो दो। अरे, क्या ऊंघने लगे, स्त्योपुश्का?"

स्त्योपुश्का चौंक पड़ा। किसान हमारे पास बैठ गया। हम फिर ख़ामोशी में डूब गये। दूसरे तट पर कोई गा रहा था, लेकिन गीत कुछ बहुत ही उदास था। बेचारे व्लास की निराशा और भी गहरी हो उठी...

आध घंटे बाद एक-दूसरे से विदा लेकर हम वहां से चल दिये।

ज़िले का डाक्टर

शरद् के दिन थे। शिकार से लौटते समय मैं ठंड खा गया और रास्ते में ही बीमार पड़ गया। सौभाग्य से बुख़ार का आक्रमण ज़िला-नगर की सराय में हुआ। मैंने डाक्टर को बुला भेजा। लगभग आधे घंटे बाद ज़िले का डाक्टर आ गया। मंझोला क़द, काले बाल, और क्षीण काया। पसीना लानेवाली एक टकसाली दवा उसने मेरे लिए तजवीज़ की। राई का लेप करने का आदेश दिया और सूखी खखार लेते तथा दूसरी ओर देखते हुए, बड़ी सफ़ाई के साथ, पांच रूबल का एक नोट उसने अपनी आस्तीन के कफ़ में खिसका लिया। इसके बाद घर जाने के लिए वह उठने को हुआ, लेकिन गया नहीं। जाने कैसे क्या हुआ कि बातें करने बैठ गया। बुख़ार ने मुझे निढाल कर दिया था। साफ़ दिखाई दे रहा था कि रात को नींद नहीं आयेगी। सो मैं इससे खुश हुआ कि चलो थोड़ा गपशप के लिए एक अच्छा साथी मिल गया। चाय आयी, और डाक्टर खुलकर बातें करने लगा। वह सूझबूझ का आदमी था, और जोश के साथ कुछ मज़ाक़िया अन्दाज़ में वह अपने को व्यक्त कर रहा था। इस दुनिया में अजीब अजीब बातें देखने को मिलती हैं। कितने ही लोग होते हैं जिनके साथ रहते एक लम्बा अर्सा बीत जाता है, दोस्ती का सा सम्बन्ध भी हो जाता है, लेकिन उनके साथ एक बार भी खुलकर—अपनी आत्मा की गहराई से—बातें करने का कभी सवाल तक नहीं उठता। इसके प्रतिकूल कुछ लोग ऐसे होते हैं जिनसे अभी मुश्किल से परिचय भी

नहीं हुआ कि आप, एकबारगी, उनके सामने—या वे आपके सामने—अपना दिल खोलकर रख देते हैं—जैसे आप किसी पादरी के सामने अपने सारे गुप्त भेद प्रकट कर रहे हों। कह नहीं सकता कि किस प्रकार मैंने अपने इस नये मित्र का विश्वास प्राप्त कर लिया—कोई भी तो ऐसी बात नहीं हुई, फिर भी उसने एक विचित्र घटना मुझे सुनायी। अपने उदार पाठकों की जानकारी के लिए उसकी इस कहानी को मैं यहां पेश करना चाहता हूं और खुद डाक्टर के शब्दों में ही मैं उसे सुनाने का प्रयत्न करूंगा।

"तो आप नहीं जानते,"—क्षीण और थरथराती-सी आवाज़ में (बिना कुछ मिलाये बेर्योज़ोव हुलास सूंघने का यह एक आम नतीजा होता है) उसने कहना शुरू किया, "यहां के जज मीलोव, पावेल लुकीच से आपका कभी वास्ता नहीं पड़ा न? आप उन्हें नहीं जानते? लेकिन छोड़ो, इससे कोई फ़रक़ नहीं पड़ता।" (उसने अपना गला साफ़ किया और आंखों को मला।) "हां तो, आप जानो, यह घटना—ठीक ठीक कहूं तो—लैण्ट-पर्व के दिनों में घटी, ठीक उन्हीं दिनों जब बर्फ़ पिघलना शुरू होती है। मैं उनके—आप जानो—अपने इन्हीं जज महोदय के घर पर बैठा ताश का खेल प्रिफ़रेन्स खेल रहा था। हमारा यह जज बहुत ही बढ़िया जीव है और प्रिफ़रेन्स खेल का शौक़ीन। अचानक," (यह शब्द डाक्टर की ज़ुबान की नोक पर थिरकता रहता था) "उन्होंने मुझे बताया कि कोई नौकर आपके लिए आया है। मैंने पूछा, 'क्या चाहता है?'—'वह यह पुर्ज़ा लाया है। हो न हो, किसी रोगी ने भेजा होगा।'—'ज़रा देखूं तो, कैसा पुर्ज़ा है?' मैंने कहा। पुर्ज़ा सचमुच ही एक रोगी ने भेजा था— ठीक —तो आप जानो—यही हमारा पेशा है, हमारा दाना-पानी है... लेकिन हुआ क्या, सो सुनो... पुर्ज़ा एक ठकुराइन की ओर से था, विधवा थी वह। उसने लिखा था—'मेरी लड़की दम तोड़ रही है। ख़ुदा के लिए चले आओ। सवारी के

लिए गाड़ी साथ भेज रही हूं।' यह सब तो ठीक था। लेकिन वह नगर से बीस मील दूर रहती थी। कमरे से बाहर आधी रात का घुप्प अंधेरा था, और सड़कों की यह हालत थी कि बस कुछ न पूछिये। और चूंकि वह खुद ग़रीब थी, इसलिए दो रूबल से अधिक पल्ले पड़ने की उम्मीद नहीं थी, हालांकि भरोसा इसका भी नहीं था। यह भी हो सकता था कि सन का बना कपड़ा और थोड़ा अनाज देकर ही टाल दिया जाता। यह सब होने पर भी, आप जानो कि फ़र्ज़ पहले, बाद में कुछ और। एक इन्सान की ज़िन्दगी का सवाल था। प्रान्तीय कमीशन के एक परमावश्यक सदस्य काल्लियोपिन के हाथों में मैंने अपने पत्ते थमाये, और घर लौट चला। देखा, ड्योढ़ी के सामने एक छोटी-सी चरमर गाड़ी खड़ी है जिसमें देहाती के घोड़े जुते हैं, पेट बढ़े हुए—बेहद बढ़े हुए—और उनके बाल नमदे की भांति चिपके हुए। और कोचवान, अदब के ख़्याल से, सिर से टोपी उतारे खड़ा था। 'ठीक,' मैंने मन ही मन सोचा, 'यह साफ़ है, दोस्त, कि यह रोगी सोने की थालियों में भोजन करनेवाले नहीं हैं'... अरे, आप मुसकराते हैं, लेकिन मैं तुमसे कहता हूं, मेरे जैसे ग़रीब आदमी को सभी कुछ सोचना पड़ता है... अगर कोचवान नवाब की भांति बैठता है, और अपनी टोपी को हाथ नहीं लगाता, यहां तक कि अपनी दाढ़ी की ओट में से आप पर हंसता और अपने चाबुक को फटकारता है—तब आप दावे के साथ छः रूबल की उम्मीद कर सकते हैं। लेकिन यहां तो, मैंने देखा, रंग ही कुछ दूसरा था। लेकिन, मैंने सोचा, अब और चारा भी क्या है। फ़र्ज़ पहले, बाक़ी बातें बाद में। सो, एकदम ज़रूरी दवाइयों को मैंने बटोरा और चल पड़ा। और आप क्या विश्वास करेंगे? बस, अब समझ लो कि किसी तरह वहां सही-सलामत पहुंच गया। सड़क क्या थी, पूरी जहन्नुम—नदी-नाले, बर्फ़, जगह जगह गड्ढे और सबसे बुरा यह कि अचानक वहां का बांध टूट गया। जो हो आख़िर ठिकाने पर पहुंचा। एक छोटा-सा घर था, फूस का छप्पर पड़ा हुआ।

खिड़कियों में रोशनी थी। इसका मतलब यह कि हमारा इन्तज़ार था। एक वृद्धा स्त्री, एकदम पूजनीय, टोपी पहने बाहर निकली। 'उसे बचाओ,' उसने कहा, 'वह मर रही है।' मैंने कहा, 'भगवान के लिए अपने को इतना दुःखी न करो। यह बताओ, रोगी है कहां?'—'इधर आइये।' एक छोटे-से साफ़-सुथरे कमरे में मैं पहुंचा। एक कोने में दिया जल रहा था। बिस्तरे पर बीस-एक वर्ष की एक लड़की पड़ी थी, अचेत। तवे की तरह गर्म, सांस भारी—बुख़ार था। अन्य दो लड़कियां भी थीं—उसकी बहनें—भयभीत और आंखों में आंसू भरे खड़ी थीं। 'कल,' उन्होंने मुझे बताया, 'यह बिलकुल ठीक थी। जी भरकर इसने खाना खाया। आज सुबह सिर दर्द की शिकायत की और सांझ को, अचानक, यह हालत हो गयी।' मैंने फिर कहा, 'मेहरबानी करके परेशान न होइये।' आप जानो, डाक्टर का यह भी तो एक फ़र्ज़ है। और मैं उसके पास पहुंचा, उसका ख़ून निकाला, राई का लेप करने के लिए उनसे कहा और एक मिक्सचर उसके लिए तजवीज़ किया। इस बीच, आप जानो, मैंने उसे देखा, देखता रहा। ओ, मेरे भगवान! ऐसा चेहरा मैंने पहले कभी नहीं देखा था! एक शब्द में—वह प्रतिमा थी, सौन्दर्य की प्रतिमा! दया से मेरा हृदय भर उठा। काफ़ी ज़ोरों से हिल उठा। इतनी प्यारी आकृति! और उसकी आंखें... लेकिन, शुक्र ख़ुदा का, उसका जी कुछ हल्का होता मालूम हुआ। उसे पसीना आया, सुध-बुध चेती, उसने इर्द-गिर्द नज़र डाली, मुसकरायी और चेहरे पर अपना हाथ फेरा... उसकी बहनें उसके बिस्तरे पर झुक आयीं। उन्होंने पूछा, 'क्या हुआ?'—'कुछ नहीं,' उसने कहा और अपना मुंह फेर लिया। मैंने उसकी ओर देखा। अब वह सो गयी थी। मैंने कहा, 'अब आप लोग रोगी के पास से हट जाइये।' सो हम सब दबे पांव बाहर आ गये। केवल एक दासी वहां रह गयी—शायद कोई ज़रूरत पड़ जाय। बैठक में, मेज पर, समोवार मौजूद था, और रम की एक बोतल। हमारे धंधे में इसके बिना काम नहीं चलता। उन्होंने

मुझे चाय दी, मुझसे कहा कि रात को यहीं रुक जाइये... मैंने मान लिया। और, सच तो यह है, रात को उस वक़्त मैं जाता भी तो कहां? वृद्धा स्त्री बार बार कराहती, 'जाने क्या हुआ है?' मैं कहता, 'चिन्ता न करो, वह नहीं मरेगी। क़रीब दो बज रहे हैं, अच्छा हो कि तुम अब थोड़ा आराम कर लो।'—'लेकिन अगर कुछ ऐसा-वैसा हुआ तो किसी को भेजकर तुम मुझे जगवा लोगे न?'—'हां, हां, जगवा लूंगा।' वृद्धा चली गयी, और लड़कियां भी अपने अपने कमरों में चली गयीं। मेरे लिए उन्होंने बैठक में बिस्तर लगवा दिया था। हां तो मैं भी अपने बिस्तरे पर पहुंच गया, लेकिन मेरी आंख नहीं लगी—अजीब बात है! यों, सच पूछो तो, मैं बहुत थका था। चाहने पर भी मैं रोगी को अपने दिमाग़ से नहीं निकाल सका। आख़िर मुझसे नहीं रहा गया। मैं अचानक उठ खड़ा हुआ। मैंने मन में सोचा, 'चलकर देखना चाहिए, कि रोगी का क्या हाल है।' उसका सोने का कमरा बैठक की बग़ल में ही था। हां तो मैं उठा और आहिस्ता से मैंने दरवाज़ा खोला—ओह, मेरा हृदय किस तरह धड़क रहा था। मैंने झांककर भीतर देखा। दासी सो गयी थी। उसका मुंह खुला था, यहां तक कि कम्बख़्त ख़र्राटे भी ले रही थी। लेकिन रोगिणी मेरी ओर मुंह किये पड़ी थी। उसकी बाहें दोनों ओर फेंकी हुई थीं। बेचारी! मैं उसके पास गया... तभी सहसा उसकी आंखें खुलीं और वह मेरी ओर ताकने लगी। 'कौन है? कोन है?' मैं सकपका-सा गया। 'डरो नहीं,' मैंने कहा, 'मैं डाक्टर हूं। देखने आया था कि अब तुम्हारी तबीयत कैसी है?'—'आप डाक्टर हैं?'— 'हां, डाक्टर। तुम्हारी मां ने आदमी भेजकर मुझे शहर से बुलाया था। हमने तुम्हारे बदन से ख़ून निकाला है। सो कृपा कर अब सो जाओ और एक या दो दिन में ही—ईश्वर की दया से—तुम फिर राज़ी-बाज़ी हो जाओगी।'— 'ओह, डाक्टर, मुझे मरने नहीं दो... मुझे बचाओ, दया करके मुझे बचाओ।'—'अरे, भगवान तुम्हें ज़िन्दा रखें, ऐसी बातें क्यों कहती हो?'

पर मैंने मन में सोचा कि उसे फिर बुख़ार हो आया है, और उसकी नब्ज़ देखी। हां, उसे बुखार था। उसने मेरी ओर देखा, और फिर मेरा हाथ थामते हुए बोली, 'मैं तुम्हें बताती हूं कि मैं क्यों मरना नहीं चाहती, लो मैं तुम्हें बताती हूं...अब हम अकेले हैं, बस इतना है कि कृपा कर किसी से... हां, किसी से भी नहीं... तो सुनिये...' मैं नीचे की ओर झुक गया। वह अपने होंठ एकदम मेरे कान के पास ले आयी। उसके बाल मेरे गाल का स्पर्श करने लगे। मानिये, मेरा सिर घूम गया। और उसने फुसफुसाना शुरू किया... मैं कुछ भी नहीं समझ सका... ओह, उसे सरसाम हो गया था... वह बराबर फुसफुसाती रही, फुसफुसाती रही, बहुत तेज़ी से। लगता था जैसे वह रूसी भाषा नहीं बोल रही है। आख़िर उसका फुसफुसाना बन्द हुआ, और कांपते हुए उसने अपना सिर तकिए पर रख दिया। फिर ताड़ने के अन्दाज़ में मुझे अपनी उंगली दिखायी, 'याद रखना डाक्टर, किसी को भी कुछ मालूम न हो।' जैसे-तैसे मैंने उसे शान्त किया, पीने के लिए उसे कुछ दिया, दासी को जगाया। फिर मैं वहां से चला आया।"

इतना कहने के बाद डाक्टर ने, खिन्न आवेश के साथ, फिर हुलास की चुटकी ली, और क्षण-भर के लिए चुप तथा निश्चल हो रहा।

"जो भी हो," उसने फिर कहना शुरू किया, "अगले दिन, मेरी आशाओं के प्रतिकूल, रोगिणी की हालत कुछ बेहतर नहीं थी। मैं सोचता रहा, और अचानक मैंने वहां रहने का निश्चय कर लिया, हालांकि मेरे दूसरे रोगी मेरा इन्तज़ार कर रहे थे... और, आप जानो, यह ऐसी चीज़ नहीं जिसकी उपेक्षा की जा सके। ऐसा करने से प्रेक्टिस को नुक़सान पहुंचता है। लेकिन, सबसे पहली बात तो यह कि रोगिणी की हालत सचमुच ख़तरनाक थी, और दूसरी—सच पूछो तो—यह कि मैं उसकी ओर एक गहरे खिंचाव का अनुभव करने लगा था। इसके अलावा, उस समूचे परिवार ने मुझे मोह लिया था। हालांकि उनकी हालत सचमुच ख़राब

थी, लेकिन मैं कह सकता हूं कि वे, अद्भुत रूप से, शिष्ट लोग थे... उनका पिता एक विद्वान आदमी था, ग्रंथकार। कहने की आवश्यकता नहीं कि वह ग़रीबी में मरा था। लेकिन मरने से पहले उसने अपने बच्चों को बड़ी अच्छी तालीम देने का प्रबन्ध किया था, और अपने पीछे बहुत-सी पुस्तकें भी वह छोड़ गया था। या तो इसलिए कि मैं रोगिणी की देख-भाल बड़े ध्यान से करता था, या और किसी वजह से–जो भी हो–मैं यह कहने का साहस कर सकता हूं कि समूचा घर मुझे इस तरह चाहता था जैसे मैं भी उनके परिवार का एक सदस्य हूं। रास्तों की हालत इस बीच और भी बदतर हो गयी थी। सारा यातायात, जैसा कि कहते हैं, पूर्णतया कट गया था। शहर से दवाइयां तक बड़ी मुश्किल से आ पाती थीं। रोगी लड़की की हालत संभलने में नहीं आ रही थी। दिन के बाद दिन बीत रहे थे, एक एक करके... लेकिन... यहां..." (क्षण-भर के लिए डाक्टर रुक गया) "सच, मेरी समझ में नहीं आता कि आपसे कैसे कहूं..." (उसने फिर हुलास की चुटकी ली, खखारा और थोड़ी चाय गले के नीचे उतारी।) "तो सुनो, विना इधर-उधर की बातें बनाये दो टूक मैं बताता हूं... ओह, कैसे कहूं! हां तो यह कि वह मुझसे प्रेम करने लगी थी... या नहीं, वह मुझसे प्रेम नहीं करने लगी थी, बल्कि... सच, समझ में नहीं आता कि कैसे कहा जाय?" (डाक्टर ने नीचे नज़र की और उसके चेहरे पर लाली दौड़ गयी।) "नहीं," उसने जल्दी जल्दी कहना शुरू किया, "प्रेम करने लगी, वाह! इन्सान को अपने बारे में मुग़ालते में नहीं पड़ना चाहिए। वह एक सुशिक्षित लड़की थी, चतुर और काफ़ी पढ़ी-लिखी। उधर मैं था कि, अगर सच पूछो तो, अपनी लेटिन भी पूरी तरह भूल चुका था। और जहां तक शकल-सूरत का सवाल है," (डाक्टर ने मुसकराते हुए अपने ऊपर एक नज़र डाली) "इस मामले में भी मैं कोई गर्व नहीं कर सकता। लेकिन उस सर्वशक्तिमान ने इतनी कृपा ज़रूर की है कि मुझे मूर्ख नहीं बनाया। स्याह-

सफ़ेद में मैं भेद कर सकता हूं, दुनिया का भी मुझे थोड़ा-बहुत तजुर्बा है। मिसाल के लिए मैं साफ़ देख सकता था कि अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना—यही उसका नाम था—मेरे लिए प्रेम का अनुभव नहीं करती, बल्कि मेरे प्रति उसका एक—जैसा कि कहते हैं—मित्रतापूर्ण झुकाव था—आदर का, या ऐसा ही कोई और भाव। हालांकि अपने इस भाव को वह खुद भी ग़लती से कुछ और समझ बैठी थी। जो हो, जैसी भी उसकी स्थिति थी, खुद आप अब उसका अन्दाज़ लगा लें। लेकिन," डाक्टर ने इन सब असम्बद्ध वाक्यों को एक सांस में और प्रत्यक्ष अचकचाहट के साथ कहकर अन्त में जोड़ा, "लगता है जैसे मैं कुछ बहक गया... इस तरह आपकी समझ में भला क्या आयेगा... सो अगर आप इजाज़त दें तो एक सिलसिले से यह सब मैं आपको बताऊं।"

उसने चाय का एक गिलास पिया, और स्थिर आवाज़ में कहना शुरू किया।

"हां तो सुनिये। मेरी रोगिणी की हालत बिगड़ती गयी। आप डाक्टर नहीं हैं, महाशय, सो आप नहीं समझ सकते कि डाक्टर के हृदय पर क्या बीतती है, ख़ास तौर से शुरू शुरू में—उस समय जब उसके दिमाग़ में यह खटकना शुरू हो जाता है कि रोग पर उसका क़ाबू नहीं पड़ रहा है। अपने में उसके विश्वास की क्या हालत होती है? एक भीरुता अचानक उसे दबोच लेती है। ओह, शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता। ज़रा कल्पना कीजिये कि जो भी आप जानते थे वह सब कुछ भूल गये हैं, और यह कि रोगी का आपके ऊपर से विश्वास हट रहा है, और अन्य लोगों से भी यह छिपा नहीं रहता कि आप कितने अनमने हो गये हैं। अनमने भाव से रोग के लक्षण बताते हैं, और फुसफुसाते हुए सन्देह की नज़र से वे आपकी ओर देखते हैं... ओह, कितना भयानक है यह! आप सोचते हैं इस रोग की निश्चय ही कोई न कोई दवा होगी। काश कि उसका पता लग सकता! क्या यही वह दवा नहीं है? आप

नहीं – कि मैं अपनी रोगिणी से प्रेम करता था। और अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना मुझे चाहने लगी थी। कभी कभी तो सिवा मेरे वह और किसी को कमरे में पांव भी न रखने देती। अब वह मुझसे बातें करती थी, सवाल पूछती थी – मैंने कहां शिक्षा प्राप्त की, कैसे रहता हूं, घर पर कौन कौन हैं, किन किन से मिलता-जुलता हूं। मैं जानता था कि उसे बातें नहीं करनी चाहिएं, लेकिन उसपर रोक लगाना – आप जानो, कड़ाई के साथ – रोक लगाना – यह मेरे बूते के बाहर था। कभी कभी मैं अपना सिर हाथों में थाम लेता, और अपने-आप से कहता, 'यह तू क्या कर रहा है शैतान?' और वह मेरा हाथ अपने हाथ में ले लेती, देर तक इकटक मेरी ओर देखती रहती, और फिर मुंह फेर लेती, एक उसास छोड़ती, और कहती, 'आप कितने भले हैं!' बुख़ार से तपने उसके हाथ, और इतनी बड़ी रसीली, उसकी आंखें... 'सच,' वह कहती, 'आप बहुत अच्छे आदमी हैं। आप हमारे पड़ोसियों जैसे नहीं हैं। नहीं, आप वैसे नहीं हैं। ओह, पहले आपसे मेरी जान-पहचान क्यों नहीं हुई?' – 'अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना,' मैं कहता, 'जी छोटा न करो। मुझे लगता है, यक़ीन मानो... मैंने क्या कुछ पा लिया है... लेकिन देखो, तुम अपना जी छोटा न करो। सब ठीक हो जायेगा। तुम फिर अच्छी हो जाओगी।' यहां आपको एक बात और बता दूं," आगे की ओर झुकते तथा अपनी भौंहों को चढ़ाते हुए डाक्टर कहता गया, "वह यह कि वे अपने पड़ोसियों से बहुत ही कम मिलते-जुलते थे। कारण, छोटे लोग उनके स्तर के नहीं थे, और धनी लोगों से मित्रता करने में उनका गर्व बाधक होता था। सच, उनका परिवार असाधारण रूप में शिष्ट और सुसंस्कृत था। सो, आप जानो, मेरे लिए यह एक बड़े सन्तोष की बात थी। वह केवल मेरे हाथों से ही दवा लेने को राज़ी होती। वह, बेचारी, मेरी मदद से थोड़ा उठती, दवा लेती, और मेरी ओर ताकती रहती... लगता जैसे मेरा हृदय फटकर बाहर आ जायेगा, और उसकी हालत यह कि इस

बीच, बराबर, बद से बदतर होती जा रही थी। नहीं बचेगी–मैं मन में सोचता। नहीं बच सकेगी। सच मानो, अगर मेरा बस चलता तो मैं उसके मरने से पहले ख़ुद क़ब्र में समा जाता। उसकी मां और बहनें थीं कि मुझे ताकती रहतीं, मेरी आंखों में आंखें डालकर देखती रहतीं... और मुझमें उनका विश्वास क्षीण पड़ता जा रहा था। 'कैसी है वह अब?' –'ठीक है, सब ठीक है!' सब ठीक है, वाह! मेरा दिमाग़ मेरा साथ छोड़ रहा था। एक रात मैं अपनी रोगिणी के पास बैठा था। कमरे में और कोई नहीं था। दासी थी, लेकिन वह पूरे ज़ोरों के साथ खर्राटे भर रही थी। और इसमें उस बेचारी का क्या दोष। वह भी थककर चूर हो चुकी थी। अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना सारी सांझ बहुत बेचैन रही, काफ़ी तेज़ बुख़ार था। आधीरात तक वह छटपटाती रही। आख़िर लगा जैसे उसे झपकी आ गयी हो। कम से कम वह अब छटपटा नहीं रही थी, स्थिर पड़ी थी। कोने में, देव-प्रतिमा के सामने, एक दिया टिमटिमा रहा था। और मैं, आप जानो, सिर लटकाये वहां बैठा था। मुझे भी कुछ झपकी-सी आ गयी। सहसा मुझे ऐसा लगा जैसे किसी ने मुझे बग़ल में स्पर्श किया हो। मैं घूमा... बाप रे, अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना, इकटक, मेरी ओर देख रही थी! उसके होंठ खुले थे, उसके गाल तमतमा रहे थे। 'क्यों, क्या है?'–'डाक्टर, मैं अब मर जाऊंगी न?'–'भगवान दया करेंगे।'–'नहीं, डाक्टर नहीं, यह मत कहो कि मैं नहीं मरूंगी... न, यह न कहो... अगर आप जानते... सुनो, ईश्वर के लिए मेरी असली हालत मुझसे न छिपाओ!' उसकी सांस की गति बहुत तेज़ हो चली, 'अगर मुझे यह पक्का यक़ीन हो जाय कि मौत अब टल नहीं सकती तो... तो मैं सब कुछ तुम्हें बता सकती हूं, सब कुछ!'–'नहीं, अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना, मैं तुमसे विनती करता हूं।'–'सुनिये। मैं सो नहीं रही थी। मैं बराबर, काफ़ी देर से, आपको देख रही थी। ओह, ईश्वर के लिए... मुझे आप पर विश्वास है। आप एक भले और ईमानदार

ग्रादमी हैं। मैं ग्रापसे बिनती करती हूं, इस दुनिया में जो कुछ पवित्र है उसके नाम पर बिनती करती हूं—मुझे सच सच बताइये। अगर ग्राप जानते कि मेरे लिए इसका कितना महत्व है... डाक्टर, बताइये। ईश्वर के लिए मुझे बताइये! क्या मेरी जान ख़तरे में है?'—'सच, अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना, मैं भला क्या बता सकता हूं?' —'ओह, ईश्वर के लिए, मैं तुमसे अनुरोध करती हूं!'—'मैं तुमसे नहीं छिपा सकता,' मैंने कहा, 'अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना, तुम्हारी जान सचमुच ख़तरे में है, लेकिन ईश्वर सब भला करेंगे।'—'ओह, मैं मर जाऊंगी, मर जाऊंगी!' ऐसा मालूम हुआ जैसे वह इससे ख़ुश हो। उसके चेहरे पर एक अजीब चमक दौड़ गयी। मैं आशंकित हो उठा। 'अरे नहीं, घबराओ नहीं। मैं मौत से ज़रा भी नहीं डरती।' वह सहसा उठी और अपनी कोहनी के सहारे झुक गयी। 'अब... हां, अब मैं आपको बता सकती हूं कि मेरा रोम रोम आपका कृतज्ञ है... कि आप बहुत भले और अच्छे आदमी हैं... मैं आपसे प्रेम करती हूं।' उद्भ्रान्त की भांति मैंने उसकी ओर ताका। मेरे लिए यह सब, आप जानो, भयानक था। 'सुन रहे हैं न, मैं आपसे प्रेम करती हूं।'—'अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना, आप मुझे क्योंकर इसके योग्य समझती हैं?'—'ओह नहीं, आप नहीं जानते, आप मुझे नहीं समझते।' और उसने सहसा अपनी बांहें फैलायीं, मेरा सिर अपने हाथों में थामते हुए उसे चूम लिया... सच मानो, मैं एकदम हड़बड़ा-सा उठा। घुटनों के बल मैं गिर गया, और उसके तकिए में मैंने अपना मुंह छिपा लिया। वह अब चुप थी। उसकी उंगलियां मेरे बालों में कांप रही थीं। मैंने सुना, वह रो रही है। मैंने उसे संभालना, तसल्ली देना शुरू किया... सच, मैं नहीं जानता कि मैंने क्या कुछ कहा। 'अरे, इस तरह तो तुम दासी को जगा दोगी,' मैंने उससे कहा, 'अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना, मैं तुम्हारा बहुत बहुत आभारी हूं... सच मानो... अपना जी छोटा न करो।'—'बस, बस,' वह कहती गयी, 'बस, अब कुछ नहीं... चाहें तो वे अब

सब जाग जायं, सब के सब यहां आ मौजूद हों, अब कुछ चिन्ता नहीं... देखो न, मैं मर रही हूं... और आपको क्या डर है? तुम क्यों डरते हो? अपना सिर ऊंचा करो। या शायद आप मुझसे प्रेम नहीं करते? शायद मैंने ग़लत समझा। अगर ऐसा है तो मुझे माफ़ करना।'— 'अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना! यह तुम क्या कह रही हो... मैं... मैं तुमसे प्रेम करता हूं, अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना!' उसने सीधे मेरी आंखों में देखा, और अपनी बांहें फैला दीं। 'तो यह लो, मुझे अपनी बांहों में भर लो।' सच मैं आपसे ठीक कहता हूं, मैं नहीं जानता कि उस रात मैं पागल होने से कैसे बच गया। मुझे इस बात का चेत था कि रोगिणी अपनी जान से खेल रही है, मैंने देखा कि वह अपने आपे में नहीं है; मैं यह भी जानता था कि अगर वह अपने-आपको मौत के निकट न समझती तो वह कभी मेरी ओर ध्यान न देती, और बिलाशक, आप कुछ भी कहें, प्रेम का अनुभव किये बिना पचीस वर्ष की उम्र में मौत को गले लगाना आसान नहीं है। यही वह चीज़ थी जो उसे इतनी पीड़ा दे रही थी, और इसी की वजह से, और कोई चारा न देख, वह मेरी ओर लपकी। क्यों, अब तो आप समझ गये न? लेकिन वह मुझे अपनी बांहों में कसे रही, और अपना बन्धन ढीला करने को तैयार नहीं हुई। 'मुझपर, और अपने पर भी, तरस खाओ, अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना,' मैंने कहा। 'क्यों, अब सोचना क्या है,' उसने कहा, 'आप जानते हैं कि मुझे मरना तो है ही,' वह बार बार, बिना रुके, यह दोहराती रही, 'अगर मैं जानती कि मुझे फिर जीवन में लौटना और एक भली लड़की की तरह क़ायदे से रहना होगा तो... बेशक, शर्म-लिहाज़ करती... लेकिन अब क्या?'— 'लेकिन यह कौन कहता है कि तुम मरोगी?'—'ओह, बस रहने दो। तुम मुझे धोखे में नहीं रख सकते। झूठ बोलना तुम्हारे बस की बात नहीं— तुम्हारा चेहरा इसकी गवाही है।'—'तुम जिओगी, अलेक्सान्द्रा अन्द्रेयेवना। मैं तुम्हें चंगा कर दूंगा, तुम्हारी मां का आशीर्वाद हमें प्राप्त होगा—

और हम दोनों एक हो जायेंगे— सुख से रहेंगे!'—'नहीं, नहीं, आपने मुझसे सब कह दिया है। मैं मरूंगी... तुमने वचन दिया है... मुझे बता दिया है।' यह मेरे लिए अत्यन्त निर्मम था—अनेक कारणों से निर्मम था। और देखिये, मामूली बातें कभी कभी क्या कर डालती हैं। बात यों कुछ नहीं मालूम होती, लेकिन फिर भी कितनी दुःखद थी। जाने उसके मन में क्या आया कि मेरा नाम पूछने लगी—कुल का नहीं बल्कि मेरा छोटा नाम। निश्चय ही मैं बड़ा अभागा रहा हूंगा जो मेरा नाम त्रीफ़ोन रखा गया। सच, इसमें शक नहीं। त्रीफ़ोन इवानिच। घर में सभी मुझे डाक्टर कहकर पुकारते थे। जो हो, मजबूरी थी। सो मैंने कहा—त्रीफ़ोन; उसने भौंहें चढ़ायीं, अपना सिर हिलाया और जाने क्या फ़्रेंच भाषा में बुदबुदा उठी—ओह, निश्चय ही वह कोई अरुचिकर बात रही होगी—और फिर हंसी। वैसे ही अरुचिकर अन्दाज में। हां तो इस प्रकार सारी रात मैंने उसके साथ काटी। सुबह होने को आयी तब मैं वहां से हटा। ऐसा मालूम होता था जैसे मेरा दिमाग़ ठिकाने नहीं है। इसके बाद, सुबह की चाय के बाद, दिन में मैं फिर उसके कमरे में गया। हे भगवान, अब तो वह पहचानी भी मुश्किल से जाती थी। मरने के बाद भी, जब उन्हें क़ब्र में सुलाया जाता है, लोग उससे कहीं अच्छे मालूम होते होंगे। सच, चाहे क़सम ले लो, मैं कुछ नहीं समझ पाता—क़तई नहीं समझ पाता—मैंने वह यंत्रणा कैसे सही। इसके बाद भी, तीन दिन और तीन रात, वह अधमरी-सी हालत में पड़ी रही। रातें भी कैसी? जाने क्या क्या उसने कहा। और आख़िरी रात—ज़रा ख़ुद कल्पना कर देखिये—मैं उसके पास बैठा था, और भगवान से केवल एक प्रार्थना कर रहा था—'जल्दी करो भगवान! इसे और साथ ही मुझे भी, अपने पास बुला लो।' सहसा, वृद्धा मां कमरे में चली आयी, एकदम अप्रत्याशित। पिछली सांझ मैं उससे—मां से—कह चुका था कि अब बहुत कम उम्मीद

है, अच्छा हो कि पादरी को बुला भेजो। बीमार लड़की ने जब अपनी मां को देखा तो बोली, 'यह अच्छा हुआ कि तुम आ गयीं मां। यह देखो, हम दोनों एक-दूसरे से प्यार करते हैं—हम एक-दूसरे से वचनबद्ध हो चुके हैं।'—'यह क्या कह रही है, डाक्टर, क्या कह रही है?' मैं पीला पड़ गया। 'यों ही बड़बड़ा रही है,' मैंने कहा, 'बुख़ार है...' लेकिन वह बोली, 'बस, बस, अभी अभी तुम मुझसे कुछ और ही कह रहे थे, और तुमने मेरी अंगूठी भी ग्रहण की है। बहाना क्यों बनाते हो? मेरी मां बहुत भली हैं—वह माफ़ कर देंगी—वह सब समझती हैं—और मैं मर रही हूं। मुझे झूठ बोलने की ज़रूरत नहीं। लाओ, अपना हाथ मुझे दो।' मैं उछलकर खड़ा हुआ और कमरे से बाहर भाग गया। कहने की ज़रूरत नहीं कि वृद्धा ने भांप लिया कि मामला क्या है।"

"जो हो, मैं आपको अब और अधिक नहीं उबाऊंगा। और फिर मेरे लिए भी इन सब बातों की याद करना काफ़ी दुःखद है। अगले दिन रोगिणी की मृत्यु हो गयी—भगवान उसकी आत्मा को शांति दे," उसास छोड़ते और उतावली के साथ बोलते हुए डाक्टर ने कहा, "मृत्यु से पहले उसने घर के लोगों से कहा कि वे बाहर चले जायं, और मुझे उसके साथ अकेला रहने दें। 'मुझे माफ़ करना,' उसने कहा, 'शायद मैं तुम्हारे प्रति दोषी हूं... मेरी बीमारी... लेकिन मेरा यक़ीन करो, तुम से अधिक मैंने कभी किसी को प्यार नहीं किया... मुझे भुलाना नहीं... मेरी अंगूठी अपने पास रखना।"

डाक्टर ने मुंह दूसरी ओर मोड़ लिया। मैंने उसका हाथ थाम लिया।

"ओह," उसने कहा, "अच्छा हो कि हम किसी दूसरे विषय पर बातें करें। मामूली दांव रखकर थोड़ा प्रिफ़रेन्स खेलें—अगर आपको यह पसन्द हो तो... मेरे जैसे लोग ऊंची भावनाओं में नहीं डूब-उतरा

सकते। सिर्फ़ एक ही चिन्ता हमारे लिए बहुत है—बच्चों को चीख़ने-चिल्लाने से और पत्नी को झिड़कियां देने से कैसे शान्त रखा जाय। तब से, आप जानो, जैसा कि कहते हैं, मैंने विधिवत शादी भी कर डाली। सच, एक सौदागर की लड़की से। दहेज में सात हज़ार मिले। अकुलीना उसका नाम है। त्रीफ़ोन की ही जोड़ीदार समझो। उसका स्वभाव बड़ा चिड़चिड़ा है। ग़नीमत यही है कि वह दिन-भर सोती रहती है... हां तो फिर प्रिफ़रेन्स ही हो जाय?"

कोपेक के दांवों के साथ हम प्रिफ़रेन्स खेलने बैठ गये। त्रीफ़ोन इवानिच ने मुझसे ढाई रूबल जीते और इस जीत के कारण बहुत ख़ुश ख़ुश वह गहरी रात गये अपने घर लौटा।

मेरा पड़ोसी रदीलोव

शरद् में स्नाइप-पक्षी बहुधा लीपा-पेड़ों के पुराने बाग़ों की शरण लेते हैं। हमारे यहां, ओरेल प्रान्त में, ऐसे बाग़ों की तादाद काफ़ी है। हमारे पुरखा, जब भी बसने के लिए कोई जगह चुनते थे तो फल के बाग़ के लिए दो एकड़ अच्छी-खासी ज़मीन ज़रूर अलग रख छोड़ते जिस में लीपा-पेड़ों की कई क़तारें लग सकें। पचास या अधिक से अधिक सत्तर सालों के भीतर इन जागीरों का—या जैसा कि इन्हें कहा जाता है 'कुलीन घरानों' का—इस धरती से धीरे धीरे लोप होता जा रहा है। मकान खण्डहर बनते जा रहे थे या बेचे जा रहे थे, पत्थर के बंगले मलबे का ढेर बन जाते। सेबों के पेड़ ठूंठ बन चुके थे और उनसे ईंधन का काम लिया जाता था। चहारदीवारी और बेंत वृक्षों के बाड़े लोगों ने उखाड़ डाले थे। केवल लीपा-पेड़ ही पहले की भांति, अपनी पूरी गरिमा के साथ खड़े हैं, और अपने इर्द-गिर्द फैले खेतों के बीच खड़े हमारी लापरवाह पीढ़ी को 'उन पुरखों और सगे-संबंधियों' की कहानी कहते हैं, जिन्होंने हमसे पहले इस धरती को आबाद किया। लीपा के ये पुराने पेड़ बड़े शानदार होते हैं। रूसी किसानों की बेरहम कुल्हाड़ी भी उन्हें अछूता छोड़ देती है। चारों ओर दूर दूर तक फैलीं छोटे छोटे पत्तों से युक्त उनकी सबल डालियां निरन्तर छाया प्रदान करती हैं।

एक बार, तीतरों की टोह में, येरमोलाई के साथ मैं खेतों का चक्कर लगा रहा था, जब थोड़ी दूरी पर मुझे एक वीरान बाग़ दिखाई

पड़ा। मैं उसकी ओर मुड़ गया। उसकी सीमा में मैंने अभी मुश्किल से ही पांव रखा होगा कि अचानक, पर फड़फड़ाता हुआ एक स्नाइप-पक्षी झाड़ी में से उड़ा। मैंने गोली दाग़ी और उसी क्षण, कुछ ही डग दूर, एक चीख़ मुझे सुनाई दी। एक युवती का भयभीत चेहरा क्षण-भर के लिए पेड़ों के पीछे से झांका और फिर तुरंत ओझल हो गया। येरमोलाई दौड़कर मेरे पास आया—"अरे, यहां गोली क्यों दाग़ रहे हो? यहां तो ज़मींदार रहता है।"

इससे पहले कि मैं कोई जवाब देता, या मेरा कुत्ता रोब के साथ उस पक्षी को लिये हुए मेरे पास आता, मुझे तेज़ी से बढ़ते डगों की चाप सुनाई दी, एक लम्बा मुछेल आदमी झुरमुट में से बाहर निकला और मेरे सामने आकर खड़ा हो गया। मैंने उससे माफ़ी मांगी, उसे अपना नाम बताया और जिस पक्षी का उसकी जागीर में मैंने शिकार किया था, वह उसे ही भेंट कर दिया।

"अच्छी बात है," मुसकराते हुए उसने कहा। "मुझे यह भेंट स्वीकार है, लेकिन एक शर्त पर—वह यह कि आपको मेरे घर चलना होगा और मेरे साथ भोजन करना होगा।"

सच पूछो तो उसके इस प्रस्ताव से मुझे कुछ ज़्यादा ख़ुशी नहीं हुई। लेकिन इनकार करना भी सम्भव नहीं था।

"शायद आपने मेरा नाम सुना हो, मैं आपका पड़ोसी रदीलोव हूं, यहां का ज़मींदार," मेरा नया परिचित कहे जा रहा था। "आज रविवार है, और निश्चय ही कुछ बढ़िया भोजन बना होगा, वर्ना मैं आपको न्योता ही न देता।"

मैंने वैसा ही कुछ जवाब दिया जैसा कि ऐसी परिस्थितियों में दिया जाता है और उसके पीछे चलने के लिए घूम पड़ा। एक छोटी-सी पगडंडी पर से जिसे हाल ही में साफ़ किया गया था, हम जल्दी ही लीपा के झुरमुट से बाहर आ गये और साग-भाजी के बग़ीचे में पांव रखा।

सेब के पुराने पेड़ों और गूज़बेरी की घनी झाड़ियों के बीच सफ़ेदी मायल हरी छल्लेदार गोभी की पांतें खड़ी थीं। हॉप-बेल ऊंचे बांसों के इर्द-गिर्द अपने पंजे फैलाती ऊपर चढ़ती चली गयी थी। भूरी टहनियों के घने आल-जाल में मटर की सूखी फलियां लटक रही थीं। बड़े बड़े चपटे कद्दू, मालूम होता था जैसे धरती पर लुढ़क रहे हों। नुकीले, धूल भरे पत्तों के नीचे खीरे पीले पड़ चले थे। मेड़ के किनारे किनारे लम्बा बिछुआ उगा था। दो या तीन जगह तातार हनीसकल, एल्डर और जंगली गुलाब के झुरमुट दिखाई देते थे। भूतपूर्व फूलों की क्यारियों की यादगार के रूप में अब ये ही बाक़ी बचे थे। मछलियों के एक छोटे-से कुण्ड के पास जिसमें गंदला मटमैला पानी भरा था, एक कुआं नज़र आ रहा था जिसके इर्द-गिर्द छोटे छोटे पानी के गढ़े थे। बत्तखें इन गढ़ों में तैरने और छींटे उड़ाने में व्यस्त थीं। अपनी आंखों को मिचमिचाता और अपने अंग अंग को फड़काता एक कुत्ता एक मैदान में बैठा हड्डी को नोच रहा था। उसके पास ही एक चितकबरी गाय अलस भाव से घास का पागुर कर रही थी और रह रहकर अपनी सींकिया पीठ पर पूंछ का चंवर डुलाकर मक्खी-मच्छरों को उड़ा रही थी। पगडंडी एक ओर को मुड़ चली। सरपत के घने झुरमुट और बर्च-वृक्षों की ओट में से भूरे रंग के एक छोटे-से पुराने घर पर हमारी नज़र पड़ी। इसकी छत तख़्तों से पटी थी और घुमावदार सीढ़ियां थीं। रदीलोव चलते चलते रुक गया।

"लेकिन," प्रसन्न हृदय और सीधी नजर से मेरे चेहरे की ओर देखते हुए उसने कहा, "फिर से सोचने पर मुझे लगा... मन ही तो है आख़िर, हो सकता है कि मेरे साथ चलने और मेल-मुलाहिज़ा करने में आपका दिल न चाहता हो। अगर ऐसा है तो..."

मैंने उसे बात पूरी न करने दी, बल्कि उसे यक़ीन दिलाया कि, इसके विपरीत, उसके साथ भोजन करके मुझे अत्यंत प्रसन्नता होगी।

"सो तो आप जानें।"

हमने घर में प्रवेश किया। सीढ़ियों पर एक युवक से हमारी भेंट हुई। वह नीले रंग के मोटे कपड़े का लम्बा कोट पहने था। रदीलोव ने येरमोलाई के लिए तुरंत कुछ वोद्का लाने का आदेश दिया। शिकारन्दाज ने उदार मेज़बान की पीठ पीछे ही अदब से सलामी झुकायी। विभिन्न प्रकार की रंगीन तस्वीरों तथा पक्षियों के पिंजरों से सजे हाल को पारकर हम एक छोटे-से कमरे में दाख़िल हुए। यह रदीलोव का अध्ययन-कक्ष था। मैंने अपना शिकार का तामझाम उतारा, और अपनी बन्दूक़ एक कोने में रख दी। लम्बे कोटवाले युवक ने बड़ी तत्परता से मेरे कपड़ों की गर्द झाड़ पोंछकर साफ़ की।

"हां तो चलिये, दीवानख़ाने में चलें," रदीलोव ने हार्दिकता से कहा। "अपनी मां से आपका परिचय करा दूं।"

मैं उसके साथ हो लिया। दीवानख़ाने में, बीच के सोफ़े पर, मझोले क़द की एक वृद्धा बैठी थी–दालचीनी रंग की पोशाक और सफ़ेद टोपी पहने हुए। उसका दुबला-पतला वृद्ध चेहरा बहुत ही भला था और एक सहमा-सा, उदासी में पगा भाव उसपर छाया हुआ था।

"यह देखो मां, अपने इन पड़ोसी से आपका परिचय करा दूं..."

वृद्धा खड़ी हो गयी और सिर झुकाकर उसने मेरा अभिवादन किया लेकिन अपना ऊनी बटुवा जो कोथली जैसा मालूम होता था, अपने मुरझाये हुए हाथों से अलग नहीं होने दिया।

"क्या आप अर्से से हमारे पड़ोस में रहते हैं?" अपनी आंखों को मिचमिचाते हुए क्षीण किन्तु मृदु आवाज़ में वृद्धा ने पूछा।

"नहीं, ज़्यादा अर्सा नहीं हुआ।"

"लेकिन अब तो कुछ दिन रहेंगे न?"

"शायद जाड़ों तक।'

वृद्धा ने इससे अधिक और कुछ नहीं कहा।

"और यह," छरहरे बदन के एक लम्बे आदमी की ओर जिसपर

दीवानखाने में आने के बाद अब तक मेरी नज़र नहीं गयी थी, इशारा करते हुए बीच में ही रदीलोव ने कहा, "इनका नाम है फ़्योदोर मिख़ेइच... अरे, ज़रा इधर आओ, फ़ेद्या। मेहमान को अपनी कला की बानगी तो दिखाओ। वहां, उधर कोने में क्यों छिपे हो?"

फ़्योदोर मिख़ेइच तुरंत अपनी कुर्सी पर से उठा, खिड़की पर से एक छोटा-सा दीन-हीन बेला उठाया, कमानी को उसने संभाला – क़ायदे के अनुसार छोर से नहीं, बल्कि बीच से। बेला को अपने वक्ष से सटाया, अपनी आंखों को मूंदा और गीत के बोल छेड़ते तथा बेला के तारों को झनझनाते हुए नाचना शुरू कर दिया। क़रीब सत्तर वर्ष का वह मालूम होता था। उसके सूखे-साखे हड्डियों के ढांचे पर नानकिन का फ़्रॉक-कोट दयनीय भाव से फड़फड़ा रहा था। नाचते नाचते मिख़ेइच कभी ठुमक कर उछलता, फिर अपने छोटे-से सफ़ाचट सिर को, अपनी गांठ-गंठीली गरदन को बाहर निकाले, नीचे कर लेता और कभी धरती पर अपने पांव पटकता – और कभी प्रत्यक्ष कठिनाई से अपने घुटनों को मोड़ता। उसके पोपले मुंह से आयु की मार से जर्जर आवाज़ें निकल रही थीं। मेरे चेहरे के भाव से रदीलोव ने निश्चय ही ताड़ लिया कि फ़ेद्या की 'कला' में मुझे कोई ख़ास रस नहीं मिल रहा है।

"बहुत ख़ूब, बुढ़ऊ! बस इतना ही काफ़ी है," उसने कहा। "अब जाओ और अपना गला तर करो।"

फ़्योदोर मिख़ेइच ने फ़ौरन से पेश्तर अपने बेला को खिड़की की ओटक पर रख दिया, मेहमान के नाते पहले मेरे, फिर वृद्धा के, फिर रदीलोव के आगे सिर झुकाया और इसके बाद वहां से खिसक गया।

"यह भी ज़मींदार था," मेरा नया मित्र कहता गया, "और ज़मींदार भी ऐसा-वैसा नहीं, ख़ूब सम्पन्न। लेकिन इसने अपने को नष्ट कर डाला। अब मेरे पास रहता है। कभी इसके भी दिन थे, और प्रान्त भर में इसी के साहस की सबसे ज़्यादा धाक थी। दो विवाहित स्त्रियों

का उसने हरण किया था, गायकों को यह अपने यहां रखता था, खुद भी गाता था और नाचने में बड़ा कुशल था... लेकिन क्या आप वोद्का नहीं लेंगे? भोजन भी बस तैयार ही है!"

एक युवा लड़की, वही जिसकी बाग़ में मुझे एक झलक दिखाई दी थी, कमरे में आयी।

"और यह लीजिये, ओल्गा भी आ गयी," अपने सिर को किंचित् घुमाते हुए रदीलोव ने कहा। "आपसे परिचय करा दूं... हां तो चलिये, अब भोजन के लिए चलें।"

हम भीतर गये और मेज़ के पास बैठ गये। दीवानख़ाने से निकलकर अभी हम अपनी अपनी जगहों पर बैठ ही रहे थे कि फ़्योदोर मिख़ेइच ने—गला तर करने के बाद जिसकी आंखें चमक रही थीं और नाक लाल हो रही थी—आलाप शुरू कर दिया—'गाओ सब मिल जय, जय, जय!' कोने में रखी एक अलग मेज़ पर जिस पर मेज़पोश भी न बिछा था उसके लिए अलग भोजन परोसा गया। बेचारा वृद्ध शाइस्ता आदतों का धनी नहीं था, इसलिए उसे हमेशा पंगत से कुछ दूर ही रखा जाता था। उसने क्रॉस का चिन्ह बनाया, एक उसास भरी, और शार्क की तरह खाने में जुट गया। भोजन वास्तव में बुरा नहीं था, और साथ में—रविवार के उपलक्ष्य में—छलछलाती जैली और स्पेनिश पेस्ट्री की तश्तरियां मौजूद थीं। रदीलोव एक पैदल सेना में दस साल रह चुका था और तुर्की हो आया था। भोजन की मेज़ पर उसने अपने संस्मरण सुनाने शुरू कर दिये। मैं ध्यान से उसके क़िस्से सुन रहा था और छिपी नज़र से ओल्गा को देख रहा था। वह कोई ख़ास सुन्दर नहीं थी, लेकिन उसके चेहरे का शान्त और सुदृढ़ भाव, उसका चौड़ा गोरा-चिट्टा माथा, उसके घने बाल, और ख़ास तौर से उसकी भूरी आंखें—बड़ी न होने पर भी जिनमें निर्मलता, समझ-बूझ और ज़िन्दादिली की चमक थी—मुझे ही नहीं, बल्कि जो भी होता उनसे प्रभावित हुए बिना न रहता। ऐसा

मालूम होता था जैसे रदीलोव के मुंह से निकले प्रत्येक शब्द को यह ध्यान से सुन रही है। उसके चेहरे पर सहानुभूति का इतना नहीं, जितना गहन आकर्षण का भाव छाया था। आयु के लिहाज़ से रदीलोव उसका पिता मालूम होता था। वह उसे तू कहकर पुकारता था; लेकिन मैं तुरंत ही भांप गया कि वह उसका पिता नहीं है। बातचीत के दौरान में उसने अपनी मृत पत्नी का ज़िक्र किया। "उसकी बहिन है," ओल्गा की ओर इशारा करते हुए उसने बताया। ओल्गा के गाल तुरंत लाल हो उठे और उसने अपनी आंखें झुका लीं। रदीलोव क्षण-भर के लिए रुका और इसके बाद उसने विषय बदल दिया। भोजन के दौरान में वृद्धा ने एक भी शब्द मुंह से न निकाला। भोजन भी न तो खुद उसने कुछ खाया, न ही मुझसे कुछ और लेने का अनुरोध किया। उसके चेहरे की भाव-भंगिमा में सहमी-सी हताश आकांक्षा का—वृद्धावस्था की उदासी का—एक ऐसा पुट था जो हृदय को बींधता मालूम होता था। भोजन के अन्त में फ़्योदोर मिखेइच मेहमानों और मेज़बान का यश-गान करने के लिए उठा पर तभी रदीलोव ने मेरी तरफ़ देखा और उसे चुप रहने का आदेश दिया। बूढ़े ने होंठों पर हाथ फेरा, आंखें मिचमिचानी शुरू कीं, सलामी झुकायी, और फिर बैठ गया, लेकिन केवल अपनी कुर्सी के एकदम छोर पर। भोजन के बाद रदीलोव के साथ मैं फिर उसके अध्ययन-कक्ष में गया।

उन लोगों में जो एक ही विचार या भावना में हर घड़ी गहराई के साथ डूबे रहते हैं आपस में कुछ समानता, उनके तौर-तरीक़ों में एक तरह की बाह्य एकरूपता, पायी जाती है, चाहे उनके गुणों, उनकी योग्यताओं, समाज में उनकी स्थिति और उनकी शिक्षा-दीक्षा में कितना ही भेद क्यों न हो। रदीलोव को जितना ही अधिक मैं देखता, उतना ही अधिक मुझे लगता कि वह इसी कोटि के लोगों में से है। वह खेतीबाड़ी के बारे में, फ़सलों, युद्ध, ज़िले की कानाफूसियों और आगामी चुनावों

के बारे में बेरोक बातें करता; बल्कि कहना चाहिए कि दिलचस्पी तक के साथ। लेकिन बातें करते करते सहसा वह उसास छोड़ता और कुर्सी में गहरा बैठ जाता, चेहरे पर अपना हाथ फेरता—उस आदमी की तरह जो किसी कड़े काम से थककर चूर हो गया हो। उसकी समूची प्रकृति—अच्छी और मिलनसार होने पर भी—किसी एक भाव में पगी, उसमें पूरी तरह डूबी, मालूम होती थी। मेरे लिए यह एक अचरज की बात थी कि उसमें किसी चीज़ के प्रति अनुराग नहीं था—न खाने के प्रति, न मदिरा के प्रति, न शिकार के प्रति, न कूर्स्क बुलबुलों के प्रति, न मिरगी पड़े कबूतरों के प्रति, न रूसी साहित्य के प्रति, न दुलकी चाल चलनेवाले घोड़ों के प्रति, न हंगेरियन कोटों के प्रति, न ताश और बिलियर्ड के प्रति, न नाच-पार्टियों के प्रति, न प्रदेशीय नगरों या राजधानी की यात्राओं के प्रति, न काग़ज़ या चुकन्दर की चीनी के कारख़ानों के प्रति, न रंगेचुने मण्डपों के प्रति, न चाय के प्रति, न बाज़ूवाले ज़िद्दी घोड़ों के प्रति, न ही कुप्पे की भांति फूले उन कोचवानों के प्रति जो ठीक अपनी बग़ल के नीचे पेटी कसते हैं—वे लाजवाब कोचवान जिनकी आंखें, जाने किस रहस्यमय कारण से, हर क्षण अटेरन-सी घूमती रहती हैं और बाहर निकल पड़ने के लिए बेचैन रहती हैं... "तो फिर," मैंने सोचा, "किस क़िस्म का ज़मींदार है यह?" इसके साथ साथ, उसकी भाव-भंगिमा और मुद्रा से, यह ज़रा भी नहीं मालूम होता था कि वह अपने भाग्य से असन्तुष्ट, एक खिन्न आदमी है। उल्टे, वह भेदभाव से मुक्त, सदिच्छा और हार्दिकता का परिचय देता था, यहां तक कि उसकी मिलनसारी—जो भी उसके सम्पर्क में आय उससे घनिष्ठता क़ायम करने की उसकी तत्परता—को देखकर तबीयत कुछ तंग भी आती थी। सच पूछो तो उसे देखकर एकदम ऐसा लगता कि वह किसी का मित्र नहीं हो सकता, न ही किसी के साथ वास्तव में घनिष्ठता क़ायम कर सकता है—इस कारण नहीं कि वह आम तौर से स्वतन्त्र था, बल्कि

इस लिए कि उसका समूचा अस्तित्व बहुत कुछ भीतर की ओर उन्मुख, खुद अपने-आप पर ही केन्द्रित था। रदीलोव को देखकर मैं कभी भी यह कल्पना नहीं कर सकता था कि वह अब, या अन्य किसी समय, सुखी हो सकता है। देखने में भी वह खूबसूरत नहीं था। लेकिन उसकी आंखों में, उसके मुसकराने में, उसके समूचे अस्तित्व में कुछ था जो रहस्यमय और अत्यन्त आकर्षक था—हां, ठीक रहस्यमय ही उसे कहा जा सकता है। कुछ ऐसा कि आप उसे और अधिक अच्छी तरह जानने और उससे प्रेम करने के लिए ललक उठें। बिलाशक, जब-तब जमींदार और स्तेपीय मानव की झलक भी उसमें दिखाई पड़ जाती थी, लेकिन कुल मिलाकर वह एक बढ़िया आदमी था।

हम ज़िले के नये मारशल के बारे में बातें कर ही रहे थे जब, सहसा, दरवाज़े पर हमें ओल्गा की आवाज़ सुनाई दी—"चाय तैयार है।" हम उठकर दीवानख़ाने में चले गये। फ़्योदोर मिखेइच, पहले की भांति, छोटी-सी खिड़की और दरवाज़े के बीचवाले अपने कोने में बैठा था, टांगों की, अपने नीचे, कुण्डली मारे हुए। रदीलोव की मां मोज़ा बुन रही थी। खुली हुई खिड़कियों में से शरद की ताज़गी और सेबों की महक आ रही थी। ओल्गा प्यालों में चाय डाल रही थी। भोजन के बाद अब उसे अधिक ध्यान से मैंने देखा। देहाती लड़कियों की भांति, नियमतः, वह भी बहुत कम बोलती थी। लेकिन, फिर भी, उसमें वह उद्विग्नता नहीं दिखाई दी जो इन लड़कियों में अक्सर अपनी मूर्खता और लाचारगी की दुःखद चेतना के साथ साथ कोई बढ़िया बात करने के लिए उनमें कसमसाती रहती है। न तो उसने ऐसी कोई उसास भरी जिससे पता चलता कि अकथनीय भावनाओं के बोझ ने उसे दबा रखा है, न ही उसने आकाश की ओर अपनी आंखें उठाकर देखा, और न ही वह धुंधले तथा स्वप्निल अन्दाज़ में मुसकरायी। उसकी भाव-भंगिमा में एक शान्त आत्मथिरता का भाव था, मानो वह किसी भारी खुशी या भारी चहल-

पहल के बाद दम ले रही हो। उसकी काठी और चाल सुदृढ़ और उन्मुक्त थी। मुझे वह खूब अच्छी लगी।

रदीलोव के साथ बातचीत में मैं फिर रम गया। बातों ही बातों में—यह याद नहीं कि किस प्रसंग में—हमने इस चिरपरिचित कथन का उल्लेख किया कि बहुधा उन चीज़ों की अपेक्षा जिन्हें हम अत्यन्त महत्वपूर्ण समझते हैं, अत्यन्त नगण्य चीज़ों का लोगों पर ज़्यादा प्रभाव पड़ता है।

"सो तो है," रदीलोव ने कहा—"यह मैं खुद अपने मामलों में भी अनुभव कर चुका हूं। आप जानते ही हैं, मेरा ब्याह हुआ था। अधिक नहीं, कुल तीन वर्ष हुए होंगे, मेरी पत्नी का प्रसव में देहान्त हो गया। मुझे लगा कि उसके विछोह में मैं अधिक दिन ज़िन्दा नहीं रहूंगा। मैं अत्यन्त दुःखी था। मेरा दिल टूट गया था। लेकिन मेरी आंखों से आंसू नहीं फूटे—बस, इस तरह घूमता रहता जैसे मेरे सिर पर कोई भूत सवार हो। उन्होंने उसकी मृत देह की साज-सज्जा की, जैसा कि हमेशा किया जाता है, और ठीक इसी कमरे में मेज़ पर लाकर उसे लिटा दिया। पादरी आया। डीकन आये। भजन और प्रार्थना शुरू हुई। लोहबान की धूनी दी गयी। मैंने धरती पर माथा टेका। लेकिन एक भी आंसू आंखों से नहीं गिरा। लगता था जैसे मेरा हृदय—और साथ ही मस्तिष्क भी—पथरा गये हों। मेरा समूचा बदन एक बोझ मालूम होता था। इस तरह मेरा पहला दिन गुज़रा। और क्या आप विश्वास करेंगे? रात को मैं सोया भी। अगली सुबह मैं अपनी पत्नी की एक झलक पाने के लिए गया। गर्मियों के दिन थे। मैंने देखा सूरज की धूप उसके सिर से पांव तक पड़ रही है। सभी कुछ बहुत उजला मालूम होता था। सहसा मैंने देखा..." (कहते कहते रदीलोव का बदन अनायास सिहर उठा) "ओह, आप सोच तक नहीं सकते! मैंने देखा कि उसकी एक आंख कुछ कुछ खुली थी, और इस आंख के ऊपर एक मक्खी रेंग रही

थी... मैं वहीं धम्म से ढेर हो गया, और जब मुझे चेत हुआ तो ऐसा रुदन फूटा कि रुकने में ही नहीं आता था ... मैं अपने को नहीं रोक सका..."

रदीलोव चुप हो गया। मैंने उसकी ओर देखा, और फिर ओल्गा की ओर... उसके चेहरे का भाव मैं कभी नहीं भूल सकता। वृद्धा ने मोज़े को अपने घुटनों पर रख दिया था, और अपने बटुवे में से रूमाल निकालकर चुपचाप अपने आंसुओं को पोंछ रही थी। फ़्योदोर मिखेइच एकाएक उठा, लपककर अपने बेला को उसने उठाया और बेसुध तथा फटी आवाज़ में गाने लगा। बिलाशक, वह हमारी उदासी को दूर करना चाहता था। लेकिन उसके पहले आलाप से ही हम सब थरथरा उठे। रदीलोव ने उसे चुप रहने का आदेश दिया।

"फिर भी," वह कहता गया, "जो बीत गया सो बीत गया। बीते को हम वापिस नहीं बुला सकते, और सबसे बढ़कर... इस दुनिया में, हर बात में कुछ न कुछ भलाई है... जैसा कि, अगर मैं भूलता नहीं तो, वाल्टेयर ने कहा था।" उतावली में उसने अपनी बात की पुष्टि की।

"इसमें शक नहीं," मैंने जवाब में कहा। "इसके अलावा ऐसी कोई मुसीबत नहीं जिसे सहा न जा सके, और ऐसी कोई भयानक स्थिति नहीं जिससे छुटकारा न पाया जा सके।"

"तो आपका यह ख़याल है?" रदीलोव ने कहा। "शायद आप ठीक कहते हैं। मुझे याद आता है कि एक बार तुर्की के अस्पताल में मैं अधमरा पड़ा था। मोतीझारे जैसे किसी बुख़ार ने मुझे जकड़ रखा था। और हमारे वे क्वार्टर बस नाम के ही क्वार्टर थे—युद्ध के दिन थे, और जो मिल जाता था उसके लिए ख़ुदा का हम शुक्र करते थे। सहसा वे वहां और अधिक बीमारों को ले आये। अब उन्हें कहां रखा जाय? डाक्टर कभी इधर जाता, कभी उधर—ख़ाली जगह कहीं नज़र नहीं आती। सो वह मेरे पास आ खड़ा हुआ और परिचारक से पूछा—'क्या यह ज़िन्दा

है?' वह जवाब देता है, 'जी, आज सुबह तक तो ज़िन्दा था।' डाक्टर नीचे झुकता है, कान लगाकर सुनता है—मैं सांस ले रहा हूं। भला आदमी अपने को रोक नहीं पाता। कहता है—'देखो न, कितनी सख़्त काठी है। मरने जा रहा है, मरना निश्चित है, फिर भी घिसट रहा है, घिसटे जा रहा है, बेकार जगह घेरे हुए है और दूसरों को बाहर किये है!' तो, मैंने मन में सोचा—'सुनो मिख़ाइल मिख़ाइलिच, तुम्हारा अब टिकट कटनेवाला है...' लेकिन, अन्त में, मैं अच्छा हो गया, और अभी तक, जैसा कि आप खुद देख सकते हैं जीवित हूं। तो, बिलाशक, आपकी बात सही है।"

"हां, हर सूरत में सही है," मैंने जवाब दिया। "अगर आप मर जाते तब भी मेरी बात सही होती—उस हालत में भी आपको अपनी उस भयानक स्थिति से छुटकारा मिल जाता।"

"बेशक, बेशक!" मेज़ पर ज़ोरों से घूंसा पटकते हुए उसने कहा। "किसी न किसी निर्णय पर पहुंचे बिना गति नहीं... किसी एक भयानक स्थिति में पड़े रहना भला किस काम का? टालमटोल करने और रींगते रहने से भला क्या लाभ?"

ओल्गा जल्दी से उठी और बग़ीचे में चली गयी।

"हां तो फ़ेद्या, एक नाच हो जाय!" रदीलोव ने ऊंची आवाज़ में कहा।

फ़ेद्या उछलकर खड़ा हो गया और कमरे में इधर से उधर मंडराने-डोलने लगा, उस आदमी की भांति कृत्रिम और विचित्र हरकत करते हुए जो पालतू भालू के साथ 'बकरी' का अभिनय करता है। साथ ही वह गाने भी लगा—"दरवाज़े पर हमारे..."

तभी अहाते में बग्घी के पहियों की गड़गड़ाहट सुनाई दी, और कुछ ही मिनट बाद एक लम्बे, चौड़े-चकले कंधों और मज़बूत काठीवाले आदमी ने—माफ़ीदार ओवस्यानिकोव ने—कमरे में प्रवेश किया। लेकिन

ओवस्यानिकोव का व्यक्तित्व कुछ इतना विलक्षण और मौलिक है कि, अपने पाठकों की अनुमति से, उसका ज़िक्र अगली कहानी के लिए स्थगित कर देना चाहता हूं। और अब, जहां तक मेरा संबंध है, केवल इतना ही कहना और रह जाता है कि अगले दिन, एकदम तड़के ही, येरमोलाई के साथ मैं शिकार के लिए निकल गया और दिन-भर शिकार करने के बाद सांझ को अपने घर लौटा... और यह कि इसके एक सप्ताह बाद मैं फिर रदीलोव के यहां गया, लेकिन न तो वह वहां मिला और न ओल्गा ही, और पखवारा बीतते न बीतते मालूम हुआ कि अपनी मां को छोड़कर वह अचानक ग़ायब हो गया है, अपनी साली के साथ कहीं भाग गया है। समूचे प्रदेश में इस घटना ने एक हलचल मचा दी थी, हर जगह इसकी चर्चा थी, और केवल इस घटना की ख़बर सुनने के बाद मैं ओल्गा के उस भाव को पूर्णतया समझने में समर्थ हो सका जो उस समय उसके चेहरे पर छाया था जब कि रदीलोव अपनी कहानी सुना रहा था। वह केवल सहानुभूतिक वेदना को ही प्रकट नहीं कर रहा था, बल्कि ईर्ष्या की आग में भी धधक रहा था।

देहात से विदा होने से पहले मैं वृद्धा रदीलोवा से मिलने गया। दीवानख़ाने में बैठी फ़्योदोर मिख़ेइच के साथ वह ताश खेल रही थी।

"आपको अपने बेटे की कोई ख़ैर-ख़बर मिली?" अन्त में जैसे-तैसे मैंने उससे पूछा।

वृद्धा ने रोना शुरू कर दिया। इसके बाद रदीलोव के बारे में और कुछ पूछने की कोशिश मैंने नहीं की।

माफ़ीदार ग्रोवस्यानिकोव

प्रिय पाठक, ज़रा अपने मन में इस चित्र की कल्पना कीजिये — गठी हुई देह, लम्बा क़द, आयु सत्तर वर्ष, लोक-कथाओं के हमारे लेखक क्रिलोव से मिलता-जुलता चेहरा, स्वच्छ और समझदार आंखें जिनके ऊपर घनी भौंहें लटक आयी थीं, प्रतिष्ठित अन्दाज़, धीमी वाणी, और चाल-ढाल में इत्मीनान का, थिरता का पुट लिये हुए। ऐसा था वह ओवस्यानिकोव। एकदम नीले रंग और लम्बी आस्तीनों वाला ढीला-ढाला फ़ॉक-कोट पहने, जिसमें नीचे से ऊपर तक बटन थे, गले में बैंगनी रंग का रेशमी रूमाल लपेटे, फुन्दनों से सजे बड़े बूटों को चमाचम चमकाये। कुल मिलाकर शकल-सूरत में वह एक सम्पन्न सौदागर के समान मालूम होता था। उसके हाथ ख़ूबसूरत थे, मुलायम और सफ़ेद; बातें करते समय वह अक्सर अपने फ़ॉक-कोट के बटनों को छेड़ता रहता था। गौरव की उसकी भावना और उसकी थिरता, उसकी भली समझबूझ और अलसायी-सी भाव-भंगिमा और उसकी ईमानदारी तथा ज़िद पीटर महान से पहले के रूसी बोयारों की याद दिलाती थी। राष्ट्रीय उत्सवों के समय पहनने की पोशाक उसपर ख़ूब फबती थी। वह पुराने ज़माने के उन लोगों में से था जो अभी तक बच रहे थे। उसके सभी पड़ोसी उसकी बहुत इज़्ज़त करते थे, और उससे परिचित होना सम्मान की बात समझते थे। उसके साथी — माफ़ीदार तो जैसे उसकी पूजा करते थे, और उसके सम्मान में दूर से ही अपनी टोपियां उतार लेते थे। उन्हें उसपर गर्व था। यों आजकल,

आम तौर से, यह बताना कठिन है कि कौन माफ़ीदार है और कौन किसान। उसकी खेतीबाड़ी की हालत किसान की हालत से भी क़रीब क़रीब बदतर ही है। उसके बछड़ों को देखो तो छोटे छोटे, नहूसत के मारे। घोड़े जैसे आधे जीते हों, आधे मरे हुए। साज़ रस्सियों का बना हुआ। लेकिन ओवस्यानिकोव माफ़ीदारों की इस आम श्रेणी से भिन्न—अपवाद-स्वरूप था, हालांकि धनिकों में उसका भी शुमार नहीं किया जा सकता। एक साफ़-सुथरे और छोटे-से आरामदेह घर में वह अपनी पत्नी के साथ अकेला रहता था, कुछ नौकर-चाकर भी रख रखे थे। उन्हें वह रूसी चलन के कपड़े पहनाता था और उन्हें अपने कमकर कहकर पुकारता था और उनसे अपनी भूमि जोतवाने का भी काम लेता था। वह न अपने को कुलीन जताने का प्रयत्न करता था, न ही ज़मींदार दिखने का। जैसा कि कहते हैं, वह कभी अपने-आपको 'भुलावे में नहीं रखता था', पहली बार के ही निमंत्रण पर वह कभी आसन नहीं जमाता था, और नये मेहमान के आने पर अपनी जगह से उठकर खड़े होने में कभी चूकता नहीं था। लेकिन यह सब वह कुछ इतनी गरिमा और कुछ इतनी राजसी शालीनता के साथ करता था कि मेहमान, बरबस और भी अधिक विनम्रता के साथ उसके आगे झुक जाता। ओवस्यानिकोव पुरानी चाल की चीज़ों से चिपका था—इसलिए नहीं कि वह अंधविश्वासी था (स्वभाव से वह अपेक्षाकृत स्वतंत्र विचारों का आदमी था), बल्कि इसलिए कि उसे ऐसा करने की आदत पड़ गयी थी। मिसाल के लिए कमानीदार गाड़ियों से उसे चिढ़ थी, क्योंकि ये उसे आरामदेह नहीं मालूम होती थीं, और बग्घी में सवार होना वह ज़्यादा पसंद करता था, या फिर, चमड़े की गद्दी से युक्त नन्ही-मुन्नी गाड़ी उसे पसंद थी, और अपने बढ़िया मुश्की घोड़े को वह हमेशा खुद ही गाड़ी में हांकता था। (उसके पास केवल मुश्की घोड़े थे।) उसका कोचवान, लाल गालों वाला एक युवक, बालों को टोपी की शकल में कटाये, नीले रंग का

पेटीदार कोट पहने और भेड़ की खाल की नीची टोपी सिर पर जमाये, अदब के साथ उसकी बग़ल में बैठा रहता था। ओवस्यानिकोव दिन के भोजन के बाद हमेशा झपकी लेता था और हर शनिवार को हम्माम में जाकर स्नान करता था। धार्मिक पुस्तकों के अलावा वह और कुछ नहीं पढ़ता था और पढ़ते समय, बड़ी गम्भीरता के साथ, चांदी का अपना गोल चश्मा नाक पर चढ़ा लेता था। वह जल्दी उठता था और जल्दी ही सोने चला जाता था। लेकिन वह अपनी दाढ़ी सफ़ाचट रखता था और जर्मन ढंग से अपने बाल काढ़ता था। हमेशा मिलनसारी और हार्दिकता के साथ वह आगन्तुकों का स्वागत करता था, लेकिन वह उनके आगे धरती पर बिछ नहीं जाता था, न ही उन्हें लेकर ज्यादा लल्लो-चप्पो करता था, न ही घर में बनी हर प्रकार की सुखाई हुई तथा नमक लगी चीज़ों को चखने के लिए उनके गले पड़ता था। "बीबी," अपनी जगह से उठे बिना और अपनी पत्नी की दिशा में केवल सिर को थोड़ा घुमाते हुए वह इत्मीनान के साथ कहता, "इन महानुभावों के लिए कुछ ले आओ।" गेहूं बेचना वह पाप समझता था। कारण उसे वह ईश्वर की देन मानता था। सन् ४० में सर्वव्यापी भूखमरी और भयानक अकाल के उन दिनों में, उसने अपना समूचा भण्डार आस-पास के ज़मींदारों और किसानों के साथ बांटकर खाया। अगले साल कृतज्ञता के साथ, जिन्स के रूप में, उन्होंने अपना ऋण चुकता कर दिया। जब भी पड़ोसियों में कोई झगड़ा होता, तो पंच और मध्यस्थ के रूप में वे अक्सर ओवस्यानिकोव को बुलाते, और उसके फ़ैसले को वे प्रायः हमेशा मंजूर करते, उसकी सलाह को ध्यान के साथ सुनते। उसके बीच में पड़ने की बदौलत हदबन्दी के कितने ही मामले पूर्णतया सुलझ गये। लेकिन दो या तीन बार महिला-ज़मींदारों से कशमकश होने के बाद उसने निश्चय कर लिया कि स्त्री-जाति के मामलों में वह कभी बीच-बचाव नहीं करेगा। हड़बड़ी और उत्तेजना, स्त्रियों की कांय-

कांय और झमेलों से उसे चिढ़ थी। एक बार, जाने कैसे, उसके घर में आग लग गयी। एक कमकर "आग! आग!" चिल्लाता और ताबड़ तोड़ भागता हुआ उसके पास आया। "तो इतना चिल्ला क्यों रहे हो?" ओवस्यानिकोव ने शान्त भाव से कहा। "ज़रा मेरी बैसाखी और टोपी ले आओ।" अपने घोड़ों को सीधा करना वह ख़ुद ही पसंद करता था। एक बार वह किसी घोड़े को साध रहा था। घोड़ा बहुत तेज़ था। वह उसे लिये पहाड़ी ढलुवान पर से गहरे खड्ड की ओर भाग निकला। "बस, बस, अनाड़ी! क्यों मौत के मुंह में कूदना चाहता है!" ओवस्यानिकोव ने मुलायमियत के साथ उससे कहा, और अगले ही क्षण बग्घी, पीछे बैठे हुए लड़के और घोड़े समेत, कगारे पर से गिरी। सौभाग्य से खड्ड की तलहटी में रेत के ढूह पड़े थे। सो चोट किसी को नहीं आयी। केवल घोड़े की एक टांग मोच खा गयी। "अब तो देख लिया न," ज़मीन से उठते हुए ओवस्यानिकोव ने शांत स्वर में कहा, "मैंने कहा था कि नहीं?" पत्नी भी उसे अपने जोड़ की ही मिली थी। तत्याना इल्यीनिश्ना ओवस्यानिकोवा लम्बे क़द की स्त्री थी, गर्वीली और कम बोलनेवाली; हमेशा सिर पर दालचीनी के रंग का रेशमी रूमाल बांधती थी। वह कुछ रूखे स्वभाव की थी, हालांकि उसके कठोर होने की शिकायत किसी को नहीं थी। उलटे कितने ही दीन-हीन प्राणी उसे अपनी मां और कल्याणी कहकर पुकारते थे। उसके चौकस नखशिख, उसकी बड़ी बड़ी काली आंखें उसके होंठों की मृदु तराश, आज भी उन दिनों की याद दिलाती थी जब उसके सौंदर्य की धूम थी। ओवस्यानिकोव के कोई बच्चा नहीं था।

जैसा कि पाठकों को पहले ही मालूम है, रदीलोव के यहां मेरी उससे जान-पहचान हुई थी, और उसके दो दिन बाद मैं उससे मिलने गया। वह घर पर ही था, चमड़े की एक बड़ी आराम-कुर्सी में बैठा, सन्तों की जीवनियां पढ़ रहा था। उसके कंधे पर एक भूरी बिल्ली गुरगुरा

रही थी। अपनी आदत के अनुसार, राजसी हार्दिकता के साथ उसने मेरा स्वागत किया। बातचीत का सिलसिला चल पड़ा।

"लेकिन लुका पेत्रोविच," बातों में मैंने उससे पूछा, "सच सच बताना कि पहला ज़माना क्या ज़्यादा अच्छा नहीं था?"

"कुछ मानी में, मैं कहूंगा कि ज़रूर अच्छा था," ओवस्यानिकोव ने जवाब दिया। "ज़िन्दगी ज़्यादा सहज थी, हर चीज़ की कहीं अधिक बहुतायत थी। फिर भी, अब ज़्यादा अच्छा है और परमात्मा ने चाहा तो, आपके बच्चे और भी ज़्यादा अच्छा जीवन बितायेंगे।"

"लेकिन, लुका पेत्रोविच, मेरा ख़याल था कि आप पुराने दिनों की प्रशंसा करेंगे।"

"नहीं, पुराने दिनों की प्रशंसा करने का मुझे तो ऐसा कोई ख़ास कारण नज़र नहीं आता। मिसाल के लिए देखो न, हालांकि आजकल आप ज़मींदार हैं, ठीक वैसे ही जैसे कि आपके दादा थे, लेकिन आपके पास वैसी सत्ता नहीं है, और, कहने की ज़रूरत नहीं, आप ख़ुद भी अब उसी तरह के आदमी नहीं रहे हैं। कुछ श्रीमन्त अब भी हमारा उत्पीड़न करते हैं, लेकिन, सच पूछो तो, इससे एकदम बचा भी कैसे जा सकता है। चक्की के पाट जहां चलेंगे वहां पिसान होगा ही। नहीं, मुझे अब वैसा कुछ नहीं दिखाई देता जैसा किशोरावस्था में मैं ख़ुद देख चुका हूं।"

"मिसाल के लिए?"

"मिसाल के लिए आपके दादा का ज़िक्र ही मैं करता हूं। वह बहुत ही रोबदार आदमी थे, और हमारा उत्पीड़न करते थे। शायद आप जानते हों—निश्चय ही आप ख़ुद अपनी जागीर से परिचित होंगे—ज़मीन का एक टुकड़ा, जो चेप्लीगिन से मलीनिन तक फैला है, वह, जिसमें आजकल जई बोई जाती है, वह दरअसल, हमारी ज़मीन है, सारी की सारी हमारी है। आपके दादा ने उसे हमसे हथिया लिया था। घोड़े पर सवार वह उधर से गुज़रे, हाथ से उसकी ओर इशारा किया, और

कहा, "हमारी मिल्कियत", और उसपर कब्ज़ा कर लिया। मेरा बाप (ईश्वर उसकी आत्मा को शान्ति दे!) इन्साफ़ पसन्द आदमी था, साथ ही तेज़ स्वभाव का भी। वह यह सह नहीं सका—और सच, ऐसा कौन है जो अपनी मिल्कियत यूं खो देगा? सो उसने अदालत में दरख़ास्त कर दी। लेकिन वह एक अकेला जना था। और किसी ने साथ नहीं दिया—सब डरते थे। सो किसी ने गुप्त रूप से आपके दादा के पास जाकर ख़बर दी कि आपने जो दया कर उसकी ज़मीन को अपने दख़ल में ले लिया है, उसके ख़िलाफ़ प्योत्र ओवस्यानिकोव शिकायत कर रहा है। आपके दादा ने अपने शिकारिये बौश को आदमियों का एक टोला देकर उसी दम भेज दिया... उन्होंने मेरे बाप को दबोच लिया और उसे पकड़कर आपकी जागीर में खींच ले गये। मैं तब एक छोटा-सा लड़का था। नंगे पांव मैं अपने बाप के पीछे दौड़ा। जानते हैं, फिर क्या हुआ? वे उसे आपके घर ले गये और खिड़कियों के नीचे उसे कोड़ों से पीटने लगे। और आपका दादा छज्जे पर खड़ा है और देखता जा रहा है, और आपकी दादी खिड़की में बैठी है और देखती जा रही है। मेरा बाप गुहार करता है—"मालकिन मार्या वसील्येवना, मुझे बचाओ! मुझपर दया करो!" जवाब में वह उचक उचककर बस उसे देखती रहती है। सो उन्होंने मेरे बाप से वचन लिया कि वह ज़मीन का नाम नहीं लेगा, और उससे कहा कि जाकर अपना भाग्य सराहो जो हम तुम्हें ज़िन्दा छोड़े दे रहे हैं। सो तब से वह ज़मीन आपके कब्ज़े में बनी है। अपने किसानों से ही पूछ देखो कि इस ज़मीन का उन्होंने क्या नाम रख छोड़ा है? वे इसे डंडामारी ज़मीन कहते हैं, क्योंकि डंडा मारकर इसे हासिल किया गया था। सो देखा आपने, हम छोटे लोग पुराने राज की याद में ऐसे कुछ ज़्यादा आंसू नहीं बहा सकते।"

मुझसे ओवस्यानिकोव को कोई जवाब देते नहीं बना, और न ही उसके चेहरे की ओर सीधा देखने का मैं साहस कर सका।

"हमारा एक पड़ोसी और था जो उन्हीं दिनों हमारे बीच आकर बसा था। उसका नाम था स्तेपान निक्तोपोलिग्रोनिच कोमोव। वह मेरे बाप की जान सांसत में किये रहता, कभी एक बात को लेकर और कभी दूसरी बात को लेकर। बड़ा पियक्कड़ जीव था, और दूसरों को पिलाने का शौक़ीन। नशे में जब वह धुत्त होता तो फ़्रेंच भाषा में 'से बों'* कहता, अपने होंठों को चाटता और इसके बाद—नेक फ़रिश्ते तक शर्म से लाल हो जाते। वह सभी पड़ोसियों के पास अपना बुलावा भेजता। उसके घोड़े हमेशा जुते रहते, और अगर आप न जाते तो वह खुद आपकी टोह में फ़ौरन आ धमकता... और बहुत ही अजीब जीव था वह। जब 'होश' में रहता तो कभी बेपर की न उड़ाता। लेकिन धुत्त होने पर वह तूमार बांधने लगता, कि पीटर्सबर्ग में फ़ोन्तान्का नामक सड़क पर उसके तीन घर हैं। एक लाल, जिसमें एक चिमनी है, दूसरा पीला, जिस में दो चिमनियां हैं और तीसरा नीला, जिसमें एक भी चिमनी नहीं। और यह कि उसके तीन लड़के हैं (हालांकि उसका विवाह भी नहीं हुआ था), एक पैदल सेना में, दूसरा घोड़सवार सेना में, और तीसरा खुदमुख़्तार है... और वह बताता कि उसके तीनों घरों में तीन लड़के अलग अलग रहते हैं; कि सबसे बड़े लड़के से मिलने एडमिरल आते हैं, दूसरे के यहां जेनरल और तीसरे के यहां केवल अंग्रेज़। इसके बाद वह खड़ा हो जाता और कहता, "सबसे बड़े लड़के के स्वास्थ्य के नाम पर जो सबसे ज़्यादा अपने फ़र्ज़ का पाबन्द है।" और यह कहकर रोना शुरू कर देता। और अगर कोई उसके लड़के के स्वास्थ्य के नाम पर जाम न छलकाता तो, उसकी तो शामत ही आ जाती। "मैं तुझे गोली से उड़ा दूंगा!" वह कहता, "और दफ़न तक नहीं होने दूंगा!" कभी कभी वह उछलता और चीख़कर कहता, "नाचो, खुदा के बन्दो, नाचो! जिससे आपको

---

*अच्छी बात है।

ख़ुशी मिले और मेरा जी बहले!" हां तो अब आपको नाचना पड़ेगा, चाहे जान पर क्यों न बन आय, लेकिन नाचना पड़ेगा। अपनी बन्धक दासियों की जान पर भी वह बुरी तरह सवार रहता। कभी कभी सुबह होने तक सारी रात वे मिलकर एक साथ गाती रहतीं, और जो सबसे ऊंची आवाज़ में गाती वह इनाम पाती। और अगर वे थकने लगतीं तो दोनों हाथों में वह अपना सिर थाम लेता और विलाप करने लगता, "ओह मुझ अनाथ का भाग्य! कोई मुझे पूछनेवाला नहीं! और अब ये भी मुझे छोड़ देना चाहती हैं!" और साईस तुरंत लड़कियों को बढ़ावा देते। अब मुसीबत यह कि मेरा बाप उसके मन भा गया। इसका अब क्या इलाज हो? मेरे बाप के वह इतना पीछे पड़ा कि उसे अधमरा कर दिया, और सचमुच वह उसे मार भी डालता, लेकिन (शुक्र है ख़ुदा का) वह ख़ुद ही मर गया। नशे के दौर में वह कबूतर-घर से नीचे आ गिरा... सो देखा आप ने, ऐसे थे हमारे वे पड़ोसी!"

"ओह ज़माना अब कितना बदल गया है!" मैंने राय दी।

"जी हां," ओवस्यानिकोव ने सहमति प्रकट की। "और यह तो मानना होगा कि पुराने ज़माने के कुलीन ख़ूब ऐश करते थे। असल श्रीमन्तों की तो बात ही छोड़ो—उन्हें मास्को में देखने का मौक़ा मिलता था। कहते हैं कि वहां भी ऐसे लोग आजकल बिरले ही नज़र आते हैं।"

"क्या आप मास्को में रहे थे?"

"हां, बहुत बहुत पहले। तिहत्तरवें साल में मैं अब पांव रख रहा हूं, और मास्को जब मैं गया था तब सोलह का था।"

ओवस्यानिकोव ने उसास भरी।

"वहां किस को देखा?"

"ओह, ख़ूब देखा—बहुत-से श्रीमन्तों को देखा। और सभी उन्हें देखते थे। वे अपना घर खुला रखते थे। दुनिया उन्हें देखे और मुग्ध तथा चकित होती रहे। केवल काउण्ट अलेक्सेई ग्रिगोर्येविच ओर्लोव-चेस्मेन्स्की

के स्तर का यहां कोई नहीं था। मैं अक्सर अलेक्सेई ग्रिगोर्येविच के यहां जाता। मेरा चाचा उनके यहां घर के मुख्य नौकर का काम करता था। कालूगा गेट के पास शाबोलोव्का में काउण्ट रौनक़ अफरोज़ थे। ओह, कितने शानदार श्रीमन्त थे। वैसा राजसी ठाठ, वैसी शालीनता और औदार्य, आप कल्पना तक नहीं कर सकते। और उसका वर्णन करना भी असम्भव है। उनका डील-डौल बस देखते ही बनता था, और उनकी ताक़त, और उनके देखने का वह ढंग! जो उन्हें जानता नहीं, वह उनके पास जाने का साहस न करता, उसका हृदय कांपता, यों कहिये कि इतने ज्यादा रोब में आ जाता कि सुन्न पड़ जाता। लेकिन उनके निकट पहुंचते ही लगता जैसे सुहावनी धूप सहला रही हो, और हृदय एकदम खिल जाता। हर कोई उनके पास जा सकता था और वह हर तरह के खेल-कूद के शौक़ीन थे। वह ख़ुद दौड़ों में हिस्सा लेते, और सभी को मात करते। शुरू शुरू में वह कभी आगे नहीं रहते। यह इसलिए कि प्रतिपक्षी को बुरा न मालूम हो। बीच में भी वह उसे न छेंकते, बल्कि आख़िर में आगे निकल जाते। और वह इतनी भली तबीयत के थे कि प्रतिपक्षी के घोड़े की दाद देते जिससे उसका जी हरा हो जाता। वह लोटन कबूतर पालते थे, सबसे बढ़िया ज़ात के। वह सहन में निकल आते, आरामकुर्सी पर बैठ जाते, और कबूतरों को खुला छोड़ने का हुकम देते। उनके आदमी बन्दूक़ों से लैस चारों ओर छतों पर खड़े रहते। यह इसलिए कि कोई बाज़ झपट्टा न मारने पाय। पानी से भरा चांदी का एक बड़ा-सा बरतन काउण्ट के पांवों के पास रखा रहता और काउण्ट पानी में कबूतरों का अक्स देखा करते। भिखारियों और ग़रीब लोगों को सैकड़ों की तादाद में, उनके यहां से भोजन दिया जाता। जाने कितना धन वह यों ही बांट देते... और उनका गुस्सा! जैसे बिजली कड़कती है। सब की सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती। लेकिन रोने-धोने की नौबत न आती। कुछ क्षण बाद ही वह मुसकराते नज़र आते। जब वह जशन

मनाते सारा मास्को मदिरा से तर हो जाता। और फिर, देखो न, चतुर वह कितने थे। तुर्की के छक्के छुड़ा दिये। कुश्ती के भी वह शौक़ीन थे। पहलवानों का उनके यहां तांता लगा रहता था—तूला से, खारकोव से, ताम्बोव से—सब कहीं से वे आते थे। अगर वह किसी को पटकनी देते तो उसे इनाम देते, अगर कोई उन्हें पटकनी देता तो वह उसे उपहारों से लाद देते और उसके होंठों को चूमते... एक बार, मैं भी तब मास्को में था, उन्होंने एक ऐसी शिकार-पार्टी का आयोजन किया जैसी कि रूस में पहले कभी नहीं हुई। समूचे राज्य में सभी शिकारियों के पास उन्होंने न्योते भेजे। शिकार के लिए एक दिन तय कर दिया और तीन महीने पहले सब को ख़बर कर दी। मय कुत्तों और शिकारियों के वे आये। ओह, क्या पूछते हो, लोगों की एक फ़ौज—बाक़ायदा फ़ौज वहां जमा हो गयी। पहले तो, दस्तूर के मुताबिक, खान-पान हुआ, फिर वे शहर के बाहर जाने लगे, हज़ारों की भीड़ जमा थी। और आप भी क्या कहोगे... आपके दादा के कुत्ते ने सब कुत्तों को मात किया।"

"मिलोविद्का ही था न वह?" मैंने पूछा।

"मिलोविद्का, हां मिलोविद्का... सो काउण्ट ने उससे कहना शुरू किया, 'अपना कुत्ता मुझे दे दो। जो भी चाहो, उसके लिए मुझसे ले लो।'—'नहीं, काउण्ट,' उसने जवाब दिया, 'मैं व्यापारी नहीं हूं। मैंने कभी एक चिथड़ा तक नहीं बेचा। मान रखने के लिए मैं अपनी पत्नी तक से जुदा होने के लिए तैयार हो सकता हूं लेकिन मिलोविद्का से नहीं। भले ही मुझे बन्धक बनना पड़े।' और अलेक्सेई ग्रिगोर्येविच ने इसके लिए उसकी सराहना की, 'तुमने मुझे मोह लिया', उसने कहा। और आपका दादा कुत्ते को अपनी गाड़ी में बैठाकर अपने साथ ले गया, और जब मिलोविद्का मरी तो बाजे-गाजे के साथ उसे बाग़ में दफ़नाया और उसकी क़ब्र के ऊपर अन्तःस्मरण के साथ एक पत्थर लगवा दिया।"

"तो यह कहो कि अलेक्सेई ग्रिगोर्येविच किसी का उत्पीड़न नहीं करते थे?" मैंने कहा।

"सदा यही देखने में आता है कि केवल वही जो ख़ुद मुश्किल से तैरते होते हैं, दूसरों को वही परेशान करते हैं।"

"और यह बौश किस क़िस्म का आदमी था?" थोड़ी ख़ामोशी के बाद मैंने पूछा।

"अरे, यह कैसे हुआ कि मिलोविद्का का ज़िक्र तो आपने सुना और बौश के बारे में कुछ नहीं जानते? वह आपके दादा का मुख्य शिकारिया था। आपके दादा उसे भी उतना ही चाहते थे जितना मिलोविद्का को। वह बहुत ही जानबाज़ आदमी था और आपके दादा जो भी हुकम देते थे, आनन-फ़ानन वह उसपर अमल करता था। अगर वह कहते तो तलवार की धार पर दौड़ने में भी वह न चूकता... और जब वह हांक लगाता था तो ऐसा मालूम होता जैसे जंगल में उसी की आवाज़ गूंज रही हो। और फिर वह यकायक ज़िद्द पकड़ लेता, अपने घोड़े से उतर पड़ता और ज़मीन पर पसर जाता... और जैसे ही उसकी आवाज़ कुत्तों के कानों में पहुंचना बंद होती, सब बण्टाधार हो जाता। शिकार का पीछा करने की ललक चाहे कितनी ही तेज़ क्यों न हो, वे रुक जाते और किसी हालत में आगे न बढ़ते। और बाप रे, आपके दादा ख़ूब आग-बबूला होते। 'लानत है! शैतान को मैंने फांसी पर न लटकाया तो मेरा नाम नहीं। कम्बख़्त की आंतें निकालकर रख दूंगा, धर्मद्रोही कहीं का! उसकी एड़ियां मैंने उसके गले में न ठूंसी तो कहना। बदमाश कहीं का!' लेकिन अन्त में होता यह कि वह यह मालूम करने की कोशिश करते कि वह क्या चाहता है, कुत्तों को हांका क्यों नहीं देता? आम तौर से, ऐसे मौक़ों पर, बौश वोद्का की मांग करता, उसे गले में उंडेलता, अपने घोड़े पर सवार होता और फिर उसी आवेश तथा आवेग से हांक लगाने लगता।"

"आप भी तो शिकार के शौक़ीन मालूम होते हैं, लुका पेत्रोविच?"

"शिकार का शौक... ज़रूर... लेकिन अब नहीं। मेरे दिन अब ढल चले हैं। लेकिन जब मैं जवान था... पर आप जानो मेरी जैसी स्थिति के आदमी के लिए यह कोई सहज मामला नहीं था। हमारे जैसे लोगों के लिए कुलीनों की लीक पर चलना कुछ जंचता नहीं। निश्चय ही हमारी पांत में भी कुछ ऐसे पियक्कड़ और नाकारा लोग हैं जो कुलीनों के पुच्छल्ला बने रहते हैं, लेकिन इसमें कुछ मज़ा नहीं, बड़ी अटपटी बात है। वे केवल अपने मुंह पर कालिख पोतते हैं। एक मरियल-से लड़खड़ाते घोड़े पर उन्हें चढ़ा दिया जाता है, उनकी टोपी को बार बार उछाला जाता है, घोड़े के चाबुक मारने के बहाने उनकी पीठ पर चाबुक चलती है, और उन्हें हर बात में हंसते रहना तथा अपने को दूसरों की हंसी का बायस बनाना पड़ता है। नहीं, मैं कहता हूं, जितना ही अधिक नीचा आपका स्तर हो, उतना अधिक सिमट सिमटकर आपको रहना चाहिए। अगर आप ऐसा नहीं करते तो सीधे अपने मुंह पर कालिख लगाते हैं।"

"हां," ओवस्यानिकोव ने एक उसास छोड़ी और कहता गया, "इस जीवन-काल में, मेरे देखते न देखते ज़माना बदल गया है। अब वह ज़माना नहीं रहा। बहुत कुछ बदल गया है, ख़ास तौर से कुलीनों में। छोटे ज़मींदार, सबके सब या तो सरकारी नौकरी करते या फिर अपनी ज़मीनों पर नहीं रहते। और जहां तक बड़े मालिकों की बात है, उनकी तो कोई थाह नहीं मिलती। उनसे—बड़े ज़मींदारों से—हदबंदी के मामलों में मेरा वास्ता पड़ा। और, सच पूछो तो, उन्हें देखकर मेरा जी ख़ुश हो जाता है। बहुत ही शाइस्ता और मिलनसार होते हैं। केवल एक बात मुझे चक्कर में डालती है। वह यह कि सारी विद्याएं वे पढ़े हैं, इतने फर्राटे और सफ़ाई से बोलते हैं कि हृदय पिघलने लगता है, लेकिन जो असल काम है उसे वे नहीं समझ पाते। वे ख़ुद अपने फ़ायदे

तक को नहीं पकड़ पाते। बस किसी कारिन्दे के, बन्धक दास के हाथों में खेलते हैं, चाहे जिधर वह उन्हें मोड़ता रहे। मिसाल के लिए कोरोल्योव अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच को ही लो। शायद आप उसे जानते हों अब क्या वह सोलहों आने कुलीन नहीं है? ख़ूबसूरत है, धनी है, यूनिवर्सिटी में पढ़ा है, और मेरे ख़याल से दूसरे देशों में घूमा है। सीधे-सादे और सहज ढंग से बातें करता है, और हम सबसे हाथ मिलाता है। क्यों, कुछ जानते हैं उसके बारे में? अच्छा तो सुनिये। पिछले हफ़्ते की बात है। पंच निकीफ़ोर इल्यीच का बुलावा पाकर हम सब बेरेज़ोव्का में जमा हुए। उसने हमसे कहा, "कितने शरम की बात है हदबंदी का मामला हमने अभी तक नहीं सुलझाया। हमारा जिला सबसे पिछड़ा हुआ है। हमें इस काम में जुट जाना चाहिए।" सो हम काम में जुट गये। बहसें हुईं, विवाद हुए—जैसा कि होता है। हमारे मुख़्तार ने एतराज़ उठाने शुरू किये। लेकिन सबसे पहले हल्ला मचाया पोर्फ़ीरी ओवचीन्निकोव ने ... और हल्ला मचाने की भला उसे क्या गरज़ पड़ी थी? एक इंच ज़मीन भी उसके पास नहीं। अपने भाई का नुमाइन्दा बनकर आया था। चिल्ला उठा, 'नहीं, तुम मेरे साथ ठिठोली नहीं कर सकते! मुझे चाहे जहां नहीं फेंक सकते! नक़्शे यहां मेरे सामने रखो! जरीबकश को यहां बुलाओ, उस दग़ाबाज़ को यहां बुलाओ!'—'लेकिन तुम चाहते क्या हो, यह तो मालूम हो?'—'ओह, मुझे इतना बेवक़ूफ़ न समझो। वाह! क्या आप सोचते हैं कि मैं यों ही आपके सामने अपने हक खोलकर रख दूंगा? नहीं, पहले नक़्शे इधर हवाले करो—बस, मैं यही चाहता हूं!' और मज़ा यह कि नक़्शे मेज़ पर मौजूद थे और वह बराबर उन्हीं पर अपना घूंसा पटक रहा था। इसके बाद वह मारफ़ा द्मीत्रियेवना को बुरी तरह लांछित करने लगा। वह चीख़ उठी, 'तुम कौन होते हो मेरी इज़्ज़त लेनेवाले!'—'वाह रे तुम्हारी इज़्ज़त!' वह कहता है, 'तुम्हारी जैसी इज़्ज़त तो मैं अपनी मुश्की घोड़ी में भी बरदाश्त न करूंगा!' अन्त में उन्होंने उसे

कुछ मदिरा ढालकर दी और इस तरह उसे शान्त किया। इसके बाद दूसरे हल्ला मचाने लगे। अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच कोरोल्योव – वह भला आदमी एक कोने में बैठा अपनी छड़ी की मूंठ दांतों से कुतर रहा था। उसने केवल अपना सिर हिलाया। मैं शरम से गड़ गया। मेरे लिए वहां बैठे रहना मुश्किल हो रहा था। 'जाने क्या सोचता होगा वह हम लोगों के बारे में?' मैंने अपने मन में कहा। तभी, देखता क्या हूं कि अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच उठ खड़े हुए हैं और कुछ बोलने की इच्छा प्रकट करते हैं। पंच के मुंह में अब कुछ ज़बान आती है, वह उठकर कहता है – 'भले लोगो, सुनो, अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच कुछ कहना चाहते हैं।' और मुझे इस बात के लिए उन लोगों की प्रशंसा करनी चाहिए कि सब के सब एकदम चुप हो गये। सो अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच ने बोलना शुरू किया और कहा – 'मालूम होता है जैसे हम उस बात को ही भूल गये जिसके लिए हम लोग यहां जमा हुए थे। हदबन्दियों का तय होना बिलाशक ज़मीन के मालिकों के लाभ की चीज़ है, इसमें दो राय नहीं हो सकतीं। लेकिन इसका असल मक्सद क्या है? किसान को फ़िलहाल कुछ सहूलियत पहुंचाना जिससे कि वह आसानी के साथ काम कर सके और अपना लगान ज़्यादा सहूलियत से अदा कर सके; अब किसान खुद अपनी ज़मीन से बहुत कुछ बेगाना हो चला है, और काम करने के लिए उसे अक्सर पांच पांच मील दूर जाना पड़ता है; ऐसी हालत में हम उससे कुछ ज़्यादा उम्मीद नहीं कर सकते।' इसके बाद अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच ने कहा – 'यह शरम की बात है कि ज़मींदार अपने किसानों की खुशहाली में कोई दिलचस्पी नहीं लेते; और अन्त में, अगर क़ायदे से देखा जाय तो, उनके हित और हमारे हित अटूट रूप में एक-दूसरे से जुड़े हैं, अगर उनकी हालत अच्छी है तो हमारी भी अच्छी होगी, अगर उनके साथ बुरी गुज़रती है, तो हमारे साथ भी बुरी गुज़रती है। और इसलिए ज़रा ज़रा-सी बातों को लेकर झगड़ना ग़लत है और अपनी नासमझी का परिचय देना है ...' आदि

आदि ... तो कितना अच्छा वह बोला। लगता था जैसे सीधे हृदय को छू रहा हो ... जितने भी कुलीन थे, सबने सिर झुका लिये और यक़ीन मानो, मेरी आंखों में तो क़रीब क़रीब आंसू उमड़ आये। सच बात तो यह है कि ऐसी बातें आपको पुरानी पोथियों तक में नहीं मिलेंगी ... लेकिन अन्त में नतीजा क्या निकला? ख़ुद उसने चार एकड़ दलदली भूमि को नहीं छोड़ा, और उसे बेचने के लिए भी राज़ी नहीं हुआ। उसने कहा – 'अपने आदमियों से मैं दलदल का पानी सुखवा लूंगा, और नये से नये साज़-सामान से लैस कपड़े का एक कारख़ाना उसपर खड़ा करूंगा। 'मैंने पहले ही,' उसने कहा, 'उस ज़मीन का बन्दोबस्त कर लिया है। इस बारे में अपनी सारी योजना मैं तय कर चुका हूं।' यह सब भी, ग़नीमत होता, अगर इसमें कुछ सचाई होती। लेकिन सीधी-सादी तथ्य की बात यह थी कि अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच का पड़ोसी अन्तोन करासिकोव कोरोल्योव के कारिन्दे को सौ रूबल देने से भी हिचकिचा रहा था। सो बिना कुछ करे-धरे बैठक बरख़ास्त हो गयी। लेकिन अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच है कि आज दिन भी अपने को सही समझता है, और आज भी कपड़े के कारख़ाने का राग अलापता है, लेकिन दलदल का पानी सुखवाना शुरू नहीं करता।"

"और वह अपनी जागीर की कैसे व्यवस्था करता है?"

"हमेशा नये नये तरीक़े चालू करता है। किसान उसकी बड़ाई नहीं करते, लेकिन उनकी बातों पर कान देना बेकार है। अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच ठीक कर रहे हैं।"

"यह कैसे, लुका पेत्रोविच? मैं तो समझता था कि तुम पुराने तरीक़ों के हिमायती हो।"

"मैं – मेरी बात दूसरी है। देखो न, मैं न तो कुलीन हूं और न ज़मींदार। मैं क्या और मेरा बन्दोबस्त क्या? फिर काम करने के दूसरे तरीक़े मुझे मालूम भी नहीं। मैं तो न्याय और क़ानून के सहारे चलता हूं और बाक़ी सब भगवान के भरोसे छोड़ देता हूं। नयी पौध के कुलीन

पुराने ढंग पसन्द नहीं करते और मेरी समझ में वे ठीक करते हैं ... यह ज़माना ही नये विचारों को अपनाने का है। दुःख केवल यह देखकर होता है – युवा लोग ज़रूरत से ज़्यादा दिमाग़ी हो गये हैं। किसान उनके लेखे जैसे गुड़ियां हैं, उसे कभी इस करवट कभी उस करवट उलटते-पलटते हैं, और फिर फेंक देते हैं। और उनका कारिन्दा, उनका बन्धक चाकर, या कोई जर्मन ओवरसीयर, उसे अपने अंगूठे के नीचे दबा लेता है। काश कि कोई कुलीन युवक मिसाल बनकर आय और हमें बताय – 'देखो, बन्दोबस्त इस तरह किया जाना है!' जाने क्या अन्त होगा? क्या मेरे मरने तक नया बन्दोबस्त देखने को न मिलेगा? यह क्या कि पुराना तो मर गया, लेकिन नये ने जनम नहीं लिया!"

मेरी समझ में नहीं आया कि ओवस्यानिकोव को क्या जवाब दूं। उसने अपने चारों ओर देखा, मेरे और निकट खिसक आया, और दबे हुए स्वर में बोला –

"क्या आपने वसीली निकोलायेविच लुबोज़्वोनोव के बारे में सुना, लोग क्या कहते हैं?"

"नहीं, मैंने कुछ नहीं सुना।"

"कृपा कर मुझे समझाइये कि वह किस अनोखी जात का जीव है। मेरे पल्ले तो कुछ नहीं पड़ता। उसके किसान उसका ख़ाका खींचते हैं लेकिन उनके क़िस्सों से मेरी कुछ समझ में नहीं आता। वह युवा आदमी है, आप जानो। हाल ही में उसे अपनी मां से विरासत मिली है। हां, तो वह अपनी जागीर में आया। अपने मालिक को ताकने के लिए सारे किसान इकट्ठा हो गये। वसीली निकोलायेविच उनके सामने आया। किसानों ने उसकी ओर देखा – ओह, अजीब नज़ारा था – मालिक कोचवान की तरह प्लश की पतलून पहने था, और उसके जूते ऊपर से छंटे थे, बदन पर लाल रंग की क़मीज़ थी और कोचवानों जैसा लम्बा कोट। उसने अपनी दाढ़ी बढ़ा रखी थी, और उसकी टोपी और उसका चेहरा बड़ा अजीब

था – कहीं ऐसा तो नहीं कि नशे में धुत्त हो ? नहीं, वह नशे में नहीं था। और तिस पर भी वह पूरे होश में नहीं मालूम होता था। 'सलामत रहो यारो,' वह कहता है, 'खुदा तुम्हारी हिफ़ाज़त करे।' किसानों ने धरती तक झुककर सलामी दी, लेकिन बोले कुछ नहीं। आप जानो, उनमें डर पैठने लगा। और वह खुद भी कुछ सहमा-सा मालूम होता था। उसने उनके सामने भाषण-सा देना शुरू किया। 'मैं रूसी हूं', उसने कहा, 'और तुम भी रूसी हो। और मुझे रूस की हर चीज़ पसंद है। मेरा हृदय रूसी है, और मेरा खून भी रूसी है ...' इसके बाद वह यकायक हुकम देता है, 'तो चलो शुरू करो, अब कोई रूसी लोक-गीत होना चाहिए।' किसानों की टांगें डर से लरज उठीं। उनकी सुध-बुध एकदम हवा हो गयी। उनमें से एक ने, जो कुछ साहसी था, गाना शुरू भी किया, लेकिन वह उसी दम नीचे ज़मीन पर बैठ गया और दूसरों की ओट हो गया ... और सबसे ज़्यादा हैरानी की बात जो थी वह यह कि ज़मींदार तो ऐसे हमारे यहां और भी थे, शैतान की भी परवाह न करनेवाले, कहने की ज़रूरत नहीं कि पूरे लफ़ंगे। कोचवानों जैसे कपड़े पहननेवाले, जो नाच में फिरकी बने रहते, गितार के तार झनझनाते, अपने गृह-दासों के साथ गाते और गिलास खनकाते, और अपने किसानों के साथ बैठकर दावतें उड़ाते। लेकिन यह वसीली निकोलायेविच तो लौंडियों जैसा है। हर घड़ी किताबों में सिर दिये रहता है या लिखता रहता है, या ज़ोरों से कविता अलापता रहता है। कभी किसी से बात नहीं करता। शरमाता है। बाग़ में अकेला टहलता है। मानो ऊब या उदासी में डूबा हो। पुराना कारिन्दा शुरू शुरू में तो एकदम सन्ना गया था। वसीली निकोलायेविच के आने से पेश्तर सभी किसानों के घर जाकर उसने हाज़िरी बजायी, उनके आगे माथा झुकाया – जैसे बिल्ली जानती हो कि किसका मक्खन उसने चट किया है। मन में सोचते, 'बहुत बनते थे मेरे मित्र! अब सब उगलना पड़ेगा, दोस्त! नाक पकड़कर तुझे अब वे घुमायेंगे, डाकू कहीं के!' लेकिन सो कुछ नहीं

नहीं। और यों भी सोचकर देखो तो इसके सिवा हम और हो भी क्या सकते हैं?"

वह चुप हो गया। चाय आयी। तत्याना इल्यीनिश्ना अपनी जगह से उठी और हमारे निकट आकर बैठ गयी। सारी शाम, बिना कोई आवाज़ किये, अनेक बार वह बाहर उठकर गयी और वैसे ही चुपचाप लौट आयी। कमरे में सन्नाटा छाया था। ओवस्यानिकोव, गम्भीर मुद्रा में और इत्मीनान के साथ, प्याले के बाद प्याला ख़ाली कर रहा था।

"आज मीत्या हमारे घर आया था," दबी आवाज़ में तत्याना इल्यीनिश्ना ने कहा।

ओवस्यानिकोव ने भौंहें सिकोड़ीं।

"किस लिए?"

"माफ़ी मांगने।"

ओवस्यानिकोव ने सिर हिलाया।

"अब आप ही बताओ," मेरी ओर मुड़ते हुए उसने कहना जारी रखा, "अपने इन नातेदारों का कोई क्या करे? और उन्हें एकदम छोड़ देना भी असम्भव है ... यही देखो, ख़ुदा ने मुझे एक भतीजा दिया है। दिमाग़ की उसके पास कमी नहीं है—काफ़ी चुस्त लड़का है—इससे मैं इन्कार नहीं करता। पढ़ाई में अच्छा है, लेकिन मैं उससे कुछ ज़्यादा भले की उम्मीद नहीं करता। सरकारी दफ़्तर में वह गया, अपने पद को लात मारी—ज़्यादा तेज़ी से वहां आगे नहीं बढ़ पाया ... क्या वह कुलीन है? लेकिन कुलीन भी तो एकदम पलक झपकते जेनरल नहीं बन जाते। सो वह अब बिना काम-धंधे के घूमता फिरता है। इतना ही होता तब भी कोई बात नहीं थी, लेकिन उसे तो मुक़दमेबाज़ी का चसका लगा है। किसानों के लिए अर्ज़ियां लिखता है, दरख़ास्तें भेजता है, सोत्स्की* को

---

*थानेदार की मदद करने के लिए किसानों द्वारा चुना गया आदमी।

तरकीबें बताता है, जरीबकशों को कांटों में घसीटता है, दारूघरों में जाता है, नगर के लोगों और मेहतरों के साथ सरायों में बैठता है। वह दिन दूर नहीं जब उसे इस सब का मज़ा चखना पड़ेगा। कान्स्टेबल अधिकारी और पुलिस इंस्पेक्टर उसे कई बार धमकी भी दे चुके हैं। लेकिन भाग्य से वह टेढ़े को सीधा करना जानता है, और वे उससे खुश हो जाते हैं। लेकिन इसके लिए उसे उनकी चिलम भरनी पड़ती है ... पर ठहरो, क्या वह तुम्हारे छोटे कमरे में इस वक़्त मौजूद तो नहीं?" अपनी पत्नी की ओर मुड़ते हुए उसने कहा। "मैं तुम्हें जानता हूं, समझीं! तुम्हारा दिल इतना नरम है कि हमेशा इसी की हिमायत करोगी।"

तत्याना इल्यीनिश्ना ने अपनी आंखें झुका लीं, मुसकरायी और लाज से लाल पड़ गयी।

"तो यह कहो कि मैंने ठीक कहा है," ओवस्यानिकोव कहता गया। "तुम उसे और बिगाड़ रही हो। अच्छा तो जाओ, और उसे यहां ले आओ ... तो ठीक, अपने इस नेक मेहमान की ख़ातिर मैं उस बेवक़ूफ़ को माफ़ कर दूंगा। जाओ, और उससे यहां आने के लिए कहो।"

तत्याना इल्यीनिश्ना दरवाज़े के पास गयी और ऊंची आवाज़ में बोली, "मीत्या!"

मीत्या – अठाईस वर्ष का युवक, लम्बा क़द, बढ़िया काठी और घुंघराले बाल – कमरे में आया और मुझे देखकर देहली में ही रुक गया। जर्मन चाल के वह कपड़े पहने था, लेकिन कंधों के ऊपर जो बेडौल फुलावट बनी थी उसे देखकर यही सिद्ध होता था कि किसी रूसी दरज़ी की क़ैंची की यह करामात है।

"अरे, आओ, चले आओ," वृद्ध ने कहना शुरू किया, "इतना शरमाते क्यों हो? तुम्हें अपनी चाची का शुक्रगुज़ार होना चाहिए – तुम्हें माफ़ कर दिया गया है। हां तो, श्रीमान, जरा इसपर इनायत करें," मीत्या की ओर इशारा करते हुए वह कहता गया। "यह मेरा सगा भतीजा

है, लेकिन मेरी इसके साथ क़तई पटरी नहीं बैठती। जाने दुनिया पर क्या गाज गिरनेवाली है।" (सिर झुकाकर हमने एक-दूसरे का अभिवादन किया।) "ज़रा यह तो बताओ कि अब किस झंझट में अपने को फंसाया है? किस बात को लेकर वे तुम्हारे ख़िलाफ़ शिकायत दर्ज कर रहे हैं? ज़रा सब समझाकर बताओ!"

लेकिन मीत्या ने, प्रत्यक्षतः, मेरे सामने मामले को समझाने और अपनी सफ़ाई पेश करने के लिए व्यग्रता प्रकट नहीं की।

"फिर कभी, चाचा जी," वह बुदबुदाया।

"नहीं, फिर कभी नहीं, बल्कि अभी," वृद्ध कहता गया। "तो यह कहो कि इन महानुभाव के सामने तुम्हें शरम मालूम होती है। लेकिन अच्छा है, तुम इसी लायक़ हो। हां तो बोलो, शुरू करो, हम सुन रहे हैं।"

"शरम वह करे जिसने शरम का काम किया हो," अपने सिर को झटका देते हुए मीत्या ने जोश के साथ कहना शुरू किया। "इस बात का फ़ैसला, चाचाजी, मैं आप पर ही छोड़ता हूं। रेशेतीलोव के कुछ माफ़ीदार मेरे पास आये और कहा, 'भाई, हमारी रक्षा करो।'—'क्यों, हुआ क्या?'—'मामला यह है—हमारे अनाज की खत्तियां एकदम चौकस थीं—सच, इतनी चौकस कि कोई उंगली नहीं उठा सकता। अब अचानक सरकारी इन्सपैक्टर फ़रमान लेकर आता है। कहता है, खत्तियों का मुआयना करेगा। उसने उनका मुआयना किया और बोला—'तुम्हारी खत्तियां गड़बड़ हैं। भारी लापर्वाही की गयी है। मेरा फ़र्ज़ है कि अफ़सरों से रिपोर्ट करूं।' 'लेकिन लापर्वाही कैसी, कुछ बताया नहीं?'—'ज़्यादा टांग न अड़ाओ, मैं अपना काम जानता हूं,' उसने कहा ... सो हम मिलकर बैठे और तय किया कि अफ़सर को कुछ दे दिला दिया जाय। लेकिन वृद्ध प्रोखोरिच ने हमें रोका, उसने कहा, 'नहीं, इससे तो उसके मुंह और ख़ून लग जायेगा। छोड़ो, आखिर न्याय क्या एकदम उठ गया है?' हमने बुढ़ऊ

की बात रखी, और अफ़सर का पारा चढ़ गया। उसने शिकायत दाख़िल कर दी, और रिपोर्ट लिखी। सो अब हमें उसके अभियोगों का जवाब देने के लिए तलब किया गया है। 'लेकिन तुम्हारी खत्तियां क्या सचमुच में चौकस हैं?' मैंने पूछा। 'ईश्वर जानता है कि वे चौकस हैं, और क़ानून की रू से जितना अनाज उनमें होना चाहिए उतना मौजूद है।'– 'तब तो,' मैंने कहा, 'तुम्हें डरने की ज़रूरत नहीं!' और मैंने उनके लिए एक दस्तावेज़ तैयार कर दी। यह अभी मालूम नहीं हुआ कि किस के पक्ष में फ़ैसला होगा। और जहां तक उन शिकायतों का संबंध है जो इस मामले को लेकर उन्होंने आपसे मेरे बारे में की हैं–यह आसानी से समझा जा सकता है कि हर आदमी की क़मीज़ उसकी अपनी चमड़ी के ज़्यादा नज़दीक होती है।"

"बेशक, हरेक की–लेकिन तुम्हारी प्रत्यक्षतः नहीं," वृद्ध ने दबे स्वर में कहा। "लेकिन यह तो बताओ कि शुतोलोमोव के किसानों के साथ तुम क्या क्या षड्यंत्र रचते रहे हो?"

"ओह, आपको वह कैसे मालूम हुआ?"

"इससे क्या, मुझे मालूम है।"

"और इस मामले में भी मैं सही हूं–इसका भी आप ख़ुद फ़ैसला करना। पड़ोस के एक ज़मींदार बेस्पान्दिन ने शुतोलोमोव किसानों की आठ एकड़ से भी ज़्यादा ज़मीन जोत डाली है। 'यह ज़मीन मेरी है,' ज़मींदार कहता है। शुतोलोमोव के किसान लगान पर खेती करते हैं। उनका ज़मींदार विदेश चला गया है। सो उनके लिए कौन खड़ा हो? ख़ुद आप ही बताइये? लेकिन ज़मीन उनकी है–यह एकदम पक्की बात है। युगों युगों से वे इसके साथ बंधे हैं। सो वे मेरे पास आये और बोले, 'हमारे लिए एक दरख़ास्त लिख दो।' सो मैंने लिख दी। बेस्पान्दिन को इसकी ख़बर लगी और उसने मुझे धमकियां देना शुरू कर दिया। 'उस मीत्या की एक एक हड्डी मैं तोड़ दूंगा, उसका सिर चाक कर दूंगा।'

हमें भी देखना है कि वह किस तरह इस सिर को धड़ से अलग करता है। अभी तक तो वह अपनी जगह पर ही बना हुआ है।"

"बस बस, ज़्यादा शेख़ी न बघारो! तुम तो पूरे जनूनी हो मुसीबत बुला रहे हो," वृद्ध ने कहा। "एकदम पागल!"

"क्यों, चाचाजी, ख़ुद आपने मुझे क्या सीख दी थी?"

"जानता हूं, जानता हूं कि तुम क्या कहना चाहते हो," ओवस्यानिकोव ने उसे रोकते हुए कहा। "बेशक, आदमी को ईमानदारी से रहना चाहिए और उसका कर्तव्य है कि अपने पड़ोसी की वह मदद करे। और यह कि कभी कभी ख़ुद अपने साथ भी उसे कड़ाई बरतनी चाहिए। लेकिन क्या तुम हमेशा ऐसा व्यवहार करते हो? बोलो, क्या वे तुम्हें शराबख़ाने में नहीं ले जाते? क्या वे तुम्हारी ख़ातिर-तवाज़ह नहीं करते, तुम्हें सलामी नहीं झुकाते? 'मीत्या,' वे कहते हैं, 'हमारी मदद करो, और तुम देखोगे कि हमारी कृतज्ञता कोरी कृतज्ञता नहीं है।' और वे चांदी का एक रूबल या नोट तुम्हारे हाथ में खिसका देते हैं। क्यों, क्या ऐसा नहीं होता? बोलो, क्या ऐसा नहीं होता?"

"बेशक, इसके लिए मैं क़ुसूरवार हूं," मीत्या ने थोड़ा सकपकाते हुए कहा, "लेकिन मैं ग़रीबों से कुछ नहीं लेता, और अपनी आत्मा के ख़िलाफ़ कुछ नहीं करता।"

"ठीक, तुम अब उनसे कुछ नहीं लेते। लेकिन जब तुम ख़ुद तंगहाल होगे, तब लेने लगोगे। तुम अपनी आत्मा के ख़िलाफ़ काम नहीं करते—धत् तेरी! बेशक, वे सब तो जैसे सन्त होंगे, जिनकी तुम रक्षा करने जाते हो? क्या बोरिस पेरेख़ोदोव को भूल गये? उसकी देख-संभार किसने की? बोलो, कौन था वह जिसने उसे अपने दामन में जगह दी?"

"पेरेख़ोदोव ने, बेशक, अपनी ग़लती से ही मुसीबत मोल ली।"

"उसने सरकारी ख़ज़ाने का रुपया ग़बन किया। यह कोई हंसी ठट्ठा नहीं है!"

"लेकिन, चाचाजी, ज़रा सोचो तो। उसकी ग़रीबी, उसके बाल-बच्चे ..."

"ग़रीबी, ग़रीबी ... पहले दर्जे का वह पियक्कड़ और झगड़ालू है। यह है उसकी असलियत।"

"मुसीबतों में उसे पीने की लत पड़ गयी," अपनी आवाज़ को धीमी करते हुए मीत्या ने कहा।

"मुसीबतों के मारे? वाह! ठीक, अगर तुम्हारे हृदय में उसके लिए इतनी दया थी तो तुम उसकी मदद कर सकते थे। लेकिन उस पियक्कड़ के साथ खुद शराबख़ाने में जा जाकर बैठने की भला क्या ज़रूरत थी? वह बोलता बहुत बढ़िया था ... लेकिन यह कौनसा बड़ा हुनर है!"

"वह बहुत भला आदमी था।"

"तुम्हारे लेखे तो सभी अच्छे हैं। लेकिन उसे भेजा था न... तुम खुद जानती हो ..." अपनी पत्नी की ओर मुड़ते हुए ओवस्यानिकोव ने कहा।

तत्याना इल्यीनिश्ना ने सिर हिलाया। "हां तो तुम इधर कहां रम रहे थे?" वृद्ध ने फिर सूत्र पकड़ा।

"शहर गया हुआ था।"

"और मैं शर्त बदता हूं, तुम वहां बिलियर्ड खेलने, चाय उड़ाने, गितार बजाने, यहां से वहां सरकारी दफ़्तरों में दौड़ने, पिछवाड़े की कोठरियों में बैठकर अरज़ियां लिखने, सौदागरों के बेटों के साथ अकड़कर चलने के सिवा और कुछ नहीं करते रहे? बेशक, यही करते रहे? बोलो, क्या कहते हो?"

"है तो कुछ ऐसा ही," मीत्या ने मुसकराते हुए कहा। "लेकिन ... ओह! मैं एकदम भूल ही गया, फ़ून्तिकोव अन्तोन पारफ़ेनिच ने अगले रविवार को आपको भोजन की दावत दी है।"

"उस मोटी तोंदवाले के यहां कौन जाय। वह क़ीमती मछलियां परसता है और उनपर बदबूदार मक्खन लगाता है। भगवान उसकी रक्षा करे!"

"और फ़ेदोस्या मिख़ाइलोवना से भी मैं मिला था।"

"फ़ेदोस्या कौन?"

"वह अब ज़मींदार गारपेन्चेन्को की बन्धक दासी है वही ज़मींदार जिसने नीलाम में मिकुलीनो जागीर ख़रीदी थी। फ़ेदोस्या मिकुलीनो की रहनेवाली है। मास्को में दरज़ी का काम करती थी, सेवा करके लगान चुकाने के बदले धन देती थी और अपनी सेवकाई का यह धन—एक सौ साढ़े बयासी रूबल प्रति वर्ष—पूरे का पूरा उसने अदा किया ... और वह अपने धंधे की माहिर है, मास्को में उसे ख़ूब आर्डर मिलते थे। लेकिन अब गारपेन्चेन्को उसे यहीं रखता है, लेकिन उससे कोई काम नहीं कराता। वह अपनी आज़ादी ख़रीदने के लिए तैयार है, मालिक से भी उसने इसके लिए कह रखा है, लेकिन वह कोई निश्चित जवाब नहीं देता। चाचाजी, आपकी गारपेन्चेन्को से जान-पहचान है, सो क्या आप उसकी सिफ़ारिश नहीं कर सकते? और फ़ेदोस्या अपनी आज़ादी का मूल्य भी ख़ासा देगी।"

"तुम्हारे पैसों से तो नहीं? अच्छी बात है, मैं उससे कह दूंगा, ज़रूर कह दूंगा। हालांकि मुझे भरोसा नहीं," चेहरे पर परेशानी का भाव लिये वृद्ध कहता गया, "यह गारपेन्चेन्को, ख़ुदा उसे बख़्शे, पूरा मगरमच्छ है। वह हुंडियां ख़रीदता है, सूद पर रुपया देता है, नीलाम में जागीरें ख़रीदता है ... हमारे इलाक़े में कौन उसे लाया? उफ़, ये नये आनेवाले मुझे बिल्कुल नहीं सुहाते। किसी बात का जल्दी जवाब देना तो जानते ही नहीं। फिर भी देखें क्या होगा।"

"आप कोशिश करें तो हो जायेगा, चाचाजी।"

"अच्छी बात है, मैं करूंगा। केवल तुम ख़्याल रखना, ख़ुद अपना

ख्याल रखना। बस, बस ज़्यादा सफ़ाई देने की कोशिश न करो। भगवान तुम्हारी रक्षा करें! केवल आगे का ख्याल रखना, नहीं तो मीत्या—मेरी बात गांठ-बांध लो—तुमपर मुसीबत आयेगी। सच कहता हूं, तुम्हारा बुरा हाल होगा। मैं हमेशा तुम्हें अपनी ओट में नहीं कर सकता ... और फिर मैं कुछ इतना प्रभावशाली आदमी भी नहीं हूं। अब जाओ, खुदा तुम्हारा भला करे।"

मीत्या चला गया। तत्याना इल्यीनिश्ना भी उसके साथ ही उठकर चल दी।

"अब उसे चाय पिला दो," ओव्स्यानिकोव ने उससे चिल्लाकर कहा। "लड़का ऐसा बेवक़ूफ़ नहीं है," वह कहता गया, "और दिल का भी बहुत अच्छा है। लेकिन मैं डरता हूं कि कहीं ... मगर, मुझे माफ़ करना, जाने कहां कहां की बातें बकता हुआ इतनी देर से मैं आपके कान खा रहा हूं।"

हाल का दरवाज़ा खुला। मख़मली फ़ॉक-कोट में पके बालों वाले एक नाटे मुख़्तसिर आदमी ने प्रवेश किया।

"ओह, फ़ान्त्स इवानिच," ओव्स्यानिकोव ने ज़ोरों से कहा। "आओ, भाई, आओ! कहो सब कुशल है न?"

सहृदय पाठक मुझे अनुमति दें कि इन सज्जन से आपका परिचय करा दिया जाय।

फ़ान्त्स इवानिच लेज्योन (Lejeune), मेरा पड़ोसी और ओरेल प्रांत का ज़मींदार था। रूसी कुलीन के प्रतिष्ठित पद तक वह काफ़ी निराले ढंग से पहुंचा था। ओरलियन्स में फ़ांसीसी माता-पिता से उसका जन्म हुआ था और नेपोलियन ने जब रूस पर आक्रमण किया, तब उसकी सेना के साथ एक ढोलची के रूप में आया था। शुरू शुरू में तो मामला ठीक चला, और हमारा यह फ़ांसीसी, अपना सिर ऊंचा उठाये, मास्को पहुंच गया। लेकिन वापसी की यात्रा में बेचारा m-r Lejeune पाले

से आधा जमा हुआ और ढोल के बग़ैर, स्मोलेन्स्क के कुछ किसानों के हाथों में पड़ गया। किसानों ने रात-भर उसे कपड़े की एक मिल में बन्द रखा, और अगली सुबह उसे एक नदी पर ले आये जहां बरफ़ में एक सूराख़ हो गया था। इसके बाद उन्होंने de la grirande armée* ढोलची से अनुरोध शुरू किया कि ज़रा अपना करतब दिखाय—दूसरे शब्दों में यह कि सूराख़ में से नीचे जाकर दिखाय। M-r Lejeune ने यह प्रस्ताव मंजूर नहीं किया, उल्टे स्मोलेन्स्क के किसानों को फ़ांसीसी बोली में, फुसलाने लगा कि वे उसे ओरलियन्स जाने दें। "वहां, messieurs," उसने कहा, "मेरी मां, une tendre mère** रहती हैं।" लेकिन किसानों ने, शायद ओरलियन्स की स्थिति संबंधी अपने भौगोलिक अज्ञान के कारण बार बार यही कहा कि नदी के बहाव के साथ साथ तैरते हुए तुम ग्निलोतेरका नदी के रास्ते जो बल खाती हुई जाती है अपने ठिकाने पर पहुंच जाओगे, उन्होंने उसकी गुद्दी और पीठ पर हल्के आघात देकर उसे बढ़ावा देना भी शुरू कर दिया, लेकिन तभी अचानक घंटियों की आवाज़ सुनाई दी और लेज्योन बेहद ख़ुश हुआ जब एक भीमाकार बर्फ़-गाड़ी बांध पर आ लगी। बर्फ़-गाड़ी के पिछले हिस्से में, जो बेहद ऊंचा था, धारीदार क़ालीन बिछा था और तीन चितकबरे घोड़े उसमें जुते थे। गाड़ी में एक ज़मींदार बैठा था—हट्टा-कट्टा, चुक़न्दर-सा लाल मुंह और भेड़िये की खाल का फ़रकोट पहने।

"ए, यहां क्या कर रहे हो?" उसने किसानों से पूछा।

"एक फ़ांसीसी को नदी के सुपुर्द कर रहे हैं, श्रीमान।"

"आह!" ज़मींदार ने उपेक्षा से कहा और मुंह फेर लिया।

"Monsieur! Monsieur!" वह बेचारा चीख उठा।

---

*शाहंशाही सेना के।

**दयालु मां।

"ओह, ओह!" झिड़की के स्वर में भेड़िये की खाल का फ़रकोट पहने ज़मींदार ने कहा। "बीस राष्ट्रों का दलबल लेकर तुम रूस में घुस आये, मास्को को जलाया, इवान महान् के घंटाघर के क्रॉस को — कम्बख़्त जंगली कहीं के — नोच डाला, और अब — मोशिये, मोशिये — वाह! अब तुम दुम हिलाते हो! यह तुम्हें अपने पापों की सज़ा मिल रही है। चलो, फ़ील्का, आगे बढ़ो।"

घोड़ों ने हरकत की।

"लेकिन रुको जरा," जमींदार ने फिर कहा, "ओ मोशिये, तुम कुछ संगीत-वंगीत भी जानते हो?"

"Sauvez moi, sauvez moi, mon bon monsieur!"* लेज्योन ने दोहराया।

"वाह, क्या मनहूस लोग हैं। एक भी तो रूसी नहीं जानता। मूज़ीक, मूज़ीक सावे मूज़ीक वू? सावे? ए, बोलो, बोलो! कौम्प्रेने? सावे मूज़ीक वू? पियानो, ज्हुए सावे?"

आख़िर लेज्योन की कुछ समझ में आया कि ज़मींदार क्या कहना चाहता है, और वह बार बार सिर हिलाने लगा।

"Oui, monsieur, oui, oui, je suis musicien; je joue tous les instruments possibles! Oui, monsieur... Sauvez moi, monsieur!"**

"तब ठीक, अपने भाग्य को दुआ दो!" ज़मींदार ने जवाब दिया। "ए, इसे छोड़ दो। और यह लो बीस कोपेक, वोद्का के लिए!"

"धन्यवाद, जी, धन्यवाद। यह लो, इसे ले जाओ, मालिक!"

---

*मेरी जान बचाइये, मेरी जान बचाइये, भले साहब!

**जी हुज़ूर, जी, जी, मैं संगीतकार हूं, मैं भिन्न भिन्न वाद्य बजा जकता हूं! जी हुज़ूर! मेरी जान बचाइये, हुज़ूर!

उन्होंने लेज्योन को बर्फ़-गाड़ी में बैठा दिया। खुशी के मारे वह हांफ रहा था, आंसू बहा रहा था, थरथरा रहा था, बार बार सलाम कर रहा था; ज़मींदार, कोचवान और किसानों के प्रति कृतज्ञता प्रकट कर रहा था, गुलाबी फ़ीतों से लैस हरी जाकेट के सिवा वह और कुछ नहीं पहने था, और पाला बुरी तरह उसे सुन्न किये देता था। ज़मींदार ने चुपचाप उसके नीले और सुन्न हुए अंगों पर नज़र डाली, अभागे को अपने फ़रकोट में लपेटा और उसे घर ले गया। घर के सारे लोग बाहर दौड़े आये। फ़्रांसीसी का पाला दूर किया, उसे खिलाया-पिलाया, कपड़े पहनाये। ज़मींदार उसे अपनी लड़कियों के पास लिवा ले गया।

"यह देखो, बच्चियो," उसने कहा, "तुम्हारे लिए मास्टर लाया हूं। तुम हमेशा मुझे तंग करती थीं कि तुम्हें संगीत और फ़्रांसीसी बोली सिखाने के लिए कुछ करूं। सो यह लो, तुम्हारे लिए यहां एक फ़्रांसीसी मौजूद है, और यह पियानो बजाना भी जानता है... इधर आओ, मोशिये," एक छोटे-से नगण्य पियानो की ओर इशारा करते हुए उसने कहा, "अपनी कला का ज़रा नमूना तो दिखाओ, ज्हुए!" यह पियानो पांच साल पहले, एक यहूदी से खरीदा गया था जो दर असल ओडीकोलोन को बेचा करता था।

स्टूल पर बैठते समय लेज्योन का हृदय डूब चला – अपने जीवन में उसने पियानो को कभी छुआ तक नहीं था।

"ज्हुए, ज्हुए!" ज़मींदार ने दोहराया।

जब कुछ नहीं सूझा तो बेचारे ने सुरों पर इस तरह उंगलियां पटकनी शुरू कीं जैसे ढोल बजा रहा हो, एकदम अंधाधुंध! "मैं पूरी उम्मीद करता था," बाद में वह बताया करता, "कि मेरा मुक्तिदाता अभी मेरी गरदन दबोचकर मुझे घर से निकाल बाहर करेगा।" लेकिन, अनमने

वादक को भारी हैरानी हुई जब ज़मींदार, पहले तो कुछ देर रुका रहा, फिर आगे बढ़कर प्रसन्न हृदय से उसके कंधों को थपथपाया।

"ख़ूब, बहुत ख़ूब!" उसने कहा। "तुम्हारे हुनर की बानगी मिल गयी। अब जाकर आराम करो।"

एक पखवारे के भीतर ही लेज्योन इस ज़मींदार से एक दूसरे ज़मींदार के पास चला गया। यह ज़मींदार धनी और सुसंस्कृत आदमी था। अपनी ख़ुश तबीयत और कोमल स्वभाव की बदौलत वह उसका मित्र बन गया, उसकी एक संरक्षिता से उसने शादी की, सरकारी दफ़्तर में प्रवेश किया, तरक़्क़ी कर कुलीनों के पांत में पहुंच गया, ओरेल के एक ज़मींदार अवकाश-प्राप्त घुड़सवार और कविता बनानेवाले ज़मींदार लोबिज़ान्येव से उसने अपनी लड़की का विवाह किया और ख़ुद ओरेल में आकर बस गया।

यह वही लेज्योन—या फ़्रान्त्स इवानिच, जैसा कि उसे अब बुलाया जाता है—जो मेरी मौजूदगी में ओवस्यानिकोव से मिलने आया था। इन दोनों में मित्रता का व्यवहार था।

लेकिन मेरे साथ ओवस्यानिकोव के यहां बैठे बैठे शायद पाठक उकता चुके होंगे, सो अब मैं मौन धारण करता हूं।

ल्गोव

"चलिये, ल्गोव चलें," येरमोलाई ने जिससे पाठक पहले ही परिचित हैं, एक दिन मुझसे कहा। "वहां हम जी भरकर बत्तख़ों का शिकार कर सकते हैं।"

हालांकि जंगली बत्तख़ें सच्चे शिकारी के लिए कोई ख़ास आकर्षण नहीं रखतीं, फिर भी, अन्य शिकार उन दिनों उपलब्ध न होने के कारण (शुरू सितम्बर का महीना था, स्नाइप-पक्षी अभी नहीं आये थे और तीतरों के पीछे खेतों में दौड़ते दौड़ते मैं ऊब गया था) अपने शिकारिये का सुझाव मैंने मान लिया, और हम ल्गोव के लिए चल दिये।

ल्गोव स्तेप में स्थित एक काफ़ी बड़ा गांव है। यहां पत्थर का एक बहुत प्राचीन गिरजा है। गिरजा केवल एक गुम्बदी है। रोसोता के किनारे – जो कि एक छोटी दलदली नदी है – दो पन-चक्कियां खड़ी हैं। ल्गोव से पांच मील परे यह नदी एक चौड़े दलदली जोहड़ का रूप धारण कर लेती है जिसके किनारों पर, और कहीं कहीं बीच में भी, नरकटों के झाड़-झंखाड़ उगे हैं। यहां खाड़ियों में, या कहिये कि नरसलों के बीच चहबच्चों में, सभी जात और रूप-रंग की – क्वैंकी, अर्द्ध-क्वैंकी, नुकीली दुम, ननकी और डुबकिया आदि – ढेर की ढेर और अनगिनती बत्तख़ें रहतीं और अण्डे-बच्चे देती हैं। छोटे छोटे झुण्डों में वे हर घड़ी पानी पर इधर से उधर फरफराती और तैरती रहती हैं, और गोली के दग़ते ही उनके दल-बादल इस तरह हवा में उठते हैं कि शिकारी, बरबस ही एक हाथ से अपनी

टोपी को दबोचता और मुंह से लम्बी 'हिश!' कह उठता है। येरमोलाई के साथ मैं किनारे किनारे चलने लगा। लेकिन सर्वप्रथम तो यह कि बत्तख़ का स्वभाव चौकन्ना होता है और तट के काफ़ी निकट वह मिलती नहीं और दूसरे अगर कोई भूली-भटकी तथा अनुभवहीन ननकिया बत्तख़ अपने-आपको ख़तरे में डालकर अपनी जान से हाथ धो भी बैठती है तो हमारे कुत्ते उसे घने नरसलों के बीच में से बाहर नहीं निकाल पाते। जी-जान से कोशिश करने पर भी न तो वे तैर पाते हैं और न ही तलहटी में डग-भर पाते हैं। पल्ले कुछ नहीं पड़ता, सिवा इसके कि वे—बेकार ही—पैने नरसलों में अपनी कोमल थूथनियों को लहूलुहान कर लेते हैं।

"नहीं," अन्त में येरमोलाई बोला, "इस तरह काम नहीं चलेगा। हमारे पास नाव होनी चाहिए। चलिये, ल्गोव वापिस चलें।"

हम लौट पड़े। केवल कुछ ही डग चले होंगे कि सरपत की घनी झाड़ी की ओट में से एक मनहूस-सी शकल का शिकारी कुत्ता हमारी दिशा में बाहर लपक आया, और उसके पीछे मझोले क़द का एक आदमी प्रकट हुआ। वह नीले रंग का काफ़ी फटा पुराना फ़्रॉक-कोट, पीली वास्कट और बेरंग-सी भूरी पतलून पहने था जिसकी मोहरियां, उतावली में, ऊंचे बूटों के भीतर खोंसी हुई थीं। ऊंचे बूटों में जगह जगह छेद थे। गले में वह एक लाल रूमाल लपेटे था और कंधे पर इकनाली बन्दूक़ टिकी थी। हमारे कुत्तों ने, अपने जन्मजात स्वभाव के अनुसार, हस्ब मामूल अन्दाज़ में अपने नये साथी को सूंघना शुरू किया जो, प्रत्यक्षतः, सकपका गया था और अपनी दुम को टांगों के बीच दबाये, कानों को पीछे की ओर लटकाये और अपनी बत्तीसी को निपोरता एक के बाद एक बराबर चक्कर काट रहा था। अजनबी इस बीच हमारे निकट आ गया और अत्यन्त शिष्टता के साथ उसने माथा झुकाया। देखने में वह पचीस-एक वर्ष का मालूम होता था। उसके सुनहरे और लम्बे बाल क्वास में पूरी तरह सराबोर हो रहे थे और चीकट गुच्छों में खड़े थे, उसकी छोटी छोटी भूरी आंखों में मिलनसारी की

चमक थी, उसके जबड़े पर काला रूमाल बंधा था–जैसे उसके दांतों में दर्द हो, और उसका चेहरा मुसकानों तथा मिलनसारी की प्रतिमूर्ति बना हुआ था।

"अगर इजाज़त हो तो मैं अपना परिचय दे दूं," मृदु और हृदय को कुरेदनेवाली आवाज़ में उसने कहना शुरू किया। "मेरा नाम व्लादीमिर है, इधर का ही रहनेवाला हूं ... शिकारी हूं ... मेरे कानों में जब यह पड़ा कि महानुभाव इधर आये हैं, कि महानुभाव का इरादा हमारे जोहड़ में शिकार खेलने का है, तो मैंने तय किया कि–अगर आपको नागवार न गुज़रे तो–अपनी सेवाएं आपको अर्पित करूं।"

शिकारी व्लादीमिर ने ये शब्द कुछ ऐसे ठेठ अन्दाज़ में कहे मानो एक देहात का युवक अभिनेता नाटक के मुख्य प्रेमी की भूमिका में अपना पार्ट अदा कर रहा हो। मैंने उसका प्रस्ताव मान लिया और ल्गोव पहुंचते न पहुंचते उसका समूचा इतिहास जानने में मैं सफल हो गया। वह एक उन्मुक्त हुआ गृह-दास था। जब वह निरा बच्चा ही था तब संगीत का रियाज़ उसे कराया गया था, फिर अरदली बनाया गया। वह पढ़-लिख सकता था और–जहां तक मैं मालूम कर सका–कुछ घासलेटी पुस्तकें उसने पढ़ी थीं, और अब जब कि न तो उसके पल्ले फूटी कौड़ी थी और न ही वह कोई लगा-बंधा काम करता था, आकाश कुसुमों या खुदा की राह में जो भी मिल जाय उसके सहारे–अगर इसे सहारा कहा ही जा सके–अन्य कतिपय रूसियों की भांति उसका जीवन भी अधर में लटका था। असाधारण नफ़ासत के साथ वह बातें करता था और अपनी सलीक़ेदारी पर उसका गर्व छिपाये नहीं छिपता था। स्त्रियों पर भी वह निश्चय ही लट्टू होता रहा होगा, और ज़रूर वे भी उसे चाहती होंगी–रूसी लड़कियां बढ़िया वार्तालाप पसंद करती हैं। अन्य चीज़ों के अलावा उसकी बातों से मालूम हुआ कि कभी कभी वह आस-पास के जमींदारों के यहां चक्कर लगाता था, नगर में अपने मित्रों के पास जाकर

टिकता था, और उनके साथ ताश खेलता था। राजधानी में भी उसकी जान-पहचान के लोग मौजूद थे। मुसकराने में उसे कमाल हासिल था और उसकी मुसकान अत्यन्त विविधतापूर्ण होती थी। और उसकी वह विनम्र तथा संभली हुई मुसकान जब वह दूसरे की बात सुन रहा होता, उसके चेहरे पर ख़ास तौर से फबती थी। वह बड़े ध्यान से सुनता, पूर्ण सहमति जताता, लेकिन अपनी गरिमा की भावना को ओझल न होने देता। उसे देखकर यह चेत बराबर बना रहता कि मौक़ा पड़ने पर, ख़ुद वह अपने विश्वासों को भी व्यक्त कर सकता है। येरमोलाई ने, जो कोई ख़ास परिष्कृत आदमी नहीं है, और बारीकियों से एकदम शून्य, फूहड़ घनिष्ठता के साथ उसे सम्बोधित करना शुरू किया। जवाब देते समय बड़े कोमल व्यंग के साथ जब व्लादीमिर 'श्रीमान' शब्द का प्रयोग करता तो देखते ही बनता।

"मुंह पर यह पट्टी क्यों बांध रखी है?" मैंने उससे पूछा। "क्या दांतों में दर्द है?"

"नहीं जी," उसने जवाब दिया, "यह लापर्वाही का अत्यन्त घातक नतीजा है। मेरा एक मित्र था, ख़ूब भला, लेकिन शिकार के नाम कोरा, जैसा कि कभी कभी होता है। हां जी, तो एक दिन उसने मुझसे कहा, 'सुनो मित्र, मुझे भी शिकार पर ले चलो। मैं यह जानने के लिए उत्सुक हूं कि इसमें कैसा मज़ा आता है।' एक साथी ने जब यह कहा तो मैं भला इन्कार कैसे करता। मैंने उसके लिए एक बन्दूक़ प्राप्त की और उसे लेकर शिकार के लिए चल दिया। हमने अच्छी तरह गोलियां दाग़ीं, और अन्त में सोचा कि अब सुस्ता लिया जाय। मैं एक पेड़ के नीचे बैठ गया, लेकिन वह बजाय आराम करने के अपनी बन्दूक़ से खेलने लगा। बन्दूक़ का मुंह मेरी ओर था। मैंने उसे मना किया, लेकिन अपने अनाड़ीपन में उसने मेरे शब्दों पर ध्यान नहीं दिया। बन्दूक़ दग़ गयी, और मैं अपनी आधी ठोड़ी तथा दाहिने हाथ की तर्जनी से हाथ धो बैठा।"

हम लोग ल्गोव पहुंचे। व्लादीमिर और येरमोलाई दोनों का यह निश्चित मत था कि नाव के बिना शिकार पल्ले नहीं पड़ेगा।

"सुचोक* के पास चपटी पेंदेवाली नाव है," व्लादीमिर ने कहा। "लेकिन यह नहीं मालूम कि उसने उसे कहां छिपा रखा है। हमें उसके पास चलना चाहिए।"

"किसके पास?" मैंने पूछा।

"एक आदमी के पास। सुचोक उसका उपनाम रखा हुआ है। यहीं रहता है।"

येरमोलाई के साथ व्लादीमिर सुचोक के यहां गया। मैंने उनसे कहा कि गिरजे के पास मैं उनका इन्तज़ार करूंगा। क़ब्रिस्तान में क़ब्रों पर लगी शिलाओं को देखते देखते एक चौकोर समाधि पर मेरी नज़र पड़ी, जिसके एक बाजू फ़्रेंच भाषा में Ci gît Théophile Henri, vicomte de Blangy ** अंकित था, और दूसरे बाजू 'यहां फ़्रेंच नागरिक काउण्ट ब्लांजी का शव समाधिस्थ है जिसका ६२ वर्ष की आयु में निधन हुआ – जन्म १७३७, मृत्यु १७९९', तीसरे बाजू 'परमात्मा उसे सद्गति प्रदान करें' और चौथे बाजू निम्न पंक्तियां अंकित थीं –

'फ़्रेंच प्रवासी एक, शिला के नीचे सोया,
प्रखर-बुद्धि, ऊंचे कुल का, कल्मष से धोया!
पत्नी-बन्धु बान्धवों की हत्या पर रोया,
क्रूर हिंसकों से पीड़ित, अपने वतन से दूर!
रूस देश की सीमा के भीतर वह आया,
सुभग, सुखद, सौहार्द सभी से उसने पाया!
बालवृंद को शिक्षित कर, हो मुक्त भ्रांति से,
सोया है, प्रभु की इच्छा से, यहां शांति से!'

---

* टहनी

** तेयोफ़िल आंरी काउंट ब्लांजी की समाधि।

येरमोलाई के साथ व्लादीमिर और विचित्र उपनाम सुचोक के आगमन से मेरा ध्यान उचट गया।

नंगी टांगें, अस्तव्यस्त और ख़स्ताहाल, सुचोक साठ वर्षीय बरख़ास्त कर दिये गये गृह-दास की भांति मालूम होता था।

"क्या तुम्हारे पास नाव है?" मैंने उससे पूछा।

"जो है सो नाव तो है," उसने भरभराई और फटी-सी आवाज़ में जवाब दिया, "लेकिन उसकी हालत काफ़ी ख़राब है।"

"सो कैसे?"

"उसके तख़्ते अलग हो गये हैं, और पेच दरारों में से निकल आये हैं।"

"यह कोई बड़ी मुसीबत तो नहीं," येरमोलाई ने बीच में ही कहा। "उसे हम सन से बंद कर देंगे।"

"सो तो हो सकता है," सुचोक ने सहमति प्रकट की।

"और तुम कौन हो?"

"मैं गढ़ी का मछियारा हूं।"

"तुम मछियारे हो, फिर भी तुम्हारी नाव का इतना बुरा हाल है, सो कैसे?"

"हमारी नदी में मछली नहीं है।"

"काईदार दलदल मछलियों को नहीं भाती," अधिकारी की भांति मेरे शिकारिये ने जवाब दिया।

"हां तो अब," मैंने येरमोलाई से कहा, "लपककर कुछ सन-रस्सी ले आओ, और जितनी जल्दी हो सके नाव को दुरुस्त कर दो।"

येरमोलाई चला गया।

"बहुत सम्भव है कि इस तरह हम एकदम जोहड़ के तले से ही जा लगें," मैंने व्लादीमिर से कहा।

"भगवान दयालु है!" उसने जवाब दिया। "जो हो, हमें मानना चाहिए कि जोहड़ ज़्यादा गहरा नहीं है।"

"नहीं, वह गहरा नहीं है," सुचोक ने राय दी। उसकी आवाज़ विचित्र-सी कहीं दूर दराज़ से आती हुई जान पड़ती जैसे वह स्वप्न में बोल रहा हो। "तलहटी में काई और घास हैं, सब कहीं उनका जाल फैला है, ऊपर सतह पर भी। पर कहीं कहीं गहरे गड्ढे भी हैं।"

"लेकिन अगर घास इतनी घनी है," व्लादीमिर ने कहा, "तो फिर नाव को खेना तो असम्भव होगा।"

"चपटी पेंदेवाली नाव को भला कौन खेता है? उसे तो बस धकेलना होता है। मैं तुम्हारे साथ चलूंगा। मेरा बांस वहां है—या फिर लकड़ी की कुदाली से भी काम चल जायेगा।"

"कुदाली से इतना आसान नहीं होगा। हो सकता है कि कई जगह छोटी रह जाय—नीचे तक न पहुंच सके," व्लादीमिर ने कहा।

"सो तो सच है। उससे इतनी आसानी नहीं रहेगी।"

क़ब्र के एक पत्थर पर बैठकर मैं येरमोलाई की बाट जोहने लगा। व्लादीमिर भी, मेरे सम्मान का ख़याल रखते हुए, थोड़ा हटकर बैठ गया। सुचोक उसी जगह पर खड़ा रहा अपने सिर को झुकाये और पुरानी आदत के अनुसार हाथों को कमर के पीछे बांधे हुए।

"कृपा करके यह तो बताओ," मैंने कहा, "क्या तुम लम्बे अर्से से यहां मछियारे का काम कर रहे हो?"

"सात साल हो गये हैं," चौंककर उसने जवाब दिया।

"और इससे पहले तुम क्या धंधा करते थे?"

"पहले मैं कोचवानी करता था।"

"कोचवानी से तुम्हें किसने अलग किया?"

"नयी मालकिन ने।"

"कौन मालकिन?"

"अरे वही, जिसने हमें ख़रीदा था। श्रीमान उसे नहीं जानते। आल्योना तिमोफ़ेयेवना। मोटी है... जवान नहीं है।"

"उसने तुम्हें मछियारा बनाने का फ़ैसला क्यों किया?"

"ख़ुदा ही जाने। तम्बोव में उसकी जागीर है। वहीं से वह आयी। घर के सब लोगों को जमा होने का उसने हुक्म दिया, और बाहर हम सब के पास निकलकर आयी। हम सबने पहले उसके हाथ को चूमा। वह कुछ नहीं बोली, गुस्सा नहीं हुई... फिर उसने, बारी बारी से, हमसे पूछना शुरू किया—'तुम किस काम पर तैनात हो? क्या क्या काम तुम्हारे ज़िम्मे हैं?' मेरी बारी आने पर उसने मुझसे पूछा, 'तुम क्या काम करते थे?'—'कोचवान का,' मैंने कहा। 'कोचवान! वाह, ज़रा अपनी शकल तो देखो। कितने बढ़िया कोचवान हो तुम! नहीं, तुम कोचवान बनने लायक़ नहीं। तुम मेरे मछियारे बन सकते हो। और अपनी यह दाढ़ी मुंडा डालो। जब भी मेरा यहां आना हो, तुम्हें दस्तरख़ान के लिए मछलियां जुटानी होंगी—सुन रहे हो न?' सो तब से मछियारों में मेरा नाम दर्ज है। 'और देखो, जोहड़ को क़ायदे से रखना!' लेकिन उसे क़ायदे से रखना क्या किसी के बस की बात है?"

"इससे पहले तुम्हारे मालिक कौन थे?"

"सेर्गेई सेर्गेइच पेख़्तेरेव। विरासत में उसने हमें पाया था। लेकिन हम उसकी मिल्कियत में ज़्यादा देर नहीं रहे। कुल जमा छः साल। मैं उसका कोचवान था... लेकिन नगर में नहीं, केवल देहात में। नगर में उसके पास दूसरे कोचवान थे।"

"और क्या तुम, अपने लड़कपन से लेकर बाद तक, हमेशा कोचवान रहे?"

"हमेशा कोचवान? अरे सो नहीं, कोचवान तो मैं सेर्गेई सेर्गेइच के काल में बना। इससे पहले मैं बावर्ची था—लेकिन नगर में नहीं, केवल देहात में।"

"हां तो बावर्ची किसके यहां थे?"

"अरे, अपने पहलेवाले मालिक के यहां। अफ़नासी नेफ़ेदिच, सेर्गेई सेर्गेइच के चचा। ल्गोव उसी ने ख़रीदा था, अफ़नासी नेफ़ेदिच ने, और सेर्गेई सेर्गेइच को वह उससे विरासत में मिला था।"

"और उसने किससे ख़रीदा था?"

"तत्याना वासील्येवना से।"

"कौनसी तत्याना वासील्येवना?"

"वही जिसका परसाल बोल्ख़ोव के नज़दीक सुरगबास हुआ... या करचेव के नज़दीक वही चिर विधुरा... उसने कभी ब्याह नहीं किया। क्या आप उसे नहीं जानते? हम उसके पिता वासीली सेम्योनिच से उसे विरासत में मिले। ओह, बोत बोत दिनों तक–बीस सालों तक–हम उसकी मिल्कियत में रहे।"

"तो तुम उसी के बावर्ची थे?"

"हां, शुरू में बावर्ची, और फिर कॉफ़ी-बरदार।"

"क्या-आ-आ?"

"कॉफ़ी-बरदार।"

"यह क्या बला है?"

"सो तो नहीं जानता, मालिक। मैं केंटीन के पास खड़ा रहता, और कुज़्मा के बजाय अन्तोन नाम से मुझे पुकारा जाता। मालकिन का हुक्म था कि मुझे इसी नाम से पुकारा जाय।"

"तो तुम्हारा असली नाम कुज़्मा है?"

"हां।"

"और तुम बराबर कॉफ़ी-बरदार बने रहे?"

"नहीं, बराबर नहीं। मैं सांग भी भरता था।"

"क्या सचमुच?"

"हां, मैं सांग भी भरता था... नाटकघर में सांग करता था। हमारी मालकिन ने अपना एक नाटकघर बना रखा था।"

"तुम कैसे पार्ट करते थे?"

"क्या... आपने यह क्या फ़र्माया मालिक?"

"यही कि तुम नाटकघर में क्या करते थे?"

"आपको नहीं मालूम? अरे, वे मुझे सजाते, और सज-धज कर मैं इधर से उधर घूमता, खड़ा रहता या बैठ जाता–जैसा भी मौक़ा होता, और वे कहते, 'देखो, तुम यह यह कहना'। और मैं वही वही कहता। एक बार मैंने अंधे आदमी का सांग किया... उन्होंने मेरी आंखों की दोनों पलकों के नीचे मटर के छोटे छोटे दाने रख दिये... सच, ऐसा ही किया उन्होंने!"

"और इसके बाद तुम्हें और क्या पद दिया गया?"

"मुझे फिर बावर्ची बना दिया गया।"

"क्यों, तुम्हें बावर्ची के पद पर फिर क्यों धकेल दिया गया?"

"मेरा भाई भाग गया था।"

"और इससे पहले, अपनी मालकिन के पिता के ज़माने में, तुम क्या थे?"

"तरह तरह के काम मैंने किये। पहले मुझे नौकर का काम दिया गया, फिर पोस्टिलियन और माली का। शिकारिया भी मैं रहा।"

"तो क्या तुम शिकारी कुत्तों के पीछे घोड़े पर दौड़ते थे?"

"हां, मैं शिकारी कुत्तों के साथ घोड़े पर जाता था, और मरते मरते बचा। मैं अपने घोड़े से गिर पड़ा, और घोड़ा भी घायल हो गया। हमारा पुराना मालिक बड़ा सख़्त था। उसने मुझे कोड़े लगाने का हुक्म दिया और धंधा सीखने के लिए एक मोची के यहां मुझे मास्को भेज दिया।"

"धंधा सीखने के लिए? लेकिन तुम्हारी उम्र तो काफ़ी हो गयी होगी, उस समय जब तुम शिकारिया थे—क्यों, ठीक है न?"

"हां, तब मैं एक बीसी से ज़्यादा पार कर चुका था।"

"लेकिन बीस साल की उम्र में क्या तुम कोई धंधा सीख सकते थे?"

"मेरे ख़याल से धंधा तो सीखना पड़ता ही, क्योंकि मालिक का हुक्म था। लेकिन तक़दीर से इसके बाद जल्दी ही मालिक की मौत हो गयी, और मुझे फिर देहात में भेज दिया गया।"

"और तुम्हें बावर्ची का काम कब सिखाया गया?"

सुचोक ने अपना ज़र्दीमायल क्षीण चेहरा ऊपर उठाया और मुस्कराया।

"यह भी भला कोई सीखने की चीज़ है? यह तो औरतें भी कर सकती हैं!"

"सो तो हुआ," मैंने टिप्पणी की। "अपने जीवन में बहुत कुछ देखा है तुमने, कुज़्मा! लेकिन अब मछियारे का काम तुम क्या करते हो जब मछलियां ही नदी में नहीं हैं?"

"ओह, मालिक, मुझे इसका कोई गिला नहीं। शुकर है परमात्मा का जो उन्होंने मुझे मछियारा बना दिया। देखिये न, मेरी ही तरह के एक दूसरे बूढ़े आदमी—आन्द्रेई पुपीर—को मालकिन ने काग़ज़ के कारख़ाने में लगाने का हुक्म दिया, करछुल चलाने के काम पर। 'बिना मेहनत की रोटी खाना,' मालकिन ने कहा, 'गुनाह है।' और पुपीर था कि वह ख़ास रियायत तक की आस बांधे था। उसके भतीजे का लड़का मालकिन के मुनीमघर में मुंशी का काम करता था। उसने वायदा किया कि वह मालकिन के पास उसकी सिफ़ारिश पहुंचा देगा, उसका ख़याल रखेगा। और उसने ख़ूब ख़याल रखा! ओह, ख़ुद मेरी आंखों के सामने पुपीर उसके पैरों पर गिर पड़ा था!"

"तुम्हारे बाल-बच्चे हैं? ब्याह किया है तुमने?"

"नही मालिक, मैंने कभी ब्याह् नहीं किया। तत्याना वासील्येवना —ख़ुदा उसकी आत्मा को शान्ति दे—किसी को ब्याह नहीं करने देती थी। 'ख़ुदा ख़ैर करे,' वह् कहा करती थी, 'देखो न, मैं तो अकेली रहती हूं; और इनको रंगरलियां सूझी हैं! क्या फ़ितूर समाया है इनके भेजों में!"

"अब गुज़र-बसर का क्या सहारा है? क्या पगार मिलती है?"

"पगार... ओह् नहीं, मालिक... दाना-पानी वे मुझे दे देते हैं। और शुकर है परमात्मा का, मैं बोत सन्तुष्ट हूं। परमात्मा मालकिन की उमर दराज़ करे।"

येरमोलाई लौट आया।

"नाव की मरम्मत तो हो गयी," अक्खड़ अन्दाज़ में उसने ऐलान किया। "ए, अब जाकर अपना बांस ले आओ। सुन रहे हो न!"

सुचोक अपना बांस लाने के लिए लपक गया। ग़रीब वृद्ध से बातचीत के समूचे दौरान में शिकारी व्लादीमिर, हिक़ारत भरी मुसकान के साथ, उसपर अपनी आंखें जमाये था।

"बौड़म," उसके चले जाने पर उसने टिप्पणी की। "एकदम काला अच्छर भैंस बराबर, पूरा दहकान, बस और कुछ नहीं। उसे गृह-दास तक नहीं कहा जा सकता। और शेखी बघारना बन्द ही नहीं करता। आप ख़ुद ही सोचिये, वह स्वांग क्या करता होगा? आपने नाहक़ उससे बातें करके अपने को तकलीफ़ दी!"

पाव घंटे बाद हम सुचोक की नाव में बैठे थे। (कुत्तों को कोचवान की निगरानी में एक झोंपड़ी में छोड़ दिया गया था।) नाव कुछ आरामदेह नहीं थी, लेकिन हम शिकारियों की जात कुछ ज़्यादा आरामतलब नहीं होती। पिछलेवाले चपटे छोर पर सुचोक खड़ा नाव को धकिया रहा था। मैं और व्लादीमिर नाव में चौड़ाई के रुख़, बिछे तख़्ते पर बैठे थे। येरमोलाई आगे की ओर, एकदम छोर पर, आसन जमाये था। सन

के डट्टे लगा देने पर भी हमारे पांवों के नीचे जल्दी ही पानी भर आया। सौभाग्य से मौसम शान्त था और जोहड़ झपकी में डूबा मालूम होता था।

हम अपेक्षाकृत धीमी गति से जा रहे थे। अपने बांस को चिपचिपी कीचड़ में से बाहर निकालने में वृद्ध को काफ़ी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा था। पनीली घास के हरे आल-जाल में उलझा बांस बाहर निकलता था। लिली के चपटे गोल पत्ते भी नाव की गति में रुकावट डालते थे। आख़िर हम नरसल-झुंडों के पास पहुंचे, और तब मज़ा आने लगा। अपने क्षेत्र में हमारे अप्रत्याशित आ घुसने से भयभीत बत्तख़ें शोर मचातीं जोहड़ से उड़ चलीं। गोलियों की तुरंत दनादन होने लगी। नाटी-दुम बत्तख़ों का हवा में क़लाबाज़ी खाना और छपाक के साथ पानी में आ गिरना देखते ही बनता था। गोली से गिरी सभी बत्तख़ों को हम निश्चय ही नहीं बटोर सके। जिनके घाव हल्के थे, वे पानी के नीचे चली गयीं। मरी बत्तख़ों में से भी कुछ इतने घने नरसलों में जा गिरी थीं कि बिज्जू ऐसी आंखों वाला येरमोलाई भी उन्हें नहीं खोज सका। फिर भी, भोजन के समय तक, हमारी नाव ऊपर तक शिकार से भर गयी।

व्लादीमिर का निशाना—और यह देखकर येरमोलाई को बड़ी ख़ुशी हुई—ज़रा भी ठिकाने का नहीं था। हर असफल निशाने के बाद वह आश्चर्य की मुद्रा बनाता, अपनी बन्दूक़ पर नज़रसानी करता, नाली में फूंक मारता, खोया-सा भाव जताता और अन्त में निशाना चूकने की सफ़ाई पेश करता। येरमोलाई, सदा की भांति, ठीक निशाने पर गोली दाग़ता। मेरा निशाना भी—सदा की भांति—कुछ अच्छा नहीं था। सुचोक हमें देखता भर रहा, उस आदमी की भांति जो किशोरावस्था से ही दूसरों का चाकर रहा हो। जब-तब वह चिल्ला उठता, 'अरे, वह... वह देखो... वहां एक और बत्तख़ है!' और वह बराबर अपनी पीठ को

रगड़ता—अपने हाथों से नहीं बल्कि अपने कंधों को विचित्र अन्दाज़ में उचका-बिचकाकर। मौसम अब भी वैसा ही शानदार था। हमारे सिरों के ऊपर, ख़ूब ऊंचे आकाश में, घुंघराले सफ़ेद बादल तैर रहे थे, और पानी में उनका ख़ूब साफ़ प्रतिबिम्ब पड़ रहा था। चारों ओर नरसल कानाफूसी कर रहे थे। जहां-तहां, सूरज की धूप में, जोहड़ इस्पात की भांति चमचमा रहा था। हम गांव लौटने की तैयारी कर ही रहे थे कि तभी, सहसा, एक दुर्घटना घट गयी।

इस बात का चेत तो हमें काफ़ी पहले से था कि हमारी नाव धीरे धीरे पानी से भरती जा रही है। व्लादीमिर के ज़िम्मे यह काम था कि वह करछुल की मदद से पानी बाहर निकालता रहे। यह करछुल मेरे चतुर शिकारिये ने—यह सोचकर कि संकट पड़ने पर काम दे सकता है—एक किसान स्त्री से उस समय चुरा लिया था जब वह किसी दूसरी ओर ताक रही थी। जब तक व्लादीमिर ने अपनी ज़िम्मेदारी का ध्यान रखा, तब तक सब ठीक चलता रहा। लेकिन अन्त में ऐसा हुआ कि बत्तख़ों का झुंड का झुंड, मानो हमें अंगूठा दिखाकर विदा होने के लिए कुछ इस तरह उड़ा कि हमें अपनी बन्दूक़ों को भरने का भी समय नहीं मिला। शिकार की सरगर्मी में हम अपनी नाव की हालत की ओर ध्यान नहीं दे सके। तभी येरमोलाई, एक मरी हुई बत्तख़ तक पहुंचने के लिए, अपना समूचा बोझ डालकर अचानक नाव के किनारे पर झुक गया। उसकी इस अति उत्साहपूर्ण कार्रवाई का नतीजा यह हुआ कि हमारी जर्जर नाव एक ओर को झुकी, उसमें पानी भरना शुरू हुआ, और शान के साथ तलहटी की तरफ़ नीचे बैठने लगी। सौभाग्य से वह जगह ज़्यादा गहरी नहीं थी। हमने शोर मचाया। लेकिन जो होना था सो हो चुका था। पलक झपकते हम गले गले तक पानी में डूबे खड़े थे, और बत्तख़ों के मृत शरीर हमारे चारों ओर तैर रहे थे। अपने साथियों के भय से फक सफ़ेद चेहरों की अब याद करता हूं तो हंसी रोके नहीं रुकती

(सम्भवतः खुद मेरा चेहरा भी उन क्षणों में कुछ अधिक सुर्ख़ नहीं रहा होगा); लेकिन यह तय है कि आमोद का भाव उस समय मन में नहीं आया था। हममें से हरेक अपनी बन्दूक़ को सिर के ऊपर ऊंचा उठाये था और सुचोक ने भी, निश्चय ही अपने मालिकों का अनुसरण करने की पुरानी आदत के अनुसार, अपने बांस को भी ऊंचा उठा रखा था। येरमोलाई ने सबसे पहले निस्तब्धता भंग की।

"क्या मुसीबत है!" पानी में थूकते हुए वह बुदबुदाया। "सब चौपट हो गया। कम्बख़्त बुढ़ऊ यह सब तुम्हारी करतूत है!" ग़ुस्से में आकर सुचोक की ओर मुड़ते हुए उसने कहा, "यह सब तुम्हारी कारिस्तानी है!"

"मुझसे क़ुसूर हुआ!" वृद्ध की ज़बान लड़खड़ायी।

"हां, और तुम—तुम भी ख़ूब हो," व्लादीमिर की ओर सिर घुमाते हुए मेरे शिकारी-चाकर ने कहा, तुम्हारा दिमाग़ क्या घास चरने चला गया था? तुमने पानी क्यों नहीं निकाला?"

लेकिन व्लादीमिर से कोई जवाब नहीं देते बना। वह पत्ते की भांति कांप रहा था। उसके दांत बज रहे थे और उसकी मुस्कान एकदम बेमानी और बेतुकी थी। उसकी वह नफ़ीस भाषा, उसका महीन शऊर और आत्मप्रतिष्ठा की भावना—सब जैसे छूमन्तर हो गयी थी।

कम्बख़्त नाव हमारे पांवों के नीचे बेदम-सी हिल-डुल रही थी। डुबकी के समय—तत्क्षण—पानी हमें भीषण रूप में ठंडा मालूम हुआ था, लेकिन जल्दी हम उसके आदी हो गये। पहले धक्के से उबरने पर मैंने अपने इर्द-गिर्द नज़र डाली। हम से दस डग दूर नरसल घेरा डाले खड़े थे। उनकी चोटियों से परे, काफ़ी दूर तट नज़र आ रहा था। "मामला बेढब है," मैंने मन में सोचा।

"तो अब क्या किया जाय?" मैंने येरमोलाई से पूछा।

"ज़रा हाथ-पांव मारकर देखते हैं," उसने जवाब दिया। "रात तो यहां बितायी नहीं जा सकती।" फिर व्लादीमिर से बोला, "मेरी बन्दूक़ पकड़ लो।"

व्लादीमिर ने बिना कुछ कहे आदेश का पालन किया।

"देखता हूं, छिछला रास्ता कहां है," येरमोलाई बड़े विश्वास से कहता गया, मानो हर जोहड़ में पैदल पार करने के लिए छिछला रास्ता होना ही चाहिए। सुचोक से उसने बांस लिया और तट की दिशा में चल दिया, सावधानी से गहराई की थाह लेते हुए।

"क्या तुम्हें तैरना आता है?" मैंने उससे पूछा।

"नहीं, तैरना नहीं आता," नरसलों के पीछे से उसकी आवाज़ आयी।

"तब वह डूब जायेगा," सुचोक ने निरपेक्ष भाव से कहा। पहले वह भयभीत हो उठा था—ख़तरे से नहीं बल्कि हमारे ग़ुस्से से—लेकिन अब वह पूर्णतया आश्वस्त था, रह रहकर लम्बी सांस खींचता, और अपनी मौजूदा जगह से हिलने की कोई ज़रूरत प्रत्यक्षतः महसूस नहीं कर रहा था।

"और वह नाहक़, बिना कोई भला किये, ख़त्म हो जायेगा," व्लादीमिर ने दयनीय भाव से कहा।

येरमोलाई, एक घंटे से भी ज़्यादा देर हो गयी, लौटकर नहीं आया। वह वक़्त क्या था, क़यामत का पहर था। पहले तो हम बड़े उत्साह से उसे आवाज़ें लगाते रहे, जवाब में वह भी आवाज़ देता रहा। फिर उसकी आवाज़ें विरल होती गयीं, और अन्त में एकदम ख़ामोशी छा गयी। गांव में संध्या-प्रार्थना की घंटियां बजना शुरू हो गयी थीं। हम आपस में भी कुछ ज़्यादा नहीं बोल रहे थे। सच पूछो तो एक-दूसरे को न देखने का प्रयत्न कर रहे थे। बत्तखें हमारे सिरों पर मंडरा रही थीं। कुछ तो इतने निकट आ जातीं मानो हमारे सिरों पर ही टिकना चाहती हों,

फिर अचानक ऊंची उठ जातीं और क्वैक क्वैक करती दूर चली जातीं। हम सुन्न हो चले थे। सुचोक ने अपनी आंखें मूंद लीं, मानो नींद का आह्वान कर रहा हो।

आख़िर, येरमोलाई को लौटते देखकर हमें अकथनीय ख़ुशी हुई।

"कहो?"

"मैं किनारे तक हो आया हूं। छिछला रास्ता मिल गया। चलिये अब चलें।"

हम लोग तुरंत चल देना चाहते थे। लेकिन इससे पहले उसने पानी में अपनी जेब में से कुछ डोरी बाहर निकाली। शिकार की हुई बत्तख़ों की टांगों को बांधा, डोरी के दोनों छोरों को अपने दांतों में दाबा और धीरे धीरे आगे की ओर बढ़ चला। उसके पीछे व्लादीमिर, फिर मैं और सब से आख़िर में सुचोक। तट क़रीब दो सौ डग दूर था। येरमोलाई साहस के साथ और बिना ठिठके बढ़ रहा था (इतनी अच्छी तरह उसने राह को अपने ज़हन में बैठा लिया था), केवल जब-तब बीच में चिल्लाकर कहता जाता, "ज़रा बाईं ओर को दबकर, यहां दाहिनी ओर गढ़ा है!" या यह कि "दाहिना बाज़ू पकड़े रहो—बाईं ओर, यहां धंस जाओगे!" कभी पानी हमारी गरदनों तक आ जाता और बेचारा सुचोक जो क़द में हम सब से छोटा था, दो बार पानी निगल गया और छपछपाने लगा। "बस, बस चले आओ!" येरमोलाई ने रुखाई से चिल्लाकर उससे कहा, और सुचोक, उछलता और फुदकता, जैसे-तैसे कम गहरी जगह पकड़ने में सफल हुआ। लेकिन बेहद नाज़ुक हालत में भी वह कभी इतना साहस नहीं कर पाया कि मेरे फ़ॉक-कोट के छोर को ही पकड़ ले। अन्त में थककर चूर, कीचड़ में सने और तर-बतर, हम लोग किनारे लगे।

इसके दो घंटे बाद, हम सूखी घास के एक बड़े बाड़े में बैठे थे और ब्यालू की तैयारी कर रहे थे। हमारे बदन अब उतने ही सूखे थे

जितने उन परिस्थितियों में हो सकते थे। कोचवान इयेगुदिल, सुस्त और आलसी आदमी, समझदार और उनींदा, फाटक पर खड़ा था और बड़े जोश के साथ सुचोक को हुलास दे रहा था (मैंने देखा है कि रूस में कोचवान बड़ी जल्दी मित्रता क़ायम कर लेते हैं)। और सुचोक अंधाधुंध हुलास सूंघ रहा था। वह थूक रहा था, छींक रहा था और प्रत्यक्षतः खूब ख़ुश नज़र आ रहा था। व्लादीमिर उदासीन लगने की कोशिश कर रहा था। उसका सिर एक ओर को झुका था और बहुत कम बोल रहा था। येरमोलाई हमारी बन्दूक़ों को साफ़ कर रहा था। कुत्ते दलिये की इन्तज़ार में ज़ोरों से दुम हिला रहे थे। घोड़े सायबान के नीचे खड़े खुर पटक रहे थे, हिनहिना रहे थे... सूरज छिप रहा था। उसकी आख़िरी किरनें प्रशस्त गुलाबी क़ितों में छितरा गयी थीं, सुनहरे बादल आकाश के समूचे ओर-छोर में अत्यधिक महीन धागों के रूप में फैले हुए थे— धुली हुई, कंघे से संवारी ऊन की तरह... गांव में गाने की आवाज़ गूंज रही थी।

बेजिन चरागाह

जुलाई महीने का एक शानदार दिन – ऐसे दिनों में से एक, जो सिर्फ़ लगातार कई दिनों तक बढ़िया मौसम रहने के बाद, अवतरित होते हैं। आकाश एकदम तड़के से ही स्वच्छ है। सूर्योदय में आग जैसी दमक नहीं। वह मृदु गुलाबी आभा से रंजित है। सूरज अग्निमय नहीं है; दमघोट सूखे के दिनों की भांति लाल-भभूका भी नहीं; न ही उसमें तूफ़ान के पहले जैसा धुंधला गुलाबीपन है। सूरज उजला है और उसकी चमक सुहावनी है। बादल की एक पतली और लम्बी पट्टी की ओट में से वह शान्ति के साथ झांकता है। वह अपनी आभा और ताज़गी की वर्षा करता है; फिर दूधिया धुंध में छिप जाता है। बादल की पट्टी का ऊपरी किनारा ऐसे चमकता है जैसे उसमें प्रकाश के नन्हे सांप लहरा रहे हों, चांदी के वर्क की भांति झिलमिलाते हुए। और आलोक का सशक्त पुंज, गहरी खुशी से उद्वेलित, पंख फैलाये, ऊंचाइयों को छूने लगता है। दोपहर के क़रीब, आकाश में खूब ऊंचे, गोल बादलों के दल दिखाई देते हैं, सुनहरे और भूरे, हल्की दूधिया गोट में टंके हुए। किसी प्लावित नदी के वक्ष पर छितरे, क़रीब क़रीब थिर, द्वीपों जैसे वे लगते हैं – गहरी पारदर्शी नीलवर्ण जलराशि का अटूट विस्तार इन्हें पखारता होता है। और भी दूर – आकाश के उतार में – वे गतिशील हैं, आपस में गुंथते जा रहे हैं। अब उनके बीच नीलिमा नज़र नहीं आती, लेकिन खुद उनका रंग भी क़रीब क़रीब उतना ही नीला है जितना कि आकाश का। आलोक और गरमाहट में पगे हुए

हैं। क्षितिज का रंग, कुमुद जैसी हल्की पीत ग्राभा लिये, दिन-भर एक जैसा रहता है—बदलता नहीं। न तूफ़ान के कहीं ग्रासार नज़र ग्राते हैं, न काली घटाग्रों के। सिर्फ़ एकाध जगह नीलवर्ण किरनें ग्राकाश से नीचे की ग्रोर फैली हैं, बूंदों की बिल्कुल हल्की-सी फुहार छोड़ती हुई। सांझ को ये बादल विलीन हो जाते हैं, ग्रौर उनके ग्रन्तिम ग्रवशेष—कालापन लिये ग्रौर धुंवे की भांति ग्रनिश्चित ग्राकार के—इनमें गुलाबी रेखाएं खिंची हुई, छिपते सूरज की ग्रोर उन्मुख हो जाते हैं। जिस शान्त भाव से सूरज का उदय हुग्रा था उसी शान्त भाव से वह छिप जाता है ग्रौर एक हल्की गुलाबी ग्राभा, उस जगह जहां वह छिपा था, काली होती हुई धरती के ऊपर कुछ देर के लिए हिलगी रह जाती है। सांझ के तारे—ध्यान से ले जायी गयी दीपशिखा की भांति—ग्राकाश में टिमटिमाने लगते हैं। ऐसे दिनों में सभी रंग मृदु होते हैं; उजले, लेकिन चुभनेवाले नहीं। हर चीज़ में हृदय को छूनेवाली एक तरह की कोमलता होती है। ऐसे दिनों में कभी कभी गर्मी ख़ूब ज़ोर मारती है, बहुधा खेतों के ढलुवानों से 'भाप' तक निकलने लगती है, लेकिन हवा के झोंके इस बढ़ती हुई उमस को छितरा देते हैं ग्रौर धूल के बगूले—थिर ग्रौर बढ़िया मौसम के पक्के चिन्ह—ऊंचे सफ़ेद सतूनों की भांति सड़कों ग्रौर खेतों को पार करते नज़र ग्राते हैं। स्वच्छ ख़ुश्क हवा चिरायते, काटी हुई रई ग्रौर मोथी की सुगंध से भरी होती है, ग्रौर रात की पहली घड़ियों में भी हवा नम नहीं होती। ऐसे ही मौसम के लिए किसान का हृदय ललकता है, ग्रनाज की ग्रपनी फ़सल काटने के लिए ...

ऐसे ही एक दिन, तूला प्रान्त के चेर्न ज़िला में, मैं ग्राउज़-पक्षी का शिकार करने निकला। मैंने शिकार शुरू किया ग्रौर काफ़ी संख्या में पंछियों को गिरा लिया। मेरा थैला शिकार से भरा था ग्रौर बेरहमी से मेरे कंधों में गड़ रहा था। लेकिन ग्रन्त में जब मैंने घर लौटने का निश्चय किया तब सांझ का गुलाबी धुंधलका फैल चुका था, गोधूलि की ठंडी ग्राभा

गहरी हो रही थी, और आकाश में फैलनी शुरू हो गयी थी। आकाश छिपते हुए सूरज की किरनों से आलोकित न रहने पर भी, अभी तक उजला था। तेज़ डगों से झाड़ियों के लम्बे चौरस को मैंने पार किया, ढलुवान पर चढ़ते हुए पहाड़ी पर मैं पहुंचा, और बजाय इसके कि वह परिचित मैदानी दृश्यपट मुझे दिखाई देता, जिसकी कि मैं आशा कर रहा था – वही जिसके दाहिने बाज़ू बलूत-वृक्षों का जंगल था और दूर एक गिरजा नज़र आता था – एक सर्वथा भिन्न दृश्यपट मेरी आंखों के सामने फैला था, ऐसा जो मेरे लिए एकदम नया था। नीचे एक सकरी घाटी फैली थी और ठीक सामने, घनी दीवार की भांति, एस्प-वृक्षों का गहरा जंगल सिर उठाये खड़ा था। हैरानी-परेशानी ने मेरे पांव बांध दिये, नज़र घुमाकर मैंने अपने इर्द-गिर्द देखा ... "ओह," मैंने सोचा, "यह जाने कैसे हुआ? मैं तो ग़लत जगह पर आ गया। दाहिनी ओर को चला तो बस आंखें मूंदे चलता ही गया," और अपनी ग़लती पर आश्चर्य प्रकट करता हुआ मैं जल्दी जल्दी पहाड़ी से नीचे उतरने लगा। यकायक एक अप्रिय चिपचिपी सीलन से मैं घिर गया। ठीक ऐसा मालूम हुआ जैसे मैं किसी तहख़ाने में पहुंच गया हूं। घाटी के तल की ऊंची और घनी घास, ओस से एकदम तर, स्वच्छ मेजपोश के समान उजली थी। उसपर चलते कुछ डर-सा मालूम हुआ। सो जल्दी से दूसरे बाज़ू पहुंच, बाईं ओर को दाबते हुए, मैं एस्प-वृक्षों के जंगल के सहारे सहारे चलने लगा। पेड़ों की निद्रालस चोटियों के ऊपर चमगादड़ों ने मंडराना शुरू कर दिया था। निर्मल स्वच्छ आकाश में रहस्य का संचार करते वे चोटियों के ऊपर फरफरा रहे थे। आकाश में ऊंचे, पिछड़ा हुआ एक किशोर बाज़, सीधी और तेज़ गति से, अपने घोंसले की ओर उड़ा जा रहा था। "बस, इस कोने तक पहुंचने की देर है," मैंने मन में सोचा, "सड़क एकदम मिल जायेगी। लेकिन अपनी राह से क़रीब एक मील मैं भटक गया।"

आख़िर जंगल का छोर आ गया। लेकिन सड़क जैसी कोई चीज़ वहां नहीं थी। आंखों के सामने, दाहिने-बाएं और सामने, दूर तक, नीची झाड़ियां उगी थीं और पीछे ऊंची ऊंची घास फैली थी। उनसे परे, बहुत दूर, बंजर ज़मीन का एक खण्ड दिखाई दे रहा था। मैं फिर ठिठक गया, "अब बोलो? यह कहां आ पहुंचा मैं?" मैंने अपने दिमाग़ को कुरेदना शुरू किया – यह याद करने के लिए कि दिन-भर कहां कहां और किस प्रकार मैं घूमता रहा था ... "अरे, यह तो पराखिन की झाड़ियां हैं!" आख़िर मेरे मुंह से निकला। "बेशक, ये वही हैं। तब तो यह सिन्देयेव का जंगल होना चाहिए। लेकिन यहां मैं कैसे आ लगा? इतनी दूर? आश्चर्य! अब मुझे फिर दाहिना बाज़ू पकड़ना चाहिए।"

झाड़ियों के बीच से मैं दाहिनी ओर चल पड़ा। इस बीच रात काफ़ी घिर आयी थी और घटा-सी छा गयी थी। ऐसा मालूम होता था जैसे सांझ के धुंधलके के साथ साथ अंधेरा चारों ओर उमड़-घुमड़ रहा हो और सिरों के ऊपर तैर रहा हो। एक छोटी, घास उगी पगडंडी पर जिसपर कभी कोई न चला था अब मैं पहुंच गया था। सामने की ओर आंखें गड़ाये मैं उसपर चलने लगा। समय बीतते न बीतते चारों ओर अंधेरा और सन्नाटा छा गया। केवल लवा-पक्षी की आवाज़ जब-तब सुनाई दे जाती थी। कोई छोटा-सा रात्रि-पक्षी, अपने कोमल पंखों से धरती के निकट निःशब्द उड़ता, क़रीब क़रीब मुझसे आ टकराया और भयभीत हो दूर भाग गया। मैं झाड़ियों के दूसरी तरफ़ निकल आया और एक खेत के बराबर बराबर, मेड़ से लगा, चलने लगा। दूर की चीज़ें अब कुछ साफ़ सुझाई नहीं देती थीं। चारों ओर के खेत धुंधले-सफ़ेद दिखाई दे रहे थे। उनसे परे अंधकार त्योरियां चढ़ाये था और हर घड़ी, भारी दल-बल सहित, निकट सरकता मालूम होता था। हवा अधिकाधिक ठंडी होती जा रही थी जिसमें मेरे क़दमों की आवाज़ मन्द पड़ती जा रही थी। पीतवर्ण आकाश अब

फिर नीला हो चला था—लेकिन अब यह रात का नीलापन था। छोटे छोटे तारे भी अब उसमें झिलमिला और टिमटिमा रहे थे।

जिसे मैं जंगल समझे था, वह निकली काली गोलाकार पहाड़ी। "तो यह जगह कौनसी है, आखिर?" तीसरी बार ठिठककर स्थिर खड़े होते हुए मैंने फिर सस्वर दोहराया और अपनी उस स्थिति पर तथा कत्थई रंग के अंग्रेज़ी कुत्ते दिआन्का पर प्रश्नसूचक नज़र डाली। चार-पांववाले जीवों में, बिलाशक कुत्ता सबसे ज़्यादा समझदार है। लेकिन यह अत्यन्त समझदार चार-पांवोंवाला जीव भी केवल अपनी दुम हिलाकर रह गया। हताश मुद्रा में उसने अपनी थकी हुई आंखें मिचमिचायी मतलब कि किसी सूझ-बूझ से मुझे उसने लाभान्वित नहीं किया। उसकी आंखों में अपने-आपको अपमानित अनुभव करते हुए तेज डगों से मैं आगे बढ़ा, मानो मेरे मस्तिष्क में अचानक यह कौंध गया हो कि किस ओर मुझे जाना चाहिए। पहाड़ी को मैंने चक्कर काटकर पार किया और एक घाटी में जा पहुंचा जो अधिक गहरी नहीं थी और जिसके इर्द-गिर्द जोताई की हुई थी।

मैं अजीब-सा महसूस करने लगा। वह घाटी क्या थी, एकदम कड़ाही जैसी मालूम होती थी। चारों ओर से ढलुवां चली गयी थी, और नीचे, तलहटी में, सफ़ेद रंग के कुछ बड़े पत्थर सीधे-सतर खड़े थे—मानो कोई गुप्त सभा करने के लिए चुपचाप वहां रेंग आये हों। घाटी के भीतर सब कुछ इतना अचल और अंधा, इतना सपाट और निःशब्द था, और ऊपर लटका हुआ आकाश कुछ इतना भयावह तथा उदास मालूम होता था कि मेरा हृदय बैठने लगा। पत्थरों के बीच कोई छोटा जन्तु मरी-सी और दयनीय आवाज़ में किकिया रहा था। उतावली के साथ मैं फिर पहाड़ी पर निकल आया। इससे पहले तक घर का रास्ता पाने की आशा ने मेरा साथ नहीं छोड़ा था। लेकिन अब पक्के तौर से मेरे दिल में यह समा गया कि राह पाने का अब क़तई कोई चारा नहीं है और मैं एकदम

राह भटक गया हूं। आस-पास की चीज़ों को, जो पूर्णतया अंधेरे में डूबी हुई थीं, पकड़ने-पहचानने का प्रयत्न मैंने छोड़ दिया और तारों के सहारे, नाक की सीध में, अललटप्पू बढ़ने लगा ... इस तरह क़रीब आधे घंटे तक मैं चलता रहा, हालांकि मुझमें अब इतनी भी ताकत नहीं थी कि एक के बाद दूसरा डग उठा सकता। ऐसा मालूम होता था जैसे इतने वीरान प्रदेश में जीवन में पहले कभी मैंने पांव नहीं रखा था। रोशनी का – आग की चमक का – दूर दूर तक कहीं कोई चिन्ह नहीं था, न ही कोई आवाज़ सुनाई देती थी। एक के बाद दूसरा पहाड़ी ढलुवान आ रहा था। एक के बाद एक, खेतों का अन्तहीन विस्तार फैला था। ठीक नाक के नीचे झाड़ियां, मानो धरती फोड़कर प्रकट हो रही थीं। मैं चलता गया, और सबेरा होने तक कहीं पड़ रहने का विचार कर ही रहा था कि अचानक, एक भयानक कगार के सिरे पर मैंने अपने-आप को पाया।

जल्दी से आगे बढ़ा हुआ पांव मैंने पीछे खींचा। अंधेरे की मोटी, गहरी-सी तह में से, ख़ूब नीचे, एक सुविस्तृत मैदान पर मेरी नज़र पड़ी। एक लम्बी नदी, अर्द्धवृताकार में, इसके इर्द-गिर्द बह रही थी – जहां मैं था उससे दूसरी दिशा में। पानी के इस्पाती प्रतिबिम्ब से, जिसकी धुंधली चमक अभी तक जहां-तहां दिखाई दे रही थी, नदी के मार्ग का आभास मिलता था। जिस पहाड़ी पर मैं अब पहुंच गया था वह अचानक एकदम आगे को लटक आये कगारे की शक्ल में ख़त्म होती थी। उसका पार्श्व दृश्य, आकाश के गहरे-नीले शून्य की पृष्ठभूमि में, एक काले भीमाकार दैत्य की भांति मालूम होता था। और ठीक मेरे नीचे, उस जगह जहां वह खड़ा कगारा और मैदान मिलकर एक कोण की रचना करते थे, नदी के निकट जो काले और गतिशून्य आईने की भांति वहां मौजूद थी, पहाड़ी की ओट में, बराबर बराबर दो अलावों से धुवां निकल रहा था और उनकी लपटें उठ रही थीं। उनके इर्द-गिर्द लोग हरकत कर रहे

थे, परछाइयां मंडरा रही थीं और कभी कभी, आग की लपट के आगे, घुंघराले बालों वाला एक छोटा-सा सिर—उसका अग्रभाग, चमक उठता था।

आख़िर अब समझ में आया कि मैं कहां आ गया हूं। यह मैदान हमारे इलाक़ों में बेजिन चरागाह कहलाता है ... लेकिन घर पहुंचने की कोई सम्भावना नहीं थी, ख़ास तौर से रात के इस समय में। मेरी टांगें थककर चूर हो रही थीं। मैंने निश्चय किया कि वहां चला जाय जहां अलाव जल रहे हैं और इन लोगों की संगत में—जो मुझे चरवाहे लग रहे थे—सुबह होने का इन्तज़ार किया जाय। मैं सही सलामत नीचे उतर गया, लेकिन आख़िरी टहनी जिसका सहारा लिये मैं उतर रहा था, मेरे हाथ से अभी पूरी तरह छूट भी न पायी थी कि दो बड़े बड़े झबरीले सफ़ेद कुत्ते भौंकते हुए ग़ुस्से से भरे मेरी ओर झपटे। आग के पास से लड़कों जैसी पतली पतली आवाज़ें आयीं। दो या तीन लड़के ज़मीन पर उठकर खड़े हुए। उन्होंने मुझसे सवाल पूछे जिनके जवाब में चिल्लाकर मैंने उनके सन्देहों को शान्त किया। वे मेरे पास दौड़े आये और कुत्तों को उन्होंने तुरंत वापिस बुला लिया जो मेरे दिआन्का की शकल-सूरत देखकर ख़ास तौर से हैरान हो गये थे।

अलाव के इर्द-गिर्द बैठी हुई आकृतियों को मैंने चरवाहे समझा था। यह ग़लत था। वे केवल पास के एक गांव के किसानों के लड़के थे। घोड़ों के रेवड़ों की देख-संभार का काम उनके ज़िम्मे था। गर्मी के दिनों में घोड़ों को चराने के लिए वे रात को खुले मैदान में आ जाते हैं। दिन में मक्खियां और गोमक्खियां उन्हें चैन नहीं लेने देते। सो वे सांझ को घोड़ों के साथ आते हैं और तड़के ही उन्हें वापिस हांक ले जाते हैं। यह काम गांव के लड़कों को बहुत पसन्द है। नंगे सिर, भेड़ की खाल के पुराने कोट कसे, सबसे तेज़तर्रार मरियल घोड़ों पर वे सवारी गांठते हैं और खुशी से चिल्लाते तथा हूहा करते, खनखनाती आवाज़

लेकिन खूब दूर—पहाड़ियां और जंगल—क्षितिज पर लम्बे धब्बों की भांति धुंधले धुंधले नज़र आ रहे थे।

काला और बादलरहित आकाश, एकदम ओर-छोर विहीन और विजयी, अपनी समूची रहस्यमयी गरिमा के साथ, हमारे सिरों के ऊपर छाया था। रूस में गर्मियों की रात की एक विचित्र, अभिभूत कर देनेवाली, फिर भी ताज़गी से सराबोर सुगंध फेफड़ों में भर रही थी और हृदय एक मीठी कसक का अनुभव कर रहा था। इर्द-गिर्द से कोई आवाज़ नहीं आ रही थी। केवल कभी कभी, पास की नदी में, किसी बड़ी मछली के अचानक उछलने की छपछपाहट, और तट पर लहरियों के स्पर्श से किसी हल्के हल्के झूमते नरकटों की सरसराहट सुनाई दे जाती थी ... एक आग ही ऐसी थी जिसकी धीमी-सी चरचराहट बराबर सुनाई दे रही थी।

लड़के अलाव के चारों ओर बैठे थे। साथ में वे दो कुत्ते भी वहीं विराजमान थे जो मुझे काट खाने के लिए इतने व्यग्र हो उठे थे। और उस समय भी, काफ़ी देर तक, मेरे साथ वे अपनी पटरी नहीं बैठा सके। उनींदे से अपनी आंखों को मिचमिचाते और कनखियों से आग की ओर देख लेते। असाधारण अभिमान की उनकी भावना उन्हें कचोटती और वे रह रहकर ग़ुर्रा उठते। पहले ग़ुर्राते, फिर कुछ किकियाते, मानो अपनी इच्छापूर्ति असम्भव देखकर क्षोभ प्रकट कर रहे हों। कुल मिलाकर पांच लड़के थे—फ़ेद्या, पावलूशा, इल्यूशा, कोस्त्या और वान्या (उनकी बातचीत के दौरान में ही मुझे उनके इन नामों का पता चला; और अब मैं चाहता हूं कि पाठकों से भी उनका परिचय करा दूं)।

पहले फ़ेद्या को लीजिये जो सबसे बड़ा था। वह क़रीब चौदह वर्ष का मालूम होता था। वह एक अच्छी काठी का लड़का था। देखने में भला, कोमल किन्तु अपेक्षाकृत छोटे नाक-नक़्श, सुनहरी घुंघराले बाल, चमकती आंखें, और आधी प्रसन्न तथा आधी लापर्वाह मुसकान जो कभी उसका साथ नहीं छोड़ती थी। शक्ल-सूरत और चाल-ढाल से वह सम्पन्न परिवार

का मालूम होता था, और किसी आवश्यकता से बाधित होकर नहीं बल्कि मौज के लिए चरागाह में चला आया था। वह शोख़ छींट की क़मीज पहने था जिसमें पीली गोट लगी थी। एक छोटा नया कोट उसने ओढ़ रखा था जो उसके संकरे कंधों से खिसका-सा जा रहा था। उसकी नीली पेटी में एक कंघा खोंसा हुआ था। उसके जूते, जो उसकी टांगों में कुछ ऊपर तक चढ़े थे, बिलाशक उसके अपने ही थे — उसके पिता के नहीं। दूसरा लड़का, पावलूशा, उलझे हुए काले बाल, भूरी आंखें, चौड़ी कपोलास्थियां, चेचक के दाग़ों से छलनी सफ़ेद चेहरा, बड़ा लेकिन अच्छे तराशवाला मुंह। कुल मिलाकर उसका सिर बड़ा था — ताड़ी के पीपे की भांति, जैसा कि लोग कहा करते हैं — और उसकी काठी चौरस तथा भद्दी-सी थी। वह शकल-सूरत से अच्छा नहीं था — इससे इन्कार नहीं किया जा सकता — फिर भी वह मुझे अच्छा लगा। वह बहुत ही समझदार और बेलाग मालूम होता था। और उसकी आवाज में एक सशक्त स्वर गूंजता था। उसकी वेश-भूषा में ऐसा कुछ नहीं था जिसपर गर्व किया जा सके। केवल घर की कती-बुनी क़मीज़ और थेगलों की पतलून वह पहने था। तीसरे लड़के इल्यूशा का चेहरा कुछ आकर्षक नहीं था — लम्बूतरा, चुंधी-सी आंखें और तोते जैसी नाक। एक प्रकार की ठस, चिड़चिड़ी बेचैनी का भाव उसके चेहरे से झलकता था। उसके खूब खिंचे-तने होंठ कड़े मालूम होते थे, उसकी सिकुड़ी हुई भौंहें कभी ढीली नहीं पड़ती थीं, मानो अलाव की रोशनी के मारे वह अपनी आंखों को बराबर मिचमिचा रहा हो। सन जैसे क़रीब क़रीब सफ़ेद बालों की पतली लटें उसकी पिचकी हुई फ़ैल्ट टोपी के नीचे से बाहर लटक रही थीं। अपनी टोपी को दोनों हाथों से पकड़कर वह उसे निरन्तर नीचे की ओर, कानों के ऊपर, खींचे जा रहा था। पांवों में वह छाल की नयी चप्पलें पहने था और टांगों में उसने पट्टियां बांध रखी थीं। एक मोटी डोरी, उसके बदन के इर्द-गिर्द तीन लपेट लगाये, काले रंग के उसके साफ़-सुथरे झगले को होशियारी

के साथ संभाले थी। पावलूशा और वह, दोनों में से कोई भी उम्र में बारह वर्ष से अधिक नहीं मालूम होता था। चौथा लड़का कोस्त्या दस वर्ष का था। उसकी चिन्ताशील और उदास मुद्रा ने मेरी उत्सुकता को चेतन कर दिया। उसका समूचा चेहरा छोटा, पतला, दाग़ों से भरा और ठोड़ी के पास गिलहरी की भांति नुकीला था। उसके होंठ यूं ही नामालूम-से थे। लेकिन उसकी बड़ी बड़ी काली आंखें और उनकी तरल चमक एक विचित्र प्रभाव डालती थीं। वे कुछ ऐसा भाव व्यक्त करती मालूम होती थीं जिसे ज़ुबान–कम से कम उसकी ज़बान–शब्दों में व्यक्त करने में असमर्थ थी। नाटे क़द का और कमज़ोर बदन, उसके कपड़े भी ग़रीबों के से थे। आख़िरी लड़का वान्या, शुरू में जो मुझे नज़र नहीं आया था, ज़मीन पर पड़ा था, एक चौरस चटाई के नीचे शान्ति के साथ गुड़मुड़ी बांधे हुए। केवल कभी कभी सुनहरी घुंघराले बालों वाला अपना सिर वह चटाई के नीचे से बाहर निकालता था। वह अधिक से अधिक सात वर्ष का होगा।

सो मैं झाड़ी के नीचे एक करवट लेटा था और लड़कों की ओर देख रहा था। एक अलाव के ऊपर छोटी-सी हंडिया लटकी थी जिसमें आलू उबल रहे थे। पावलूशा उनकी देख-भाल कर रहा था। वह घुटनों के बल बैठा था और उबलते पानी में लकड़ी की एक खपची डालकर उनकी जांच कर रहा था। फ़ेद्या अपनी कोहनी के बल झुका लेटा था और अपने कोट के छोरों को सीधा कर रहा था। इल्यूशा कोस्त्या की बग़ल में बैठा था और अपनी आंखों को अभी भी विवश मिचमिचाये जा रहा था। कोस्त्या निराश मुद्रा में अपना सिर लटकाये था और कहीं दूर शून्य में देख रहा था। चटाई के नीचे वान्या चुपचाप लेटा हुआ था। मैं नींद का बहाना किये पड़ा था। धीरे धीरे लड़कों में बातचीत का सिलसिला फिर शुरू हो गया।

पहले तो वे यूं ही इधर-उधर की बातें करते रहे—कल के काम के बारे में, घोड़ों के बारे में। लेकिन अचानक फ़ेद्या इल्यूशा की ओर घूमा और जैसे बीच में छूटे सिलसिले को फिर से पकड़ते हुए कह उठा—

"हां तो बोलो, क्या तुम्हें भुतना दिखाई दिया?"

"नहीं, मैंने नहीं देखा, और कोई देख भी नहीं सकता," क्षीन और बैठी हुई आवाज़ में इल्यूशा ने जवाब दिया। उसकी आवाज़ की ध्वनि उसके चेहरे के हाव-भाव से अद्भुत मेल खा रही थी। "हां, मैंने केवल उसकी आवाज़ सुनी। और सच, अकेले मैंने ही नहीं, औरों ने भी सुनी!"

"वह डेरा कहां डाले है?" पावलूशा ने पूछा।

"पुराने काग़ज़ के कारख़ाने में।"

"अरे, तो क्या तुम कारख़ाने में जाते हो?"

"और नहीं तो क्या? मेरा भाई आवद्यूश्का और मैं, दोनों काग़ज़ चिकनाते हैं।"

"ओह, तो तुम फ़ैक्टरी में काम करते हो!"

"अच्छा तो यह बताओ," फ़ेद्या ने पूछा, "तुमने कैसे-क्या सुना?"

"हां तो सुनो। हुआ यह कि मुझे और मेरे भाई आवद्यूश्का को, और साथ में फ़्योदोर मिख़ेयेवस्की को, और इवाश्का कोसोई को, और एक दूसरे इवाश्का को जो लाल पहाड़ी से आता है, और इवाश्का सुखोरूकोव को भी—इनके अलावा कुछ और लड़के भी थे—कुल मिलाकर हम दस जने रहे होंगे—यानी पूरी-की-पूरी पाली—हां तो हुआ यह कि हमें काग़ज़ के कारख़ाने में रात बितानी पड़ी। नहीं, ऐसा नहीं, बल्कि यह कहो कि ओवरसीयर नज़ारोव ने हमें रोक लिया। 'अरे,' उसने कहा, 'घर जाने में क्यों समय बरबाद करते हो, लड़को। कल ढेर सारा काम करना है। घर न जाओ।' सो हम वहीं रुक गये, और सबने एक साथ

ज़मीन पर डेरा जमा लिया। तभी आवद्यूश्का ने कहना शुरू किया, 'सुनो साथियो, अगर यहां कोई भुतना प्रकट हो जाय तो?' वह अभी अपनी बात कह भी न पाया था कि अचानक ऐसा लगा जैसे हमारे सिरों के ऊपर कोई डग भर रहा हो। हम नीचे पड़े थे, और वह ऊपर डग नाप रहा था, वहीं जहां चक्का लगा है। हमारे कान खड़े हो गये। वह टहल रहा था। ऐसा मालूम होता था जैसे तख़्ते उसके बोझ से धचक रहे हों। ओह, वे किस तरह चरचरा रहे थे... इसके बाद वह हमारे सिरों के ऊपर से होता गुज़र गया। फिर, एकदम अचानक, चक्के के ऊपर टपाटप पानी गिरना शुरू हो गया। चक्का खड़खड़ाता, ज़ोर मारता, और फिर घूमने लगता, हालांकि ऊपर पानी के डट्टे बन्द किये हुए थे। हम हैरान थे। इन डट्टों को किसने खोला जिससे पानी बहने लगा। जो हो, चक्का घूमा, और थोड़ा घूमकर रुक गया। फिर उसके डग ऊपरवाले दरवाज़े की ओर बढ़े और वह ज़ीने से नीचे उतरने लगा, इत्मीनान के साथ। ज़ीना भी उसके बोझ से कराह रहा था... हां तो वह ठीक हमारे दरवाज़े के पास तक चला आया, और वहीं ठिठककर खड़ा हो गया, और खड़ा रहा... और फिर, एकदम अचानक दरवाज़ा बस पट से खुल गया। हमारी सिट्टी-पिट्टी गुम! देखा तो कुछ नहीं। अचानक, क्या पूछते हो, एक टंकी के जाल ने हरकत शुरू कर दी। वह उठा, उठता गया, हवा में लहराता और डुबकियां लगाता, जैसे कोई उसे फटक रहा हो, और इसके बाद वह फिर अपनी जगह पर जैसे का तैसा बैठ गया। इसके बाद, एक दूसरी टंकी में, एक कांटा अपनी खूंटी में से निकल झूलने लगा और फिर अपनी खूंटी पर जा लटका। फिर ऐसा मालूम हुआ जैसे कोई दरवाज़े तक आया, भेड़ की भांति अचानक खांसा-खखारा और मिमियाया, ऐसे-वैसे नहीं बल्कि ख़ूब ज़ोरों से! हम सब एक-दूसरे से चिपक गये। अरे बाप रे, डर के मारे उस रात जैसे हमारी जान ही निकल जाती!"

"लेकिन सुनो तो," पावलूशा बुदबुदाया, "वह खारा-खखारा क्यों?"

"पता नही! शायद सीलन थी, इस वजह से।"

कुछ देर के लिए सब चुप रहे।

"हां तो," फ़ेद्या ने पूछा, "आलू उबल गये क्या?"

पावलूशा ने उन्हें देखा।

"नहीं, अभी कच्चे हैं... बाप रे, कितने जोरों से छपाका हुआ!" नदी की ओर मुड़ते हुए उसने फिर कहा, "जरूर कोई बड़ी मछली है... और वह देखो, तारा टूटकर गिर रहा है।"

"इधर देखो, भाइयो, मैं एक बढ़िया बात तुम्हें सुनाता हूं," कोस्त्या ने अपनी तेज़ गह्नीन आवाज़ में कहना शुरू किया, "कई दिन पहले बप्पा ने यह घटना सुनायी थी।"

"अच्छा तो सुनाओ," सरपरस्ती के अन्दाज में फ़ेद्या ने कहा, "हम सुन रहे हैं।"

"गावरीला को तो तुम जानते हो न, वही जो बड़े गांव में बढ़ई का काम करता है?"

"हां हां, उसे हम जानते हैं।"

"और क्या तुम्हें यह भी मालूम है कि वह हमेशा इतना उदास क्यों रहता है, कभी बोलता क्यों नहीं? क्या तुम्हें मालूम है? सुनो, मैं बताता हूं। सुनो भाइयो, एक बार वह—बप्पा कहते थे—एक बार वह जंगल में अखरोट बटोरने गया। सो वह जंगल में अखरोट बटोरने गया और रास्ता भूल गया। बस, वह चलता गया—कहां और किधर, भगवान जाने। सो, भाइयो, वह चलता गया, चलता गया, लेकिन पल्ले कुछ नहीं पड़ा—उसे रास्ता नहीं मिला, और सो रात पड़ गयी। सो वह एक पेड़ के नीचे बैठ गया। 'बस, यहां बैठकर सबेरा होने का इन्तज़ार करूंगा,' उसने सोचा। वह बैठ गया और ऊंघने लगा। सो,

वह ऊंघ रहा था कि अचानक उसे एक आवाज़ सुनाई दी। उसे कोई पुकार रहा था। उसने सिर उठाकर देखा। वहां कोई नहीं था। वह फिर ऊंघने लगा। फिर किसी ने उसे पुकारा। उसने फिर देखा, आंखें फाड़-फाड़कर देखा। और उसके सामने पेड़ की टहनी पर, एक जल-परी बैठी झूला झूल रही थी, और उसे अपने पास बुला रही थी, और हंसते हंसते दोहरी हो रही थी। इतना हंस रही थी... और चांद ख़ूब चमक रहा था, बहुत ही उजला, और बहुत ही साफ़—सुनो भाइयो, उसकी रोशनी में हर चीज़ साफ़ दिखाई दे रही थी। सो जल-परी उसे बुला रही थी, और वह ख़ुद भी इतनी उजली और इतनी चिट्टी थी जैसे कोई डेस-मछली, या रोच, या कोई नन्ही कार्प, बिल्कुल चांदी की भांति उजली और सफ़ेद... बढ़ई गावरीला तो जैसे सुध-बुध खो बैठा, लेकिन, भाइयो, वह थी कि बिना दम लिये हंस रही थी, और इस तरह से अपने पास आने के लिए कह रही थी। तब ठीक उस समय जब गावरीला उठ ही रहा था और जल-परी के पास जाना चाहता था कि, भाइयो, सच जानो, भगवान ने उसके दिल में डाल दी, और वह उसी वक़्त क्रॉस का निशान बनाने लगा... और क्रॉस का निशान बनाने में, भाइयो, उसे बड़ी मुश्किल पड़ी। उसने कहा, 'मेरा हाथ निरा पत्थर बन गया है; हिलाये नहीं हिलता...' उफ़, भयानक डायन कहीं की! सो जब उसने क्रॉस का निशान बनाया तो, भाइयो, उस जल-परी की हंसी को जैसे काठ मार गया, और वह यकायक फूट फूटकर रोने लगी... इस तरह कि कुछ न पूछो... वह रो उठी, भाइयो, और बालों से उसने अपनी आंखों को पोंछा, और उसके बाल ऐसे हरे थे जैसे कि सन। सो गावरीला उसे देखता रहा, देखता रहा, और अन्त में उसने उससे पूछ-ताछ शुरू की, 'जंगल की बनैली रानी, रोती क्यों हो?' और जल-परी उससे यों बोली—'अगर तुमने क्रॉस का निशान न बनाया होता,' उसने कहा, 'तो तुम मेरे साथ जीवन की आख़िरी घड़ी तक मौज से रहते। और मैं रोती

हूं, मैं दुःखी हूं, इसलिए कि तुमने क्रॉस का निशान बनाया। लेकिन अकेले मैं ही दुःखी नहीं रहूंगी, तुम भी जीवन की आख़िरी घड़ी तक दुःखी रहोगे।' यह कहकर वह ग़ायब हो गयी, और यकायक गावरीला को भी जंगल से बाहर निकलने का रास्ता सूझ गया.. तभी से वह, देखा भाइयो, इतना उदास रहता है।"

"उफ़!" कुछ देर की ख़ामोशी के बाद फ़ेद्या ने कहा, "लेकिन जंगल की भुतनी एक ईसाई आत्मा को भला कैसे नष्ट कर सकती है—उसने उसकी एक नहीं सुनी।"

"है न अजीब?" कोस्त्या ने कहा, "गावरीला कहता था कि उसकी आवाज़ महीन और रोनी-सी थी, मेंढक की भांति।"

"क्या खुद तुम्हारे बप्पा ने तुम्हें यह घटना सुनायी थी?" फ़ेद्या ने फिर पूछा।

"हां, मैं तन्दूर पर लेटा था। एक एक बात मैंने सुनी।"

"बड़ी अजीब बात है। वह इतना उदास क्यों है? लेकिन शायद वह उसे चाहती थी, तभी तो वह उसे बुलाती थी?"

"वाह, उसे चाहती थी!" इल्यूशा ने कहा, "चाहती थी! वह उसे गुदगुदाकर मार डालना चाहती थी। इसलिए वह उसे चाहती थी। ये जल-परियां ऐसा ही करती हैं।"

"ये जल-परियां यहां भी होंगी, मेरी समझ में," फ़ेद्या ने कहा।

"नहीं," कोस्त्या ने जवाब दिया, "यह साफ़ और खुली जगह है। लेकिन एक बात यहां भी है। वह यह कि पास में ही नदी है।"

सब चुप थे। सहसा कहीं दूर से एक सुदीर्घ, गूंजती हुई, बिल्कुल विलाप करने जैसी, आवाज़ आयी—रात की उन रहस्यमय आवाज़ों में से एक जो, गहरी निस्तब्धता से आकर टकराती, हवा के साथ उठती, हिलगती और धीरे धीरे अन्त में विलीन हो जाती हैं। आप सुनते हैं। लगता है जैसे वह कुछ नहीं है, लेकिन उसकी थरथराहट का—गूंज का—

आप फिर भी अनुभव करते हैं। लगता है जैसे ठीक क्षितिज के पास किसी के हृदय से लम्बी, बहुत लम्बी, चीख़ निकली हो, और जैसे उसके जवाब में कोई और, तुर्श और तेज़ आवाज़ में, जंगल में हंस रहा हो, और नदी के वक्ष पर एक धुधली, मरमरी-सी, फुंकार मंडराने लगती है। लड़कों ने, कांपते हुए, अपने इर्द-गिर्द देखा...

"प्रभु ईसा बल दें," इल्यूशा फुसफुसाया।

"अरे, तुम भी निरे चूज़े हो!" पावलूशा ने चिल्लाकर कहा, "डरने की कोई बात भी हो? यह देखो, आलू तैयार हो गये।" (सब के सब हंडिया के पास खिसक आये और भाप निकलते आलू खाने लगे, केवल वान्या नहीं उठा।) "क्यों, क्या तुम नहीं आ रहे?" पावलूशा ने कहा।

लेकिन वह चटाई के नीचे से नहीं खिसका। हंडिया जल्दी ही पूर्णतया ख़ाली हो गयी।

"सुनो, साथियो," इल्यूशा ने कहा, "क्या तुम्हें मालूम है कि वरनावीत्सा में हमारे साथ क्या गुज़री?"

"बांध के पास?" फ़ेद्या ने पूछा।

"हां, हां, बांध के पास, उस खंडहर बांध के पास। वह भुतहा जगह है, एकदम भुतहा, और एकदम वीरान। चारों ओर गड्ढे ही गड्ढे और खाइयां, और उन गड्ढों में हर घड़ी सांप रहते हैं।"

"हां तो वहां क्या हुआ? हम भी सुनें।"

"अच्छा तो सुनो। तुम शायद नहीं जानते, फ़ेद्या, लेकिन वहां एक आदमी डूब गया था। उसकी क़ब्र वहीं बनायी गयी थी। वह बहुत बहुत पहले डूबा था, जब पानी गहरा था। अब तो केवल उसकी क़ब्र बाक़ी है। क़ब्र क्या, कहो कि उसकी क़ब्र का केवल निशान बाक़ी है... बस, एक छोटा-सा ढूह... सो एक दिन कारिन्दे ने शिकारिये येर्मील को बुलाया, और उससे कहा, 'येर्मील, जाओ, डाक ले आओ।' येर्मील

हमेशा हमारे लिए डाक लाता था। उसके सब कुत्ते मर चुके थे। सो वे, कारण जो हो, कभी उसके साथ नहीं रहते, और न कभी साथ रहे, हालांकि वह एक अच्छा शिकारिया है, और वह सोलहों आने शिकारिया है। हां तो येर्मील डाक लेने शहर गया, और नगर में थोड़ा ठहर गया और जब वह अपने घोड़े पर वहां से चला तो उस समय वह कुछ नशे में था। रात हो आयी थी, बहुत ही बढ़िया रात, चांद चमचमा रहा था... सो येर्मील बांध पर से गुज़रा, उधर से ही उसका रास्ता था। सो वह चला जा रहा था कि उसे, डूबे हुए आदमी की क़ब्र पर, एक मेमना दिखाई दिया—छोटा-सा, एकदम सफ़ेद, घुंघराला और सुन्दर। वह इधर से उधर खिलन्दरी कर रहा था। सो येर्मील ने सोचा, 'इसे साथ ले चलूं, बेचारा व्यर्थ मारा जायेगा!' और घोड़े पर से उतरकर उसने उसे अपनी बांहों में उठा लिया। लेकिन नन्हा मेमना ऐसा बना रहा जैसे कुछ हुआ ही न हो। सो येर्मील अपने घोड़े के पास लौट आया, और घोड़े ने घूरकर उसे देखा, फुंकार छोड़ी, और अपनी गरदन हिलायी। यह होने पर भी उसने घोड़े से 'वो' कहा, मेमने के साथ उसपर सवार हो गया और फिर चल पड़ा। मेमने को वह आगे की ओर रखे था। उसने उसकी ओर देखा और मेमने ने भी सीधे उसके चेहरे पर अपनी आंखें जमा दीं। शिकारिया येर्मील घबरा गया। 'याद नहीं पड़ता,' उसने कहा, 'कि पहले कभी किसी मेमने ने इस तरह ताका हो।' फिर भी उसने मेमने की पीठ इस तरह थपथपाना शुरू किया और मुंह से 'च-च-च!' कहा और मेमना भी, अचानक अपने दांत चमकाते हुए कह उठा, 'च-च-च!"

कहानी कहनेवाला लड़का अभी मुश्किल से ही आख़िरी शब्द कह पाया था कि अचानक दोनों कुत्ते एकबारगी उठ खड़े हुए, और ज़ोर ज़ोर से भौंकते हुए अलाव के पास से लपककर अंधेरे में ओझल हो गये। सब के सब चौंक पड़े। वान्या अपनी चटाई के नीचे से उछलकर खड़ा

हो गयी। पावलूशा चिल्लाता हुआ कुत्तों के पीछे दौड़ चला। उनका भौंकना धीरे धीरे कम होता गया... घोड़ों के भयभीत रेवड़ की बेचैन टापों की आवाज़ आ रही थी। पावलूशा ज़ोरों से चिल्लाया, "ओ, सेरी! ओ, जूचका!" कुछ मिनटों के भीतर भौंकना बंद हो गया। पावलूशा की आवाज़ अब भी कहीं दूर से आती सुनाई दे रही थी... कुछ समय और बीता। लड़के परेशान से अग़ल-बग़ल देख रहे थे, मानो किसी चीज़ की घटना की आशंका कर रहे हों। अचानक तेज़ी से आते हुए एक घोड़े की टाप सुनाई दी। घोड़ा ठीक अलाव के पास आकर रुका, और उसकी अयाल से झूलता हुआ पावलूशा फुर्ती से नीचे उतर आया। दोनों कुत्ते भी उछलकर रोशनी के घेरे के भीतर आ गये और तुरंत ज़मीन पर बैठ गये। वे अपनी लाल जीभ बाहर निकाले थे।

"क्यों, क्या हुआ? क्या बात थी?" लड़कों ने पूछा।

"कुछ नहीं," अपने घोड़े की ओर हाथ हिलाकर अलग करते हुए पावलूशा ने जवाब दिया, "लगता है कि कुत्तों ने कुछ खटका सुना। मैं समझा कि भेड़िया आ गया," ज़ोर ज़ोर से सांस लेते हुए बेपरवाही के साथ उसने अपनी बात पूरी की।

पावलूशा ने मुझे बरबस मुग्ध कर लिया। वह उस समय बहुत ही बढ़िया लग रहा था। उसके बदनुमा चेहरे पर जो घोड़ा दौड़ने से उद्वेजित था, कसबल और दृढ़ता दमक रही थी। हाथ में एक टहनी तक लिये बिना, एकदम बेझिझक, रात में वह अकेला लपक गया, भेड़िए से लोहा लेने। "कितना शानदार जीव है!" उसकी ओर देखते हुए मैंने अपने मन में कहा।

"तो कोई भेड़िया-वेड़िया नज़र आया?" कांपते हुए कोस्त्या ने पूछा।

"सो तो वे हमेशा ही यहां बहुत-से घूमते रहते हैं," पावलूशा ने जवाब दिया, "लेकिन वे केवल जाड़ों में तंग करते हैं।"

वह फिर अलाव के सामने धरती पर बैठ गया। बैठते समय उसने अपना हाथ एक कुत्ते के झबराले सिर पर टिका दिया। चाव में आये कुत्ते ने देर तक अपना सिर नहीं हटाया, और कृतज्ञतापूर्ण गर्व के साथ कनखियों से पावलूशा की ओर देखता रहा।

वान्या फिर अपनी चटाई के नीचे जा लेटा।

"कितनी भयावनी बातें तुम हमें सुना रहे थे, इल्यूशा," फ़ेद्या ने जो सम्पन्न किसान का लड़का होने के नाते बातचीत में अगुवा बनना अपना कर्तव्य समझता था, कहना शुरू किया। (वह खुद कम बोलता था, प्रत्यक्ष ही इस डर से कि कहीं उसकी प्रतिष्ठा में बट्टा न लग जाय।) "और फिर किसी बुरे प्रेत ने कुत्तों को भौंकने के लिए उकसा दिया... सच, यह मैंने भी सुना है कि तुम्हारी यह जगह भूतों का अड्डा है।"

"वरनावीत्सी? भूतों का अड्डा तो है ही। लोगों का कहना है, कि कितनी ही बार उन्होंने पुराने मालिक को वहां देखा—स्वर्गीय मालिक को। कहते हैं कि वह लम्बा घेरदार कोट पहने था, और बराबर कांखता-कराहता जाता था। और धरती पर कोई चीज़ ढूंढता रहता था। एक बार बाबा त्रोफ़ीमिच ने उसे देखा। 'मालिक इवान इवानिच,' उसने कहा, 'धरती पर यह आप क्या खोजने की किरपा कर रहे हैं?"

"तो उसने यह पूछा?" फ़ेद्या ने अचरज में भरकर कहा।

"हां, उसने उससे पूछा।"

"तब तो त्रोफ़ीमिच को बहादुर कहना चाहिए... हां तो उसने फिर क्या कहा?"

"'मैं उस बूटी की खोज में हूं जो हर चीज़ को काट डाले,' उसने कहा। लेकिन उसकी आवाज़ इतनी मोटी थी, इतनी मोटी थी कि बिल्कुल ठस। 'और मालिक इवान इवानिच, यह तो बताओ उस बूटी का आप

क्या करोगे जो हर चीज़ को काट सकती है?'–'क़ब्र का बोझ मेरी छाती पर लदा है, वह मुझे कुचले दे रहा है, त्रोफ़ीमिच; मैं उससे छूटना चाहता हूं, निकल भागना चाहता हूं।"

"बाप रे!" फ़ेद्या ने कहा, "लगता है, उसकी हवस अभी पूरी नहीं हुई।"

"भई खूब!" कोस्त्या ने कहा, "मैं तो समझे था कि केवल अखिल सन्तों के दिन ही मरे हुओं से मुलाक़ात हो सकती है।"

"वे किसी समय भी नज़र आ सकते हैं," इल्यूशा बीच में ही विश्वास के साथ बोला, और उसके अन्दाज़ से मुझे लगा कि गांव के अंधविश्वासों के बारे में वह बाक़ी सबसे ज़्यादा जानता है। "लेकिन अखिल सन्तों के दिन तो ज़िन्दों को भी देखा जा सकता है, यानी उन्हें जिनके मरने की बारी उस साल होगी। बस, जाकर गिरजे की ड्योढ़ी में बैठ जाओ और बराबर सड़क की ओर देखते रहो। वे सड़क पर तुम्हारे सामने से गुज़रेंगे, यानी वे जो उस साल मरनेवाले होंगे। पिछले साल बूढ़ी उल्याना ड्योढ़ी में जाकर बैठी थी।"

"तो उसने किसी को देखा?" कोस्त्या ने उत्सुकता से पूछा।

"बेशक, उसने देखा। पहले तो वह देर तक, बहुत बहुत देर तक, बैठी रही और उसे कोई दिखाई नहीं दिया, और न ही उसने कुछ सुना... केवल ऐसा मालूम होता था जैसे कहीं कोई कुत्ता कांख और किकिया रहा है... अचानक उसने सिर उठाया। देखती क्या है कि एक लड़का केवल क़मीज़ पहने सड़क पर चला आ रहा है। उसने उसे देखा। वह इवाश्का फ़ेदोसेयेव था।"

"वही जो वसन्त के दिनों में मरा?" फ़ेद्या ने पूछा।

"हां, वही। वह आया और उसने एक बार भी सिर नहीं उठाया। लेकिन उल्याना ने उसे पहचान लिया। इसके बाद वह फिर देखती है कि एक स्त्री चली आ रही है। वह उसे आंखें फाड़कर देखती है, और देखती

है। हे भगवान! यह तो वह ख़ुद थी जो सड़क पर से आ रही थी, ख़ुद उल्याना।"

"वह ख़ुद कैसे हो सकती है?" फ़ेद्या ने पूछा।

"सच, भगवान जानता है, वह ख़ुद ही थी।"

"लेकिन तुम जानो, वह तो अभी तक नहीं मरी?"

"अभी साल पूरा कहां हुआ है? और ज़रा देखो तो कि वह हो क्या गयी है। लगता है जैसे उसका जीवन कच्चे धागे से लटका झूल रहा हो।"

अब एक बार फिर सब चुप थे। पावलूशा ने मुट्ठी-भर सूखी टहनियां अलाव में डाल दीं। अचानक एक लौ लपकी और देखते न देखते वे काली हो चलीं। वे चटकीं, धुंवायीं, सिकुड़ीं, उनके जलते हुए छोर छल्ले की भांति मुड़े। रोशनी की झांकियां, खंडित कौंधों के रूप में सभी दिशाओं में झलक उठीं—ख़ास तौर से ऊपर की दिशा में। अचानक एक सफ़ेद फ़ाख़्ता उड़कर सीधे उजली रोशनी में आ गयी, और सकपकायी-सी चक्कर पर चक्कर काटने लगी, लाल आभा से दमकती, और फिर फ़ुर्र से ओझल हो गयी।

"लगता है कि यह अपना घर भूल गयी है," पावलूशा ने कहा, "अब यह उड़ती रहेगी, जब तक कि इसे सबेरा होने तक आराम करने के लिए कोई ठिकाना नहीं मिल जाता।"

"लेकिन, पावलूशा," कोस्त्या ने कहा, "क्या यह नहीं हो सकता कि वह केवल कोई भली आत्मा हो, स्वर्ग के लिए अभियान करती हुई?"

पावलूशा ने सूखी टहनियों का एक और मुट्ठा अलाव में डाल दिया।

"हो सकता है," आख़िर उसके मुंह से निकला।

"लेकिन, पावलूशा, हमें यह बताओ," फ़ेद्या ने कहना शुरू किया, "शालामोवो में तुमने वह दैवी चमत्कार* भी देखा?"

---

* किसान लोग सूर्यग्रहण के लिए ये शब्द प्रयोग करते हैं।

"जब सूरज दिखना बंद हो गया था? हां, बेशक देखा!"

"और क्या तुम्हें भी डर लगा?"

"हां, और अकेले हमें ही क्यों, कहते हैं कि खुद हमारे मालिक का भी बुरा हाल हो गया था। यों उन्होंने हमें पहले ही बता दिया था कि अंधेरा होगा, लेकिन जब अंधेरा छाने लगा तो भय ने उन्हें भी दबोच लिया। और गृह-दासों की झोंपड़ी में बूढ़ी दादी ने तो, जैसे ही अंधेरा हुआ, तन्दूर में रखी सारी रकाबियां तक चिमटे से तोड़ डालीं। 'अब कौन खाये-पियेगा,' उसने कहा, 'क़यामत का दिन आ गया।' सो शोरबा गिरकर बहने लगा। और गांव के क़िस्सों का तो कुछ कहना ही नहीं – यह कि सफ़ेद भेड़िये धरती को रौंद डालेंगे और लोगों को चटकर जायेंगे कि कोई हिंसक पक्षी आकाश से हम पर टूट पड़ेगा, और यह कि त्रीश्का* तक प्रकट होगा।"

"त्रीश्का कौन?" कोस्त्या ने पूछा।

"अरे, क्या तुम्हें यह भी नहीं मालूम?" इल्यूशा ने सहृदयता से टोका, "आख़िर, भाई, तुमने क्या किसी और दुनिया में जन्म लिया है जो त्रीश्का को नहीं जानते? तुम घर के घोंघचू हो, गांव में तुम सब घर के घोंघचू, सच! त्रीश्का, चमत्कारों से भरा त्रीश्का, वह एक दिन प्रकट होगा, इतना अद्भुत आदमी कि उसे कोई नहीं पकड़ सकेगा, और उसका लोग कभी कुछ नहीं बिगाड़ सकेंगे, इतना अद्भुत आदमी होगा वह। लोग उसे पकड़ने की कोशिश करेंगे, लाठियां लेकर उसके पीछे लपकेंगे, वे उसे घेर लेंगे, लेकिन वह उनकी आंखों को अंधा कर देगा और वे एक-दूसरे पर लुढ़कने लगेंगे। वे उसे जेल में डाल देंगे, मिसाल के लिए, वह पीने के लिए कटोरे में थोड़ा पानी मांगेगा और उसमें डुबकी

---

* 'त्रीश्का' सम्बन्धी यह अन्धविश्वास सम्भवतः ईसा विरोधी रूढ़ि की उपज है।

लगाकर उनकी आंखों से ओझल हो जायेगा। वे उसे ज़ंजीरों में जकड़ देंगे, लेकिन वह केवल अपने हाथों से ताली बजायेगा—और ज़ंजीरें अलग जा गिरेंगी। सो यह त्रीश्का गांवों में जायेगा, नगरों में घूमेगा; और यह त्रीश्का बड़ा कुटिल आदमी होगा, वह प्रभु ईसा के भक्तों को उनके पथ से भटकायेगा... और वे उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकेंगे... इतना अद्भुत कुटिल आदमी होगा वह!"

"हां तो," पावलूशा ने अपनी सुनिश्चित आवाज़ में कहना जारी रखा, "ऐसा है वह त्रीश्का। और उन्हें उम्मीद थी कि वह हमारे इलाक़ों में आयेगा। बड़े बूढ़ों ने, दैवी करिश्मे के लगते ही, ऐलान कर दिया कि त्रीश्का आयेगा। हां तो दैवी करिश्मा शुरू हुआ। सारे लोग हाट-बाज़ार में, खेतों में जगह जगह जा खड़े हुए, यह देखने के लिए कि क्या होनेवाला है। हमारा गांव, तुम जानो, खुला देहात है। वे देखने लगे, अचानक पहाड़ के ढलुवान पर बड़े गांव की ओर से आदमी ऐसा कोई आता दिखाई दिया। वह इतना अजीब था, और उसका सिर इतना अद्भुत था कि सब चिल्ला उठे, 'ओह, त्रीश्का आ रहा है। ओह, त्रीश्का आ रहा है।' और सब सभी दिशाओं में भाग खड़े हुए। हमारे गांव का मुखिया खाई में दुबक गया, उसकी घरवाली ने चौखट से ठोकर खायी और ज़ोर से चीख उठी। अहाते का कुत्ता उसकी चीख सुनकर डर गया, उसने अपनी ज़ंजीर तुड़ा डाली और बाड़े को छलांग कर जंगल में भाग गया। और कुज़्का का बाप दोरोफ़ेइच जई में घुस गया और वहां पड़ा पड़ा लवा-पक्षी की भांति किकियाने लगा। 'हो सकता है कि दुश्मन,' उसने कहा, 'सर्वनाशी दुश्मन, कम से कम पक्षियों को छोड़ दे।' सो डर के मारे सब के सब पागल हो रहे थे! लेकिन वह जो चला आ रहा था—वह निकला हमारा पीपे बनानेवाला वावीला। उसने अपने लिए एक नया मटका ख़रीदा था और उसे सिर पर रखे चला आ रहा था!"

सब लड़के हंस पड़े, और इसके बाद कुछ देर के लिए फिर सन्नाटा छा गया, जैसा कि खुले में बात करते समय अक्सर होता है। मैंने रात की धीर-गम्भीर, राजसी निस्तब्धता में झांककर देखा। गयी सांझ की ओसीली ताज़गी की जगह अब मध्य रात्रि की खुश्क गरमाई ने ले ली थी। नींद में डूबे खेतों पर अंधकार का मुलायम परदा पड़ा था और उसके उठने में, ऊषा की पहली फुसफुसाहटों तथा ओस की पहली बूंदों के झिलमिलाने में अभी काफ़ी देर थी। आकाश में चांद का कुछ पता नहीं था, वे दिन उसके देर से निकलने के थे। अनगिनत सुनहरी तारे, टिमटिमाने में होड़-सी करते, मृदुगति से आकाश-गंगा की ओर प्रयाण करते मालूम होते थे, और उनकी ओर देखते देखते, सच, ऐसा मालूम होता था जैसे हम भंवर की भांति घूमती धरती की अन्तहीन गति का अनुभव कर रहे हों... नदी के ऊपर, एक साथ दो बार, एक अजीब, कर्कश, दुःख भरी चीख़ सुनाई दी, और इसके कुछ ही मिनट बाद, फिर उसकी आवृत्ति हुई, लेकिन और दूर से...

कोस्त्या कांप उठा—

"यह क्या?"

"यह बगुले की आवाज़ है," पावलूशा ने थिर भाव से जवाब दिया।

"बगुले की," कोस्त्या ने दोहराया। फिर कुछ रुककर बोला, "और पावलूशा, कल सांझ मैंने जो आवाज़ सुनी, वह क्या थी, तुम्हें शायद मालूम होगा..."

"क्या सुना तुमने?"

"बताता हूं कि क्या सुना। मैं कामेन्नाया ग्र्यादा पर से होकर शाश्किनो जा रहा था। पहले अखरोटों वाला जंगल पड़ा, और फिर एक छोटी-सी चरागाह के पास से मैं गुज़रा—तुम जानो, वहीं जहां खोह की तरफ़ रास्ता मुड़ता है—उस जगह, तुम जानो, पानी का एक गढ़ा है, नरकट के झाड़-झंखाड़ से लदा। हां तो, भाइयो, मैं इस गढ़े के पास

पहुंचा, और अचानक वहां से ऐसी आवाज़ आयी जैसे कोई कराह रहा हो, दु:खद आवाज़, बहुत ही दु:खद आवाज़ – ऊ-ऊ-ऊ, ऊ-ऊ-ऊ! डर के मारे मेरी सिट्टी-पिट्टी गुम, भाइयो। देर हो गयी थी, और आवाज़ इतनी दु:ख में डूबी थी कि ख़ुद मेरा हृदय रोने को हो आया... ओह, वह किसकी आवाज़ थी भला?"

"इसी जोहड़ में दो साल पहले की गर्मियों में चोरों ने जंगल के चौकीदार आकीम को डुबा दिया था," पावलूशा ने राय दी, "सो हो सकता है कि उसकी आत्मा बिलख रही हो।"

"हाय, भाइयो, क्या सचमुच?" अपनी आंखों से जो पहले ही काफ़ी गोल गोल थीं फाड़ फाड़कर देखते हुए कोस्त्या ने जवाब में कहा, "मुझे क्या पता कि उन्होंने आकीम को उस जोहड़ में डुबा दिया था! और अगर जानता होता तब भी क्या डर से मेरा पिंड छूट जाता!"

"लेकिन लोगों का कहना है कि ऐसे छोटे छोटे, नन्हे मेंढ़क भी हैं," पावलूशा कहता गया, "और वे इसी भांति रोते हैं जैसे विलाप कर रहे हों।"

"मेंढ़क? ओह नहीं, वे मेंढ़क नहीं थे, क़तई नहीं थे।" (नदी के ऊपर बगुले की आवाज़ फिर सुनाई दी।) "उफ़, फिर वही!" बरबस कोस्त्या के मुंह से निकला, "जैसे जंगल का देव चीख़ रहा हो।"

"जंगल का देव गूंगा होता है, वह चीख़ता नहीं," इल्यूशा ने कहा, "वह केवल हाथों से तालियां बजाता और खड़खड़ करता है।"

"तो यह कहो कि तुमने उसे, जंगल के देव को, देखा है, क्यों?" फ़ेद्या ने चुटकी लेते हुए उससे पूछा।

"नहीं, मैंने उसे नहीं देखा, और ख़ुदा कभी उसे न दिखाये, लेकिन औरों ने देखा है। और सच, कई दिन पहले हमारे उधर एक किसान को उसने ख़ूब भटकाया, उसे जंगल में से ले जाते हुए, एक क्षेत्र में ले गये जहां पर वह चक्कर काटता रहा... बड़ी मुश्किल दिन चढ़े घर जाकर पहुंचा।"

"तो क्या उसने उसे देखा?"

"हां। उसका कहना है कि वह बड़ा, बहुत बड़ा जीव है, अंधियाला, बिना साफ़ आकार के, जैसे वह किसी पेड़ के पीछे खड़ा हो, और पता न चले कि वह कैसा-क्या है। वह चांद से मुंह छिपाता मालूम होता था, और अपनी बड़ी बड़ी आंखों से घूर रहा था, बस घूरे जा रहा था, और उन्हें मिचमिचा रहा था, मिचमिचा रहा था..."

"अख़!" थोड़ा कांपते और अपने कंधों को बिचकाते हुए फ़ेद्या ने दुतकारा, "कम्बख़्त!"

"ऐसे नालायक़ जीवों का बोझ यह धरती कैसे संभालती है," पावलूशा ने कहा, "देखकर ताज्जुब होता है!"

"उसकी बुराई मुंह से न निकालो। कहीं ऐसा न हो कि वह सुन ले!" इल्यूशा ने चेताया।

इसके बाद फिर सब चुप हो रहे।

"अरे देखो, देखो, भाइयो!" अचानक वान्या की बच्चों जैसी आवाज़ सुनाई दी, "भगवान के इन सितारों, नन्हे नन्हे सितारों को तो देखो, जैसे मधुमक्खियों का छत्ता हो!"

चटाई के भीतर से उसने अपना नन्हा प्रफुल्ल मुंह बाहर निकाला, अपनी नन्ही मुट्ठियों को ज़मीन पर टिकाया और धीरे धीरे उसकी बड़ी बड़ी मृदु आंखें ऊपर की ओर उठ गयीं। अन्य सबकी आंखें भी आकाश की ओर उठी थीं, और वे जल्दी वहां से नहीं हटीं।

"हां, तो वान्या," फ़ेद्या ने दुलार से कहना शुरू किया, "तुम्हारी बहिन आन्यूत्का तो ठीक है?"

"हां, ठीक है, बहुत ठीक," थोड़ा तुतलाते हुए वान्या ने जवाब दिया।

"उससे पूछना, वह हमें मिलने क्यों नहीं आती?"

"मुझे पता नहीं।"

"उससे आने के लिए कहना तो।"

"अच्छा।"

"कहना कि उसके लिए मैंने मिठाई रख छोड़ी है।"

"और मेरे लिए भी, क्यों?"

"हां, तुम्हारे लिए भी।"

वान्या ने एक उसास भरी।

"नहीं, मुझे नहीं चाहिए। उसे ही दे देना। वह बड़ी नेकदिल है।"

और वान्या ने अपना सिर फिर धरती पर टिका दिया। पावलूशा खड़ा हो गया और ख़ाली हंडिया को उसने अपने हाथ में उठा लिया।

"कहां जा रहे हो?" फ़ेद्या ने उससे पूछा।

"नदी पर, पानी लेने। प्यास लगी है।"

कुत्ते भी उठकर उसके साथ चल दिये।

"देखो, नदी में गिर न पड़ना!" इल्यूशा ने पीछे से चिल्लाकर चेताया।

"नदी में क्यों गिर पड़ेगा?" फ़ेद्या ने कहा, "वह चौकस रहेगा।"

"छिः, चौकस रहेगा! लेकिन क्या भरोसा, कुछ हो जाय। हो सकता है कि वह झुके, पानी लेने के लिए, और पानी का भूत उसका हाथ झटककर उसे पानी में खींच ले जाय। लोगों का क्या, वे कहेंगे, 'वह पानी में गिर पड़ा...' पानी में गिर पड़ा, क्या ख़ूब! ओह देखो, वह अब नरकटों में से जा रहा है।" सुनते हुए उसने अन्त में कहा।

और सचमुच, जैसा कि हमारे यहां कहते हैं, नरकटों से शिश की आवाज़ आती थी, जब उन्हें अग़ल-बग़ल हटाया जाता था।

"लेकिन क्या यह सच है," कोस्त्या ने पूछा, "कि आकुलीना उस दिन से पागल हुई है जब वह पानी में गिरी थी?"

"हां, तभी से... कितनी भयावनी लगती है अब यह! लेकिन कहते हैं कि पहले वह बड़ी सुन्दर थी। पानी के भूत ने उसपर टोना कर

दिया। शायद उसे उम्मीद नहीं थी कि लोग उसे इतनी जल्दी बाहर निकाल लेंगे। सो उसने वहां, नीचे गहराई में, उसपर टोना कर दिया।" (इस आकुलीना को मैं एक से अधिक बार देख चुका था। चिथड़ों में लिपटी, बेहद पतली, चेहरा कोयले की तरह काला, पनीली आंखें और हर घड़ी बत्तीसी निकाले, सड़क पर घंटों एक ही जगह खड़ी रहती, अपने पांवों को पटकती, हाड़-से हाथों को छाती पर चिपका लेती, और पिंजरे में बंद जंगली जन्तु की भांति धीरे-से एक पांव का बोझ दूसरे पर बदल कर डालती। वह कुछ न समझ पाती कि उससे क्या कहा जा रहा है, केवल रह रहकर बरबस निःशब्द हंसी में गिलगिला उठती।)

"लेकिन लोगों का कहना है कि आकुलीना को," कोस्त्या कहता गया, "उसके प्रेमी ने धोखा दिया था, उसके बाद वह ख़ुद पानी में कूद पड़ी थी।"

"हां, हुआ तो ऐसा ही।"

"और तुम्हें वास्या की भी याद है?" उदास भाव से कोस्त्या ने कहा।

"कौन वास्या?" फ़्द्या ने पूछा।

"अरे वही जो इसी नदी में डूब गया था," कोस्त्या ने जवाब दिया, "ओह, कैसा लड़का था, बहुत ही बढ़िया! और उसकी मां फ़ेक्लीस्ता, वह उसे—अपने वास्या को—कितना प्यार करती थी! और लगता है जैसे उसे पहले से ही इसका भास हो। सच, फ़ेक्लीस्ता को मालूम था कि पानी से उसपर मुसीबत आयेगी। गर्मियों में अन्य लड़कों के साथ जब कभी वास्या नदी पर नहाने जाता था तो वह ऊपर से नीचे तक कांप उठती थी। अन्य स्त्रियों को कोई परवाह नहीं होती थी। अपने कपड़े धोने के तश्त लिये वे उधर से निकलतीं और आगे बढ़ जातीं, लेकिन फ़ेक्लीस्ता अपने कपड़े धोने के तश्त ज़मीन पर टिका देती और उसे आवाज़ें देने लगती, 'लौट आओ, लौट आओ मेरे मुन्ने! लौट

आओ, मेरे राजा मुनुवा!' और कोई नहीं जानता कि वह डूबा कैसे। वह तट पर खेल रहा था, और उसकी मां वहीं सूखी घास बटोर रही थी। तभी अचानक उसने सुना जैसे पानी में कोई बुलबुले छोड़ रहा हो, और देखा तो केवल वास्या की नन्ही टोपी पानी की सतह पर नज़र आ रही थी। तुम जानो, फ़ेक्लीस्ता का दिमाग़ तभी से सनका है। जिस जगह वह डूबा था, वहां जाकर वह धरती पर लोट जाती है, वह धरती पर लोट जाती है, भाइयो, और एक गीत गाती है–तुम्हें याद होगा, भाइयो, कि वास्या हर घड़ी वैसा ही गीत गाता था, रोती है, कलपती है, और भगवान को अपना दुःख सुनाती है..."

"वह देखो, पावलूशा आ रहा है," फ़ेद्या ने कहा।

पावलूशा हाथ में पानी से ऊपर तक भरी हंडिया थामे अलाव के पास आ गया।

"साथियो," क्षण-भर चुप रहने के बाद उसने कहना शुरू किया, "बुरा हुआ।"

"सो क्या?" कोस्त्या ने उतावली में पूछा।

"मैंने वास्या की आवाज़ सुनी है।"

जैसे सब सिहर उठे।

"यह क्या कहते हो? क्या कहते हो?" कोस्त्या हकलाते हुए बोला।

"मैं नहीं जानता। मैं पानी के लिए केवल झुका ही था कि अचानक वास्या की आवाज़ मैंने सुनी, वह मेरा नाम पुकार रहा था। आवाज़ पानी के नीचे से आ रही मालूम होती थी, 'पावलूशा, पावलूशा, यहां आओ।' जैसे-तैसे पानी लेकर मैं लौटा।"

"ओह, प्रभु हम पर दया करे!" क्रॉस का निशान बनाते हुए लड़कों ने कहा।

"वह पानी का भूत था जो तुम्हें बुला रहा था, पावलूशा," फ़ेद्या ने कहा, "हम अभी वास्या की ही बात कर रहे थे।"

"ओह, यह बुरा शगुन है," इल्यूशा ने निश्चयात्मक अन्दाज़ में कहा।

"हुआ करे, कोई चिन्ता नहीं," पावलूशा ने दृढ़ता से कहा और फिर धरती पर जम गया, "भाग्य में जो होगा, सो होकर रहेगा।"

लड़के थिर थे। साफ़ मालूम होता था कि पावलूशा के शब्दों ने उनपर गहरा असर डाला है। वे आग के सामने पसरने लगे, मानो सोने की तैयारी कर रहे हों।

"अरे यह क्या?" अचानक अपना सिर उठाते हुए कोस्त्या ने पूछा।

पावलूशा ध्यान से सुनने लगा।

"ये करल्यु-पक्षी हैं जो सीटी बजाते उड़े जा रहे हैं।"

"ये कहां उड़े जा रहे हैं?"

"ऐसे देश की ओर जहां, कहते हैं, कभी जाड़ा नहीं पड़ता।"

"क्या ऐसा देश भी है?"

"हां, हां।"

"क्या यहां से बहुत दूर है?"

"हां, बहुत बहुत दूर, सात समुन्दर पार।"

कोस्त्या ने एक सांस भरी और अपनी आंखें मूंद लीं।

लड़कों के साथ सम्पर्क में आये मुझे तीन से भी ज्यादा घंटे हो गये थे। आख़िर चांद निकल आया था। बिल्कुल महीन फांक की भांति। शुरू शुरू में उसकी ओर मेरा ध्यान तक नहीं गया। चांद-विहीन रात मानो अब भी उतनी ही धीर-गम्भीर और निस्तब्ध थी जितनी कि पहले... लेकिन तारक-दल, थोड़ी ही देर पहले जो आकाश की ऊंचाइयों में टिमटिमा रहे थे, अब धरती की काली कोर पर उतर आये थे। चारों

ओर की हर चीज़ पूर्णतया थिर थी, उतनी ही थिर जितनी कि वह केवल पौ फटने से पहले हुआ करती है। हर चीज़ नींद में डूबी थी, गहरी अटूट नींद में, जो अंधेरा छंटने से पहले आती है। वायु में छायी गंध पतली पड़ चली थी, और ऐसा मालूम होता था जैसे ओस फिर गिरने लगी हो... गर्मियों की रातें कितनी छोटी होती हैं! अलाव की आग के साथ साथ लड़कों की बातें भी शान्त पड़ गयी थीं। कुत्ते तक ऊंघने लगे थे। घोड़े भी, अस्पष्ट तारों की धुंधली रोशनी में जहां तक मैं भांप सका, सिर लटकाये सो रहे थे... अलस बेसुधी ने मुझे घेर लिया और उसी में पड़े पड़े मुझे नींद आ गयी।

ताज़ी हवा का एक झोंका मेरे चेहरे को सरसराता हुआ निकल गया। मैंने अपनी आंखें खोलीं। सबेरा शुरू हो रहा था। ऊषा की लाली ने अभी आकाश में रंग नहीं भरे थे, लेकिन पूरब में उजाला बढ़ रहा था। चारों ओर की हर चीज़ अब नज़र आने लगी थी, हालांकि धुंधलापन अभी दूर नहीं हुआ था। पीला-भूरा आकाश उजला होता जा रहा था, सर्द और नीला। तारे अब धीमी रोशनी में टिमटिमा रहे थे, या ओझल हो गये थे। धरती भीगी थी, पत्तों पर ओस छायी थी, कहीं दूर से ज़िन्दगी की और लोगों के बोलने की आवाज़ें आने लगी थीं, और सुबह की हल्की हवा फरफराती हुई धरती के ऊपर से बह रही थी। मेरे बदन में खुशी की एक हल्की सिहरन-सी दौड़ गयी। मैं जल्दी से उठा और लड़कों के पास गया। वे सब सो रहे थे, बुझते हुए अलाव के इर्द-गिर्द, जैसे थककर एकदम चूर। केवल पावलूशा आधा उठा और नज़र जमाकर मेरी ओर देखने लगा।

सिर झुकाकर मैंने उससे विदा ली और नदी के किनारे किनारे घर की ओर चल दिया। अभी दो मील चला हूंगा कि चारों ओर, ओस से भीगे घास के प्रशस्त हरे मैदानों के ऊपर, और सामने एक के बाद एक जंगलों की श्रृंखला के बाद जहां पहाड़ियां फिर हरी भरी दिखने लगी

थीं, और पीछे लम्बी धूल भरी कच्ची सड़क तथा झिलमिलाती झाड़ियों के ऊपर जो लाल आभा से दमक रही थीं, और नदी की हल्की नीलिमा के ऊपर जिसकी धुंध अब छंटती जा रही थी, ताज़े आलोक के झरने छलछला रहे थे। शुरू में गुलाबी, फिर लाल और फिर सुनहरी आभा... हर चीज़ स्पन्दित हो रही थी, जाग रही थी, गा रही थी, फरफरा रही थी, बोल रही थी। चारों ओर घनी ओस की बूंदें हीरों की भांति चमचमा रही थीं। घंटी के स्वर साफ़-सुथरे और निश्चल, सुबह के निखार की भांति, स्वच्छ, मानो मेरा अभिवादन करते हवा में तैर रहे थे। और तभी, अचानक, तेज़ गति से, घोड़ों का रेवड़ मेरे पास से गुज़र गया, ताज़ादम और थकान से मुक्त। रेवड़ को वही लड़के हांक रहे थे जिन्हें मैं पीछे छोड़ आया था...

और अन्त में दुःख के साथ कहना पड़ता है कि उसी साल पावलूशा का अन्त हो गया। वह डूबकर नहीं, बल्कि घोड़े से गिरकर मरा। हृदय कसक उठता है—ओह कितना शानदार लड़का था वह!

क्रसीवया मेच्च का निवासी कास्यान

धचकोले खाती एक छोटी-सी टमटमिया में मैं शिकार पर से लौट रहा था। गर्मियों के दिन थे और आकाश में छाये बादलों के कारण दमघोट ऊमस थी (यह सभी जानते हैं कि उजले दिनों की अपेक्षा, ऐसे दिनों में गर्मी बहुधा अधिक असह्य होती है, ख़ास तौर पर उस समय जब हवा बंद हो)। गर्मी से अभिभूत मैं ऊंघ रहा था और धचकोले खा रहा था। टेढ़े-मेढ़े और चरचर करते पहिए सड़क पीट रहे थे और सफ़ेद धूल के कण निरन्तर उड़ा रहे थे। कोई चारा न देख विक्षोभ के साथ मैं यह सब अत्याचार सह रहा था। तभी, अचानक, अपने कोचवान की ग़ैरमामूल बेचैनी और झुंझलाहट ने मेरा ध्यान खींचा। घड़ी-भर पहले तक वह मुझसे भी ज़्यादा निश्चिन्तता के साथ ऊंघ रहा था। लेकिन अब वह रासों को झटक रहा था, अपनी गद्दी पर बेचैनी के साथ करवटें ले रहा था, और एक ही दिशा में आंखें जमाये घोड़ों पर बरस रहा था। मैंने भी उसी तरफ़ नज़र की। हम एक चौड़े जोते हुए मैदान में से गुज़र रहे थे। नीची पहाड़ियां—उसी भांति जोती हुई—हल्के ढलुवानों के रूप में लहराती-उभरती चली गयी थीं। चार मील दूर तक का इलाक़ा वीरान पड़ा था। दूर क्षितिज की क़रीब क़रीब सीधी रेखा की एकरसता को केवल बर्च-वृक्षों के छोटे झुरमुटों की गोल लट्टूनुमा चोटियां भंग करती थीं। सकरी पगडंडियां खेतों में फैली थीं, तलहटियों में ओझल हो गयी थीं; और पहाड़ी टीलों का चक्कर लगाती चली गयी थीं। इनमें से एक

पगडंडी पर, जो पांच-एक सौ डग आगे हमारी सड़क से आ मिली थी, मुझे एक जलूस-सा आता दिखाई दिया। मेरा कोचवान इसी की ओर ताक रहा था।

यह मातमी जलूस था—आगे, एक गाड़ी में जिसमें एक घोड़ा जुता था और जो धीमी पैदल चाल से आ रही थी, पादरी सवार था। उसकी बग़ल में डीकन बैठा गाड़ी को हांक रहा था। गाड़ी के पीछे चार किसान थे, उघड़े सिर। वे सफ़ेद कपड़े से ढका ताबूत उठाये थे। दो स्त्रियां ताबूत के पीछे पीछे आ रही थीं। उनमें से एक के विलाप की तीक्ष्ण आवाज़ अचानक मेरे कानों में पड़ी। मैं ध्यान से सुनने लगा। वह स्यापा कर रही थी। स्यापे की एकरस, अत्यधिक शोकपूर्ण ध्वनि सूने खेतों में बहुत ही उदास मालूम हो रही थी। कोचवान ने चाबुक फटकारा, वह इस शवयात्रा से आगे निकल जाना चाहता था। रास्ते में शव का मिलना बुरा शगुन है। और इससे पहले कि मातमी जलूस पगडंडी ख़त्म कर बड़ी सड़क पर आता, वह तेज़ी से आगे निकल गया। लेकिन उस जगह से जहां पगडंडी सड़क से आकर मिलती है, हम मुश्किल से सौ-एक डग ही आगे बढ़े होंगे कि अचानक हमारी टमटम ने बुरी तरह धचकोला खाया, एक बाज़ू ढुलक गया, बस यह कहो कि उलटते उलटते बचा। कोचवान ने तेज़ी से दौड़ते घोड़ों की रास खींची, और हवा में बाज़ू हिलाते हुए थूका।

"क्या हुआ?" मैंने पूछा।

मेरा कोचवान बिना कुछ बोले या कोई उतावली दिखाये नीचे उतर आया।

"लेकिन हुआ क्या है?"

"धुरी टूट गयी है... जल गयी है," उसने निराशा से जवाब दिया, और बाज़ूवाले घोड़े का पट्टा अचानक इतनी झुंझलाहट के साथ सीधा किया कि घोड़ा लड़खड़ाते लड़खड़ाते बचा। उसने अपने नथुने

फरफराये, बदन झटका और शान्ति के साथ अपने टखने को दांतों से खुजलाने लगा।

मैं गाड़ी से उतर पड़ा और कुछ देर सड़क पर खड़ा रहा। मैं बेचैन हो रहा था। दाहिना पहिया गाड़ी के नीचे जाकर एकदम दोहरा हो गया था और उसकी कीली, मूक निराशा की मुद्रा में, ऊपर की ओर उठी थी।

"अब क्या किया जाय?" अन्त में मैंने पूछा।

"यह सब उसकी करतूत है," अपने चाबुक से मातमी जलूस की ओर इशारा करते हुए मेरे कोचवान ने कहा जो अभी अभी पगडंडी से सड़क पर आ गया था और हमारी ओर बढ़ रहा था। "मैंने हमेशा यही देखा है," वह कहता गया, "रास्ते में मुर्दे का मिलना... सच, पक्का अपशकुन समझो!"

और उसने फिर बाजूवाले घोड़े को तंग करना शुरू कर दिया। घोड़े ने जैसे उसकी झुंझलाहट को समझ पूर्णतया शान्त रहने का निश्चय कर लिया था और कभी कभी विनम्रता से अपनी दुम हिलाने के सिवा और कोई हरकत नहीं कर रहा था। कुछ देर तक तो मैं इधर से उधर टहलता रहा, और उसके बाद फिर पहिए के सामने आकर खड़ा हो गया।

इसी बीच मातमी जलूस हमारे पास आ गया था। चुपचाप सड़क छोड़कर घास पर से होता हुआ मातमी जलूस धीमी गति से आगे बढ़ गया। कोचवान और मैंने अपनी टोपियां उतारीं, पादरी को सिर नवाया और शव-वाहकों के साथ आंखों ही आंखों में संवेदन प्रकट किया। बोझ भारी मालूम होता था, वे मुश्किल से उसे ले जा रहे थे, दबाव के मारे उनकी चौड़ी छातियां उभर आयी थीं। ताबूत के पीछेवाली दो स्त्रियों में से एक बहुत बूढ़ी और पीली थी। उसका स्थिर चेहरा, शोक से बुरी तरह विकृत, गम्भीर और कड़ी गरिमा के अपने भाव को अभी भी क़ायम रखे था। वह चुपचाप चल रही थी, रह रहकर अपने क्षीण हाथ को

उठाती थी और पतले खिंचे हुए होंठों तक ले जाती थी। दूसरी, पचीस-एक वर्ष की युवा स्त्री थी। उसकी आंखें गीली और लाल थीं, और उसका सारा मुंह रोते रोते सूज गया था। हमारे पास से गुज़रते समय उसने स्यापा बंद कर दिया और आस्तीन से अपना चेहरा छिपा लिया... लेकिन मातमी जलूस गाड़ी के पास से घूमकर जब फिर सड़क पर चलने लगा तो उसका दुःखजनक, हृदयवेधी विलाप फिर शुरू हो गया। कोचवान की आंखें, खामोशी के साथ,, समगति से झकोरे खाते ताबूत को जाते देखती रहीं। इसके बाद वह मेरी ओर मुड़ा।

"यह मार्तीन बढ़ई का जनाज़ा था," उसने कहा, "र्याबाया गांव का रहनेवाला मार्तीन।"

"तुमने कैसे जाना ?"

"इन स्त्रियों को देखकर। बूढ़ी उसकी मां है, और युवा उसकी घरवाली।"

"तो क्या वह बीमार था?"

"हां... बुखार आया था। परसों ओवरसीयर ने डाक्टर को बुलाने आदमी भेजा था, लेकिन डाक्टर घर पर नहीं मिला। वह बहुत बढ़िया बढ़ई था, थोड़ा पीता ज़रूर था, लेकिन कारीगर अच्छा था। देखो न, उसकी घरवाली कैसे बिलख रही थी... लेकिन छोड़ो, आप जानो, औरतों के आंसुओं का क्या मूल्य... निरा पानी होता है... सच, निरा पानी!"

और वह नीचे झुककर, बाजूवाले घोड़े के साज़ के तले रेंग गया और दोनों हाथों से लकड़ी के जुए को कब्ज़े में किया जो घोड़ों के सिर पर से गुज़रता है।

"जो हो," मैंने कहा, "अब क्या किया जाय?"

कोचवान ने अपना घुटना बीचवाले घोड़े के कूल्हे के साथ टिकाया, जुए को दोबारा झटका और गद्दी को सीधा किया। इसके बाद वह

बाजूवाले घोड़े की जोत के नीचे से फिर बाहर रेंग आया और बराबर में से गुज़रते समय उसकी थूथनी पर घूंसा मारते हुए पहिए के पास पहुंचा। वह पहिए के निकट गया और, एक घड़ी के लिए भी उसे अपनी नज़र से ओझल न करते हुए अपने लम्बे कोट के पल्ले में से धीरे से उसने एक डिबिया निकाली, पट्टे की मदद से धीरे से उसका ढक्कन खोला, धीरे से उसमें अपनी दो मोटी उंगलियां डालीं (जो डिबिया में बड़ी मुश्किल से घुस पायीं), चुटकी में सुंघनी पकड़ने के लिए देर तक अपनी उंगलियों को हिलाता रहा और उसकी पूर्व-कल्पना में अपनी नाक को सिकोड़ा। इसके बाद लगातार कई बार उसने सुंघनी को सुड़का और हर बार कांखता रहा। फिर, अपनी पनीली आंखों को धीरे धीरे मिचमिचाते हुए, गहरे सोच में खो गया।

"हां तो?" अन्त में मैंने कहा।

कोचवान ने सावधानी के साथ डिबिया को अपनी जेब के हवाले किया, हाथ का सहारा लिये बिना केवल सिर झटकाकर अपनी टोपी को नीचे भौंहों तक ले आया और विचारशील मुद्रा में अपनी गद्दी पर जा बैठा।

"अरे यह क्या?" कुछ हैरान होकर मैंने उससे पूछा।

"कृपा कर बैठ जाइये," रास संभालते हुए उसने शान्त भाव से कहा।

"लेकिन हम चल कैसे सकते हैं?"

"अब चले चलेंगे।"

"लेकिन धुरी?"

"किरपा कर बैठ जाइये।"

"लेकिन धुरी टूटी है न?"

"हां टूटी है... लेकिन हम बस्ती तक पहुंच जायेंगे... धीरे धीरे। वहां उधर, झुरमुट से परे, दाहिनी ओर एक बस्ती है। यूदिनो नाम की।"

"तो तुम्हारी समझ में क्या हम वहां तक पहुंच सकते हैं?"

कोचवान ने मेरी ओर कोई ध्यान नहीं दिया।

"मै तो पैदल चलना पसंद करूंगा," मैंने कहा।

"जैसी आपकी इच्छा ..."

उसने अपना चाबुक फहराया, और घोड़े चल पड़े।

आख़िर हम सही-सलामत बस्ती में पहुंच गये, हालांकि आगे का दाहिना पहिया क़रीब क़रीब अलग हो गया था और अजीब ढंग से चक्कर काट रहा था। एक ढलुवान पर तो वह अलग ही जा गिरा होता, लेकिन कोचवान भन्नाकर चिल्लाया, और हम ख़ैरियत के साथ नीचे पहुंच गये।

यूदिनो बस्ती में छः छोटी छोटी नीची झोंपड़ियां थीं। उनकी दीवारें अभी से टेढ़ी होने लगी थीं, हालांकि उन्हें बने कुछ ज़्यादा दिन नहीं हुए थे। कुछ के सहनों में बेंत के बाड़े तक नहीं थे। बस्ती में प्रवेश करते समय एक भी जीवित प्राणी हमने नहीं देखा। गली में मुर्ग़ियां तक नहीं दिखाई दीं, कुत्ते भी वहां नजर नहीं आये, सिवा एक काले डुंडी दुमवाले लंडूरे के। हमारी आहट पाते ही वह एकदम सूखी तथा ख़ाली तश्त में से उछलकर बाहर निकला—निश्चय ही प्यास बुझाने के लिए वह वहां गया होगा—और फ़ौरन, बिना भौंके, भागकर एक फाटक के नीचे से अन्दर चला गया। मैं पहली झोंपड़ी की ओर बढ़ा, बाहरी कोठे का दरवाज़ा खोला और झोंपड़ी के मालिक को आवाज़ दी। जवाब में कोई नहीं बोला। मैंने एक बार फिर आवाज़ दी। दूसरे दरवाज़े के पीछे किसी बिल्ली की भूखी म्याऊं सुनाई दी। पांव से धकेलकर मैंने दरवाज़ा खोल डाला। पास ही एक सूखी-सड़ी बिल्ली मेरे सामने से भागकर निकल गयी और उसकी हरी आंखें अंधेरे में चमक रही थीं। मैंने कमरे में झांककर देखा— कमरा अन्धेरा और ख़ाली था, और धुएं से भरा। पलटकर मैं सहन में आ गया, वहां भी कोई नहीं था... बाड़े के पीछे एक बछड़ा

रंभा उठा, भूरे रंग का एक लंगड़ा कलहंस एक तरफ़ हो गया। मैं दूसरी झोंपड़ी की ओर बढ़ा। यहां भी कोई नहीं था। मैं सहन में दाखिल हुआ...

सहन के ठीक बीचोंबीच, चौंधियाती धूप में मुंह को धरती से चिपकाये और सिर को लबादे से ढके, एक लड़का लेटा हुआ था। ऐसा ही मुझे जान पड़ा। उससे कुछ डग दूर, भूसे के छप्पर के नीचे, एक मरियल-सा नाटा घोड़ा, जिसका साज़ चिथड़ा हो गया था, टूटी-फूटी-सी एक छोटी गाड़ी के पास खड़ा था। खस्ताहाल छप्पर की सकरी दराज़ों में से छनकर आती सूरज की किरनें घोड़े के छितरे कत्थई रंग के बदन पर धारियां और रोशनी के छोटे छोटे चित्ते डाल रही थीं। ऊपर, ऊंचे चलकर, चिड़ियाखाने में स्टारलिंग-पक्षी चह्चहा रहे थे और अपने हवादार घर में से कुतूहल से नीचे की ओर झांक रहे थे। मै उस सोते हुए जीव की ओर बढ़ा और उसे जगाने की कोशिश करने लगा।

उसने अपना सिर उठाया, मेरी ओर देखा, और एकदम खड़ा हो गया... "क्यों? क्या चाहिए? क्या हुआ?" उनींदा-सा वह बुदबुदाया।

उसे मैं तुरंत कोई जवाब नहीं दे सका। उसकी शकल-सूरत ने मुझे कुछ इतना अभिभूत कर दिया था।

ज़रा कल्पना कीजिये—पचास वर्ष का एक टुइयां-सा बौना, छोटा-सा झुर्रियोंदार गोल सांवला चेहरा, पैनी नाक, छोटी छोटी भूरे रंग की मुश्किल से दिखाई पड़नेवाली आंखें, और काले रंग के घने घुंघराले बाल, जो उसके छोटे-से सिर पर इस प्रकार खड़े थे जैसे कुकुरमुत्ते की टोपी। उसका समूचा ढांचा अत्यन्त क्षीण और कमज़ोर था, और उसके चेहरे का भाव कुछ इतना असाधारण और अजीब था कि उसे शब्दों में व्यक्त करना एकदम असम्भव है।

"क्यों, क्या चाहिए?" उसने फिर पूछा।

मैंने उसके सामने स्थिति स्पष्ट की। धीरे धीरे आंखों को मिचमिचाते और बराबर मेरी ओर देखते हुए वह सुनता रहा।

"सो क्या हमें नयी धुरी नहीं मिल सकती?" अपनी बात खत्म करते हुए मैंने कहा, "हम उसका दाम देने को तैयार हैं।"

"लेकिन तुम हो कौन? शिकारी हो क्या?" ऊपर से नीचे तक मुझे अपनी नज़र से छानते हुए उसने कहा।

"शिकारी।"

"सो तुम भगवान के पंछियों को गोली से मारते हो, क्यों? और जंगल के जीवों को? खुदा के इन जीवों को मारना, नाहक़ खून बहाना, क्या पाप नहीं है?"

वह विचित्र आदमी अपने स्वर को खूब खींचकर बोल रहा था। उसकी आवाज़ की ध्वनि भी विचित्र थी। वृद्धावस्था की क्षीणता का उसमें ज़रा भी आभास नहीं था। वह अद्भुत रूप में मीठी, तरुण और लगभग स्त्रियों के कंठ सी कोमल मालूम होती थी।

"मेरे पास धुरी-वुरी कुछ नहीं है," थोड़ा रुककर उसने कहा। फिर अपनी गाड़ी की ओर इशारा करते हुए बोला—"उससे तुम्हारा काम नहीं चलेगा। तुम्हारी बग्घी, मैं समझता हूं, बड़ी होगी।"

"लेकिन गांव में तो मिल जायेगी न?"

"यह भी कोई गांवों में गांव है! न, यहां धुरी किसी के पास नहीं मिलेगी ... और लोग घरों में नहीं हैं। सब काम पर गये हैं। सो आगे का रास्ता पकड़ो," अचानक उसने ऐलान किया, और फिर धरती पर पसर गया।

बातचीत का इस प्रकार अन्त होगा, इसके लिए मैं क़तई तैयार नहीं था।

"सुनो तो, बूढ़े बाबा," उसके कंधे पर हाथ रखते हुए मैंने कहा, "इतने कठोर न बनो, थोड़ी मदद करो।"

"बस अपना रास्ता देखो, मेरी जान छोड़ो। मैं थका हूं। शहर गया था," उसने कहा और अपना लबादा सिर के ऊपर खींच लिया।

"ख़ुदा के लिए मेहरबानी करो," मने कहा, "मैं... मैं पैसे देने को तैयार हूं।"

"नहीं, मुझे तुम्हारे पैसे-वैसे कुछ नहीं चाहिए।"

"लेकिन, बूढ़े बाबा, मेहरबानी करो..."

उसने अपने बदन को आधा उठाया और अपनी पतली पतली टांगों को एक दूसरे के ऊपर रखकर बैठ गया।

"शायद वहां ले जाने से तुम्हारा काम बन जाय—जहां जंगल में खुली जगह है। कुछ सौदागरों ने वहां जंगल ख़रीदा है—ख़ुदा उनका इनसाफ़ करे। वे उसे काट रहे हैं—ख़ुदा उनका न्याय करे—और एक खाताघर उन्होंने वहां बनवाया है। उनसे तुम अपनी धुरी बनवा सकते हो, या नयी ख़रीद सकते हो।"

"बहुत ख़ूब!" मैं बेहद खुश हो उठा, "बहुत ख़ूब! तो चलो, वहीं चलें।"

"बलूत की लकड़ी की धुरी, बहुत बढ़िया होगी," अपनी जगह पर बैठे ही बैठे वह कहता गया।

"और क्या वह जगह दूर है?"

"दो मील होगी।"

"तो फिर चलो। तुम्हारी गाड़ी में वहां तक चल सकते हैं।"

"ओह, नहीं..."

"अरे चलो भी," मैंने कहा, "चलो, बूढ़े बाबा, चलो। कोचवान सड़क पर हमारी बाट में खड़ा है।"

बूढ़ा अनमना-सा उठा और मेरे पीछे पीछे सड़क पर निकल आया। कोचवान का पारा चढ़ा हुआ था। उसने अपने घोड़ों को पानी पिलाने की कोशिश की थी, लेकिन मालूम हुआ कि पानी कुवें में कम था और उसका ज़ायक़ा भी अच्छा नहीं था, और पानी ऐसी चीज़ है जिसकी अच्छाई का कोचवान सबसे पहले ध्यान रखते हैं... फिर भी, बुढ़ऊ को देखते

ही, वह मुस्कराया और अपना सिर हिलाते हुए बोला – "अरे, कास्यान, मज़े में तो हो?"

"और तुम, येरोफ़ेई, तुम भी तो मज़े में हो न, भले आदमी!" कास्यान ने उदास-सी आवाज़ में कहा।

कोचवान को उसके सुझाव से मैंने तुरंत परिचित करा दिया। यरोफ़ेई ने सुझाव का समर्थन किया और गाड़ी को हम अहाते में ले गये। कोचवान जान बूझकर तेज़ी से घोड़ों को खोलने में जुट गया और वृद्ध, फाटक के सहारे अपने कंधों को टिकाये, बेचैन-सा पहले कोचवान की ओर और फिर मेरी ओर देखने लगा। ऐसा मालूम होता था जैसे उसका मस्तिष्क दुविधा में पड़ गया हो। मुझे लगा हमारे अचानक आ जाने से वह कुछ खुश नहीं था।

"सो उन्होंने तुम्हें भी यहां ला पटका है, क्यों?" लकड़ी के जुवे को उठाते हुए येरोफ़ेई ने अचानक पूछा।

"हां।"

"उफ़!" मेरे कोचवान ने दांतों को भींचते हुए कहा, "मार्तीन बढ़ई को तो तुम जानते हो न ... अरे वही, र्याबाया का रहनेवाला मार्तीन?"

"हां।"

"हां तो वह मर गया। अभी रास्ते में उसकी अर्थी ले जा रहे थे।"

कास्यान कांप उठा।

"मर गया?" कहते हुए उसका सिर शोक से नीचे लटक गया।

"हां, वह मर गया। तुमने उसकी दवा-दारू नहीं की, क्यों? लोग कहते हैं, तुम दवा-दारू करते हो, हकीम हो।"

मेरा कोचवान, प्रत्यक्षतः, बुढ़ऊ से छेड़-छाड़ कर रहा था, उसका मज़ाक उड़ा रहा था।

"और यह बग्घी क्या तुम्हारी है?" कंधे बिचकाकर बग्घी की ओर इशारा करते हुए उसने फिर पूछा।

"हां।"

"ओह, यह बग्घी... वाह!" उसने दोहराया, और उसका बम पकड़ते हुए उसे इस तरह उठाया कि वह क़रीब क़रीब उलट गयी। "ऊंह, बग्घी ... लेकिन तुम इसे खुली जगह ले कैसे जाओगे? इसके बम हमारे घोड़ों को तो संभाल नहीं सकते। हमारे घोड़े इनके लिए बहुत बड़े हैं।"

"भगवान जाने," कास्यान ने जवाब दिया, "कैसे आप वहां पहुंचेंगे, शायद यह घोड़ा काम दे जाय!" उसास भरते हुए उसने कहा।

"ओह, यह!" येरोफ़ेई के मुंह से निकला और कास्यान के घोड़े के पास जाकर उपेक्षा से अपने दाहिने हाथ की मध्यमा उंगली उसकी ग्रीवा पर फेरने लगा। "देखो न," नाक सिकोड़ते हुए फिर उसने कहा, "यह तो ऊंघ रहा है, अकाल का मारा!"

मैंने येरोफ़ेई से कहा कि फ़ौरन उसे जोत ले। कास्यान के साथ मैं खुद गाड़ी में खुली जगह तक जाना चाहता था। ऐसी जगहों में ग्राउज़-पक्षी खूब मिलते हैं। छोटी गाड़ी के एकदम तैयार हो जाने पर मैं और मेरा कुत्ता बेंत के बने उसके ऐंड़े-बेंड़े ढांचे में जा बैठे, कास्यान गुड़मुड़ी-सा बना और चेहरे पर अभी भी वैसा ही उतरा हुआ भाव धारण किये अगले हिस्से में बैठ गया। तब येरोफ़ेई मेरे निकट आया और रहस्यमय अन्दाज़ में मेरे कान में फुसफुसाकर बोला—

"यह आपने अच्छा किया मालिक, जो खुद इसके साथ जा रहे हैं। यह बहुत ही अटपटा आदमी है। आप जानो, एकदम सनकी। लोगों ने इसका नाम पिस्सू रख छोड़ा है। पता नहीं, आप इसे कैसे समझ पाये ..."

मैंने येरोफ़ेई से कहना चाहा कि अब तक मुझे तो कास्यान काफ़ी समझदार आदमी मालूम दिया है, लेकिन मेरा कोचवान अपने उसी सुर में बराबर कहता गया—

"लेकिन इससे चौकस रहना। ऐसा न हो कि आपको कहीं और ले जाय। और मालिक, किरपा कर, धुरी भी ख़ुद अपनी पसंद की ही लेना; ऐसी जो खूब मज़बूत हो ... हां तो पिस्सू," उसने अब ऊंची आवाज़ में कहा, "तुम्हारे घर में पेट में डालने के लिए तो कुछ मिल जायेगा न?"

"देख लो, शायद कुछ मिल जाय," कास्यान ने जवाब दिया। इसके बाद उसने घोड़े की रास संभाली और हम चल पड़े।

उसके टुइयां-से घोड़े की चाल देखकर मैं सचमुच चकित रह गया। चलने में वह बुरा नहीं था। कास्यान ने मुंह बन्द रखने की जैसे हठ पकड़ ली थी। मैं कुछ पूछता तो बेमन से दो टूक जवाब देकर चुप हो जाता। जल्दी ही हम खुली जगह पहुंच गये, और खाताघर की ओर हमने रुख किया। छोटे-से नाले के ऊपर—जिसे बांध लगाकर जोहड़ बना लिया गया था—केवल एक ऊंची झोंपड़ी खड़ी थी। इस खाताघर में सौदागरों के दो युवा कारिन्दों से हमारी मुलाक़ात हुई। बर्फ़ की भांति सफ़ेद उनके दांत थे, मृदु और मधुर उनकी आंखें थीं, मधुर और तेज़ वे बोलते थे और मधुर तथा कुटिल मुसकान उनके चेहरों पर खेलती थी। मैंने उनसे धुरा ख़रीदा और खुली जगह की ओर चल पड़ा। मेरा ख़्याल था कि कास्यान घोड़े-गाड़ी के पास ही खड़ा मेरी राह देखेगा, लेकिन वह अचानक मेरी ओर चला आया।

"क्यों, आप पक्षियों का शिकार भी तो करना चाहते हैं न?" उसने पूछा।

"हां, अगर कोई चलते-चलाते मिल जाय।"

"तो मैं भी आपके साथ चलता हूं ... इजाज़त है न?"

अधिक ऊंचे नहीं हो पाये थे, अपने चिकने कोमल तनों से काले पड़े नाटे ठूंठों को घेरे थे, और भूरे कगारेवाले स्पंजनुमा फफूंद – वही जो आग जलाने के काम आते हैं – उनके साथ चिपके थे। स्ट्राबेरी के पौधों के गुलाबी लता-तंतु उनके ऊपर चढ़ आये थे, और कुकुरमुत्तों के घने समूह उनके निकट छावनी डाले थे। लम्बी घास में जो झुलसा देनेवाली धूप में चुरमुरा गयी थी, पांव रह रहकर उलझ और फंस जाते थे। चारों ओर पेड़ों के नये लाली-मायल पत्तों की चमक आंखों को कौंधिया रही थी। चारों ओर वैच के फूलों के नीले गुच्छे, ब्लूड-वर्ट की सुनहरी प्यालियां, दिलाराम के अर्द्ध-बेंगनी तथा अर्द्ध-पीले फूलों की बहार नज़र आती थी। वीरान पड़ी राहबाटों की उजली घास पर पहियों की लीक के निशान थे। इनके निकट हवा-पानी से काली पड़ी लकड़ियों के ढेर जमा थे। लकड़ियां गज़-भर की लम्बान में चुनी हुई थीं और उनकी धुंधली, आड़ी और आयताकार, परछाइयां पड़ रही थीं। इसके सिवा और कहीं छांह नज़र नहीं आती थी। हल्की हवा का झोंका उठता, और फिर दब जाता। अचानक वह सीधे मुंह से आकर टकराता, लगता जैसे वह उभारा लेने जा रहा है, चारों ओर की हर चीज़ ख़ुशी से सरसराने लगती, सिर हिलाने और झूमने लगती, फ़र्न के चपल सिरे नफ़ासत के साथ झुक जाते और हृदय ख़ुशी से लहरा उठता, लेकिन तुरंत ही वह फिर निःसत्व हो जाता और हर चीज एक बार फिर शान्त और थिर दिखाई देने लगती। केवल टिड्डियों का सहगान, अंध आवेग के साथ, जारी रहता, और उनके गाने की अनवरत, तीखी, रूखी ध्वनि बड़ी ऊबा देनेवाली मालूम होती, दोपहर की निरन्तर तपन से मेल खाती, जैसे उसी की कोई नातिन हो, जिसे वह स्वयं दहकती हुई धरती में से बाहर खींच लायी हो।

लवा-पक्षियों के एक भी दल से हमारा वास्ता नहीं पड़ा, और अन्त में हम एक अन्य खुली जगह में पहुंचे जहां पेड़ काट डाले गये थे। यहां एस्प-वृक्ष अभी हाल में ही काटे गये थे और वे उदास से धरती पर पड़े

थे। उनके नीचे की घास तथा छोटी झाड़ियां कचर गयी थीं। इनमें कुछ की पत्तियां अभी भीं हरी हरी थीं, हालांकि वे बेजान हो चुकी थीं और गतिशून्य टहनियों से बेदम-सी लटकी थीं। कुछ चुरमुराकर सूख गयी थीं। नमदार, उजले ठूंठों के इर्द-गिर्द ताज़ा सुनहरी-सफ़ेद खपच्चियों के ढेर पड़े थे। उनमें से एक विचित्र, सुहावनी और तेज़ गंध निकल रही थी। और भी आगे, जंगल के निकट, कुल्हाड़ी की चोटों की अस्पष्ट आवाज़ सुनाई दे रही थी और झाड़ीनुमा पेड़, माथा झुकाये और अपनी बांहों को लम्बा फैलाये, धीरे धीरे तथा शान के साथ जब-तब धरती पर गिरते नज़र आते थे।

काफ़ी देर तक कोई भी पक्षी दिखाई नहीं पड़ा। अन्त में बलूत-वृक्ष के नवजात घने झुरमुट में से जिससे चिरायते की बेलें लिपटी हुई थीं निकल एक कार्न-क्रैक-पक्षी उड़ चला। मैंने गोली दाग़ी। हवा में कलाबाजी खाता वह धरती पर आ गिरा। गोली दग़ने की आवाज़ होते ही कास्यान ने अपने हाथों से तुरंत आंखों को ढक लिया, और बन्दूक़ को फिर से भरने तथा पक्षी को उठाने तक वैसे ही सकते की हालत में निश्चल खड़ा रहा। मेरे आगे बढ़ने पर वह उस जगह पहुंचा जहां घायल पक्षी गिरा था, ख़ून के छींटे पड़ी घास के ऊपर झुककर उसने अपना सिर हिलाया, और हताश-सी मुद्रा में मेरी ओर देखा... बाद में उसकी फुसफुसाहट मुझे सुनाई दी – "पाप है... यह पाप है!"

गर्मी के मारे आख़िर हमें जंगल की शरण लेनी पड़ी। अखरोट की एक ऊंची झाड़ी के नीचे मैं पसर गया। झाड़ी के ऊपर मैपल का एक किशोर वृक्ष कमनीय अन्दाज़ में अपनी हल्की टहनियां फैलाये था। कास्यान गिरे हुए बर्च-वृक्ष के तने पर बैठ गया। मैंने उसकी ओर देखा। सिर पर पत्ते हल्के-से सरसरा रहे थे, और उनकी हरियाली झीनी परछाइयां काले कोट में ढके उसके क्षीण शरीर और उसके टुइयां-से चेहरे पर अछुवाई-सी इधर से उधर रेंग रही थीं। उसने अपना सिर नहीं उठाया। उसके मौन सन्नाटे

से उकताकर मैं फिर पीठ के बल लेट गया और उजले सुदूर आकाश की पृष्ठभूमि में एक-दूसरे से गुथी पत्तियों की शान्त थिरकन को मुग्ध भाव से देखने लगा। जंगल में पीठ के बल चित्त लेटकर आकाश की सैर करना भी कितना अद्भुत, कितना मधुर, मालूम होता है! लगता है जैसे अतल सागर में झांक रहे हों, जो नीचे दूर तक फैला है, पेड़ जैसे धरती में से उदित नहीं हुए हैं, बल्कि भीमाकार सरकंडों की जड़ों की भांति उन स्वच्छ गहराइयों में डूबते सीधे समाते चले गये हैं। पेड़ों के पत्ते किसी किसी वक़्त ऐसे दिखते हैं जैसे पारदर्शी पन्ने की मणियां हों, फिर दूसरे ही क्षण उनका रंग हरा, सुनहरा-हराया क़रीब क़रीब काला-हरा होने लगता है। कहीं दूर, किसी कोमल टहनी के छोर पर, पारदर्शी आकाश के एक नीले खण्ड की पृष्ठभूमि में एक एकाकी पत्ती निश्चल लटक रही है, और उसकी बग़ल में एक अन्य पत्ती कांटे में फंसी मछली की भांति कांप रही है, मानो हवा के झोंके से नहीं, बल्कि खुद अपनी इच्छा से ही वह हिल रही है। सफ़ेद बादल के गोल टुकड़े, शान्त भाव से आकाश में तैरते और शान्ति के साथ जलमग्न द्वीपों की भांति ओझल हो जाते हैं। अचानक यह समूचा समुद्र, यह उजला आकाश, ये टहनियां और पत्ते – ये सब क्षिप्रगति से प्रकाश में हिलोरे लेते, थरथराते हैं, और अचानक उद्वेलित लहरियों की निरन्तर लघु छपछप की भांति एक ताजी कांपती हुई फुसफुसाहट उमगने लगती है। जी चाहता है कि यहां से न हिलें, बस देखते ही रहें, और हृदय में एक ऐसी शान्ति, ऐसा आनन्द, और ऐसा माधुर्य छा जाता है कि उसे व्यक्त करने के लिए शब्द तक नहीं मिलते। आंखें देखने में रम जाती हैं, गहरी निश्छल नीलिमा होंठों पर मुसकान ले आती है – मासूम मुसकान, खुद अपने जैसी निर्दोष। और आकाश में छितरे बादलों की भांति, मानो उनके साथ घुल-मिलकर, सुखद स्मृतियों की शृंखला, धीमी गति से चित्त-पटल पर सज जाती है, लगता है जैसे इस गहराई की कोई थाह नहीं है, दृष्टि उसमें समाती ही

जाती है, उस शान्त और वृहदाकार का साक्षात्कार करती है, लगता है जैसे उस ऊंचाई से, उस गहराई से, वापिस नहीं लौटा जा सकता ...

"मालिक, सरकार!" अपनी सुरीली आवाज में अचानक कास्यान के मुंह से निकला।

आश्चर्य से मैं उठ बैठा। अब तक मेरे सवालों का जवाब भी वह मुश्किल से ही देता था, लेकिन अब वह खुद मुझे सम्बोधित कर रहा है।

"क्यों, क्या है?" मैंने पूछा।

"आपने किसलिए इस पक्षी की हत्या की?" सीधे मेरी आंखों में देखते हुए उसने कहना शुरू किया।

"किसलिए क्या? कौर्न-क्रेक शिकार है। उसे खाया जा सकता है।"

"नहीं मालिक, आपने इसे इसी लिए नहीं मारा। आपने इसे खेल के लिए मारा है।"

"सो कैसे? तुम खुद भी तो, मेरी समझ में, कलहंसों या मुर्ग़ियों को खाते हो न?"

"इन पक्षियों को तो भगवान ने इन्सान के लिए बनाया है, लेकिन कौर्न-क्रेक तो बन में रहनेवाला एक जंगली पक्षी है, और अकेला वही नहीं, बन और खेतों में, नदियों, दलदलों और झाबरों में अन्य बहुत-से जंगली विचरते हैं, ऊपर आकाश में उड़ते या नीचे धरती पर रेंगते हैं। और उन्हें मारना पाप है। उनके लिए जीवन की जो अवधि नियत है, उसमें हम बाधा क्यों डालें? रही इन्सान की बात, सो उसके लिए खाने का इन्तज़ाम अलग है। उसका खाना-पीना दूसरा है। रोटी जो भगवान की न्यामत है, और पानी जिसे भगवान आकाश से बरसाता है, और घरेलू जीव-जन्तु जो हमारे पुरखों के, पुराने ज़माने से चले आ रहे हैं।"

मैंने अचरज से कास्यान की ओर देखा। उसके शब्दों का प्रवाह उन्मुक्त था। किसी भी शब्द के लिए न तो वह अटका, न अचकचाया।

अनुप्राणित थिरता और मृदु गरिमा के साथ वह बोल रहा था, और बीच बीच में अपनी आंखों को मूंद लेता था।

"तो, तुम्हारी राय में, यह पाप है, और मछली का शिकार करना?" मैंने पूछा।

"मछलियों का रक्त तो ठण्डा होता है," उसने विश्वास के साथ कहा, "मछली तो मूक जीव है। न तो वह डरती है, न ख़ुश होती है। उसके मुंह में ज़बान नहीं। वह कुछ अनुभव नहीं करती। उसके ख़ून में जान नहीं होती... ख़ून," कुछ रुककर उसने फिर कहना शुरू किया, "ख़ून एक पवित्र चीज़ है। भगवान के सूरज की भी उसपर नज़र नहीं पड़ती। रोशनी से वह छिपा रहता है... और दिन की रोशनी में ख़ून को उजागर करना भारी पाप है... ओह, भारी पाप है!"

उसने लम्बी उसास भरी, और उसका सिर आगे की ओर झुक आया। और मैं, सच जानो, एकदम चकित, इस विचित्र वृद्ध की ओर देखता रहा। उसकी भाषा किसान की भाषा के समान नहीं थी। आम लोग इस तरह नहीं बोलते, वह उन लोगों की तरह भी नहीं बोल रहा था जो बढ़िया बातों के धनी बनना चाहते हैं। उसके बोलने में सोच का भाव था, गम्भीरता थी, और कुछ ऐसा था जो विचित्र था... ऐसी बोली मैंने पहले कभी नहीं सुनी थी।

"कृपा कर यह तो बताओ कास्यान," थोड़ा लाल हुए उसके चेहरे पर से अपनी आंखों को हटाय बिना ही मैंने कहना शुरू किया, "तुम्हारा धंधा क्या है?"

मेरे इस सवाल का उसने तुरंत जवाब नहीं दिया। क्षण-भर के लिए उसकी आंखें बेचैनी से कुछ अस्थिर-सी हो उठीं।

"भगवान जैसे रखता है, रहता हूं," अन्त में उसने कहा, "और रही धंधे की बात, सो मैं कोई धंधा नहीं करता। छुटपन से लेकर अब तक मैं कभी कोई ख़ास होशियार नहीं रहा। जब बनता है, कुछ कर

लेता हूं। मैं अच्छा कारीगर नहीं हूं। और हो भी कैसे सकता हूं? बदन में जान नहीं, और मेरे हाथ बड़े अटपटे हैं। वसन्त के दिनों में मैं बुलबुल पकड़ने का काम करता हूं।"

"अरे, तुम बुलबुल पकड़ते हो? लेकिन अभी तो तुम कह रहे थे कि हमें बन-खेतों और जाने कहां कहां के जीवों में से किसी के भी हाथ नहीं लगाना चाहिए?"

"उन्हें मारना बिल्कुल नहीं चाहिए। हमारे बिना भी मौत अपना काम कर लेगी। उस मार्तीन बढ़ई को ही देखो। मार्तीन जीता-जागता था, लेकिन वह मर गया, उसका जीवन लम्बा नहीं था। उसकी घरवाली अब अपने आदमी के लिए, अपने नन्हे बच्चों के लिए, विलाप करती है... आदमी हो, चाहे जानवर, मौत से कोई बचाव नहीं। मौत जल्दबाज़ी नहीं करती, उससे पीछा भी नहीं छुड़ाया जा सकता, लेकिन हमें मौत का हाथ नहीं बंटाना चाहिए... और मैं बुलबुलों की जान नहीं लेता—ख़ुदा कभी ऐसा न कराय! उन्हें कष्ट देने, उनका जीवन ख़राब करने के लिए मैं उन्हें नहीं पकड़ता। मैं उन्हें पकड़ता हूं इसलिए कि लोग ख़ुश हों, उन्हें सुख और आनन्द मिले।"

"उन्हें पकड़ने के लिए क्या तुम कूर्स्क जाते हो?"

"हां, मैं कूर्स्क जाता हूं, और कभी कभी तो और भी आगे। दलदली क्षेत्रों में, या जंगलों के किनारे रात बिताता हूं। खेतों में, झुरमुटों में, मैं अकेला होता हूं। बनमुर्ग़ बांग देते हैं, ख़रगोश चिचियाते हैं और बन-बत्तख़ें शोर मचाती हैं... सांझ को मैं उन्हें चीन्हता हूं, सुबह सुनता हूं, दिन निकलने पर झाड़ियों के ऊपर अपना जाल फैला देता हूं... कुछ बुलबुलों के गाने में बड़ी मिठास होती है, और बड़ा दर्द... हां दर्द।"

"और क्या तुम उन्हें बेचते हो?"

"मैं उन्हें नेक लोगों के यहां दे आता हूं।"

"और इसके अलावा तुम क्या करते हो?"

"मैं क्या करता हूं?"

"हां, किस धंधे में तुम लगे हो?"

कुछ देर तक वृद्ध कुछ नहीं बोला।

"मैं किसी धंधे में नहीं लगा हूं... मैं अच्छा कारीगर नहीं हूं। हां, मैं पढ़-लिख सकता हूं।"

"तुम पढ़ना जानते हो?"

"हां, मै पढ़ना और लिखना जानता हूं। भगवान की दया से और नेक लोगों की मदद से मैंने यह सीख लिया है।"

"तुम्हारे परिवार तो होगा?"

"नहीं, परिवार नहीं है।"

"सो कैसे? क्या सब जाते रहे?"

"नहीं, लेकिन... जीवन में भाग्य ने मेरा कभी साथ नहीं दिया। लेकिन वह सब तो भगवान के हाथ है। हम सब भगवान के हाथ हैं। बस, इतना ही है कि आदमी को खरा होना चाहिए। भगवान की नज़रों में खरा। असल चीज़ यही है।"

"और तुम्हारे सगे-सम्बन्धी कोई नहीं हैं?"

"हां... ओह..."

वृद्ध अचकचाकर रह गया।

"कृपा कर यह तो बताओ," मैंने कहना शुरू किया, "मैंने अपने कोचवान को तुमसे यह पूछते सुना था कि तुमने मार्तीन की दवा-दारू क्यों नहीं की। सो क्या तुम बीमारियों का इलाज करते हो?"

"तुम्हारा कोचवान खरा आदमी है," कास्यान ने विचारशील मुद्रा में जवाब दिया, "लेकिन गुनाहों से एकदम अछूता भी नहीं है। लोग मुझे हकीम कहते हैं। मैं, और डाक्टर, वाह! और रोगी को चंगा कौन कर सकता है? वह सब तो ख़ुदा की देन है। लेकिन हां, कुछ जड़ी-

बूटियां, और कुछ फूल हैं जो कार-आमद होते ह। सच, यह पक्की बात है। मिसाल के लिए जैसे प्लान्टेन है। यह इन्सान के लिए काम की जड़ी है। ऐसे ही बड-मेरी गोल्ड भी है। इनका नाम लेने से पाप नहीं लगता। ये ख़ुदा की दी हुई पवित्र जड़ी-बूटियां हैं। लेकिन सब जड़ी-बूटियां ऐसी नहीं हैं। वे काम की हो सकती हैं, लेकिन यह पाप है, उनका नाम लेने से पाप लगता है। फिर भी, हो सकता है कि जाप करने से... सच, ऐसे जाप हैं जिनसे पाप नहीं लगता... जिसके हृदय में श्रद्धा है, उसे भगवान बचा लेता है," अपनी आवाज़ को गिराते हुए उसने अन्त में कहा।

"तुमने मार्तीन को कुछ नहीं दिया?" मैंने पूछा।

"मुझे बहुत देर बाद मालूम हुआ," वृद्ध ने जवाब दिया, "लेकिन इससे क्या? हर आदमी जन्म से ही अपना भाग्य लिखाकर लाता है। बढ़ई मार्तीन के भाग्य में जीना नहीं बदा था, उसे इस धरती पर जीवित नहीं रहना था। यही असल बात थी। नहीं, जिस आदमी के लिए इस धरती पर जीना नहीं बदा होता, तब अन्य लोगों की भांति सूरज की धूप उसे गर्मी नहीं पहुंचाती, रोटी उसका पोषण नहीं करती और ऐसा मालूम होता है जैसे कोई चीज़ उसे दूर खींचे लिये जा रही हो... सच, ख़ुदा उसकी आत्मा को शान्ति दे!"

"क्या तुम हमारे इस इलाक़े में काफ़ी अर्से से आकर बसे हुए हो?" थोड़ा रुककर मैंने पूछा।

कास्यान चौंक उठा।

"नहीं, काफ़ी अर्से से नहीं। क़रीब चार साल हुए होंगे। पुराने मालिक के ज़माने में हम हमेशा पुराने घरों में रहते थे। लेकिन अभिभावकों ने हमें यहां बसा दिया। हमारा पुराना मालिक रहमदिल था, अमन-चैन पसन्द करता था—ख़ुदा करे उसे स्वर्ग नसीब हो। अभिभावकों ने, बिलाशक, ठीक न्याय किया।"

"और पहले तुम कहां रहते थे?"

"ऋसीवया मेच में।"

"क्या यह जगह यहां से बहुत दूर है?"

"पछत्तर-एक मील दूर होगी।"

"हां तो क्या तुम वहां ज़्यादा मज़े में थे?"

"क्यों नहीं... वहां... एक खुला देश था, नदियों से भरा-पूरा। वह हमारा घर था। यहां तो दम घुटता है, और हम सूख गये हैं... यहां हम अजनबी हैं। वहां—ऋसीवया मेच में—चाहो तो पहाड़ी पर चले जाओ—और ओह, मेरे भगवान, कितना बढ़िया दृश्य दिखता था वहां से! वहां झरने और चरागाहें हैं और जंगल, और एक गिरजा है, और उसके बाद फिर और चरागाहें। बस दूर तक, बहुत दूर तक, देखे जाओ। सच, जितनी दूर तक चाहो, देखते रहो, जी भरकर देखते रहो। और यहां... इसमें झूठ नहीं कि यहां की ज़मीन अच्छी है। मिट्टी—बढ़िया मोटी मिट्टी, किसान कहते हैं। पर मुझे कहीं भी भरपेट रोटी मिल जायेगी।"

"अच्छा तो बुढ़ऊ, यह बताओ कि क्या तुम्हारा जी अपनी जन्मभूमि को एक बार फिर देखने के लिए नहीं ललकता?"

"हां, देखने को जी तो करता है। फिर भी, जगह सभी अच्छी है। बिना जोरू-नाते का मैं आदमी हूं, एक बेचैन प्राणी। और, सच पूछो तो, घर से ही चिपके रहने में ऐसा लाभ भी क्या है? लेकिन, देखो न, जैसे जैसे आगे चलते जाते हैं, चलते जाते हैं," अपनी आवाज़ को ऊंचा उठाते हुए वह कहता गया, "वैसे वैसे सच, हृदय हल्का होता जाता है। सूरज तुम पर अपनी किरनें न्योछावर करता है, और भगवान के तुम अधिक निकट होते हो, गीत की धुन और भी सुरीली बनकर कानों में रस बरसाती है। यहां कौनसी जड़ी उगती है... तुम इसे देखते हो, और तोड़ लेते हो। यहां पानी बह रहा है, झरने का पानी, स्रोत से निकला साफ़ पवित्र पानी। सो तुम उसे देखते भी हो और उसे पीते

हो। आकाश में पक्षी गाते हैं... और कूर्स्क से आगे स्तेपी फैले है। वह स्तेपीय देश—ओह्, कितना अद्भुत, देखकर इन्सान का दिल खिल जाता है। कितना उन्मुक्त, ख़ुदा का कितना बड़ा वरदान! और, लोग कहते हैं, वे और भी आगे तक—उष्ण सागर तक—जाते हैं जहां मधुर-कण्ठी पक्षी हमायून निवास करता है, जहां पेड़ों के पत्ते कभी नहीं झरते, न शरद् में और न शीत में, और रुपहली टहनियों पर जहां सुनहरे सेब उगते हैं, जहां हर आदमी न्याय और सन्तोष के साथ निर्वाह करता है। जी चाहता है कि मैं वहां तक जाऊं... और अभी भी क्या मैं कुछ कम जगहों की यात्रा कर चुका हूं! मैं रोमनी और सुन्दर नगर सिम्बीर्स्क हो आया हूं, सोने के गुम्बदोंवाले नगर मास्को तक की मैंने सैर की है। कल्याणी नदी ओका, सुन्दर त्स्ना और वोलगा मैया के मैंने दर्शन किये हैं बहुत बहुत-से लोगों से, नेक-हृदय ईसाइयों से, मैं मिला हूं, तीर्थ नगरों की मैंने यात्रा की है... हां तो मैं वहां जाऊं... सच... और इसलिए और भी अधिक... और अकेला मैं नहीं, मैं जो गुनाहों का पुतला हूं... अन्य कितने ही ईसाई भी जाते हैं... छाल की चप्पलें पहने, सचाई की खोज करते, दुनिया-भर में घूमते हैं... घर पर क्या रखा है? भलमनसाहत इन्सान से बिदा हो गयी है, सच पूछो तो!"

अपने इन आख़िरी शब्दों को कास्यान ने तेजी से कहा, इस तरह कि उन्हें पकड़ना क़रीब क़रीब मुश्किल था। इसके बाद उसने कुछ और भी कहा जिसे मैं क़तई नहीं समझ सका, और उसके चेहरे पर एक ऐसा अजीब भाव दौड़ गया कि मुझे बरबस उसके दिमाग़ का पुर्ज़ा ढीला होने का ध्यान हो आया। उसने धरती की ओर देखा, अपने गले को साफ़ किया, और लगा जैसे फिर अपने आपे में आ गया हो।

"वाह, क्या धूप खिली है," धीमी आवाज़ में वह बुदबुदाया, "प्रभु, यह कितनी बड़ी न्यामत है! कितना सुहावनापन जंगल में छाया है!"

उसने अपने कंधों को बिचकाया और चुप हो गया। अपने इर्द-गिर्द धुंधली-सी नज़र उसने डाली और मृदु स्वर में गाना शुरू कर दिया। धीमे स्वरों में वह क्या गुनगुना रहा था, यह मैं पूरी तरह से पकड़ नहीं सका। केवल निम्न बोल मैं सुन सका—

यों मेरा नाम कास्यान है,
पर लोग मुझे पिस्सू कहते हैं!

"ओह," मैंने मन में सोचा, "तो यह तुक जोड़ना भी जानता है!"

अचानक वह चौंका और उसने गाना बंद कर दिया। उसकी आंखें जंगल के एक घने हिस्से पर जमी थीं। मैं मुड़ा और एक नन्ही किसान लड़की पर मेरी नज़र पड़ी। आयु क़रीब आठ साल, नीली सराफ़ान* पहने और सिर पर चारख़ाने का रूमाल बांधे, और अपने नन्हे-से हाथ में छाल की बुनी हुई डलिया लिये। उसका हाथ उघड़ा और धूप में संवलाया हुआ था। हम से साक्षात् होने की उसे क़तई उम्मीद नहीं थी। वह, जैसा कि कहते हैं, 'औचक में' हमारे सामने आ पड़ी थी और अखरोट की घनी पत्तियों की छांव में मौन खड़ी हुई अपनी काली आंखों से हैरान-सी मेरी ओर देख रही थी। मुझे मुश्किल से उसकी एक झलक देखने का ही समय मिला होगा कि वह दुबककर पेड़ के पीछे छिप गयी।

"आन्नुश्का! आन्नुश्का! अरे, डरो नहीं, यहां आओ!" वृद्ध ने दुलराती आवाज़ में चिल्लाकर कहा।

"मुझे डर लगता है," उसकी पैनी आवाज़ सुनाई दी।

"अरे नहीं, डरो नहीं, यहां आओ, मेरे पास!"

आन्नुश्का चुपचाप अपनी ओट में से बाहर निकली, धीमे धीमे मुड़ी—उसके छोटे छोटे बचकाना पांव घास पर क़रीब क़रीब निःशब्द पड़ रहे थे—और झाड़ियों में से वृद्ध के निकट चली आयी। वह आठ वर्ष की मुनिया नहीं थी, उसके नन्हे आकार-प्रकार को देखकर जैसा

---

* रूसी स्त्रियों का पहनावा।

कि मैंने शुरू में समझा था, बल्कि तेरह या चौदह साल की लड़की थी। उसका समूचा आकार छोटा और क्षीण होते हुए भी सुगठित और कमनीय था, और उसका गुड़िया-सा नन्हा चेहरा खुद कास्यान के चेहरे से अद्भुत रूप में मिलता था, हालांकि वह खूबसूरत निश्चय ही नहीं था। वैसे ही पतले पतले उसके नाक-नक़्श थे, और वैसा ही अजीब भाव उसके चेहरे पर छाया था—संकोची और विश्वास की भावना लिये, उदासी में डूबा और चातुर्य का पुट लिये, और उसका हाव-भाव बैठना-उठना—भी वैसा ही था... कास्यान ने एक बार उसकी ओर देखा। वह उसके बराबर में आकर खड़ी हो गयी।

"तो तुम कुकुरमुत्ते चुन रही थी, क्यों?" उसने पूछा।

"हां," लाज से मुसकराते हुए उसने कहा।

"जी भरकर बटोर लिये?"

"हां।" (छिपी और तेज़ नज़र से उसने उसकी ओर देखा और फिर मुसकरा दी।)

"उनमें सफ़ेद भी हैं?"

"हां, हैं।"

"देखूं, ज़रा मुझे दिखाओ तो..." (उसने अपनी बांह में से खिसकाकर डलिया उतार ली और बरडौक के पत्ते को आधा उठा दिया जो कुकुरमुत्तों पर रखा था।)

"ओह!" डलिया के ऊपर झुकते हुए कास्यान ने कहा, "बहुत बढ़िया! शाबाश, आन्नुश्का, शाबाश!"

"यह तुम्हारी लड़की है, कास्यान, क्यों?" मैंने पूछा। (आन्नुश्का के चेहरे पर हल्की लाली दौड़ गयी।)

"ओह, नहीं, एक सम्बन्धिन है," बनावटी अलगाव के साथ कास्यान ने जवाब दिया। "अच्छा तो आन्नुश्का अब जाओ।" उसने तुरंत जोड़ा, "जाओ, खुदा तुम्हारा भला करे। और देखो, संभलकर जाना।

"अरे, इसे पैदल क्यों भेज रहे हो?" मैंने बीच में ही टोका, "हम इसे अपने साथ ले चलते हैं।"

आन्नुश्का पोस्ते के फूल की भांति लाल हो गयी। अपनी डलिया से बंधी रस्सी के दस्ते को दोनों हाथों से उसने थामा और उद्वेग के साथ वृद्ध की ओर देखने लगी।

"नहीं, वह अपने-आप ठीक ठिकाने पर पहुंच जायेगी," अपने उसी अलस और अलगावपूर्ण अन्दाज़ में उसने जवाब दिया। "यह कौन बड़ी बात है... यह वहां पहुंच जायेगी... हां तो जाओ अब!"

आन्नुश्का तेज़ी से जंगल में बढ़ गयी। कास्यान उसे जाते देखता रहा। इसके बाद उसने नीचे की ओर देखा और मन ही मन मुसकराया। उसकी इस सुदीर्घ मुसकान में, उन गिने-चुने शब्दों में जो उसने आन्नुश्का से कहे थे, और ठीक उसकी आवाज़ की ध्वनि तक में गहरे, अकथनीय प्रेम और कोमलता का पुट मिला था। उसने एक बार फिर उधर देखा जिधर वह गयी थी, वह फिर मन ही मन मुसकराया और अपने चेहरे को हाथ से पोंछते हुए कई बार अपनी गरदन को हिलाया।

"तुमने उसे इतनी जल्दी क्यों भगा दिया?" मैंने उससे पूछा, "मैं उसके कुकुरमुत्ते ही ख़रीद लेता।"

"ऊंह, सो तो आप घर पर भी ख़रीद सकते हो, मालिक," उसने जवाब दिया। पहली बार उसने मुझे औपचारिक रूप में 'मालिक' कहकर सम्बोधित किया था।

"बड़ी सुन्दर है, तुम्हारी यह लड़की।"

"सुन्दर-वुन्दर कुछ नहीं... ऐसे ही है, मामूली," प्रत्यक्ष अनमनेपन के साथ उसने जवाब दिया, और इसके बाद वह फिर पहलेवाली मुंह-बंद मनःस्थिति में डूब गया।

उससे फिर बातचीत चलाने के अपने सभी प्रयत्नों को निष्फल होता देख मैं खुली जगह की ओर निकल गया। इस बीच गर्मी कुछ कम

हो गयी थी, लेकिन मेरा सितारा मन्द ही बना रहा, और एक अदद कार्न-क्रैक तथा एक नये धुरे के अलावा और कुछ न लेकर मैं बस्ती लौटा। ठीक उस समय जब हमारी गाड़ी अहाते में प्रवेश कर रही थी, सहसा कास्यान मेरी ओर मुड़ा।

"मालिक, मालिक," उसने कहना शुरू किया, "आप को मालूम है कि मैंने एक क़ुसूर किया है। मैंने ही सब पक्षियों को दूर भगा दिया था।"

"सो कैसे?"

"ओह, मैं ऐसा मन्तर जानता हूं। देखो न, आपका यह कुत्ता खूब सधा हुआ और बढ़िया क़िस्म का है। लेकिन वह भी कुछ नहीं कर सका। और यों देखो तो इन्सान क्या हैं? क्या हैं वे? और यह कुत्ता तो एक जानवर है तो भी उन्होंने उसे क्या बना डाला है?"

शिकार को मंत्र से बांधना एक असम्भव चीज़ है। कोशिश करने पर भी मैं कास्यान को इसका यक़ीन न करा सकता था। सो मैंने कोई जवाब नहीं दिया। इसी बीच गाड़ी अहाते में मुड़ गयी थी।

आन्नुश्का झोंपड़े में नहीं थी। वह हमसे पहले ही आ पहुंची थी और कुकुरमुत्तों की अपनी डलिया वहां छोड़ गयी थी। येरोफ़ेई ने नये धुरे को फ़िट किया, शुरू में उसमें दोष निकाले और उसकी अत्यन्त असंगत आलोचना करते ही हुए। इसके घंटा-भर बाद मैं वहां से चला। कास्यान के सामने मैंने एक छोटी-सी रक़म पेश की, जिसे लेने में पहले तो उसने आनाकानी की, लेकिन बाद में—उसे हाथ में थामे क्षण-भर कुछ सोचने के बाद—उसने उसे अपनी फतुही के भीतर रख लिया। इस एक घंटे के भीतर मुश्किल से ही कोई शब्द उसके मुंह से निकला होगा। वह पहले की भांति फाटक के साथ टिका खड़ा रहा। उसने मेरे कोचवान के ताने-तिश्नों का भी कोई जवाब नहीं दिया, और बड़ी सर्द मोहरी के साथ उसने मुझे विदा दी।

जैसे ही मैं लौटकर आया, येरोफ़ेई पर मेरी नज़र पड़ी। उसकी उदास मन:स्थिति साफ़ नजर आ रही थी... निश्चय ही गांव में उसे खाने को कुछ नहीं मिला था। घोड़ों के पीने का पानी अच्छा नहीं था। हम चल पड़े। असन्तोष की छाप उसकी गरदन तक पर झलक रही थी। वह कोचवान की गद्दी पर बैठा था और मुझसे बातचीत शुरू करने के लिए तिलमिला रहा था। दबे स्वर में कुछ बुदबुदाता और घोड़ों को अपेक्षाकृत तीखे आदेश देता। वह इस बात की प्रतीक्षा में था कि बातचीत का सिलसिला मेरे ही किसी सवाल से शुरू हो। "गांव, इसे कौन गांव कहता है," वह बुदबुदाया, "भला, यह भी कोई गांव है? पीने के लिए जहां एक बूंद क्वास तक नसीब न हो। हे भगवान... और पानी–एकदम गन्दा!" (उसने ज़ोर से थूका।) "न खीरा, न क्वास, न और... कुछ भी तो नहीं... अरे ओ," दाहिने बाज़ूवाले घोड़े की ओर मुड़ते हुए उसने ऊंचे से कहा, "मैं तुझे ख़ूब पहचानता हूं, कामचोर कहीं का!" (और उसने एक चाबुक उसके रसीद कर दी।) "यह घोड़ा अब एकदम कामचोर बन गया है, लेकिन एक ज़माना था जब यह इशारे पर चलनेवाला जानवर था। हां तो अब ज़रा तेज़ी दिखाओ!"

"कृपा कर यह तो बताओ, येरोफ़ेई," मैंने कहना शुरू किया, "कास्यान किस तरह का आदमी है?"

येरोफ़ेई ने तुरंत जवाब नहीं दिया। आम तौर से वह चिन्तनशील और धीर प्रकृति का आदमी है। लेकिन मैंने साफ़ अनुभव किया कि मेरे सवाल से उसे ख़ुशी और कुछ गुदगुदी हुई है।

"अरे वह पिस्सू!" रास समेटते हुए अन्त में उसने कहा, "वह अजीब जीव है, सच, सनकी। इतना अजीब कि उस जैसा आदमी जल्दी से और कहीं नहीं मिलेगा। वह भी, मेरे इस चितकबरे घोड़े की तरह, क़ाबू से बाहर हो गया है। वह भी किसी एक चीज़ पर, किसी एक

काम पर, नहीं टिक पाता। लेकिन यों वह कर भी क्या सकता है? उसका बदन ही ऐसा है कि अब गिरा, अब गिरा... लेकिन फिर भी, आप जानो... छुटपन से ही वह ऐसा है। पहले वह अपने चाचाओं के कारबार में लगा रहा। उसी को इसने अपना धंधा बनाया। उनके पास तीन घोड़ों की गाड़ियां थीं लेकिन आप जानो, यह उससे ऊब उठा—और दुलत्ती झाड़कर अलग हो गया। अब उसने घर पर रहना शुरू किया, लेकिन वहां भी ज्यादा नहीं टिक सका। निश्चल रहना तो जानता ही नहीं। सच, एकदम पिस्सू की भांति। भाग्य से उसे एक अच्छा मालिक मिल गया। उसने उसे परेशान नहीं किया। सो तब से वह यों ही घूमता रहता है, भटकी हुई भेड़ की भांति। और फिर वह कुछ इतना अजीब है कि उसे कोई समझ नहीं सकता। कभी वह इतना चुप हो जायेगा जैसे पत्थर हो। और इसके बाद वह जो बोलने लगेगा तो बोलता ही जायेगा। खुदा भी नहीं बता सकता कि क्या उसके मुंह से निकलेगा। आप ही बताओ, यह कहां का ढंग है? वह बिल्कुल बेढंगा आदमी है। सच, एकदम फ़ज़ूल। लेकिन जी हां, वह गाता बहुत अच्छा है।"

"और क्या वह सचमुच लोगों की दवा-दारू करता है?"

"दवा-दारू? वह भला क्या दवा-दारू करेगा? ऊंह, वह कहां का डाक्टर है! हालांकि, यह मानना पड़ेगा, कि उसने मुझे चंगा किया। कंठमाला मुझे हो गयी थी... लेकिन छोड़ो, उसके बस का कुछ नहीं। बौड़म आदमी है वह, सच, एकदम बौड़म!" क्षण-भर रुककर उसने अन्त में कहा।

"क्या तुम उसे बहुत दिनों से जानते हो?"

"हां, बहुत दिनों से। ऋसीवया मेच में, सिचोवका में, मैं उसके पड़ोस में ही रहता था।"

"और वह लड़की—जो हमें जंगल में मिली थी—आन्नुश्का—वह उसकी क्या लगती है?"

येरोफ़ेई ने अपने कंधे पर से मेरी ओर देखा, और उसका समूचा चेहरा खिलखिला उठा।

"हो-हो... अरे हां, सम्बन्धी। वह अनाथ है। उसकी मां नहीं है, और उसकी मां कौन थी, यह कोई नहीं जानता। लेकिन वह ज़रूर उसकी कुछ लगती है। वह उससे इतना मिलती है। जो हो, वह उसके साथ रहती है। यह मानना पड़ेगा बड़ी मुस्तैद लड़की है। बड़ी अच्छी लड़की है। और वह बुढ़ऊ, उसकी आंखों की तो बस वह पुतली है। बड़ी अच्छी है वह। और क्या आपको मालूम है—आप बिसवास नहीं करोगे कि वह शायद आन्नुश्का को पढ़ाना भी शुरू कर देगा। और सच, यह वही कर सकता है। इतना निराला जीव है वह। छिन में कुछ, छिन में कुछ। सच, उसका कोई ठिकाना नहीं... एह! एह!" मेरे कोचवान ने सहसा अपने-आपको रोका, घोड़ों की रास खींची, और एक ओर झुककर नाक को फरफराने लगा। "क्या जलने की गंध नहीं आ रही? हो न हो, मेरी बात मानो, यह नये धुरे से आ रही होगी... मेरा खयाल था कि मैंने इसे अच्छी तरह चिकना दिया है... कहीं से पानी लाना होगा। अरे, वह रहा गढ़ा! बस, बिल्कुल ठीक!"

और येरोफ़ेई धीरे-से अपनी गद्दी पर से उतरा, डोल को उसने खोला, गढ़े के पास पहुंचा और वापिस लौटकर, निश्चित सन्तोष के साथ, अचानक पानी के सम्पर्क से पहिए की धुरी में से आनेवाली सनसन की ध्वनि सुनता रहा... क़रीब सात मील के रास्ते में, और भी कुछ नहीं तो छः बार तपे हुए धुरे पर पानी डालना पड़ा और अन्त में काफ़ी सांझ गये हम घर आकर लगे।

कारिन्दा

आर्कादी पावलिच पेनोचकिन से मेरी जान-पहचान है। वह गार्ड-सेना का अवकाश-प्राप्त अफ़सर है और हमारे घर से बारह मील दूर अपनी जागीर में रहता है। उसकी जागीर शिकारियों के लिए मज़े की जगह है—शिकार की वहां खूब भरमार है। उसका घर फ़ांसीसी नमूने पर बना है, और उसके नौकर-चाकर अंग्रेज़ी चाल की वर्दी में लैस रहते हैं। उसकी दावतें शानदार होती हैं, हृदय से आगन्तुकों की आव-भगत करता है, लेकिन यह सब होने पर भी लोग उससे मिलने से अचकचाते हैं। समझदार और व्यवहार-कुशल आदमी है, बढ़िया शिक्षा प्राप्त है, अफ़सरी कर चुका है, उच्चतम समाज में उठता-बैठता रहा है और अब, बड़ी सफलता के साथ, अपनी जागीर की देख-भाल कर रहा है। आर्कादी पावलिच, खुद उसके अपने शब्दों में, कठोर किन्तु न्यायप्रिय है। अपनी रैयत का वह भला चाहता है और जो उन्हें सज़ा भी देता है तो उनकी भलाई के लिए ही। "वे तो मानो बच्चे हैं। बच्चों की भांति ही उनके साथ व्यवहार करना होता है," ऐसे मौक़ों पर वह कहता है, "उनका अज्ञान, mon cher; il faut prendre cela en considération।"* जब कभी ऐसी मजबूरी उठ खड़ी होती है तो वह ऊंची आवाज़ में नहीं बोलता, न ही उसकी भाव-भंगिमा में कोई हिंसा की भावना होती है। बस अपराधी के मुंह पर सीधे प्रहार करता हुआ शान्त मुद्रा में कहता है—

---

*मेरे प्यारे, उसको भी ज़रा ध्यान में रखना होता है।

"मुझे याद पड़ता है कि मैंने तुमसे कुछ करने के लिए कहा था, मेरे मित्र!" या "बात क्या है, बेटा? किस सोच में पड़े हो?" अपने दांत उस समय वह थोड़े-से पीसता है और उसके होंठ खिंच जाते हैं। उसका क़द लम्बा नहीं है, लेकिन उसकी काठी सुघर है और देखने में ख़ूब जंचता है। उसके हाथों और नाखूनों की नफ़ासत बस देखते ही बनती है और उसके लाल गालों तथा होंठों से स्वास्थ्य जैसे फूटा पड़ता है! ठहाका मारकर वह हंसता है और अपनी भूरी निर्मल आंखें भींचकर बड़े सुहावने ढंग से देखता है। कपड़े बहुत बढ़िया पहनता है, फ़्रांसीसी तस्वीरें और पत्र-पत्रिकाएं उसके यहां आती हैं, हालांकि वह ख़ुद पढ़ने का कोई ख़ास शौक़ीन नहीं है—'ख़ानाबदोश यहूदी' के पन्नों को, ब-मुश्किल तमाम, उसने पढ़ा हो तो शायद पढ़ा हो। ताश खेलने में माहिर है। कुल मिलाकर यह कि आर्कादी पावलिच को प्रान्त का एक अत्यन्त सलीक़ेदार कुलीन माना जाता है और लड़कियों के लिए तो वह एक बढ़िया वर है। स्त्रियां उसपर लट्टू हैं और उसके तौर-तर्ज़ को ख़ास तौर से पसन्द करती हैं। बहुत ही क़ायदे से व्यवहार करनेवाला और बिल्ली की भांति चौकस। जन्म से लेकर अब तक कभी उसने अपने को कुत्सा का पात्र नहीं बनने दिया, हालांकि रोब गांठने में उसे रस मिलता है, और मौक़ा मिलने पर कमज़ोर जान लोगों को धकियाने या डांट-डपटने से नहीं चूकता। सन्दिग्ध सोसायटी से उसे बेहद घृणा है, डरता है कि कहीं उसकी इज़्ज़त में बट्टा न लग जाय। हल्के-फुल्के क्षणों में अपने-आपको एपीक्यूरस का समर्थक घोषित करता है, यों आम तौर से दर्शन की वह खिल्ली उड़ाता है, जर्मन मस्तिष्कों के लिए उचित ख़ुराक की उसे संज्ञा देता है या, कभी कभी, निरी बकवास कहकर उसे रद्द कर देता है। संगीत का भी वह शौक़ीन है। ताश की मेज़ पर, दांतों को भींचे लेकिन भावना के साथ, वह गुनगुनाना शुरू कर देता है। लूचिया और ला सोम्नाम्बूला के कुछ अंश उसे हिफ़्ज़ याद हैं, लेकिन उसका गाना थोड़ा कर्कश हो जाता है। जाड़ों में वह पीटर्सबर्ग

चला जाता है। घर को वह खूब, असाधारण रूप में, सजा कर रखता है। साईसों तक उसका यह असर पहुंचता है। वे केवल अपने कोटों और घोड़ों के असंबंध सफ़ाई ही नहीं करते, बल्कि अपने चेहरों तक को पखारते हैं। आर्कादी पावलिच के गृह-दास, इसमें शक नहीं, कुछ मुंह-लटकाये-से नज़र आते हैं। लेकिन हम रूसियों के बारे में यह तमीज़ करना कठिन है कि वे मुंह-लटकाये हैं या ऊंघ रहे हैं। मृदु और सुहावनी आवाज़ में, बल देते हुए, और जैसे सन्तोष के साथ, आर्कादी पावलिच बात करता है। उसकी सुन्दर सुगंधित मूंछों के बीच से प्रत्येक शब्द एक एक करके प्रकट होता है, और उसकी भाषा में "Mais c'est impayable!", "Mais comment donc!"* जैसे कतिपय फ़ांसीसी वाक्यांशों की बहुलता रहती है। इस सब के बावजूद मुझे खुद – औरों की बात छोड़िये – उसके यहां जाने के लिए कभी बहुत ख़ाहिश नहीं होती, और अगर ग्राउज़ तथा तीतरों का मोह न होता तो शायद मैं उससे क़तई कोई वास्ता नहीं रखता। उसके घर में एक अजीब अटपटापन-सा मालूम होता है, वहां के आराम और आसाइश तक से तबीयत घबराती है, और हर सांझ जब ख़ानदानी बटन लगी नीली वर्दी से लैस घुंघराले बालों वाला अरदली नमूदार होता और चिपचिपाती दासता के साथ पांवों से जूते उतारना शुरू करता तो लगता कि अगर उसकी पीतवर्ण क्षीण आकृति, किसी हृष्ट-पुष्ट चौड़े गाल और मोटी नाकवाले युवा किसान की सी हो उठती जो अपने हल की मूठ छोड़कर सीधा खेत से आया हो और जिसके नानकिन के नये लम्बे कोट की लगभग हर सीवन उधड़ चुकी हो तो मेरे दिल को बेहिसाब खुशी होती, फिर चाहे वह जूतों के साथ साथ समूची टांग को ही क्यों न खींच डाले!

इसके बावजूद कि आर्कादी पावलिच मुझे नहीं भाता था, एक बार मुझे उसके यहां रात बितानी पड़ी। अगले दिन, तड़के ही, मैंने अपनी गाड़ी को जोतने का आदेश दिया, लेकिन वह मेरे पीछे पड़ गया कि ठेठ

---

* दिलचस्प बात है!, क्यों नहीं!

अंग्रेज़ी ढंग से नाश्ता किये बिना मैं रवाना नहीं हो सकता, और वह मुझे अपने अध्ययनकक्ष में लिवा ले गया। चाय के साथ कटलैट, उबले हुए अंडे, मक्खन, शहद, पनीर आदि आदि परसे गये। साफ़-सुथरे सफ़ेद दस्ताने पहने दो अरदली हमारी उड़ती हुई इच्छाओं तक को, फुर्ती से और चुपचाप लपक लेते। एक ईरानी दीवान पर हम बैठे थे। आर्कादी पावलिच रेशमी पतलून, काली मख़मली जाकेट, नीला फुन्दना लगी लाल फ़ैज़ टोपी और बिना एड़ी के पीले चीनी स्लीपर पहने था। वह चाय पीता जाता, हंसता, अपनी उंगलियों के नाखूनों को जांचता, सिगरेट का कश खींचता, तकियों के सहारे बदन को सीधा करता—गरज़ यह कि वह बेहद ख़ुश था। प्रत्यक्ष सन्तोष के साथ जी-भर नाश्ता करने के बाद आर्कादी पावलिच ने एक गिलास में लाल शराब ढाली, उसे अपने होंठों तक ले गया, और अचानक उसकी भौंहें सिकुड़ गयीं।

"मदिरा को गरमाया नहीं, क्यों?" अपेक्षाकृत तेज आवाज़ में उसने एक अरदली से सवाल किया।

अरदली घबराहट में एकदम स्तब्ध खड़ा रह गया, और उसका चेहरा फक पड़ गया।

"क्यों, मेरे भाई, क्या सुना नहीं, मैंने कुछ तुमसे पूछा था," शान्त मुद्रा में आर्कादी पावलिच ने फिर कहा, और उसकी आंखें बराबर अरदली पर जमी रहीं।

बेचारा अरदली, अपनी जगह पर खड़ा सकपका रहा था, अंगोछे को उमेठ रहा था, और उसके मुंह से शब्द तक नहीं निकल रहा था।

आर्कादी पावलिच ने अपना सिर झुका लिया और सोच की मुद्रा में पलकों के नीचे से उसकी ओर देखा।

"Pardon, mon cher,"* मेरे घुटने को दुलार से थपथपाते हुए उसने कहा और फिर, कुछ क्षण चुप रहने के बाद, अपनी

---

* माफ़ करना, मेरे प्रिय!

भौंहें उठाते हुए उसने एक बार फिर प्यादे की ओर देखा और कहा, "तुम जा सकते हो।" और साथ ही उसने घंटी बजायी।

मोटे-ताज़े, धूप में संवलाये और काले बालोंवाले एक आदमी ने कमरे में प्रवेश किया। उसका माथा नीचा था और आंखें चर्बी में एकदम गुम हो गयी थीं।

"फ़्योदोर के बारे में... आवश्यक बन्दोबस्त कर दो," दबे स्वर में और पूर्ण थिरता के साथ आर्कादी पावलिच ने कहा।

"अच्छा, मालिक," मोटे गावदुम आदमी ने कहा और चला गया।

"Voilà, mon cher, les désagréments de la campagne,"* आर्कादी पावलिच ने छलछलाते हुए कहा, "लेकिन अरे, यह आप चल कहां दिये? ज़रा रुकिये, थोड़ी देर तो ठहरिये!"

"नहीं," मैंने जवाब दिया, "मुझे अब तक चल देना चाहिए था।"

"बस, शिकार ही शिकार! ओह, तुम शिकारी लोग! लेकिन यह तो बताइये, इतनी तुर्तफ़ुर्ती से जा किधर रहे हैं?"

"यहां से तीसेक मील दूर, र्याबोवो नाम की एक जगह है।"

"र्याबोवो? भाई ख़ूब! तब तो मैं भी साथ चल सकता हूं। र्याबोवो से मेरा गांव शिपीलोवका केवल तीन ही मील तो दूर है, और शिपीलोवका गये मुझे एक मुद्दत हो गयी। कभी समय ही नहीं निकाल सका। जो हो, इसे कहते हैं संयोग – दिन-भर तुम शिकार करना, और सांझ को मेरे गांव चले आना। Ce sera charmant!** दोनों एक साथ ब्यालू करेंगे, बावर्ची हमारे साथ चला चलेगा, और रात को वहीं मेरे पास टिकना। सच, यह अच्छा रहेगा, बहुत अच्छा!" मेरे जवाब का इन्तज़ार किये बिना ही उसने अन्त में कहा, "C'est arrangé***...

---

* देखो, मेरे प्रिय, ये ही देहात की मुसीबतें हैं।

** यह सुन्दर होगा!

*** तय हुआ।

ए, इधर कोई है? गाड़ी बाहर निकलवाओ, और ज़रा फुर्ती से। शिपीलोवका तो आप कभी न गये होंगे, क्यों? यों यह कहते शर्म तो बड़ी मालूम होती है कि रात को मेरे कारिन्दे के बंगले में डेरा लगाना, लेकिन मैं जानता हूं कि आप इन सब बातों का कोई ख़ास ख़याल नहीं करते, और र्‌याबोवो में तो शायद पुवाल की ढेरी में ही आपको रात बितानी पड़ती... तो तय रहा, हम चलेंगे!"

और आर्कादी पावलिच कोई फ़्रेंच गीत गुनगुनाने लगा।

"और सच, आप सोच भी नहीं सकते कि वहां," टांगों पर झूलते हुए वह फिर कहने लग गया, "मेरे कुछ किसान हैं जो लगान देते हैं। ऐसा ही क़ानून है, मैं क्या कर सकता हूं? लेकिन लगान देने में वे बड़े चौकस हैं, बराबर वक़्त पर दे जाते हैं। यों, मैं मानता हूं कि बेगार की लीक पर मुझे उन्हें डालना चाहिए था, लेकिन ज़मीन इतनी कम है कि कुछ पूछो नहीं। सच, मुझे आश्चर्य होता है कि वे दोनों जून कैसे पेट भरते होंगे। जो हो, c'est leur affaire।* मेरा वहां कारिन्दा एक बहुत ही बढ़िया जीव है, une forte tête,** सच्ची प्रशासनिक शक्ति से लैस! ख़ुद अपनी आंखों से देखना... सच, भाग्य से सब कुछ कितना अच्छा हो गया है!"

कोई चारा नहीं था। सुबह के नौ बजे के बजाय दोपहर के दो बजे हम रवाना हुए। जो शिकारी हैं, वे मेरी अधीरता पर सहानुभूति प्रकट करेंगे। आर्कादी पावलिच, ख़ुद उसी के शब्दों में नाहक़ तकलीफ़ उठाने के पक्ष में नहीं था। ओढ़ने-बिछाने की चीज़ों, अन्य नफ़ासतों, पहनने के कपड़ों, तेल-फुलेलों, तकियों-गद्दियों और सभी काट-छांट के शृंगार-बक्सों की इतनी बड़ी लादी लादकर चला कि सोच-समझकर चलने तथा अपने को अंकुश में रखनेवाला कोई जर्मन साल-भर तक उससे अपना काम

---

*यह तो उनकी फ़िक्र है।

**बढ़िया दिमाग़।

चला सकता था। हर बार जब भी हम किसी गहरी पहाड़ी के ढलुवान पर से नीचे उतरते, आर्कादी पावलिच के मुंह से कोचवान को लक्ष्य कर संक्षिप्त तथा सशक्त टिप्पणियां प्रकट होतीं जो इस बात की सूचक थीं कि मेरा आदरणीय मित्र एकदम डरपोक आदमी है। जो हो, यात्रा सही-सलामत समाप्त हुई, सिवा इसके कि हाल ही में मरम्मत हुए एक पुल पर से गुज़रते समय जिस गाड़ी में बावर्ची था वह उलट गयी और बावर्ची की तोंद पिछले पहिये के साथ पिचक गयी।

पाक-कला के माहिर कारेम की इस कलाबाज़ी से आर्कादी पावलिच सचमुच घबरा गया, और उसने फ़ौरन आदेश दिया कि जाकर पता लगाओ, उसके हाथों पर चोट तो नहीं आयी। और यह मालूम होने पर कि ऐसा कुछ नहीं हुआ, वह तुरंत आश्वस्त हो गया, उसकी बेचैनी जाती रही। इन सब बातों की वजह से रास्ता पार करने में काफ़ी देर लग गयी। मैं उसी गाड़ी में बैठा था जिसमें कि आर्कादी पावलिच था, और यात्रा के अन्तिम दौर में – ख़ास तौर से उन घड़ियों में जबकि मेरे साथी की बातों का ज़ख़ीरा एकदम चुक गया था, यहां तक कि राजनीति के बारे में अपने उदारपंथी विचारों को प्रकट करने पर वह अब उतर आया था – जानलेवा ऊब ने मुझे दबोच लिया। आख़िर हम ठिकाने पर पहुंचे – र्याबोवो में नहीं, बल्कि शिपीलोवका में। क़िस्मत की बात है, और क्या। जो हो, शिकार का तो उस दिन समय रहा नहीं था, सो भीतर ही भीतर रोते हुए मैंने अपने आपको भाग्य के भरोसे छोड़ दिया।

बावर्ची हमसे कुछ पहले ही पहुंच गया था और, प्रत्यक्षतः चीज़ों को ठीक-ठाक करने तथा संबंधित लोगों को चेताने का उसे समय मिल गया था। कारण, गांव की सीमाओं में पांव रखते ही गांव का मुखिया (कारिन्दे का लड़का) हमारी अगवानी के लिए बढ़ आया। वह लम्बा-चौड़ा, सात फ़ुट ऊंचा, किसान था। उसके सिर के बाल लाल थे। वह घोड़े पर सवार था – नंगे सिर, नया कोट पहने जिसके बटन खुले थे। "और सोफ़रोन कहां

है?" आर्कादी पावलिच ने उससे पूछा। मुखिया चपलता के साथ पहले तो घोड़े से नीचे उतर आया, मालिक को सलामी देते हुए झुककर दोहरा हो गया, और बोला, "अच्छी तरह तो हैं, मालिक!" इसके बाद उसने अपना सिर उठाया, बदन को चौकस किया और बताया कि सोफ़रोन पेरोव को गया है, लेकिन उसे बुलाने के लिए आदमी भेज दिया गया है।

"अच्छा तो हमारे पीछे चले चलो," आर्कादी पावलिच ने कहा। मुखिया ने नियमानुसार अपने घोड़े को एक ओर कर लिया, उसपर सवार हो गया, और गाड़ी के पीछे पीछे दुलकी चाल से चलने लगा। टोपी को वह अपने हाथ में लिये था। हम गांव के अन्दर से होकर गये। राह में कुछ किसानों से भेंट हुई। वे ख़ाली गाड़ियों में खलिहान से लौट रहे थे। वे गीत गाते आ रहे थे, आगे-पीछे की ओर झूम रहे थे और अपनी टांगों को हवा में झुला रहे थे। हमारी गाड़ी पर और मुखिया पर नज़र पड़ते ही वे एकदम चुप हो गये, जाड़ों की अपनी टोपियों को (यह गर्मियों का मौसम था) उन्होंने सिर से उतार लिया और इस तरह उठ खड़े हुए जैसे हुकम पाने का इन्तज़ार कर रहे हों। आर्कादी पावलिच ने, अभिवादन में, दयालुता के साथ अपनी गरदन हिला दी। साफ़ मालूम होता था कि गांव में हलचल की एक लहर-सी दौड़ गयी है। चारख़ाने कपड़ों के घाघरे पहने किसान स्त्रियों ने बेसमझ या अति उत्साही कुत्तों को छेपटियों से भगा दिया। एक बूढ़े ने जो टांग से लंगड़ा था और जिसकी दाढ़ी ठीक उसकी आंखों के नीचे से उगी मालूम होती थी, पानी पीते अपने घोड़े को अधबीच में ही कुंदे से अलग खींच लिया और, जाने किस अज्ञात प्रेरणा से उसकी पसलियों में घूंसा मारा, और अभिवादन में झुककर खड़ा हो गया। लम्बी लम्बी क़मीज़ें पहने लड़के चिल्लाकर झोंपड़ियों में दौड़ गये, पेट के बल अपनी ऊंची चौखट से जा लटके—सिरों को नीचा किये और टांगों को हवा में ऊंचा उठाये, और कलाबाज़ी-सी खाकर अत्यन्त ताबड़तोड़ गति से अंधेरी ड्योढ़ियों में जा छिपे, जहां से वे फिर प्रकट नहीं हुए। मुर्ग़ियां

तक भगदड़-सी मचातीं फाटक की ओर लपक चलीं। एक साहसी मुर्ग़ा जिसकी काली गरदन ऐसी मालूम होती थी जैसे वह साटिन की जाकेट पहने हो और जिसकी लाल दुम उसकी कलगी को छुआ चाहती थी, बांग तक देने के लिए तैयार हुआ, लेकिन फिर एकाएक डरकर भाग खड़ा हुआ। कारिन्दे का बंगला अन्य सबसे अलग, सन के एक हरे-भरे घने खण्ड के बीचोंबीच था। हम फाटक पर पहुंचकर रुक गये। मि० पेनोचकिन उठा, नाटकीय अन्दाज़ में अपने लबादे को उसने उतार डाला, और अपने इर्द-गिर्द सुहावनी नज़र डालते हुए गाड़ी से नीचे उतर आया। कारिन्दे की पत्नी ने सलीक़े से घुटने झुकाकर हमारा अभिवादन किया और मालिक का हाथ चूमने के लिए आगे बढ़ आयी। आर्कादी पावलिच ने उसे जी भरकर अपना हाथ चूमने दिया और इसके बाद पैड़ियों पर चढ़ने लगा। बाहर की ड्योढ़ी में, एक अंधेरे कोने में, मुखिया की पत्नी खड़ी थी। उसने अभिवादन में घुटने झुकाये, लेकिन हाथ चूमने के लिए आगे बढ़ने का साहस न कर सकी। शीतल बंगले में – जैसा कि उसे कहा जाता था – ड्योढ़ी के दाहिनी ओर – दो अन्य औरतें अभी भी काम में जुटी थीं। वे दुनिया-भर का कबाड़, ख़ाली टब, तख़्तों की भांति सख़्त भेड़ की खाल के कोट, चीकट बरतन, पालना जिसमें रंगबिरंगे चीथड़ों का ढेर जमा था और उनपर एक बच्चा लेटा था, बाहर उठा उठाकर ला रही थीं और झाड़ुओं से गर्द साफ़ कर रही थीं। आर्कादी पावलिच ने उन्हें खदेड़ दिया और देव-प्रतिमाओं के नीचे एक बेंच पर आसन जमाकर बैठ गया। कोचवानों ने ट्रंक, बैग और अन्य सामान लाकर भीतर रखना शुरू किया। हर बार जब वे भीतर आते तो इस बात की कोशिश करते कि उनके भारी-भरकम जूतों की आवाज दबी रहे।

इस बीच आर्कादी पावलिच ने फ़सल, बोवाई तथा खेती संबंधी अन्य विषयों के बारे में मुखिया से पूछताछ शुरू कर दी। मुखिया के जवाब सन्तोषप्रद थे, लेकिन वह एक प्रकार के बोझिल अटपटेपन के

साथ बोल रहा था, जैसे सुन्न हुई उंगलियों से अपने कोट के बटन बंद कर रहा हो। वह दरवाज़े में खड़ा था, अपने इर्द-गिर्द बराबर ताक लगाये, फुर्तीले अरदली के लिए रास्ता छोड़ने के लिए चौकस। उसके सबल कंधों की दीवार के उस पार, ड्योढ़ी में, मुझे कारिन्दे की घरवाली की एक झलक दिखाई दी जो किसी अन्य किसान स्त्री को चोरी-छिपे पीट रही थी। सहसा एक गाड़ी खड़खड़ाती हुई आयी और पैड़ियों के पास आकर रुक गयी। कारिन्दे ने भीतर प्रवेश किया।

आर्कादी पावलिच के शब्दों में असली प्रशासनिक शक्ति से लैस इस आदमी का क़द नाटा था, कंधे चौड़े, बाल पके हुए, काठी मज़बूत, लाल नाक, छोटी छोटी नीली आंखें और दाढ़ी पंखे की भांति फैली हुई थी। लगे हाथ यहां यह बता दें कि जब से रूस का अस्तित्व क़ायम हुआ है, तब से एक भी मिसाल आपको ऐसी नहीं मिलेगी जिसमें कोई धनी और खुशहाल आदमी, बिना बड़ी तथा झाड़ीनुमा दाढ़ी के हो। कभी कभी ऐसा भी होता है कि एक आदमी की दाढ़ी जो जीवन-भर पतली और खूंटीनुमा रही, अचानक बढ़ने-फैलने लगती है, आलोक-मण्डल की भांति उसके चेहरे को चारों ओर से घेर लेती है, और देखकर आश्चर्य होता है कि इतने बाल कहां से निकल आये! कारिन्दे की पेरोव में निश्चय ही मज़े से छनती होगी। उसका चेहरा असंदिग्ध रूप में गुले लाल बना हुआ था, और उसके शरीर से मदिरा की गंध आ रही थी।

"ओह, हमारे माई-बाप, हमारे किरपानिधान!" उसने सुरीली आवाज़ में कहना शुरू किया। उसकी मुख-मुद्रा इतनी गहरी भावना से उद्वेलित थी कि हर घड़ी ऐसा लगता था जैसे वह अभी आंसुओं में फूट पड़ेगा। "हमारे तारनहार, आख़िर आपने किरपा की, आख़िर आप हमारे यहां पधारे ... आपका हाथ, अन्नदाता, आपका हाथ," उसने कहा और मालिक का हाथ चूमने की पेशवाई में उसके होंठ बाहर को निकल आये। आर्कादी पावलिच ने उसकी इच्छा पूरी की और मित्रतापूर्ण आवाज़ में पूछा–

"हां तो भाई सोफ़रोन, कहो, कैसी गुज़र रही है?"

"ओह, माई-बाप!" सोफ़रोन चहका, "सब ठीक गुज़र रही है, मालिक। और ठीक क्यों न गुज़रे, मालिक, जबकि आप, हमारे माई-बाप, हमारे तारनहार, जीवन के आख़िरी छन तक हमें ख़ुशी से सराबोर करने के लिए, किरपा कर पधारे हैं? भगवान से धन्यवाद करते हैं, मालिक, भगवान से धन्यवाद करते हैं। आपकी किरपा से सब ठीक है, सब अच्छी तरह चल रहा है।"

इतना कहकर वह कुछ रुक-सा गया, अपने मालिक की ओर उसने देखा, और जैसे भावनाओं की बाढ़ में आकर (नशे की झोंक का भी इसमें कुछ हाथ था) उसने एक बार फिर मालिक का हाथ चूमने के लिए बिनती की, और पहले की तुलना में और भी ज्यादा चिचियाना शुरू किया।

"ओह आप, हमारे माई-बाप, हमारे खेवैया... और... हां, और... ओह, ख़ुदा बख़्शे मुझे... ख़ुशी ने मुझे कितना उल्लू बना दिया है... ओह ख़ुदा बख़्शे मुझे ... मैं देख रहा हूं और अपनी आंखों पर मुझे विश्वास नहीं हो रहा है ... ओह, हमारे माई-बाप!"

आर्कादी पावलिच ने एक नज़र मेरी ओर देखा, मुसकराया, और पूछा—"N'est-ce pas que c'est touchant?"*

"लेकिन, आर्कादी पावलिच, मेरे मालिक," हार न माननेवाले कारिन्दे ने फिर कहना शुरू किया, "आप भी ख़ूब हैं मालिक! आप तो सरकार, मेरा दिल ही तोड़ डालेंगे! अपने आने की ख़बर देने की किरपा तक आपने नहीं की, मालिक। रात को आप आराम कहां करेंगे? देखिये न, यहां सब कितना गंदा है, एकदम कूड़ा-कर्कट!"

"बस, सोफ़रोन, बस," आर्कादी पावलिच ने मुसकराते हुए जवाब दिया, "ज़्यादा बको नहीं। यह जगह ठीक है।"

---

*क्या यह देखकर तुम्हारे दिल में दया नहीं उमड़ पड़ती है?

"ठीक तो है, माई-बाप, लेकिन किसके लिए? हम जैसे किसानों के लिए यह ठीक है, लेकिन ग्रापके लिए... ग्रोह, हमारे माई-बाप, हमारे किरपानिधान... ग्रोह, ग्राप... हमारे माई-बाप... मुझ जैसे बूढ़े खूसट को माफ़ करना, मालिक। ख़ुदा बख्शे, मेरा दिमाग़ ठिकाने नहीं। मैं एकदम बहक गया हूं।"

इस बीच सांझ का भोजन परस दिया गया। ग्रार्कादी पावलिच ने खाना शुरू किया। वृद्ध ने ग्रपने बेटे को खदेड़कर भगा दिया, यह कहते हुए कि उससे कमरे में घुटन है।

"ग्रच्छा तो बूढ़े बाबा, ग्रब यह बताग्रो कि ज़मीन की तक़सीम का मामला तो निबट गया न?" ग्रार्कादी पावलिच ने मेरी ग्रोर ग्रांख मारते तथा, प्रत्यक्षतः गांव की बोली में बतियाने का प्रयत्न करते हुए कहा।

"हां मालिक, ग्रापकी किरपा से, ज़मीन के हिस्से हमने तय कर लिये हैं। परसों इसकी फ़ेहरिस्त बना ली गयी। ख्लीनोवो के लोगों ने शुरू शुरू में टंटा किया... सच, उन्होंने टंटा किया... हम यह चाहते हैं... ग्रौर हम वह चाहते हैं... ख़ुदा जानता है, ऐसी कोई चीज़ नहीं जिसे वे न चाहते हों... लेकिन वे बेवक़ूफ़ हैं, मालिक, बिल्कुल जाहिल। लेकिन हमने, मालिक, ग्रापकी किरपा से, ग्रपनी शुक्रिया ग्रदा की, ग्रौर वह जो पंच था – मिकोलाई मिकोलाइच – उसको हमने ख़ुश कर दिया। ग्रापके ग्रार्डर के मुताबिक़ हमने सारा काम किया, मालिक। ठीक वैसे ही, जैसे कि ग्रापने ग्रार्डर देने की किरपा की थी। येगोर दिमीत्रिच को तो सब मालूम है। उसके सिवा हमने ग्रौर कुछ नहीं किया।"

"येगोर से मुझे रिपोर्ट मिल गयी थी," ग्रार्कादी पावलिच ने शान के साथ कहा।

"ठीक मालिक, येगोर दिमीत्रिच, बिल्कुल ठीक!"

"हां तो, मेरी समझ में, ग्रब तो तुम सन्तुष्ट हो न?"

सोफ़रोन जैसे इसी की प्रतीक्षा में था।

"ओह, आप माई-बाप हैं हमारे किरपानिधान," पहले की भांति सुरीली आवाज़ में उसने कहना शुरू किया, "बेशक, मालिक... बस क्या कहें, मालिक, आप हमारे माई-बाप हैं, और आपके लिए दिन-रात भगवान से दुआ करते हैं... लेकिन मालिक, ज़मीन बहुत थोड़ी है, इसमें शक नहीं..."

आर्कादी पावलिच ने उसे बीच में ही काट दिया।

"बस बस, सोफ़रोन, बहुत हुआ। मैं जानता हूं कि मेरी चाकरी में तुम सरगर्म हो। हां तो अनाज गाहने का काम कैसा चल रहा है?"

सोफ़रोन ने एक उसास भरी।

"हां तो, माई-बाप, गाहने का काम कुछ ज़्यादा अच्छा नहीं चल रहा है। लेकिन मालिक, मैं एक छोटी-सी घटना के बारे में आपको बताना चाहता हूं जो यहां घटी। (यह कहते हुए वह आर्कादी पावलिच के और निकट सरक आया, अपनी बांहों को अलग किये, नीचे झुका हुआ और अपनी एक आंख को सिकोड़े।) हमारी ज़मीन में एक लाश मिली।"

"सो कैसे?"

"यह तो मालिक, मेरे दिमाग़ को भी नहीं पता चलता। माई-बाप, लगता है जैसे यह किसी शैतान की करनी हो। लेकिन, भाग्य से, लाश हदबंदी के पास मिली। सच पूछो तो हमारे बाज़ू। मैंने फ़ौरन हुकम दिया कि समय रहते उसे खींचकर पड़ोसी की ज़मीन की पट्टी पर डाल दो। और वहां मैंने चौकी बैठा दी, और अपने सब लोगों को हुकम दे दिया। कहा कि बस, मुंह बन्द रखो। लेकिन मैंने इस ख़्याल से कि मामला कहीं औंधा न पड़ जाय, पुलिस अफ़सर को समझा दिया कि कैसे क्या हुआ। 'हां तो बात यह हुई,' मैंने कहा। और आप जानो, मुझे उसको चाय पिलानी पड़ी, उसकी मुट्ठी भी गरम करनी पड़ी... हां तो मालिक, ठीक किया न मैंने? दूसरों के कंधों पर हमने बला डाल दी। आप जानो, लाश का मामला, दो सौ रूबल से कम कभी न लगते। यह उतना ही निश्चित है जितना कि मौत!"

मि० पेनोचकिन अपने कारिन्दे की चालाकी पर खुलकर हंसा और गरदन से उसकी ओर संकेत करते हुए कई बार मुझसे कहा—"Quel gaillard, ah!"*

इस बीच बाहर काफ़ी अंधेरा घिर आया था। आर्कादी पावलिच ने मेज़ को साफ़ करने और पुवाल भीतर लाने का आदेश दिया। अरदली चाकर ने हमारे लिए चादरें बिछा दीं और तकिए लगा दिये। हम लेट गये। अगले दिन के लिए आदेश लेकर सोफ़रोन चला गया। सोने से पहले आर्कादी पावलिच ने रूसी किसानों के बेहतरीन गुणों के बारे में कुछ देर और बातचीत की; और इसी प्रसंग में बताया कि जब से सोफ़रोन ने इस जगह का बन्दोबस्त संभाला है, शिपीलोवका के किसानों ने एक कोपेक भी कभी बाक़ी नहीं चढ़ने दिया... चौकीदार ने अपनी मूंगरी बजायी। एक बच्चा जिसमें ज़ाहिर था, आत्म-नियन्त्रण की भावना अभी पूर्ण रूप से नहीं जागी थी, किसी कुटिया में रोने लगा... धीरे धीरे हम सो गये।

दूसरे दिन सुबह हम अपेक्षाकृत तड़के ही उठ खड़े हुए। मैं र्याबोवो के लिए रवाना होने की तैयारी कर रहा था, लेकिन आर्कादी पावलिच मुझे अपनी जागीर दिखाने के लिए व्यग्र था और रुकने के लिए उसने मुझसे अनुरोध किया। मुझे भी यह ख़ाहिश हुई कि देखूं, प्रशासनिक शक्ति से लैस इस आदमी के—सोफ़रोन के—विशिष्ट गुण किस तरह अमली काम में प्रकट होते हैं। कारिन्दा हाज़िर हुआ। वह नीले रंग का कोट पहने था, और उसके ऊपर लाल पेटी कसे था। पिछली सांझ की अपेक्षा इस वक़्त वह कुछ कम बातूनी था, चौकस और एक-टक नज़र से अपने मालिक के चेहरे की ओर देख रहा था, और सुसम्बद्ध तथा सुसंगत जवाब दे रहा था। उसके साथ हम खलिहान की ओर चल दिये। सोफ़रोन का लड़का भी सात फ़ुट ऊंचा मुखिया, जो हर बाहरी लक्षणों से कुन्द-बुद्धि जान पड़ता था, हमारे साथ हो लिया, और कुछ आगे चलकर गांव का

---

*कितना चालाक है!

कान्स्टेबल फ़ेदोसेइच भी हमारे साथ आ मिला। वह अवकाश-प्राप्त सैनिक था। उसकी मूंछें भीमाकार थीं और चेहरे पर एक ऐसा असाधारण भाव छाया था, मालूम होता जैसे बहुत पहले उसे कोई चौंका देनेवाला सदमा लगा हो, और उससे वह अभी तक पूरी तरह छुटकारा नहीं पा सका हो। हमने खलिहान पर नज़र डाली, अनाज के पूलों, आउट हाउसों, पवन-चक्की, मवेशियों के बाड़े, नवांकुरित खेती और सन के खेतों को देखा। हर चीज़, वाक़ई, एकदम बढ़िया हालत में थी। एक ही चीज़ थी जो कुछ चक्कर में डालती थी। और वह चीज़ थी किसानों के लटके हुए चेहरे। सोफ़रोन ने दोनों ही चीज़ों पर नज़र रखी थी—सजावट पर भी और उपयोगिता पर भी। सभी खाइयों के किनारे किनारे उसने सरपत बो रखे थे, खलिहान में चारे के ढेरों के बीच उसने छोटी छोटी पगडंडियां बना रखी थीं और उनके ऊपर महीन बालू छितराया हुआ था। पवन-चक्की के ऊपर उसने हवा का रुख़ बतानेवाली एक पंखी लगा रखी थी, पंखी भालू की शकल की थी, उसका जबड़ा खुला था और उसकी लाल जीभ बाहर निकली हुई थी। ईटों के मवेशीघर का अगवाड़ा यूनानी ढंग का बना मालूम होता था और उसपर सफ़ेद अक्षरों में ये शब्द अंकित थे—'मवेशी का बाड़ा, बनाया एक हज़ार आठ सौ चालीस ईसवी'। आर्कादी पावलिच का हृदय एकदम उमंगा था, और उन्होंने फ़्रेंच भाषा में बोलते हुए मुझे लगान लेने की पद्धति के फ़ायदे बताने शुरू कर दिये, लगे हाथ यह भी जताते हुए कि बेगार से ज़मींदारों को ज़्यादा फ़ायदा है—"लेकिन, आख़िरकार, वही सब कुछ नहीं है।" उन्होंने कारिन्दे को सलाह देनी शुरू की कि आलू कैसे लगाने चाहिएं, मवेशियों के लिए चारा कैसे तैयार करना चाहिए, इत्यादि। सोफ़रोन मालिक की टिप्पणियों को ध्यान से सुनता रहा, कभी कभी जवाब में कुछ कह देता, लेकिन आर्कादी पावलिच को अब यह माई-बाप किरपानिधान कहकर सम्बोधित नहीं कर रहा था, और बराबर इस पर बल दे रहा

था कि ज़मीन बहुत थोड़ी है, और यह कि कुछ और ख़रीदना अच्छा होगा। "तो फिर ख़रीद लो न कुछ," आर्कादी पावलिच ने कहा, "बेशक, मेरे नाम में। मुझे कोई उज़्र नहीं।" इसपर सोफ़रोन ने कोई जवाब नहीं दिया, वह केवल अपनी दाढ़ी को सहलाता रहा। "अच्छा तो चलिये, अब ज़रा अपने जंगल की ओर निकल चलें," आर्कादी पावलिच ने कहा। ज़ीन कसे घोड़े फ़ौरन बाहर निकाल लाये गये, और हम जंगल की ओर—या 'घेर' की ओर जैसा कि उसे इधर कहा जाता है—चल दिये। यह 'घेर' क्या थी, एक घना अछूता जंगल था। इसके लिए आर्कादी पावलिच ने सोफ़रोन को शाबाशी दी और उसके कंधे थपथपाये। जंगलात के मामले में आर्कादी पावलिच रूसी विचारों से चिपका था और इस सम्बन्ध में उसने मुझे—ख़ुद उसके ही शब्दों में—एक मनोरंजक क़िस्सा सुनाया कि किस प्रकार एक हंसोड़ भूस्वामी ने जंगल के अपने रखवाले को अच्छा सबक़ देने के लिए उसकी आधी दाढ़ी उखाड़ डाली थी—यह साबित करने के लिए कि उखड़ जाने पर जब दोबारा बाल उगेंगे तो ज़्यादा घने नहीं होंगे। लेकिन अन्य बातों में सोफ़रोन या आर्कादी पावलिच, दोनों में से कोई भी नये तरीक़ों के ख़िलाफ़ नहीं थे। गांव लौटने पर कारिन्दा हमें अनाज को ओसाने की एक मशीन दिखाने के लिए ले गया जिसे उसने हाल ही में मास्को से मंगवाया था। यह मशीन, इसमें शक नहीं, बड़ी सफ़ाई से काम करती थी। लेकिन अगर सोफ़रोन को यह मालूम होता कि ख़ुद उसके लिए, और उसके मालिक के लिए, इस मुआइने में कितनी अप्रिय घटना घटनेवाली है, तो वह, बिलाशक, हमें लेकर घर से बाहर पांव न रखता।

हुआ यह कि आउट हाउस से निकलते ही अधोलिखित नज़ारा हमें दिखाई दिया। दरवाज़े से कुछ डग दूर, एक गंदे जोहड़ के पास जिसमें तीन बत्तखें दीन-दुनिया से बेख़बर छपछपा रही थीं, दो किसान घुटनों के बल खड़े थे—एक साठ वर्ष का बूढ़ा था, और दूसरा बीस वर्ष का

लड़का। दोनों घर की कती-बुनी टाकियां लगी क़मीज़ें पहने थे, उनके पांव नंगे थे और कमर में रस्सियां कसे थे। गांव का कान्स्टेबल फ़ेदोसेइच उनके साथ उलझ रहा था। अगर हम आउट हाउस में कुछ क्षण और हिलगे रहते तो शायद वह उन्हें खिसकाने में सफल हो गया होता। लेकिन अब हमें देखकर उसने अपने बदन को चौकस किया और टैन्शन खड़ा हो गया। पास ही मुंह बाये मुखिया खड़ा था, उसकी मुट्ठियां बेजान-सी लटकी हुई थीं। आर्कादी पावलिच ने अपनी भौंहें सिकोड़ लीं, होंठ में दांत गड़ाये और प्रार्थियों के निकट पहुंचा। वे दोनों, मुंह बंद, उसके पांवों पर पसर गये।

"अरे, तुम चाहते क्या हो? बात क्या है?" उसने कड़ी आवाज़ में थोड़ा गुनगुनाते हुए पूछा। (किसानों ने एक-दूसरे की ओर देखा, मुंह से आधा शब्द तक नहीं निकाला, केवल अपनी आंखों को थोड़ा भींचा—जैसे सूरज उनके मुंह के सामने हो, और उनके सांस की गति तेज़ हो चली।)

"हां तो बात क्या है?" आर्कादी पावलिच ने फिर पूछा, और तुरंत सोफ़रोन की ओर घूमकर देखा, "ये किस घराने के हैं?"

"तोबोलेयेव घराने के," कारिन्दे ने धीरे से जवाब दिया।

"हां तो तुम क्या चाहते हो?" आर्कादी पावलिच ने फिर कहा, "क्या तुम्हारी जुबान को लक़वा मार गया है, या कुछ और बात है? बोलो, तुम क्या चाहते हो?" अन्त में, वृद्ध की ओर सिर से इशारा करते हुए, उसने कहा, "और देखो, डरो नहीं, बेवक़ूफ़!"

वृद्ध की झुर्रियां-पड़ी गहरी सांवली गरदन आगे को खिंच आयी। उसके बल खाते हुए नीले-से होंठ खुले। बुदबुदाती आवाज़ में उसके मुंह से निकला—"हमारी रक्षा करो, मालिक!" और उसका माथा फिर धरती पर जा टिका। युवक किसान भी धरती पर पसर गया। आर्कादी पावलिच ने गर्व के साथ उनकी झुकी गरदनों पर एक नज़र डाली, अपने सिर को

पीछे की ओर फेंका, और अपनी टांगों को पुल-सा बनाये खड़ा रहा।

"बात क्या है? क्या तुम्हें किसी से शिकायत है?"

"दया, मालिक, दया! हमें सांस लेने दो... ओह, इस जुल्म से हम मर जायेंगे!" (वृद्ध के मुंह से बड़ी मुश्किल से शब्द निकल रहे थे।)

"तुम्हें कौन सताता है?"

"सोफ़रोन याकोवलिच, मालिक!"

आर्कादी पावलिच कुछ क्षण तक चुप रहा।

"तुम्हारा नाम क्या है?"

"अन्तीप, मालिक।"

"और यह कौन है?"

"मेरा लड़का, मालिक।"

आर्कादी पावलिच फिर चुप हो गया। अपनी मूंछों को उसने खींचा।

"हां तो उसने तुम्हें क्या सताया है?" उसने फिर पूछा, अपनी मूंछों के ऊपर से वृद्ध की ओर देखते हुए।

"क्या कहें, मालिक, उसने हमें एकदम बरबाद कर दिया है। दो लड़कों को, मालिक, उनकी बारी नहीं थी, उसने रंगरूट बनाकर भर्ती करा दिया। और अब वह तीसरे को भी ले जा रहा है। और मालिक, कल हमारी रही-सही आख़िरी गाय बाड़े में से खदेड़ ली गयी, और मेरी बूढ़ी घरवाली को, यह जो सरकार यहां मौजूद है, इन्होंने पीटा।" (उसने मुखिया की ओर इशारा किया।)

"हुं!" आर्कादी पावलिच ने टिप्पणी की।

"हमारे रक्षक, उससे हमें बचाओ। नहीं तो वह बिल्कुल हमारा नाश कर डालेगा।"

आर्कादी पावलिच ने भौंहें सिकोड़ लीं।

"यह सब क्या है?" धीमी आवाज़ में, नाराज़ी का भाव जताते हुए, उसने अपने कारिन्दे से पूछा।

"यह नशा करता है, मालिक," कारिन्दे ने जवाब दिया, विनम्रता का पहले से भी ज़्यादा प्रदर्शन करते हुए, "तिस पर काहिल भी है। और मालिक, पिछले पांच साल से यह बराबर बाक़ी चढ़ाये है।"

"सोफ़रोन याकोवलिच ने मेरी ओर से बाक़ी अदा कर दिया, मालिक," वृद्ध कहता गया, "पांच साल हुए जब उसने मेरा बाक़ी अदा किया था। उसने अदा कर दिया, मालिक, और बदले में मुझे अपना बन्धक दास बना लिया, और अब..."

"लेकिन तुमने बाक़ी चढ़ने क्यों दिया?" आर्कादी पावलिच ने धमकी के स्वर में पूछा। (वृद्ध का सिर लटक आया।)

"तुम्हें पीने की लत है, शराबख़ानों में मंडराते रहते हो, इसमें शक नहीं।" (वृद्ध ने बोलने के लिए अपना मुंह खोला।)

"मैं तुम्हें जानता हूं," आर्कादी पावलिच चिढ़कर कहता गया, "तुम समझते हो कि पीने के सिवा तुम्हें और कुछ नहीं करना-धरना—पीना और तन्दूर पर लम्बे पड़ रहना, और अपना काम कर्मठ किसानों के ज़िम्मे छोड़ देना।"

"और यह गालियां भी बकता है," कारिन्दे ने आहुति छोड़ी।

"सो तो पक्की बात है। हमेशा यही होता है। जाने कितनी बार मैं यह देख चुका हूं। बारहों महीनों पीता और गालियां बकता है, और फिर आकर पांव पकड़ता है।"

"दया करो, हमारी रक्षा करो, मालिक, आर्कादी पावलिच," वृद्ध ने हताश मुद्रा में कहना शुरू किया, "मैंने कब बुरा बोल मुंह से निकाला? ख़ुदा जानता है, मुझमें इतना दम कहां जो बेअदबी करता। सोफ़रोन याकोवलिच के जी में गांठ पड़ गयी है—जाने क्यों वह मुझसे नाराज़ है—ख़ुदा ही इसका न्याव करेगा। वह मुझे बिल्कुल तहस नहस कर डालेगा, मालिक... आख़िरी... यह आख़िरी... मेरा लड़का... उसे भी वह... (वृद्ध की झुर्रियोंदार पीली आंखों में एक आंसू चमक आया।) दया करो, किरपानिधान, हमारी रक्षा करो..."

"ग्रौर केवल हमें ही नहीं..." युवा किसान ने कहना चाहा...

ग्रार्कादी पावलिच एकदम ग़ुस्से में भड़क उठा।

"तुझसे राय देने के लिए किसने कहा था? ग्रपनी यह थूथनी बंद रख जब तक मैं तुझसे बोलने के लिए न कहूं! हिम्मत तो देखो! बस ख़ामोश, कह देता हूं, एकदम ख़ामोश! वाह, ज़रा सोचो तो, निरी बग़ावत नहीं तो यह ग्रौर क्या है! नहीं, मेरे भाई, मेरे प्रबन्ध में तुम बग़ावत नहीं कर सकते... हां, मेरे प्रबन्ध में... (ग्रार्कादी पावलिच ग्रागे बढ़ ग्राया, लेकिन शायद उसे मेरी उपस्थिति की याद हो ग्रायी, सो वह घूम गया ग्रौर हाथों को उसने ग्रपनी जेबों में डाल लिया।) "Je vous demande bien pardon, mon cher," * ग्रपनी ग्रावाज़ को ग्रर्थभरे ग्रन्दाज़ में धीमा करते हुए बाधित मुसकान के साथ उसने कहा। "C'est le mauvais côté de la médaille...** बस, इतना ही काफ़ी है, कुछ ग्रौर कहने की ज़रूरत नहीं, मैं उससे कहूं," किसानों की ग्रोर देखे बिना ही वह कहता गया (किसान नहीं उठे।) "ग्ररे, क्या तुमने सुना नहीं... बस, इतना ही काफ़ी है। मैं उससे कहूं... ग्रब तुम जा सकते हो।"

ग्रार्कादी पावलिच ने उनकी ग्रोर से मुंह फेर लिया। "परेशानी, बस ग्रौर कुछ नहीं," दांतों के बीच से वह बुड़बुदाया, ग्रौर लम्बे डगों से घर की ग्रोर चल दिया। सोफ़रोन भी उसके पीछे हो लिया। गांव के कान्स्टेबल ने ग्रपनी ग्रांखों को इस तरह खोला मानो वह ग्रभी शून्य में भारी छलांग मारनेवाला हो। मुखिया ने बत्तख़ों को जोहड़ से खदेड़ दिया। प्रार्थी कुछ देर उसी मुद्रा में बने रहे फिर उन्होंने एक दूसरे की ग्रोर देखा ग्रौर, ग्रपने सिरों को मोड़े बिना, ग्रपनी राह थामी।

इसके दो घंटे बाद र्याबोवो पहुंच मैं शिकार की तैयारी कर रहा

---

* इसके लिए मुझे माफ़ कीजिये, प्रिय।

** यह तस्वीर का बुरा पहलू है।

तो यह... कि वह उन्हें पीटता है। वह वहशी है, इन्सान नहीं। मैंने कहा न, कुत्ता, गली का कुत्ता, बिल्कुल नकारा। सच, ऐसा है वह!"

"लेकिन यह क्या बात है कि वे उसकी शिकायत नहीं करते?"

"जब कोई बक़ाया नहीं, मालिक ख़ुश है, सो उसके लेखे कुछ भी हुआ करे। किसकी हिम्मत है जो शिकायत करे," कुछ रुककर उसने अन्त में कहा, "न बाबा, वह मिज़ाज ठीक करके रख देगा... सो अच्छा यही है कि दुम दबाकर बैठे रहो... न-न, वह जान को आ जाय..."

मुझे अन्तीप का ध्यान आया, और जो कुछ मैंने देखा था उसे बताया।

"देखा आपने," अनपादीस्त ने टिप्पणी की, "वह अब उसे चबा जायेगा, वह उसे कच्चा निगल जायेगा। मुखिया उसकी मरम्मत करेगा। ज़रा सोचो तो, कितना निरीह, भाग्य का मारा है वह! और उसका क़सूर क्या है... गांव की पंचायत में उसकी कारिन्दे से कुछ कहा-सुनी हो गयी, और वह, एकदम झुंझला उठा। भला वह क्यों बरदाश्त करे... इतना बड़ा मामला, बना दिया! सो उसने उसे अन्तीप को, कोंचना शुरू किया। उसे अब वह समूचा ही निगल जायेगा। देखा आपने, इतना कमीना है वह। कमीना कुत्ता–ख़ुदा मेरी गुमराहियों को माफ़ करे–वह जानता है कि किसका गला दबोचना चाहिए। उस बूढ़ों को जो कुछ अमीर हैं, जो काम करनेवाले बड़े परिवारों के स्वामी हैं, उन्हें वह नहीं छूता, गंजा शैतान कहीं का! एक इसी से सारा भेद खुल जाता है। उस पत्थर-दिल बदमाश ने, कमीने कुत्ते ने, बारी न होने पर भी अन्तीप के लड़कों को भर्ती के लिए क्यों भेज दिया? ओह, ख़ुदा मेरी गुमराहियों को माफ़ करे!"

हम शिकार करने चल पड़े।

जाल्त्सब्रून्न, साइलेशिया, जुलाई १८४७

खाता-घर

शारद् के दिन थे। अपनी बन्दूक़ उठाये खेतों में मंडराते मुझे कई घंटे बीत चुके थे, और कूर्स्क राजमार्ग पर स्थित सराय में – जहां त्रोइका गाड़ी मेरी प्रतीक्षा कर रही थी – मैं सांझ तक न लौटता अगर अत्यन्त महीन और निरन्तर बारिश न हो रही होती जो सुबह से ही मुझे किसी चिरकुमारी की ज़िद और निर्ममता से परेशान न किये होती। अन्त में आस-पास में जहां भी जगह मिले कुछ देर के लिए सिर छिपाने के लिए मैं मजबूर हो गया। उस समय जबकि मैं अभी सोच ही रहा था कि किस दिशा में मुझे प्रयाण करना चाहिए, अचानक मटर के एक खेत के निकट एक धंसी हुई सी झोंपड़ी पर मेरी नज़र पड़ी। मैं झोंपड़ी के पास पहुंचा, भूसे के छप्पर के नीचे झांककर देखा, तो एक वृद्ध आदमी पर मेरी नज़र पड़ी। वह इतना जरा-जीर्ण था कि मुझे एकाएक उस मरणासन्न बकरे की याद हो आयी जो राबिन्सन क्रूज़ो को अपने द्वीप की एक खोह में मिला था। वृद्ध उकडूं होकर बैठा था, उसकी छोटी छोटी चुंधी आंखें आधी मुंदी थीं और वह, जल्दी जल्दी लेकिन सावधानी के साथ, ख़रगोश की भांति, सूखी और कड़ी मटर के दाने को चबा रहा था, (बेचारे के मुंह में एक भी दांत बाक़ी नहीं बचा था)। मटर के दाने को वह कभी एक गाल में और कभी दूसरी गाल में निरन्तर घुमाता। इस काम में वह इतना व्यस्त था कि मेरे आगमन की ओर उसका ध्यान तक नहीं गया।

"बाबा, बूढ़े बाबा!" मैंने कहा। उसने मुंह चलाना बंद कर दिया, अपनी भौंहों को खूब ऊंचा उठाया और सप्रयास अपनी आंखों को खोला।

"क्या है?" फटी-सी आवाज़ में वह बुदबुदाया।

"इधर पास में ही कोई गांव है क्या?" मैंने पूछा।

वृद्ध ने फिर मुंह चलाना शुरू कर दिया था। उसने मेरी बात सुनी नहीं। मैंने, पहले से ज़्यादा ऊंची आवाज़ में अपना सवाल दोहरा दिया।

"ओह, गांव? लेकिन तुम चाहते क्या हो?"

"देखते तो हो, बारिश से बचने की कोई जगह।"

"क्या?"

"बारिश से बचने की जगह!"

"ओह!" (धूप में संवलायी अपनी खोपड़ी को उसने खुजलाया।) "अच्छा तो उधर से जाओ," अनिश्चित दिशा में हाथ हिलाते हुए उसने अचानक कहा, "सो... जब तुम जंगल के पास से गुज़रोगे–समझे, जब तुम उधर जाओगे–तो वहां एक सड़क मिलेगी। तुम उसे छोड़ देना, और ठीक दाएं चलते जाना, दाएं एकदम दाएं... दाएं... बस, अनान्येवो गांव जा लगोगे। या सीतोव्का पहुंच जाओगे।"

वृद्ध की बात मुश्किल से पकड़ में आ रही थी। उसकी आवाज़ वहीं मूछों में उलझकर रह जाती थी, और उसकी ज़ुबान भी कुछ उसके बस में नहीं थी–बार बार अटपटा जाती थी।

"तुम किस गांव के हो, बाबा?" मैंने उससे पूछा।

"क्या?"

"तुम किस गांव के हो?"

"अनान्येवो का।"

"यहां क्या कर रहे हो?"

"क्या ?"

"यहां क्या कर रहे हो ?"

"चौकीदारी।"

"चौकीदारी, किसकी ?"

"मटरों की।"

मैं बरबस मुसकरा उठा।

"सच ! बाबा, तुम्हारी उम्र क्या होगी ?"

"भगवान जाने !"

"तुम्हारी आंखें तो जवाब दे चली हैं, क्यों ?"

"क्या ?"

"यह कि तुम्हें अब क्या दिखाई देता होगा ?"

"हां, जवाब दे चली हैं; कभी कभी तो कुछ सुनाई भी नहीं देता।"

"तो तुम चौकीदारी क्या ख़ाक करते होगे ?"

"ओह, यह मेरे मुखिया जानें।"

"मुखिया !" मैंने सोचा, और बड़ी अनुकम्पा के साथ इस निरीह वृद्ध की ओर मैंने देखा। उसने कुछ इधर-उधर टटोला, कपड़ों के भीतर से बासी रोटी का एक टुकड़ा बाहर निकाला और बच्चे की भांति उसे चूसने लगा। अपने धंसे हुए गालों को वह मुश्किल से चला पा रहा था।

मैं जंगल की दिशा में चल दिया, दाहिनी ओर मुड़ा, और जैसा कि वृद्ध ने मुझे सलाह दी थी, बराबर दाहिने हाथ बढ़ता गया, और आखिर एक बड़े गांव में पहुंचा। गांव में एक गिरजा था, पत्थर का बना और नये ढंग का–यानी खंभों वाला और एक खुली-सी गढ़ी भी। यह गढ़ी भी खंभों से लैस थी। अभी कुछ दूर ही था कि बारिश के महीन आल-जाल के बीच से एक बंगला मुझे दिखाई दिया जिसकी छत तख़्तों से पटी थी और जिसकी दो चिमनियां अन्य सब से ऊंची नज़र आ रही थीं। हो न हो, यह गांव के मुखिया का घर होगा। मेरे क़दम

उसकी दिशा में ही बढ़ चले, इस आशा से कि इस बंगले में समोवार, चाय, चीनी और मलाई जो एकदम खट्टी न हो, मिल सकेगी। अपने सर्दी से सिकुड़े कुत्ते को लिये मैं पैड़ियों पर चढ़ा, दालान के पास पहुंच उसका दरवाज़ा खोला और बजाय इसके कि एक बंगले का ताम-झाम—जैसा कि आम तौर से होता है—वहां दिखाई देता, काग़ज़ों से लदी कई मेज़ों, दो लाल अलमारियों, स्याही-बिखरे दवातों, स्याही सोखने के रेत से भरे टिन के पचीस-तीस सेर के बोझल बकसों, लम्बे क़लमों, आदि आदि पर मेरी नज़र पड़ी। एक मेज़ पर बीस-एक वर्ष का कोई युवक बैठा था—सूजा हुआ रुग्ण-सा चेहरा, छोटी छोटी आंखें चिकनाया हुआ सा माथा, लम्बे लम्बे गलमुच्छे, और क़ायदे के अनुसार नानकिन का भूरा लम्बा कोट वह पहने था जो गले और कमर के पास से चिकना हो गया था।

"क्या चाहते हो?" उसने मुझसे पूछा उस घोड़े की भांति जिसकी औचक में थूथनी पकड़ ली गयी हो।

"क्या कारिन्दा यहीं रहते हैं... या..."

"यह ज़मींदारी का मुख्य खाता-घर है," उसने बीच में ही कहा, "और मैं ड्यूटी कर रहा हूं। क्या तुम ने तख़्ती नहीं देखी? इसी लिए तो उसे वहां लगा रखा है।"

"मुझे अपने कपड़े सुखाने हैं। यह कहां हो सकता है? क्या गांव में समोवार है?"

"समोवार बेशक है," भूरे लम्बे कोटवाले युवक ने शान से कहा, "पादरी तिमोफ़ेई के यहां चले जाओ, या गृह-दासों की झोंपड़ी में, या नज़ार तारासिच के यहां, या अग्राफ़ेना के यहां जो मुर्ग़ियां पालने का काम करती है।"

"यह किससे बातें कर रहा है, काठ के उल्लू? क्या मुझे सोने नहीं देगा, मिट्टी के माधो!" बराबरवाले कमरे में से किसी ने चिल्लाकर कहा।

"यहां एक सज्जन आये हैं। पूछते हैं कि वह अपने कपड़े कहां सुखा सकते हैं।"

"कैसा सज्जन?"

"पता नहीं। बन्दूक़ और एक कुत्ता लिये हैं।"

बराबरवाले कमरे में पलंग के चरचराने की आवाज़ सुनाई दी। दरवाज़ा खुला और एक हट्टा-कट्टा जीव अन्दर चला आया—नाटा क़द और पचास वर्ष की आयु, सांड जैसी गरदन, उभरती आंखें, असाधारण रूप में गोल-मटोल गाल, समूचा चेहरा जैसे एकदम पालिश से चमचमाता।

"क्या चाहते हो?" उसने मुझसे पूछा।

"अपने कपड़े-लत्ते सुखाना चाहता हूं।"

"यहां तो ठीक नहीं है।"

"मुझे पता नहीं था कि यह खाता-घर है। लेकिन मैं पैसे देने को तैयार हूं..."

"अच्छा तो देखो, यहां कुछ बन्दोबस्त हो जायेगा," उस मोटे-ताज़े आदमी ने फिर कहा, "चलिये न, भीतर चलिये।" (वह मुझे दूसरे कमरे में ले गया, लेकिन उसमें नहीं जिस में से वह आया था।) "कहिये, इससे काम चलेगा?"

"बहुत ठीक... क्या कुछ चाय और मलाई भी मिल सकती है?"

"क्यों नहीं, तुरंत मिल जायेगी। इधर आप अपना यह ताम-झाम उतारेंगे और उधर, घड़ी-भर में, चाय तैयार हो जायेगी।"

"यह ज़मींदारी किसकी मिल्कियत है?"

"श्रीमती लोसन्यकोवा, येलेना निकोलायेवना की।"

वह बाहर चला गया। मैंने चारों ओर नज़र डाली। मेरे कमरे को दफ़्तर से अलग करनेवाले पार्टीशन से सटा हुआ चमड़े का एक बहुत बड़ा सोफ़ा रखा था। दो ऊंची पीठवाली कुर्सियां—ये भी चमड़े से मढ़ी

थीं — एकमात्र खिड़की के अग़ल - बग़ल रखी थीं। खिड़की गांव की सड़क की ओर खुलती थी। दीवारों पर हरे रंग का काग़ज़ लगा था जिस पर गुलाबी रंग के फूल छपे थे। कमरे में तीन बड़े बड़े तैल-चित्र टंगे थे। इनमें से एक किसी शिकारी कुत्ते का था जिसके गले में नीला पट्टा बंधा था। चित्र के नीचे लिखा था — 'मेरा सुख'; कुत्ते के पांव के निकट एक नदी बह रही थी। नदी के दूसरे तट पर, सनोबर के एक पेड़ के नीचे, अपने कान को खड़ा किये, बहुत बड़े आकार का एक खरगोश बैठा था। दूसरे चित्र में दो वृद्ध तरबूज़ खाते नज़र आ रहे थे। तरबूज़ के पीछे, खूब दूर, एक यूनानी ढंग का बना द्वार-मण्डप दिखाई पड़ रहा था जिसके नीचे लिखा था — 'सन्तोष का मन्दिर'; तीसरे चित्र में, लेटी हुई मुद्रा में, en raccourci, एक अर्द्ध नग्न स्त्री अंकित थी। उसके घुटने लाल थे और एड़ियां खूब मोटी मोटी। मेरा कुत्ता, कल्पनातीत कोशिशों के बाद, सोफ़े के नीचे रेंग गया था और, प्रत्यक्षत: वहां धूल का भारी अम्बार पाकर ज़ोर ज़ोर से छींकें मार रहा था। मैं खिड़की के पास जा खड़ा हुआ। सड़क के आर-पार आड़े रुख़ में, गढ़ी से लेकर खाता-घर तक, तख़्ते बिछे थे। यह अच्छी एहतियात थी। क्योंकि हमारी समृद्ध काली मिट्टी और निरन्तर वर्षा के कारण कीचड़ बेहद था। ज़मींदारी के पास, जो सड़क की ओर पीठ किये थी, लोगों का आना-जाना बराबर जारी था, जैसा कि आम तौर पर होता है। धुंधली छींट के गाउन पहने लड़कियां फिरकी-सी इधर से उधर आ जा रही थीं। गृह-दास कीचड़ में पांव घसीट रहे थे, चलते चलते वे थिर खड़े हो जाते, और सोच में डूबे अपनी पीठ खुजलाते। कान्स्टेबल का घोड़ा खंभे से बंधा अलस भाव से अपनी पूंछ फटकार रहा था, और अपनी थूथनी को ऊंचा उठाये झाड़ियों की टट्टी को कुतर रहा था। मुर्ग़ियां कुड़कुड़ा रही थीं, बीमार-सी टर्की मुर्ग़ियां बिना दम लिये बांग लगाये जा रही थीं। एक अंधेरे आउट हाउस की पैड़ियों पर, जो ढह चला था और सम्भवत:

हम्माम था, हाथ में गितार लिये एक लड़का बैठा था और कुछ आवेग के साथ सुपरिचित गीत गा रहा था—

छोड़कर सुन्दर मनोरम यह जगह
जा रहा मैं आज रेगिस्तान को...

मोटे-ताज़े आदमी ने कमरे में प्रवेश किया।

"आपके लिए चाय आ रही है," मृदु मुस्कराहट के साथ उसने मुझे बताया।

भूरे लम्बे कोटवाले युवक ने, उस मुंशी ने जो ड्यूटी पर था, ताश खेलने की एक पुरानी मेज़ पर समोवार, चायदानी, टूटी हुई तश्तरी में एक गिलास, मलाई से भरा एक जग, और चक़मक़ पत्थर की भांति सख़्त बोल्ख़ोवो के छल्लेनुमा बिस्कुटों का एक गुच्छा रख दिया। मोटा-ताज़ा आदमी बाहर चला गया।

"यह कौन है?" मैंने मुंशी से पूछा, "कारिन्दा तो नहीं?"

"नहीं, श्रीमान। वह बड़ा खज़ांची था, लेकिन अब उसे तरक़्क़ी मिली है और वह मीर-मुंशी बन गया है।"

"तो क्या तुम्हारे यहां कार्यचालक कोई नहीं हैं?"

"नहीं, श्रीमान। एक कारिन्दा—मिख़ाइल विकूलोव तो है, लेकिन कार्यचालक कोई नहीं।"

"तो फिर ओवरसीयर है, क्यों?"

"हां। वह जर्मन है—लिंडमांडोल, कार्लो कार्लिच। लेकिन वह जागीर का बन्दोबस्त नहीं करता।"

"तो फिर जागीर का कौन बन्दोबस्त करता है?"

"खुद हमारी मालकिन।"

"समझा। और खाता-घर में क्या तुम बहुत-से आदमी काम करते हो?"

युवक कुछ सोच में पड़ गया।

"हम छः हैं।"

"वे सब कौन हैं?" मैंने पूछा।

"सबसे पहले बड़े ख़ज़ांची को लीजिये। उसका नाम है वासीली निकोलायेविच। फिर प्योत्र है। वह मुंशी है। प्योत्र का भाई इवान है। वह भी मुंशी का काम करता है। एक दूसरा इवान है। वह भी मुंशी है। इनके अलावा एक मुंशी और है, कोन्स्तन्तीन नारकीज़ोव, और मैं तो आपके सामने ही हूं—हमारी संख्या इतनी ज्यादा है कि आप गिनती नहीं कर सकते।"

"मैं समझता हूं कि तुम्हारी मालकिन के घर पर भी दासों की एक अच्छी-ख़ासी फ़ौज होगी?"

"नहीं, कुछ इतने ज्यादा तो नहीं कहे जा सकते..."

"तो फिर कितने हैं?"

"यही कोई डेढ़ सौ के क़रीब होंगे।"

कुछ देर हम दोनों चुप रहे।

"मैं समझता हूं कि तुम्हारे हाथ की लिखावट बहुत ख़ूबसूरत होगी, क्यों?" मैंने फिर सिलसिला शुरू किया।

युवक की बत्तीसी इस कान से उस कान तक खिल गयी। और सिर हिलाकर वह खाता-घर में गया और लिखावट दिखाने के लिए एक काग़ज़ उठा लाया।

"यह देखिये मेरी लिखावट," उसने घोषित किया। उसके चेहरे पर अब भी वैसी ही मुस्कराहट खेल रही थी।

मैंने उसपर नज़र डाली। बादामी रंग के काग़ज़ के एक चौरस टुकड़े पर, ख़ुशख़त और मोटी मोटी लिखावट में निम्न हुक्मनामा अंकित था—

हुक्मनामा नम्बर २०६

अनान्येवो गढ़ी के मुख्य खाता-घर की तरफ़ से

कारिन्दे मिख़ाइल विकूलोव के नाम

'चूंकि कल रात अनान्येवो के बाग़ में किसी गुमनाम आदमी ने नशे की हालत में प्रवेश किया, और बेहूदा गाने गाकर फ़्रांसीसी अध्यापिका मदाम एनजेनी को जगा दिया और यह कि उन चौकीदारों ने कुछ नहीं देखा था, जो बाग़ में निगरानी के लिए मौजूद थे और जिनके रहते यह गड़बड़ हुई, ऊपर लिखे इन सब मामलों के बारे में तुम्हें विस्तार के साथ जांच करने और फ़ौरन खाता-घर में रिपोर्ट करने का हुक्म दिया जाता है।

मीर-मुंशी, निकोलाई ख़्वोस्तोव।'

इस हुक्मनामे पर एक भीमाकार ख़ानदानी मुहर लगी थी। मुहर में निम्न शब्द अंकित थे—'अनान्येवो गढ़ी के मुख्य खाता-घर की मुहर', और नीचे दस्तख़त बने थे—'पूरी तरह अमल किया जाय। येलेना लोसन्यकोवा।'

"तुम्हारी मालकिन ने ख़ुद दस्तख़त किये हैं, क्यों?" मैंने पूछा।

"बिल्कुल। वह हमेशा ख़ुद दस्तख़त करती हैं। इसके बिना हुक्मनामा बेकार होगा।"

"और इस हुक्मनामे को तुम अब कारिन्दे के पास भेज दोगे, क्यों?"

"नहीं, श्रीमान। वह ख़ुद यहां आयेगा और इसे पढ़ लेगा। यानी यह कि उसे पढ़कर सुना दिया जायेगा। आप जानो, वह लिखा-पढ़ा तो नहीं है।" (कुछ क्षणों के लिए मुंशी फिर चुप हो गया।) "लेकिन यह तो बताइये," दांत निपोरते हुए अन्त में उसने कहा, "लिखावट अच्छी है न?"

"बहुत अच्छी है।"

"लेकिन इसका मज़मून, अगर सच पूछो तो, मेरा बनाया हुआ नहीं है। इस काम में कोन्स्तन्तीन का मुक़ाबला कोई नहीं कर सकता।"

"यह क्या? क्या तुम्हारा मतलब है कि हुक्मनामों के पहले तुम लोग मज़मून तैयार करते हो?"

"सो तो है ही। इसके सिवा और हो भी क्या सकता है। बिना साफ़ मज़मून तैयार किये उन्हें एकदम सीधे तो लिखा नहीं जा सकता।"

"और तुम्हें तनख़ाह क्या मिलती है?" मैंने पूछा।

"पैंतीस रूबल, और पांच रूबल ऊपर से, जूतों के लिए।"

"और तुम इससे सन्तुष्ट हो?"

"बेशक मैं सन्तुष्ट हूं। हमारे जैसे खाता-घर में जगह पाना हर किसी के बस की बात थोड़े ही है। मेरे मामले में तो, सच, भगवान की किरपा रही। मेरा एक चाचा है जो बटलर के ओहदे पर तैनात है।"

"और तुम्हारी मज़े में गुज़र हो जाती है?"

"हां, श्रीमान। लेकिन, अगर सच पूछो तो," एक उसास भरते हुए वह कहता गया, "हम जैसे लोगों के लिए तो, मिसाल की तौर पर, किसी सौदागर के यहां काम करना ज़्यादा अच्छा है। सौदागर के यहां लोग ज़्यादा मज़े में रहते हैं। कल सांझ वेन्योव से एक सौदागर यहां आया था, और उसका आदमी मुझसे बातें करने लगा... सच, सौदागर के यहां काम करना अच्छा है, इसमें शक नहीं, बहुत ही अच्छा।"

"क्यों? क्या सौदागर ज़्यादा तनख़ाह देते हैं?"

"ख़ुदा की पनाह! अरे नहीं, तनख़ाह का सवाल ज़रा उठाकर तो देखो, सौदागर तुम्हें तुरंत गरदनिया देकर बाहर निकाल देगा। सो कुछ नहीं, सौदागर के यहां तो बस विश्वास और भय के भरोसे रहना पड़ता है। वह तुम्हें खाना देगा, कपड़े देगा—सभी कुछ देगा। अगर तुम उसे सन्तुष्ट कर सके तो वह और भी ज़्यादा करेगा... तनख़ाह की बात, वाह! उसकी ज़रूरत भी क्या है? और फिर सौदागर का रहन-सहन भी हमारी

भांति सीधा-सादा, रूसी ढंग का होता है। तुम उसके साथ सफ़र पर आओ – वह चाय पीता है, और तुम्हें भी देता है जो वह खाता है, वही तुम खाते हो। सौदागर... सौदागर कुलीन लोगों से बिल्कुल भिन्न होता है। सौदागर सनकी नहीं होता। पारा गरम होने पर यह हो सकता है कि वह मार बैठे, लेकिन इसके बाद बात ख़त्म हो जाती है। वह न तो पीछे पड़ता है, न खिल्ली उड़ाता है। लेकिन कुलीन तो पूरी सांसत कर देते हैं। उन्हें कोई चीज़ नहीं जंचती – यह ठीक नहीं है, वह ठीक नहीं है। तुम उसे पानी का एक गिलास या खाने की कोई चीज़ लाकर देते हो। 'ऊंह, पानी गंधाता है! रक़ाबी से बदबू आती है!' तुम उसे वापिस लेकर बाहर चले जाते हो, दरवाज़े से परे एकाध क्षण खड़े रहते हो, और उसी को वापिस ले आते हो – 'हां, अब यह ठीक है। अब यह नहीं गंधाता।' और जहां तक उनकी औरतों का संबंध है, उनसे तो बस हर चीज़ पनाह मांगती मालूम होती है... और युवती स्त्रियों से तो सबसे ज़्यादा..."

"फ़ेद्युश्का!" खाता-घर में से मोटे आदमी की आवाज़ आयी।

मुंशी तेज़ी से चला गया। मैंने चाय का एक गिलास पिया, सोफ़े पर लेट गया, और नींद ने मुझे घेर लिया। दो घंटे तक मैं सोया रहा।

आंखें खुलने पर मैंने उठना चाहा, लेकिन अलसाहट ने मुझे अभिभूत कर लिया। मैंने अपनी आंखें मूंद लीं, लेकिन फिर नींद नहीं आयी। पार्टीशन के दूसरी ओर खाता-घर में, कोई दबी आवाज़ में बातें कर रहे थे। अनजाने मैं उनकी बातें सुनने लगा।

"ठीक, बिल्कुल ठीक, निकोलाई येरेमेइच," एक आवाज़ कह रही थी, "बिल्कुल ठीक, उसे ध्यान में रखे बिना भला कैसे रहा जा सकता है। सच, बिल्कुल ठीक... ऊंह!" (वक्ता ने खखारा।)

"मेरा यक़ीन करो, गावरीला अन्तोनिच," मोटे आदमी की आवाज़ सुनाई दी, "क्या मैं नहीं जानता कि यहां का काम किस प्रकार चलता है? तुम ख़ुद ही सोचकर देखो।"

"आप नहीं जानेंगे तो फिर कौन जानेगा, निकोलाई येरेमेइच? आप तो, सच पूछो तो, यहां की धुरी हैं, हां तो फिर कैसे किया जाय?" अनजानी आवाज़ कहती गयी, "निकोलाई येरेमेइच, इजाज़त हो तो पूछूं कि अब फ़ैसला क्या होगा?"

"फ़ैसला क्या, गावरीला अन्तोनिच? सच पूछो तो मामला ख़ुद तुम पर निर्भर करता है। लेकिन तुम्हें कुछ ज्यादा चिन्ता हो तब न?"

"ओह नहीं, यह आप क्या कहते हैं, निकोलाई येरेमेइच? हमारा धंधा ही व्यापार करना है—ख़रीदना। ख़रीद करना ही हमारा धंधा है। इसी के सहारे, सच पूछो तो, हमारी रोज़ी चलती है, निकोलाई येरेमेइच।"

"आठ रूबल," मोटा आदमी आहिस्ता आहिस्ता बोला।

उसास भरने की आवाज़ सुनाई दी।

"निकोलाई येरेमेइच, यह तो आप भारी दाम मांग रहे हैं।"

"असम्भव, गावरीला अन्तोनिच, अन्यथा नहीं हो सकता। ख़ुदा गवाह है, यह नामुमकिन है!"

उसके बाद ख़ामोशी छा गयी।

मैं धीमे से उठा, और पार्टीशन की एक दरार में से झांककर देखा। मोटा आदमी मेरी ओर पीठ किये बैठा था। उसके सामने की ओर रुख़ किये एक सौदागर था। चालीस-एक साल का दुबला-पतला पीतवर्ण आदमी, ऐसा मालूम होता था जैसे उसे तेल से चिकनाया गया हो। उसकी उंगलियां दाढ़ी को निरन्तर खुजला रही थीं, और बड़ी तेज़ी के साथ वह मिचमिचा तथा अपने होंठों को फरफरा रहा था।

"इस साल नयी फ़सल ख़ूब है—बल्कि कहना चाहिए कि बहुत अच्छी है," उसने फिर कहना शुरू किया, "देखकर तबीयत ख़ुश हो गयी। वोरोनेज से लेकर समूचे विस्तार में ही बढ़िया फ़सल हुई है, जैसा कि कहते हैं, औवल दर्जा की।"

"बेशक, फ़सल काफ़ी अच्छी है," मीर-मुंशी ने जवाब दिया, "लेकिन, गावरीला अन्तोनिच, यह कहावत तो आप जानते होंगे – पतझड़ हुआ रवाना, वसन्त का क्या ठिकाना?"

"बेशक, है तो ऐसा ही, निकोलाई येरेमेइच। सब ख़ुदा की मर्ज़ी पर है। एकदम सच, वह जो आपने अभी कहा... लेकिन शायद आपका मेहमान अब जाग गया हो।"

मोटा आदमी घूमा... कान लगाकर सुना...

"नही, वह सोया है। फिर भी कौन जाने..."

वह दरवाज़े तक आया।

"नहीं, वह सो रहा है," उसने दोहराया और फिर अपनी जगह पर लौट आया।

"हां तो, निकोलाई येरेमेइच, बोलो अब क्या कहते हो," सौदागर ने फिर कहना शुरू किया, "ऐसा सौदा ही क्या है। जल्दी से इससे तय कर डालना चाहिए। अच्छा तो ऐसा करो, निकोलाई येरेमेइच, ऐसा करो," वह कहता गया, निरन्तर मिचमिचाता हुआ, "दो भूरे और एक सफ़ेद नोट आपकी सेवा में हाज़िर हैं, और वहां," (गढ़ी की दिशा में सिर से इशारा करते हुए) "छः और एक अद्धा। क्यों, तय रहा न?"

"चार भूरे नोट," कारिन्दे ने जवाब दिया।

"अच्छा, तो तीन सही।"

"चार भूरे, सफ़ेद का नाम न लो।"

"तीन, निकोलाई येरेमेइच।"

"तीन और एक अद्धा, इससे कौड़ी कम नहीं।"

"तीन, निकोलाई येरेमेइच।"

"यह तुम बेकार ज़िद्द कर रहे हो, गावरीला अन्तोनिच।"

"बाप रे, क्या खरदिमाग़ आदमी है यह," सौदागर बड़बड़ाया। "तब तो ख़ुद मालकिन से ही तय करना अच्छा होगा।"

"जैसी मर्ज़ी," मोटे आदमी ने जवाब दिया, "यह बहुत अच्छा होगा, कहीं ज़्यादा अच्छा होगा, मैं कहता हूं। बेकार यहां सिर क्यों खपाते हो? वहीं जाकर करो, कहीं ज़्यादा अच्छा होगा, बेशक!"

"बस, बस, निकोलाई येरेमेइच! तुम अभी नाराज़ हो गये, क्यों? वह तो मैं यों ही कह रहा था..."

"यों ही कैसे, क्यों..."

"कहता तो हूं। बकवास थी वह... सच, मैं हंसी कर रहा था। लो तुम्हारी ही बात रही। तीन और एक अद्धा ही सही, बस। तुम से पार पाना मुश्किल है।"

"मुझे चार पर हाथ मारना चाहिए था, लेकिन मैंने गधे की भांति ज़रूरत से ज़्यादा जल्दबाज़ी की!" मोटा आदमी बुदबुदाया।

"तो वहां, गढ़ी पर, छः और एक अद्धा, निकोलाई येरेमेइच। अनाज साढ़े छः के हिसाब से बेचा जायेगा।"

"साढ़े छः हम कह चुके हैं।"

"अच्छा तो पक्का रहा, अपना हाथ इधर लाओ," (सौदागर ने अपनी खुली हुई उंगलियों को मुंशी की हथेली से सटा दिया) "खुदा का नाम लेकर।" (सौदागर उठ खड़ा हुआ।) "हां तो, निकोलाई येरेमेइच, श्रीमान, अब मैं तुम्हारी मालकिन के पास चलूं और नौकर से कहूंगा कि मेरा नाम ऊपर भेज दे, और मालकिन से अर्ज़ करूंगा– 'निकोलाई येरेमेइच के साथ,' मैं कहूंगा, 'साढ़े छः के हिसाब से मेरा सौदा तय हो गया है।"

"ठीक, गावरीला अन्तोनिच, तुम्हें यही कहना चाहिए।"

"अच्छा तो अब लो।"

सौदागर ने मुंशी को नोटों का एक छोटा-सा बण्डल थमा दिया, अभिवादन में झुका, सिर हिलाया, दो उंगलियों से पकड़कर अपना हैट उठाया, अपने कंधों को सिकोड़ा और हिलोर लेता हुआ बाहर चला

गया। उसके जूते चरमर की आवाज़ कर रहे थे। निकोलाई येरेमेइच दीवार तक गया और, जहां तक मैं अन्दाज़ कर सका, सौदागर द्वारा दिये गये नोटों को छांटने लगा। तब लाल लाल बालों वाला एक सिर, घने गलमुच्छों से युक्त, कमरे के अन्दर झांका।

"कहो," उसने पूछा, "सब ठीक हुआ न?"

"हां।"

"कितना मिला?"

मोटे आदमी ने झुंझलाकर हाथ हिलाया, और मेरे कमरे की ओर इशारा किया।

"ओह, समझा!" उस सिर ने जवाब में कहा और ओझल हो गया।

मोटा आदमी मेज तक गया, बैठा, एक किताब खोली, गिनने का चौखटा निकाला, और गोलियों को इधर से उधर सरकाकर गिनने लगा। तर्जनी से नहीं, बल्कि दाहिने हाथ की तीसरी उंगली से जो देखने में ज़्यादा रोबदार मालूम होती है।

मुंशी ने भीतर प्रवेश किया।

"क्या है?"

"गोलोपल्योकी से सीदोर आया है।"

"ओह! उसे अन्दर भेज दो। लेकिन ज़रा ठहरो, थोड़ा रुको... पहले जाकर यह देखो कि वह अजनबी कुलीन अभी सो रहा है या जाग गया।"

मुंशी सावधानी से डग रखता मेरे कमरे में आया। मैंने अपना सिर शिकार के अपने थैले पर टिका दिया जिससे मैं तकिये का काम ले रहा था, और अपनी आंखें मूंद लीं।

"वह सोया है," खाता-घर में लौटकर मुंशी ने कहा।

मोटा आदमी जाने क्या बुदबुदाया। अन्त में बोला—

"अच्छा तो अब सीदोर को भेज दो।"

मै फिर उठ खड़ा हुआ। तीसेक वर्ष का एक किसान, देवों जैसा डील-डौल, भीतर आया। लाल भभूके गाल, देखने में हृष्ट-पुष्ट, सुनहरे बाल और छोटी-सी घुंघराली दाढ़ी। उसने देव-प्रतिमा के सामने क्रॉस का चिन्ह बनाया, मीर-मुंशी के आगे सिर झुकाया और दोनों हाथों से आगे की ओर अपनी टोपी को थामे सीधा-सतर खड़ा हो गया।

"अच्छे तो हो, सीदोर," गिनने के चौखटे की गोलियों को ठोकर देते हुए मोटे आदमी ने कहा।

"और आप तो अच्छी तरह हैं, निकोलाई येरेमेइच।"

"कहो, सड़कों का क्या हाल है?"

"काफ़ी अच्छा है, निकोलाई येरेमेइच। थोड़ी कीचड़ ज़रूर है।" (किसान धीरे धीरे और धीमी आवाज़ में बोल रहा था।)

"घरवाली तो मज़े में है?"

"बिल्कुल ठीक है।"

किसान न एक उसास छोड़ी और एक पांव आगे की ओर बढ़ाया। निकोलाई येरेमेइच ने अपने कान के ऊपर क़लम खोंसकर नाक साफ़ की।

"हां तो कैसे आना हुआ?" अपने चारख़ाने रूमाल को जेब में रखते हुए उसने पूछना शुरू किया।

"यह क्या, निकोलाई येरेमेइच, कि वे हम से बढ़ई मांग रहे हैं?"

"तो क्या हुआ? तुम्हारे यहां बढ़ई नहीं हैं, क्यों?"

"होने को तो हैं क्यों नहीं, निकोलाई येरेमेइच। हमारा गांव ही जंगल के बीच बसा है, लकड़ी से ही हमारी रोजी है। इसमें शक नहीं। लेकिन, निकोलाई येरेमेइच, आजकल काम के दिन हैं। हम वक़्त कहां से लायेंगे?"

"काम के दिन हैं! वक़्त कहां से आयेगा? ग़ैरों के लिए काम करने को तो ख़ूब उतावले रहते हो, लेकिन अपनी मालकिन के लिए काम करने की तुम्हें कोई परवाह नहीं। वह जैसे काम थोड़े ही है।"

"काम तो बेशक है, निकोलाई येरेमेइच, लेकिन..."

"लेकिन क्या?"

"पगार... बहुत..."

"यह और सुनो! तुम लोग बिगड़ गये हो। असल बात यह है!"

"एक बात और, निकोलाई येरेमेइच। काम तो केवल सात दिन का होगा, लेकिन महीने-भर तक वे हमें लटकाये रखेंगे। कभी काफ़ी मसाला नहीं मिलेगा, कभी वे हमें बाग़ की पगडंडियां साफ़ करने भेज देंगे।"

"तो इससे क्या? ख़ुद हमारी मालकिन ने यह हुकम जारी करने की किरपा की है। सो इसके बारे में तुम्हारा और मेरा बातें करना बेकार है।"

सीदोर चुप हो गया, और एक पांव का वज़न बदलकर दूसरे पर डालने लगा।

निकोलाई येरेमेइच ने अपना सिर एक बाजू झुका लिया और सरगर्मी के साथ गिनती की गोलियों से गिनने लगा।

"हमारे किसानों ने, निकोलाई येरेमेइच..." सीदोर ने आख़िर कहना शुरू किया, हर शब्द पर अटकते हुए, "आप के नाम एक सन्देसा भेजा है, मालिक... देखिये... यह रहा..." (उसने अपना बड़ा हाथ कोट के भीतर डाला और लिनेन के एक तह किये हुए तौलिए को, जिसमें लाल कन्नी लगी थी, खींचकर बाहर निकालने लगा।)

"अरे, तुम्हारी मंशा क्या है? भेजे में कुछ दिमाग़ भी है या नहीं, बेवक़ूफ़!" मोटे आदमी ने उतावली के साथ टोका, "जा, मेरे घर जा," सकपकाये हुए किसान को क़रीब क़रीब धकियाते हुए वह कहता गया, "वहां मेरी घरवाली होगी... वह तुम्हारे लिए कुछ चाय तैयार कर देगी। मैं भी अभी वहां पहुंचता हूं। जाओ, मैं कहता हूं, ख़ुदा के लिए जाओ!"

सीदोर चला गया।

"उफ़! भालू कहीं का!" अपने सिर को हिलाते हुए मीर-मुंशी उसके पीछे बुदबुदाया और फिर गिनने में व्यस्त हो गया।

अचानक गली में और पैड़ियों पर "कूपरिया! कूपरिया! कूपरिया को कोई नहीं दबा सकता!" की चीख़-चिल्लाहट सुनाई दी, और इसके थोड़ी देर बाद ही खाता-घर में रोगी जैसी शकल के एक नाटे आदमी ने प्रवेश किया। उसकी नाक असाधारण रूप में लम्बी थी और अपनी बड़ी बड़ी आंखों से वह ताकता मालूम होता था। उसकी चाल-ढाल और अन्दाज़ से भारी अहम्मन्यता टपकती थी। वह एक पुराना खुरदरा-सा फ़ॉक-कोट पहने था जिसके गले पर मख़मल लगी थी और छोटे छोटे बटन टंके थे। अपने कंधे पर वह लकड़ियों का एक गट्ठा लादे हुए था। पांच गृह-दास उसे चारों ओर से घेरे थे, और सब के सब चिल्ला रहे थे "कूपरिया! कूपरिया को कोई नहीं दबा सकता! कूपरिया भाड़ झोंकनेवाला बन गया है, कूपरिया भाड़ झोंकने लगा है!" लेकिन मख़मली गलेवाला फ़ॉक-कोट पहने वह आदमी इन संगियों के शोर-शराबे की ओर ज़रा भी ध्यान नहीं दे रहा था और उसका चेहरा ज़रा भी विचलित नहीं मालूम होता था। नपे-तुले डगों से वह स्टोव के पास पहुंचा, अपना बोझ नीचे पटककर अपनी कमर सीधी की, अपनी पीछे की जेब में से सुंघनी की डिब्बी निकाली और अपनी आंखों को गोल-मटोल बनाये, राख और सूखी तिपत्तियों के चूरे को चुटकी में लेकर सूंघने लगा।

इस हल्ला मचाती मण्डली ने जब भीतर प्रवेश किया तब मोटे आदमी की भौंहों ने पहले तो बल खाया, वह अपनी जगह से उठने को भी हुआ, लेकिन फिर यह देखकर कि मामला क्या है, वह मुस्कराया और केवल इतना कहा कि शोर मत मचाओ। "बराबरवाले कमरे में एक शिकारी सोया है।"

"शिकारी कैसा?" उनमें से दो ने एक आवाज़ में पूछा।

"कोई ज़मींदार है।"

"ओह!"

"बेशक हल्ला मचायें," अपने हाथों को फहराते हुए मख़मली गलेवाले उस आदमी ने कहा, "मेरा क्या बिगड़ता है, जब तक वे मुझे हाथ नहीं लगाते। मुझे भाड़ झोंकनेवाला बना दिया गया है..."

"भाड़ झोंकनेवाला, हां भाड़ झोंकनेवाला!" दूसरों ने हंसते हुए स्वर में स्वर मिलाया।

"जानते हो, यह मालकिन का हुकम है," अपने कंधों को बिचकाते हुए वह कहता गया, "लेकिन ज़रा ठहरो... संभव है तुम्हें सुअरों की देखरेख का काम दिया जाय। लेकिन मैं दर्ज़ी रह चुका हूं, सो भी बहुत अच्छा दर्ज़ी, मास्को की सबसे बढ़िया दूकान में मैंने अपना धंधा सीखा, जेनरलों के कपड़े मैंने सिये... कोई माई का लाल मुझ से यह हुनर नहीं छीन सकता। और तुम... तुम भला अपने को किस खेत की मूली समझते हो? काहिलों की औलाद, अपने मां-बाप का नाम डुबानेवाले, यह लो तुम! मुझे निकालोगे! मैं भूखा नहीं मरूंगा। मैं मज़े में रहूंगा। मुझे पासपोर्ट दिलवा दो। मैं लगान भी ख़ासा भेजता रहूंगा, और मालिकों को खुश कर दूंगा। लेकिन तुम क्या करोगे? तुम मक्खियों की भांति मर जाओगे–यही करोगे तुम!"

"कैसा बढ़िया झूठ बोलते हो!" चेचक के दाग़वाले एक लड़के ने बीच में ही कहा। उसके बाल और पलकें सफ़ेद थीं, गले में लाल नेकटाई डाले था और कोहनियों पर से उसका कोट कटा-फटा था। "गये तो थे बड़े तम-तराक के साथ पासपोर्ट बनवाकर, लेकिन लगान एक फूटी कौड़ी का भी नहीं भेजा था, और न ख़ुद अपने लिए ही एक कौड़ी कमा सके। ग़नीमत समझो जो तुम जैसे-तैसे घर लौटकर आ गये। कभी तुम्हारे बदन पर कोई नया कपड़ा दिखाई नहीं दिया।"

"अच्छा, अच्छा, लेकिन कोई करे भी क्या, कोन्स्तन्तीन नारकीजिच," कूपरिया ने जवाब दिया, "प्रेम ऐसी ही बला है... आदमी उसमें फंसा

नहीं कि गया! मुझपर जो बीती, उसमें से संभलकर निकलो, तब दोष देना!"

"और प्रेम में फंसने के लिए भी तुमने अच्छी चीज़ चुनी – आदमी देखे तो डर जाय, एकदम भुतनी!"

"नहीं, तुम्हें ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए, कोन्स्तन्तीन नारकीजिच!"

"भला, कौन इस पर यक़ीन करेगा? तुम जानो, मैंने उसे देखा है। पिछले साल मास्को में ख़ुद अपनी आंखों से देखा है!"

"पिछले साल वह ज़रा ढचरा गयी थी," कूपरिया ने कहा।

"नहीं, भाइयो, सुनो मैं तुम्हें एक बात बताता हूं," एक लम्बे सींकिया आदमी ने कहा जिसका चेहरा मुंहासों से भरा था। वह अपने घुंघराले और ख़ुशबूदार बालों के कारण अरदली जान पड़ता था। लापर्वाही के साथ और उपेक्षा भरे अन्दाज़ में कहने लगा, "कूपरिया अफ़ानासिच हमें एक गीत गाकर सुनाइये। हां तो कूपरिया अफ़ानासिच, झटपट शुरू कर दो!"

"हां, हां," औरों ने भी स्वर में स्वर मिलाया, "शाबाश, अलेक्सान्द्रा! शाबाश, कूपरिया... सच... ज़रा लो तो सही अलाप, कूपरिया... वाह, अलेक्सान्द्रा, ख़ूब सुझाया तुमने!" (गृह-दास लोग बहुधा प्यार जताने के लिए स्त्री-वाचक सम्बोधन इस्तेमाल करते ह।) "हां तो शुरू करो अपना गाना!"

"यह गाने की जगह नहीं है," कूपरिया ने दृढ़ता से जवाब दिया, "यह गढ़ी का खाता-घर है।"

"हुआ करे, तुमसे मतलब? तुम भी मुंशी बनने की इच्छा अपने हृदय में संजोये हो, क्यों?" भद्दी हंसी हंसते हुए कोन्स्तन्तीन ने जवाब दिया, "बस-बस, यही बात है!"

"यह सब तो मालकिन के हाथों में है, चाहे जो करें!" निरीह अभागे ने कहा।

"तो देखा तुमने, इसके हौंसलों की ऊंचाई को! अपना मुंह तो देखो!"

और वे सब ठहाका मारकर हंसने लगे, कुछ तो हंसी के मारे लोट-पोट हो गये। पन्द्रह साल का एक लड़का सबसे ज्यादा जोरों मे हंस रहा था। गृह-दासों में भी रईस होते हैं। वह शायद उन्हीं में से किसी एक का साहबज़ादा था। तांबे-कांसे के बटन लगी वास्कट पहने था, गले में बैंगनी रंग का गुलूबंद डाले था और वास्कट से बाहर फूटा पड़ता था।

"अच्छा तो कूपरिया, अब झटपट कह डालो," निकोलाई येरेमेइच का जी प्रत्यक्षतः गुदगुदा उठा था और तरंग में बह चला था, इतमीनान के साथ कहा, "सच सच बताओ, भाड़ झोंकनेवाला बनना बुरा है? उसका कोई लाभ तो नहीं?"

"निकोलाई येरेमेइच," कूपरिया ने कहना शुरू किया, "हम लोगों के बीच तुम मीर-मुंशी हो, इसमें शक नहीं। कोई इससे इन्कार नहीं कर सकता। लेकिन तुम जानो, ख़ुद तुम भी धरती पर लोट चुके हो, और एक दिन था जब तुम किसान की झोंपड़ी में रहते थे।"

"ज़बान संभालके बोलो जी, मत भूलो कि किसके सामने बात कर रहे हो," मोटे आदमी ने बीच में ही चिढ़कर कहा, "तुम जैसे अकल के कोल्हू से मजाक करते हैं। तुम्हें, कुछ समझना और कृतज्ञ होना चाहिए कि हम तुम जैसे अकल के कोल्हू को नज़रन्दाज़ नहीं करते!"

"मेरे मुंह से निकल गया, निकोलाई येरेमेइच। मैं माफ़ी चाहता हूं..."

"ऊंह, मुंह से निकल गया, वाह..."

दरवाज़ा खुला और एक छोकरा नौकर भागा हुआ आया।

"निकोलाई येरेमेइच, तुम्हें मालकिन बुला रही हैं।"

"मालकिन के पास और कौन है?" उसने छोकरे से पूछा।

"अक्सीनिया निकीतिश्ना और वेन्योव का एक सौदागर।"

"अभी आया, इसी दम, और तुम, साथियो," समझाने के स्वर में उसने कहना जारी रखा, "अपने इस नये भाड़ झोंकनेवाले को साथ लेकर यहां से चलते बनो। इसी में भला है। अगर कहीं जर्मन आ टपका तो पक्का समझो, वह शिकायत किये बिना नहीं रहेगा!"

मोटे आदमी ने अपने बालों को सीधा किया, अपनी हथेली में खखारा जो उसके कोट की आस्तीन में क़रीब क़रीब पूर्णतया छिपी थी, बटन बंद किये और लम्बे डग भरता हुआ मालकिन के सामने हाज़िर होने के लिए चल दिया। उसके बाद ही, देखते-न-देखते समूची मण्डली भी मय कूपरिया के बाहर निकल गयी। मेरा पुराना मित्र, वह मुंशी जो ड्यूटी पर था, अकेला रह गया। वह क़लमों को ठीक-ठाक करने में लगा रहा, और इसके बाद अपनी कुर्सी में बैठा बैठा ऊंघने लगा। कुछ मक्खियों ने तुरंत इस मौक़े से फ़ायदा उठाया और उसके मुंह पर आकर बैठ गयीं। एक मच्छर उसके माथे पर उतर आया और नियमित हरकत के साथ अपनी टांगों को चौड़ा जमाते हुए, उसके गुदगुदे मांस में धीरे से अपना डंक गड़ा दिया। गलमुच्छों से युक्त वह लाल सिर फिर दरवाज़े में प्रकट हुआ, भीतर झांका—एक बार, फिर दूसरी बार, और इसके बाद अपनी अपेक्षाकृत बदनुमा देह के साथ खाता-घर में चला आया।

"फ़ेद्युश्का! ए, फ़ेद्युश्का! हमेशा सोते रहते हो!" उसने कहा।

मुंशी ने अपनी आंखें खोलीं, और कुर्सी पर से उठ खड़ा हुआ।

"निकोलाई येरेमेइच मालकिन के पास गये हैं?"

"हां, वासीली निकोलायेविच।"

"ओह, ठीक," मैंने मन में कहा, "तो यह है बड़ा ख़ज़ांची।"

ख़ज़ांची कमरे में इधर से उधर टहलने लगा। सच पूछो तो वह चल नहीं रहा था, बल्कि धरती पर घिसट रहा था। और देखने में

बिल्ली की भांति मालूम होता था। काले रंग का एक पुराना फ़ॉक-कोट उसके कंधों से लटका था जिसके पल्ले काफ़ी छोटे थे। एक हाथ वह अपने सीने में खोंसे था और दूसरा उसके ऊंचे कसे हुए, घोड़े के बालों के बने गुलूबन्द से निरन्तर उलझ रहा था, और अपनी गरदन को वह मुश्किल से ही घुमा पाता था। नर्म चमड़े के जूते पहने था जिनसे चींचीं की आवाज़ नहीं आती थी और बहुत ही धीमे धीमे पांव रख रहा था।

"ज़मींदार यागुश्किन आज तुम्हें पूछ रहा था," मुंशी ने कहा।

"हूं-ऊं, पूछ रहा था? क्या कहता था?"

"कहता था कि वह आज सांझ त्युत्युरेव के यहां जा रहा है। सो तुम्हारी बाट देखेगा। कहता था, 'मुझे वासीली निकोलायेविच से कुछ काम की बातें करनी हैं,' लेकिन यह नहीं बताया कि वह काम क्या है। 'वासीली निकोलायेविच अपने-आप समझ जायेगा,' उसने कहा।"

"हूं-ऊं!" बड़े ख़ज़ांची ने जवाब दिया और वह खिड़की के पास जा खड़ा हुआ।

"क्या निकोलाई येरेमेइच खाता-घर में मौजूद है?" ड्योढ़ी में किसी की ज़ोरदार आवाज़ सुनाई दी, और एक लम्बे आदमी ने चौखट के भीतर पांव रखा। वह प्रत्यक्षतः झुंझलाया हुआ मालूम होता था। उसका चेहरा-मोहरा बेढंगा किन्तु स्थूल और प्रभावशील था। उसके कपड़े अपेक्षाकृत साफ़ थे।

"यहां नहीं हैं?" चारों ओर तेज़ी से नज़र डालते हुए उसने पूछा।

"निकोलाई येरेमेइच मालकिन के पास गये हैं," ख़ज़ांची ने जवाब दिया, "कहो, पावेल आन्द्रेइच, क्या काम है। तुम मुझे बता सकते हो... कहो, तुम क्या चाहते हो?"

"मैं क्या चाहता हूं? तुम जानना चाहते हो कि मैं क्या चाहता हूं?" (ख़ज़ांची ने मरे-से अन्दाज़ में सिर हिलाया।) "मैं उसकी, उस मोटे थलथल चर्बी-चढ़े बदमाश की, अकल ठिकाने लगाना चाहता हूं।

लोगों के कान भरता है! सो मैं उसे और कान भरने के लिए कुछ मसाला देना चाहता हूं!"

पावेल धम से एक कुर्सी में जा बैठा।

"अरे, यह तुम क्या कह रहे हो, पावेल आन्द्रेइच? अपने को ठंडा करो... तुम्हें शरम नहीं आती? तुम्हें इतना भी होश नहीं कि किसके बारे में तुम बात कर रहे हो?" ख़ज़ांची ने हकलाते हुए कहा।

"ऊंह, इतना भी होश नहीं कि किसके बारे में बातें कर रहा हूं? मेरी बला से, भले ही वह मीर-मुंशी बन गया हो! वाह, अच्छे आदमी को तरक़्क़ी दी उन्होंने! क्या शक है इसमें! मानो, साग-भाजी की क्यारियों में बकरी को छुट्टा छोड़ दिया गया है!"

"बस, बस, पावेल आन्द्रेइच, बस! बन्द करो यह सब... क्या वाहियात बातें मुंह से निकाल रहे हो?"

"लोमड़ी की औलाद ने चापलूसी करना शुरू कर दिया। अच्छी बात है, आने दो उसे," पावेल ने आवेग के साथ कहा और मेज़ पर ज़ोर से घूंसा मारा। "ओह, यह लो, वह आ रहा है," खिड़की की ओर देखते हुए उसने फिर कहा, "शैतान को याद किया नहीं कि आ मौजूद हुआ। स्वागतम! स्वागतम!" (वह उठ खड़ा हुआ।)

निकोलाई येरेमेइच खाता-घर में आ गया। उसका चेहरा सन्तोष से चमक रहा था। लेकिन पावेल आन्द्रेइच को देखकर वह कुछ सकपका-सा गया।

"अच्छे हो, निकोलाई येरेमेइच," पावेल ने भेद भरे अन्दाज़ में कहा, खुद उसे मिलने के लिए आगे बढ़ते हुए।

मीर-मुंशी ने कोई जवाब नहीं दिया। तभी दरवाज़े में सौदागर का चेहरा नमूदार हुआ।

"अरे यह क्या, मुझे जवाब देने की भी किरपा नहीं करोगे क्या?"

पावेल कहता गया, "लेकिन नहीं... नहीं," उसने फिर कहा, "सो नहीं। चिल्लाने और कोसने से कुछ नहीं बनेगा। हां, तो तुम्हें, निकोलाई येरेमेइच, एक मित्र की भांति मुझे बताना चाहिए कि तुम क्यों मेरी जान सांसत में किये हो? क्यों तुम मुझे तहस-नहस करने पर तुले हो? हां, तो बोलो, मुझे बताओ।"

"समझाने-बुझाने के लिए यह कोई माक़ूल जगह नहीं है," मीर-मुंशी ने थोड़ा उद्वेलित होते हुए कहा, "न ही इसके लिए यह कोई माक़ूल समय है। लेकिन यह मैं ज़रूर कहूंगा कि तुम्हारी एक बात सुनकर मुझे अचरज हुआ। तुमने यह कैसे समझ लिया कि मैं तुम्हें तहस-नहस करना या तुम्हारी जान सांसत में रखना चाहता हूं? मैं तुम्हें परेशान कैसे कर सकता हूं? तुम मेरे खाता-घर में तो हो नहीं।"

"परमात्मा न करे कि ऐसा हो," पावेल ने जवाब दिया, "तब तो आसमान ही फट पड़ेगा। लेकिन, निकोलाई येरेमेइच, यह सब छल क्यों करते हो? तुम्हें सब मालूम है मैं क्या कह रहा हूं।"

"नहीं, मैं नहीं समझता।"

"बेशक, तुम समझते हो।"

"नहीं, भगवान साक्षी है, मैं नहीं समझता।"

"ओह, भगवान को भी खींच लाये! अच्छी बात है। जब इसी पर उतर आये तो यह बताओ, क्या तुम्हें ख़ुदा से डर नहीं लगता? उस बेचारी लड़की को तुम चैन की सांस क्यों नहीं लेने देते? आख़िर तुम उससे चाहते क्या हो?"

"अरे, यह किसकी बात करने लगे?" मोटे आदमी ने बनावटी अचरज से पूछा।

"ओह, जैसे जानते ही नहीं। मैं तत्याना की बात कर रहा हूं। ख़ुदा से कुछ तो डरो, आख़िर किस चीज़ का बदला निकालना चाहते हो? तुम्हें शर्म आनी चाहिए, तुम जैसे शादी-शुदा आदमी को, जिसके

बच्चे मेरे क़द-बुत के हैं। मेरी बात दूसरी है... मेरी मन्शा है विवाह– मैं कोई धोखे का खेल नहीं खेल रहा।"

"इसमें मेरा क्या दोष है, पावेल आन्द्रेइच? मालकिन तुम्हें विवाह करने की इजाज़त नहीं देतीं। मालिक होने के नाते यह उनका फ़रमान है। इससे भला मेरा क्या वास्ता?"

"वास्ता क्यों नहीं? क्या तुम उस चुड़ैल, भण्डारिन से सांठ-गांठ नहीं करते रहे? क्या तुमने कान नहीं भरे? बोलो, उस निहत्थी लड़की के ख़िलाफ़ क्या तुमने तरह तरह की कहानियां नहीं गढ़ीं? क्या मैं यह मान लूं कि कपड़े धोनेवाली के पद से गिराकर कोठरी में बरतन मांजनेवाली बनाने में तुम्हारा कोई हाथ नहीं है? और उसे जो यह पीटा जाता है तथा टाट के कपड़े पहनने को दिये जाते हैं, सो यह सब भी अपने-आप हो रहा है–बिना तुम्हारे इशारे के? तुम्हें शर्म आनी चाहिए, तुम्हें शर्म आनी चाहिए–तुम जैसे बड़े-बूढ़े आदमी को! तुम जानते हो कि किसी घड़ी भी तुम्हें लक़वा मार सकता है... ख़ुदा के सामने तुम्हें जवाब देना है।"

"तुम तो गाली-गुफ़्तार करने लगे, पावेल आन्द्रेइच, तुम गाली-गुफ़्तार पर उतर आये। लेकिन बस, अब और ज़्यादा बदज़ुबानी करने का मौक़ा तुम्हें नहीं मिलेगा!"

पावेल आग बबूला हो गया।

"क्या कहा? तुम्हारा यह साहस कि मुझे धमकी दो!" उसने आवेग के साथ कहा, "यह न समझना कि मैं तुमसे डरता हूं। नहीं, भाई, मैं अभी उस हालत को नहीं पहुंचा। मैं क्यों डरूं? जहां भी जाऊंगा, अपनी रोटी पैदा कर लूंगा। लेकिन तुम... तुम्हारी बात दूसरी है। तुम्हारे लिए केवल यही एक ठौर है। यहां रहकर ही तुम लनतरानियां हांक सकते हो और माल मार सकते हो..."

"अरे बाप रे, इतना घमंड!" मुंशी ने बीच में ही कहा, जिसके

सब्र का बांध भी अब टूट चला था, "और इसकी हैसियत क्या है–दवाख़ाने का सहायक केवल दवाख़ाने का चाकर–नालायक़ हकीम! और इसकी बातें सुनो–आक्थू! तीस मारखां बनता है!"

"हां, दवाख़ाने का सहायक और इस दवाख़ाने के सहायक की बदौलत ही तुम यहां दिखाई पड़ रहे हो, नहीं तो क़ब्र में पड़े सड़ रहे होते। ज़रूर शैतान ने मुझसे तुम्हारा इलाज करवाया," दांत पीसते हुए उसने कहा।

"तुमने मेरा इलाज किया? नहीं, तुमने मुझे ज़हर देने की कोशिश की, तुम मुझे मुसब्बर घोल घोलकर पिलाते रहे," मुंशी ने कहा।

"मुसब्बर के सिवा तुम्हें कुछ लगे ही नहीं तो मैं क्या करूं?"

"मुसब्बर के इस्तेमाल पर महकमा-सेहत ने मनाही कर रखी है," मुंशी कहता गया, "देखते जाओ, तुम्हारे ख़िलाफ़ मैं शिकायत करूंगा... तुमने मुझे मार डालने की कोशिश की, हां, तुमने यही किया। लेकिन भगवान को यह मंज़ूर नहीं था।"

"चुप भी करो अब, बहुत हो लिया," ख़ज़ांची ने कहना शुरू किया।

"बीच में टांग न अड़ाओ!" मुंशी चिल्लाया, "इसने मुझे ज़हर देने की कोशिश की! आया समझ में?"

"मुझे क्या फ़ायदा? लेकिन सुनो, निकोलाई येरेमेइच," हताश स्वरों में पावेल ने कहना शुरू किया, "मैं तुम से बिनती करता हूं। आख़िरी बार... तुमने ही मुझे इस पर मजबूर किया–मेरी बरदाश्त से बाहर है यह। हमें तुम अकेला छोड़ दो, सुन रहे हो न? नहीं तो, ख़ुदा जानता है, हम तुम में से किसी न किसी के साथ बुरी बीतेगी।"

मोटा आदमी गुस्से से भभक उठा।

"मैं तुमसे नहीं डरता," उसने चिल्लाकर कहा, "सुना, दुधमुंहे! तुम्हारे बाप को मैं सीधा कर चुका हूं। मैंने उसके सींग तोड़ डाले। तुम्हें भी मैं कहे देता हूं, संभलकर चलना!"

"मरे बाप को न घसीटो, निकोलाई येरेमेइच!"

"वाह, ख़ूब कही! मुझे आदेश देनेवाले तुम कौन?"

"मैं कहता हूं, उसका नाम न लो!"

"और मै कहता हूं, तुम अपनी असलियत को न भूलो। तुम अपने-आपको चाहे जितना बड़ा समझते हो, लेकिन अगर मालकिन को हम दोनों में से किसी एक को चुनना पड़े तो वह तुम्हें नहीं रखेगी, मेरे मुनुवा! बलवा करने की यहां किसी को इजाज़त नहीं है, समझे!" (पावेल ग़ुस्से से थरथरा रहा था।) "और जहां तक उस छिनाल तत्याना का संबंध है, वह इसी लायक़ है... ज़रा देखते जाओ, अभी तो उसकी और भी दुर्गत होना बाक़ी है।"

अपनी मुट्ठियों को ऊंचा ताने पावेल तेज़ी से झपटा, और मुंशी धम्म से फ़र्श पर लुढ़क गया।

"हथकड़ी लगा दो इसे, हथकड़ी लगा दो," निकोलाई येरेमेइच कराहता हुआ बोला।

इस दृश्य के अन्त का वर्णन मैं नहीं करूंगा। मुझे लगता है कि पाठकों की कोमल भावनाओं को ऐसे ही मैं काफ़ी चोट पहुंचा चुका हूं।

मैं उसी दिन घर लौट आया। एक सप्ताह बाद मैंने सुना कि श्रीमती लोसन्यकोवा पावेल और निकोलाई दोनों को अपनी सेवा में रखे है, लेकिन तत्याना को उसने दूर भेज दिया है। लगा जैसे वही फ़ालतू थी।

बियूंक

एक सांझ की बात है। बग्घी में मैं बैठा अकेला शिकार से लौट रहा था। घर अभी लगभग छः मील दूर था। मेरी बढ़िया दुलकी घोड़ी अपने कानों को खड़ा किये और नथुनों से जब-तब फुंकारती हुई धूल भरी कच्ची सड़क पर सरपट दौड़ रही थी; थकान से चूर मेरा कुत्ता पिछले पहियों से सटा साथ साथ आ रहा था, लगता था जैसे उसे वहां चसपां कर दिया गया हो। तूफ़ान के आसार नज़र आ रहे थे। सामने, जंगल की ओट में से, एक रक्तवर्ण भीमाकार तूफ़ानी बादल धीरे धीरे उभर रहा था, बारिश के लम्बे धुंधले बादल सिर के ऊपर से गुज़र रहे थे जैसे मुझसे मिलने आ रहे हों। बेंत के पेड़ सायं-सायं कर रहे थे। दमघोट गर्मी अचानक नमदार ठण्ड में बदल गयी थी और अंधेरा तेज़ी से गहरा हो रहा था। मैंने घोड़ी की पीठ पर रासों से चाबुक मारी, एक गहरे ढलुवान पर से उतरा, एक सूखे नाले को पार किया जिसमें छोटी छोटी झाड़ियां उग रही थीं, पहाड़ी पर चढ़ा और जंगल में दाखिल हुआ। सड़क सामने फैली थी, अखरोट की घनी झाड़ियों के बीच डुबकी लगाती, और अब अंधेरे में लिपटी। मैं धीरे धीरे बढ़ रहा था। बलूत और लीपा के पुराने पेड़ों की सख़्त जड़ों से टकराकर—जो पहियों की गहरी लीकों में निरन्तर अपने पंजे फैलाये थीं—बग्घी उछल और गिर रही थी और घोड़ी ने ठोकरें खाना शुरू कर दिया था। अचानक भयानक अंधड़ सिर के ऊपर चीखने-चिंघाड़ने लगा, पेड़ों ने कोलाहल शुरू कर दिया, बारिश

की बड़ी बड़ी बूंदें पत्तों पर एकदम टपाटप तथा छपछपाहट के साथ गिरने लगीं, बिजली कौंधी और बादल गड़गड़ा उठे। धुआंधार बारिश बरसने लगी। मैंने पैदल चाल से बढ़ना शुरू किया, लेकिन शीघ्र ही रुक जाना पड़ा। मेरी घोड़ी लड़खड़ा गयी। सामने हाथ को हाथ सुझाई नहीं देता था। जैसे-तैसे एक फैली हुई झाड़ी की मैंने शरण ली। गुड़मुड़ी-सा बना और अपने चेहरे को ढके, चुपचाप मैं तूफ़ान के थमने की प्रतीक्षा करने लगा। तभी, अचानक, बिजली की कौंध में सड़क पर एक लम्बी आकृति मुझे दिखाई दी। मैं आंखें गड़ाये उधर ही ताकता रहा, और एक बार फिर मेरी बग्घी के निकट, वह आकृति जैसे धरती फोड़कर प्रकट होती मालूम हुई।

"ए, कौन है उधर?" गूंजती आवाज़ में किसी ने पूछा।

"और तुम–तुम कौन हो?"

"मैं यहां इस जंगल का पहरुवा हूं।"

मैंने अपना नाम बताया।

"ओह, मैं जानता हूं। क्या आप अपने घर जा रहे हैं?"

"हां, लेकिन तुम जानो, इस अंधड़-पानी में..."

"हां, अंधड़-पानी तो है," आवाज़ ने जवाब दिया।

बिजली की एक पीतवर्ण कौंध ने पहरुवे को सिर से लेकर पांव तक आलोकित कर दिया, इसके तुरंत बाद ही बिजली कड़कने की एक संक्षिप्त गरज सुनाई दी। बारिश दूने ज़ोर से छपाके मारने लगी।

"और यह अभी ख़त्म होता नज़र नहीं आता," पहरुवा कहता गया।

"तो क्या करें!"

"चाहें तो मैं आपको अपनी झोंपड़ी में ले चल सकता हूं," एकाएक उसने कहा।

"यह तो बहुत बड़ी कृपा होगी।"

"तो गाड़ी में बैठिये।"

वह घोड़ी के सिर के पास आ गया, उसकी लगाम पकड़ी और खींचकर उसे सीधा खड़ा कर दिया। हम चल पड़े। मैं बग्घी की गद्दी से चिपक गया जो 'सागर में नाव' की भांति धचकोले खा रही थी और अपने कुत्ते को पुकारा। मेरी घोड़ी—बुरा हाल था उसका—बड़ी मुश्किल से कीचड़ में लथपथ चल रही थी, फिसलती और ठोकरें खाती हुई। पहरुवा बमों के आगे, कभी दाहिने तो कभी बाएं, भूत की भांति मंडरा रहा था। काफ़ी देर तक हम चलते रहे। आखिर हमारा पथ-प्रदर्शक रुका। "यह लीजिये श्रीमान, हम घर आ पहुंचे," उसने शांत आवाज़ में कहा। दरवाज़ा चरचराया, कुछ पिल्लों ने भौंककर हमारी अगुवानी की। मैंने अपना सिर उठाया और मुझे बिजली की कौंध में बड़े-से अहाते के बीच जो बेंत वृक्षों के बाड़े से घिरा था, एक छोटी झोंपड़ी दिखाई दी। एक छोटी-सी खिड़की में से धुंधली रोशनी आ रही थी। पहरुवा घोड़ी को पैड़ियों तक ले गया और उसने दरवाज़ा खटखटाया। "आयी, आयी!" की पैनी आवाज़ और नंगे पांवों की चाप हमें सुनाई दी। ताला खटका और बारह-एक वर्ष की एक लड़की, छोटा-सा झगला पहने जिसपर कमरबन्द कसा था, हाथ में लालटेन लटकाये दरवाज़े पर आ खड़ी हुई।

"हुज़ूर को ज़रा रोशनी तो दिखा," उसने लड़की से कहा। फिर मुझ से बोला, "मैं आपकी बग्घी छप्पर के नीचे खड़ी किये देता हूं।"

लड़की ने मेरी ओर देखा और झोंपड़ी के भीतर चली गयी। मैं भी उसके साथ हो लिया।

पहरुवे की झोंपड़ी में केवल एक कोठा था—धुवें से भरा, नीचे को धंसा, और सूना, पार्टीशन या तन्दूर पर सोने के स्थान से वंचित। दीवार पर भेड़ की खाल का चिथड़ा कोट लटका था। बेंच पर एक इकनली बन्दूक़ पड़ी थी, कोने में चिथड़ों का ढेर लगा था और तन्दूर के पास दो बड़े बड़े मटके रखे थे। मेज़ पर एक खपची धीमे धीमे जल रही थी।

कभी उसकी लौ तेज़ हो जाती थी और कभी एकदम मन्द। झोंपड़ी के ठीक बीचोंबीच आड़े लम्बे बांस के छोर से एक पालना लटका था। लड़की ने लालटेन बुझा दी, एक छोटे-से स्टूल पर बैठ गयी और दाहिने हाथ से पालना झुलाने लगी। साथ ही, बाएं हाथ से, जलती हुई खपची को भी ठीक करती जाती थी। मैंने अपने इर्द-गिर्द देखा—और मेरा हृदय भीतर ही भीतर बैठने लगा। किसान की झोंपड़ी में रात के वक़्त जाने से मन ख़ुश नहीं होता। पालने में पड़ा बच्चा तेज़ गति से सांस ले रहा था।

"क्या यहां तुम एकदम अकेली रहती हो?" मैंने लड़की से पूछा।

"हां," उसने कहा। उसकी आवाज़ मुश्किल से सुनाई पड़ रही थी।

"तुम पहरुवे की लड़की हो न?"

"हां," वह फुसफुसायी।

दरवाज़ा चरचराया और पहरुवे ने, अपना सिर नीचा करते हुए, चौखट के भीतर पांव रखा। उसने लालटेन को फ़र्श पर से उठाया, मेज़ के पास गया, और मोमबत्ती जलायी।

"खपची की रोशनी के आप भला क्या आदी होंगे! क्यों, ठीक है न?" उसने कहा और सिर झटककर अपने घुंघराले बालों को पीछे कर लिया।

मैंने उसपर नज़र डाली। ऐसी वीर आकृति को देखने का सौभाग्य विरले ही मुझे प्राप्त हुआ होगा। लम्बा क़द, चौड़े कंधे, अद्भुत काठी—एक एक अंग जैसे सांचे में ढला हुआ। उसके सबल पुट्ठे घर की कती-बुनी और भीगी हुई क़मीज़ को चीरकर जैसे बाहर निकले पड़ते थे। उसका कड़ा और मरदाना चेहरा काली घुंघराली दाढ़ी से आधा ढका था। उसकी भौंहें ख़ूब चौड़ी और बीच में एक-दूसरे से मिली थीं। उनके

नीचे से उसकी छोटी छोटी भूरी आंखें निर्द्वन्द्व झांक रही थीं। वह मेरे सामने खड़ा था, अपनी बांहों को बग़ल में दाबे हुए।

मैंने उसका शुक्रिया अदा किया और नाम पूछा।

"मेरा नाम फ़ोमा है," उसने जवाब दिया, "यों लोग मुझे बिर्यूक * कहते हैं।"

"ओह, तो तुम्हीं बिर्यूक हो!"

मैंने और भी दूनी उत्सुकता से उसकी ओर देखा। अपने येरमोलाई तथा अन्य कितने ही लोगों से जंगल के पहरुवा बिर्यूक के बारे में अक्सर क़िस्से सुन चुका था। आसपास के ज़िलों के किसान उससे इतना ही डरते थे जितना कि आग से। उनके कथनानुसार उस जैसा अपने काम का धनी दुनिया में दूसरा नहीं होगा। "क्या मजाल जो तुम एक तिनका भी जंगल से उठा सको। चाहे जो भी समय हो—आधी रात ही क्यों न हो—वह तुम पर टूटकर गिरेगा और उसका मुक़ाबिला करने की बात तो सोची ही नहीं जा सकती—वह मज़बूत और शैतान की भांति चतुर है... और उसे किसी तरह अपने बस में नहीं किया जा सकता, न शराब से और न धन से, कोई लासा ऐसा नहीं है जिसमें उसे फंसाया जा सके। कई बार लोगों ने उसका सफ़ाया करना चाहा, लेकिन नहीं—कोई भी तरकीब कारगर नहीं हुई।"

बिर्यूक के बारे में आसपास के सभी किसान यही कहते थे।

"सो तुम्हीं बिर्यूक हो," मैंने दोहराया, "मैंने तुम्हारी चर्चा सुनी है, भाई। लोग कहते हैं कि तुम किसी पर रहम नहीं करते।"

"मैं अपना फ़र्ज़ पूरा करता हूं," उसने गम्भीर भाव से जवाब दिया, "मालिक की रोटी निठल्ले बैठकर खाना ठीक नहीं है।"

---

*ओरेल प्रांत में एकाकी उदास आदमी को बिर्यूक नाम से पुकारा जाता है।

उसने अपनी पेटी में से एक कुल्हाड़ी निकाली और खपचियां चीरने लगा।

"क्या तुम्हारी घरवाली नहीं है?" मैंने उससे पूछा।

"नहीं," उसने जवाब दिया, आवेग के साथ अपनी कुल्हाड़ी को चलाते हुए।

"मर गयी, शायद?"

"नहीं... हां... हां, मर गयी," उसने कहा और मुह दूसरी ओर फेर लिया।

मैं चुप हो गया। उसने आंखें उठाकर मेरी ओर देखा।

"वह शहर के एक आदमी के साथ भाग गयी जो इधर से गुज़र रहा था," कटु मुस्कराहट के साथ उसने कहा। लड़की ने अपना सिर लटका लिया। बच्चा जाग गया और रोने लगा। लड़की पालने के पास गयी। "यह लो, इसे पिला दो," दूध की एक गंदी-सी बोतल उसके हाथ में देते हुए बिर्यूक ने कहा, और बच्चे की ओर इशारा करते हुए दबे स्वर में बोला—"इसे भी छोड़ गयी।" वह दरवाज़े के पास पहुंचा, रुका और घूमकर मुड़ गया।

"मालिक," उसने कहना शुरू किया, "आपको भला हमारी रोटी क्या रुचेगी, और सिवा रोटी के घर में..."

"मुझे भूख नहीं है।"

"सो तो आप जानें। मैं समोवार ही गरमा देता, लेकिन घर में चाय की पत्ती नहीं है... जाकर देखता हूं, आपकी घोड़ी का क्या हाल है।"

वह दरवाज़े को पट से बंद करता बाहर चला गया। मैंने फिर अपने इर्द-गिर्द देखा। झोंपड़ी मुझे अब और भी ज़्यादा उदास मालूम हुई। बासी धुवें की तीखी गंध बड़े अनचीते रूप में दम घोट रही थी। छोटी लड़की बिना हिले-डुले अपनी जगह पर बैठी थी। उसने अपनी आंखें नहीं उठायीं। रह रहकर वह पालने को झकोला देती और अपने

फिसलते हुए झगले को सहमे-से अन्दाज़ में खींचकर कंधों पर कर लेती। उसकी उघड़ी हुई टांगें निश्चल लटक रही थीं।

"तुम्हारा नाम क्या है?" मैंने उससे पूछा।

"उलीता," उसने कहा, और उदासी में डूबा उसका छोटा-सा चेहरा और भी ज़्यादा झुक गया।

पहरुवा भीतर आया और बेंच पर आकर बैठ गया।

"अंधड़ ख़त्म हो रहा है," संक्षिप्त मौन के बाद उसने कहा, "इच्छा हो तो चलिये, मैं जंगल से बाहर तक आपको छोड़ आऊं।"

मैं उठ खड़ा हुआ। बिर्यूक ने अपनी बंदूक़ उठायी और उसको हरखा-परखा।

"यह किस लिए?" मैंने पूछा।

"जंगल में गड़बड़ है... घाटी में कोई पेड़ काट रहा है," मेरी जिज्ञासापूर्ण मुद्रा को देखते हुए उसने कहा।

"क्या तुम्हें यहां सुनाई दे रहा है?"

"नहीं, बाहर सुनाई देता था।"

हम दोनों एक साथ बाहर निकले। बारिश बन्द हो गयी थी। तूफ़ानी बादलों के भारी दल अभी भी आकाश के छोर पर जमा थे। रह रहकर बिजली की लम्बी बर्छियां कौंध जाती थीं। लेकिन ऊपर जहां-तहां गहरा नीला आकाश दिखाई देने लगा था। तेज़ी से लपकते बादलों को बेंधकर कहीं कहीं तारे टिमटिमा रहे थे। बारिश में भीगे और हवा द्वारा झकझोरे हुए पेड़ों पर से अंधेरे का आवरण उतरने लगा था। हमने सुनने की कोशिश की। पहरुवे ने अपनी टोपी उतारी और सिर झुका लिया—"उधर..." अचानक उसने कहा, और उसने अपना हाथ फैलाया, "देखो न, इस काम के लिए कैसी रात उसने चुनी है!" पत्तों की सरसराहट के सिवा मुझे और कुछ सुनाई नहीं दे रहा था। बिर्यूक छप्पर के नीचे से घोड़ी बाहर निकाल लाया और बोला—"नहीं तो पकड़ाई नहीं देगा।"

"अगर ऐतराज़ न हो तो... मैं भी तुम्हारे साथ चलूं?" –"बेशक," उसने जवाब दिया, और उसने घोड़ी को फिर पीछे कर दिया। "अभी मिनटों में हम उसे पकड़ लेंगे, और इसके बाद मैं आपको लिवा ले चलूंगा। चलिये, अब चलें।"

हम चल पड़े, बिर्यूक आगे आगे और मैं उसके पीछे। ख़ुदा ही जानता है, कि अपनी राह की कैसे वह टोह लेता था। केवल एक या दो बार ही वह ठिठका होगा, सो भी केवल कुल्हाड़ी की चोटों की टोह लेने के लिए। "उधर," वह बुदबुदाया, "आपको कुछ सुनाई देता है? सुन रहे हैं कुछ?"–"नहीं तो, किधर?" बिर्यूक ने अपने कंधे बिचकाये। हम घाटी में उतरे। हवा क्षण-भर के लिए थिर हो गयी। कुल्हाड़ी की चोटों की समध्वनि मुझे अब साफ़ सुनाई दी। बिर्यूक ने मेरी ओर देखा और अपना सिर हिलाया। भीगी हुई घास के बीच से हम आगे बढ़े। एक धीमे धुंधले धमाके की आवाज़ सुनाई दी...

"पेड़ कट गया," बिर्यूक ने बुदबुदाकर कहा।

इस बीच आकाश अधिकाधिक साफ़ हो गया था। जंगल में धुंधला उजाला फैल गया था। आख़िर हम घाटी से बाहर निकल आये।

"यहां कुछ देर ठहरिये," पहरुवे ने मुझ से फुसफुसाकर कहा। वह नीचे झुका, और अपनी बन्दूक़ को सिर के ऊपर ऊंचा उठाये झाड़ियों में ओझल हो गया। मैं व्यग्र भाव से सुनने लगा। मेरी नसें तन गयीं। हवा की निरन्तर गरज को पारकर कुछ धुंधली आवाज़ें पास ही मुझे सुनाई दीं। टहनियों पर कुल्हाड़ी का सतर्क आघात, पहियों की गड़गड़ाहट, घोड़े के नथुनों की फरफराहट...

"ए, कहां भागे जाते हो? ठहरो!" अचानक बिर्यूक की आवाज़ गरज उठी। एक दूसरी आवाज़, फंदे में फंसे ख़रगोश की दयनीय चिचियाहट की भांति, सुनाई दी... कशमकश शुरू हो गयी।

"कितनी तेज़ बारिश है," पहरुवे ने टिप्पणी कसी, "इसके थमने तक आपको रुकना पड़ेगा। थोड़ी देर लेट जाइये।"

"शुक्रिया।"

"आपके आराम के लिए मैं इसे ड्योढ़ी में बंद कर देता," किसान की ओर इशारा करते हुए वह कहता गया, "लेकिन देखिये, कुंडी लगी है..."

"इसे यहीं रहने दो। इसे हाथ न लगाना," मैंने बीच में ही कहा।

किसान ने अपनी भौंहों के नीचे छिपी आंखों से मेरी ओर देखा। मैंने मन ही मन तय किया चाहे जो हो, इसे छुड़ाकर रहूंगा। वह बेंच पर निश्चल बैठा था। लालटेन की रोशनी में मैं अब उसका घिसा-पिटा झुर्रियोंदार चेहरा, नीचे तक लटकी उसकी पीली भौंहें, उसकी बेचैन आंखें और क्षीण अंग देख सकता था... छोटी लड़की फ़र्श पर, ठीक उसके पांवों के पास लेट गयी और फिर सो गयी। बिर्यूक मेज़ पर बैठा था। अपना सिर वह हाथों में थामे था। कोने में एक टिड्डा चीं-चीं कर रहा था... छत पर बारिश टपाटप गिर रही थी और खिड़कियों पर से बहकर नीचे आ रही थी। हम सब चुप बैठे थे।

"फ़ोमा कुज़मीच," अचानक किसान ने मोटी टूटी हुई आवाज़ में कहा, "फ़ोमा कुज़मीच।"

"क्या है?"

"मुझे जाने दो।"

बिर्यूक ने कोई जवाब नहीं दिया।

"मुझे जाने दो... भूख ने मुझ से यह करवाया... मुझे जाने दो।"

"मैं तुम्हें जानता हूं," पहरुवे ने उदास आवाज़ में पलटकर जवाब दिया, "तुम सब के सब एक-से हो—सब के सब चोर!"

"मुझे जाने दो," किसान ने दोहराया, "हमारा कारिन्दा ... हम बरबाद हो गये ... बरबाद हो गये ... मुझे जाने दो!"

"बरबाद हो गये—वाह, चोरी करना मना है।"

"मुझे जाने दो, फ़ोमा कुज़मीच... मुझे बरबाद न करो। तुम्हारा कारिन्दा, तुम खुद जानते हो, ज़रा रहम नहीं करेगा। सच, बिल्कुल रहम नहीं करेगा।"

बिर्यूक ने मुंह फेर लिया। किसान इस तरह कांप रहा था जैसे उसे जूड़ी चढ़ी हो। उसका सिर हिल रहा था और वह हांफ हांफकर सांस ले रहा था।

"मुझे जाने दो," उदासी भरी निराश आवाज़ में उसने कहा, "मुझे जाने दो, ख़ुदा के लिए मुझे छोड़ दो। मैं अदा कर दूंगा, ख़ुदा की क़सम, मैं अदा कर दूंगा। सच, भुखमरी ने मुझे मजबूर कर दिया... बच्चे कलप रहे हैं, तुम ख़ुद जानते हो। सच, बुरा हाल है हम लोगों का।"

"लेकिन इस सब का मतलब यह थोड़े ही है कि चोरी करो।"

"मेरा घोड़ा," किसान कहता गया, "एक वही तो जानवर हमारे पास है... उसे छोड़ दो ... कम से कम।"

"सुनो, यह मेरे बस की बात नहीं। मैं अपने आप कुछ नहीं कर सकता हूं। मेरे सिर ज़िम्मेदारी है। फिर, तुम्हें कुराह क्यों चलने दिया जाय।"

"मुझे जाने दो। तंगी ने मुझसे यह कराया, फ़ोमा कुज़मीच, और किसी चीज़ ने नहीं, केवल तंगी ने मुझे मजबूर कर दिया। मुझे जाने दो!"

"मैं तुम लोगों को जानता हूं!"

"ओह, मुझे जाने दो!"

"उफ़, तेरे साथ तो मुंह लगना ही बुरा है। चुपचाप बैठा रह, नहीं तो अभी सीधा कर दूंगा। देखता नहीं, यहां श्रीमान मौजूद हैं।"

बेचारे ग़रीब ने अपना सिर झुका लिया... बिर्यूक ने जुमहाई ली और अपना सिर मेज़ पर टिका दिया। बारिश अभी भी ज़ोर बांधे थी। मैं यह जानने की बाट में था कि अब क्या होगा।

अचानक किसान सीधा खड़ा हो गया। उसकी आंखें चमक रही थीं, और उसका चेहरा गहरा लाल हो गया था।

"अच्छी बात है, कर लो जितना भी बुरा तुम कर सको। मुझे कच्चा चबा जाओ और जाओ जहन्नुम में," उसने कहना शुरू किया। उसकी आंखें सिकुड़ गयी थीं और होंठों के छोर लटक आये थे। "यह लो, मैं तुम्हारे सामने मौजूद हूं, आदमखोर! तुम ईसाई का खून पीना चाहते हो—यह लो, पियो!"

पहरुवा घूम गया।

"जंगली, खून चूसनेवाले, मैं तुमसे कह रहा हूं!"

"बहुत ज़्यादा चढ़ा गये हो क्या जो लगे हो गाली बकने?" चकित मुद्रा में पहरुवे ने कहना शुरू किया, "तुम्हारी अक़्ल तो ठिकाने है, क्यों?"

"चढ़ा गया तो क्या, तेरी जेब से तो नहीं पी, लोगों की जान के दुश्मन, वहशी, वहशी, वहशी!"

"ओह तुम... अभी दिखाता हूं।"

"और क्या दिखाओगे? मेरे लिए सब बराबर है। अब रहा ही क्या, घोड़े के बिना मैं क्या करूंगा? मुझे मार डालो इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ेगा। आख़िर वही होगा। चाहे भूख से मारो, चाहे इस तरह—सब बराबर है। सब को बरबाद कर डालो—घरवाली को, बच्चों को ... सब को एकबारगी मार डालो। पर, तुम्हें इसका भुगतान करना पड़ेगा, आज न सही, पर वह दिन दूर नहीं!"

बिर्यूक उठ खड़ा हुआ।

"मार डालो, मुझे मार डालो!" वहशियाना आवाज़ में किसान कहता गया, "मार डालो, यह लो, मार डालो ..." (छोटी लड़की हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई और उसकी ओर ताकने लगी।) "मार डालो, मुझे मार डालो।"

"मुंह बन्द कर!" पहरुवा गरजा और दो डग आगे बढ़ आया।

"बस, फ़ोमा, बस," मैंने चिल्लाकर कहा, "रहने दो, इसे अपने हाल पर छोड़ दो!"

"मैं क्यों मुंह बन्द करूं," भाग्य का मारा कहता गया, "मेरे लिए सब बराबर है–मुझे बरबाद ही होना है, ऐसे भी और वैसे भी–लेकिन तुम, लोगों की जान के दुश्मन, वहशी, तुम अभी बरबाद नहीं हुए ... लेकिन ठहरो, तुम भी बहुत दिन नहीं जियोगे, वे तुम्हारी गरदन भी मरोड़ डालेंगे। ज़रा देखते जाओ।"

बिर्यूक ने उसके कंधे को जकड़ लिया। मैं किसान की मदद करने के लिए लपका ...

"तुम बीच में मत आओ, मालिक!" पहरुवे ने चिल्लाकर मुझसे कहा।

मैं उसकी धमकियों से डरनेवाला नहीं था, और मेरी मुट्ठी हवा में तन भी गयी थी, लेकिन मैं गहरे अचरज में खड़ा रह गया। एक ही झटके में उसने किसान की कोहनियों से पेटी को खींच लिया, उसके गले का टेंटुवा पकड़ा, नीचे आंखों तक खींचकर उसकी टोपी उसके सिर में खोंस दी, दरवाज़ा खोला और उसे धकियाकर बाहर निकाल दिया।

"अपने घोड़े को लेकर जाओ जहन्नुम में!" वह उसके पीछे, चिल्लाया "लेकिन ध्यान रखना, अगर फिर किया ..."

वह झोंपड़ी में लौट आया और कोने में कुछ उलट-पलट करने लगा।

"वाह, बिर्यूक," मैंने अन्त में कहा, "तुमने तो मुझे चकित कर दिया। देखता हूं, तुम तो बहुत अच्छे आदमी हो!"

"ओह, रहने दो, मालिक," चिढ़कर उसने बीच में ही कहा, "किरपा कर इसका ज़िक्र न करो। लेकिन अच्छा हो कि अब मैं आपको रास्ते तक छोड़ आऊं," अन्त में कहा, "मेरी समझ में, बारिश के रुकने की तो अब आप क्या बाट देखेंगे..."

अहाते में किसान की गाड़ी के पहियों की खड़खड़ सुनाई दी।

"गया!" वह बुदबुदाया, "मैं उसे मज़ा चखाऊंगा..."

आध घंटा बाद जंगल के छोर पर उसने मुझसे भी विदा ली।

दो ज़मींदार

सहृदय पाठक, अपने पड़ोसियों में से कई-एक से आपका परिचय कराने का सम्मान मुझे पहले से प्राप्त है। इजाज़त हो तो अब मैं, यह अनुकूल अवसर देखकर (यों तो हम लेखकों के लिए हर अवसर अनुकूल होता है) दो और श्रीमन्तों से आपका परिचय करा दूं, जिनके इलाक़े में मेरा अक्सर शिकार के लिए जाना हुआ करता था। वे बहुत ही योग्य और सदाशय जीव हैं और दूर दूर तक लोग उनका आदर करते हैं।

सबसे पहले मैं आपके सामने अवकाश-प्राप्त मेजर-जेनरल व्याचेस्लाव इलरिओनोविच ख़्वालीन्स्की का वर्णन करूंगा। एक लम्बे और सुडौल आदमी का चित्र अपनी कल्पना में मूर्त्त कीजिये जो अब, किसी क़द्र, मोटा हो चला है। यों वह बड़ी उम्र का आदमी है, लेकिन जर्जरता का—यहां तक बुढ़ापे का भी—चिन्ह उसमें क़तई नहीं नज़र आता। जैसा कि कहते हैं, वह अपने पूरे जौबन पर मालूम होता है। यह सच है कि उसके चेहरे-मोहरे में जो कभी आकर्षक था और अभी भी अपेक्षाकृत सुन्दर है, अब कुछ परिवर्तन आ गया है—उसके गाल गुलगुला गये हैं, आंखों के इर्द-गिर्द महीन झुर्रियां किरनों की भांति नज़र आने लगी हैं और जैसा कि, पुश्किन के कथनानुसार, सादी कहा करता था—कुछ दांत ओझल हो गये हैं। उसके हल्के सुनहरे बाल, कम से कम, जो कुछ भी उनका अब बाक़ी बच रहा है—अब बैंगनी-से रंग के नज़र आने लगे हैं। यह उस मसाले का नतीजा है जिसे उसने रोमनी में हुए घोड़ों के मेले में एक यहूदी से ख़रीदा

था और जो अपने-आपको आर्मीनिया का बताता था। लेकिन, इस सबके बावजूद व्याचेस्लाव इलरिओनोविच चाल-ढाल में चुस्त है, उसकी हंसी में गूंज है, एड़ियों को खनकाता और अपनी मूछों में छल्ले डालता है, और अन्त में यह कि अपने को एक बूढ़ा घोड़सवार सैनिक कहता है, जब कि हम सभी जानते हैं कि असल में बूढ़े लोग अपने बुढ़ा जाने की बात कभी नहीं करते। आम तौर से वह फ़ॉक-कोट में कसे रहता है जिसके बटन ऊपर तक बन्द होते हैं। ऊंचा गुलूबंद, कलफ़दार कालर, फ़ौजी काट की भूरी रोबदार पतलून। टोपी नीचे माथे तक खिंची हुई, जिससे सिर का पिछला हिस्सा सारा खुला रहता है। स्वभाव का अच्छा है, लेकिन अपनी धारणाओं और सिद्धान्तों की दृष्टि से कुछ अजीब और अटपटा। मिसाल के लिए उन कुलीनों के साथ वह कभी बराबरी का व्यवहार नहीं कर सकता जो धनी या हैसियतवाले नहीं हैं। जब उनसे बातें करता है तो वह बग़ल से उनपर नज़र डालता है और उसका कड़ा सफ़ेद कालर उसके गाल में गड़ने लगता है। फिर, अचानक, अपनी साफ़ पथरीली नज़र से उन्हें बींधने लगता है, और ऐसा करते समय उसके बालों के नीचे सिर की समूची खाल हरकत में आ जाती है। यहां तक कि शब्दों का उच्चारण भी वह खास अपने ढंग से करता है। मिसाल के लिए वह सीधे सीधे यह कभी नहीं कहेगा, "शुक्रिया, पावेल वसीलिच," या "मेहरबानी करके, इधर से, मिखाइलो इवानिच," बल्कि हमेशा यही कहेगा—"फुक्रिया, पाल असीलिच," या "अरबानीकरके इद्र से, मिल वानिच"। समाज के निचले स्तर के लोगों के साथ उसका व्यवहार और भी अजीब होता है। वह कभी उनकी ओर देखता ही नहीं, और अपनी इच्छा प्रकट करने या उन्हें आदेश देने से पहले चकित और खोये-से अन्दाज़ में लगातार कई बार, दोहरा-तिहराकर, पूछेगा—"क्या नाम है तुम्हारा? क्या नाम है तुम्हारा?" पहले शब्द पर असाधारण रूप में बल देते हुए, जिसकी वजह से यह वाक्य बहुत-कुछ ऐसा मालूम होता है जैसे पक्षी की पुकार हो। वह बहुत ही मीन-मेखी

ग्रौर भयानक रूप से गांठ का पक्का है, लेकिन वह अपनी ज़मीन का ठीक से बन्दोबस्त नहीं कर पाता। एक अवकाश-प्राप्त क्वार्टर-मास्टर को जो एक उजड्डी और असाधारण रूप से मूर्ख है, उसने अपनी जागीर का ओवरसीयर चुना है। यों ज़मीन के बन्दोबस्त का जहां तक संबंध है, हम सब पीटर्सबर्ग के उस महानुभाव से सदा हार मानते हैं जिसने, अपने कारिन्दे से यह रिपोर्ट सुनकर कि उसकी जागीर में अनाज सुखानेवाले बाड़ों में अक्सर आग लग जाती है जिसकी वजह से अनाज का भारी नुक़सान होता है, सख़्त आदेश जारी कर दिया था कि भविष्य में अनाज को उस समय तक भीतर न रखा जाय जब तक कि आग पूर्णतया न बुझा ली गयी हो। अपने खेतों में पोस्त उगाने की शानदार सूझ भी इसी महापुरुष के दिमाग़ में से निकली थी। उसने बहुत ही सीधा-सादा और साफ़ हिसाब लगाया था। पोस्त रई से महंगी होती है–उसने तर्क किया–फलतः पोस्त बोने से ज़्यादा मुनाफ़ा होगा। पीटर्सबर्ग से प्राप्त हुए किसी नमूने के आधार पर अपनी स्त्री-दासों को सिलमे-सितारेवाले छज्जे पहनने का आदेश भी इसी महानुभाव ने दिया था, और उसके इलाक़े की किसान स्त्रियां सचमुच आज दिन तक ऐसे सितारेवाले छज्जे पहनती हैं, केवल वे उन्हें अपने रूमालों के ऊपर पहनती हैं... लेकिन छोड़िये उन्हें, और अपने व्याचेस्लाव इलरिओनोविच की बात करें। व्याचेस्लाव इलरिओनोविच कोमल वर्ग के गहरे प्रशंसक हैं। अपने ज़िला-नगर में सैर-सपाटा करते हुए जैसे ही उन्हें कोई सुन्दर स्त्री दिखाई देती है, वे तुरंत उसके पीछे लपकते हैं, लेकिन फ़ौरन ही लंगड़ाती चाल में चलने लगते हैं–यह उनमें एक ख़ास बात है। वह ताश खेलने के शौक़ीन हैं, लेकिन केवल अपने से नीची हैसियतवाले लोगों के साथ जो हर वाक्य के साथ 'महामहिम' कहकर उनकी लल्लो-चप्पो करते रहें जबकि वह ख़ुद उन्हें झिड़क और जी भरकर उनमें नुक्स निकाल सकें। जब कभी गवर्नर या अन्य किसी सरकारी विभूति के साथ उन्हें ताश खेलने का अवसर मिलता है तब एक अद्‌भुत परिवर्तन

उनमें आ जाता है—मुसकराहटों का बन्दनवार सजाये वह एकदम जी हुजूर बन जाते हैं, आंखें उनके चेहरों का अनुसरण करती हैं और वह बाक़ायदा शहद की नदी बहाने लगते हैं। यहां तक कि हारने पर भी वह बड़बड़ाते नहीं। व्याचेस्लाव इलरिओनोविच पढ़ने से ज्यादा वास्ता नहीं रखते, और जब वह पढ़ते हैं तो उनकी मूछें और भौहें बराबर ऊपर-नीचे होती रहती हैं, लगता है जैसे कोई लहर नीचे से ऊपर की ओर उनके चेहरे पर हिलोरें ले रही हो। व्याचेस्लाव इलरिओनोविच के चेहरे पर लहरियों का यह समारोह उस समय ख़ास तौर से उभरा हुआ नज़र आता है जब कि वह (निश्चय ही मण्डली के सामन) 'Journal des Débats'* के कालम पढ़ते होते हैं। गुबर्निया के चुनावों में वह महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं, लेकिन कंजूसी के कारण मारशल के सम्मानपूर्ण पद को स्वीकार नहीं करते। "महानुभावो," उक्त पद को स्वीकार करने के लिए उनपर दबाव डालनेवाले कुलीनों से वह अक्सर कहते हैं, अपनी आवाज़ में संरक्षण और ख़ुदमुख़्तारी की भावना का पुट लिये हुए, "इस सम्मान के लिए मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूं, लेकिन मैंने अपना अवकाश-काल एकान्तवास में बिताने का निश्चय कर लिया है।" और इन शब्दों को उच्चारित करते समय अपने सिर को वह अनेक बार दाएं से बाएं और बाएं से दाएं घुमाते हैं और इसके बाद, गर्वीले अन्दाज़ में, अपनी ठोड़ी और गाल को अपने गुलूबंद के ऊपर ठीक से बिठाते हैं। जवानी के दिनों में उन्होंने किसी बहुत महत्त्वपूर्ण आदमी की एजूटैण्टी की थी। और अब उस आदमी की जब भी चर्चा करते हैं तो उसका पूरा नाम लेकर। लोगों का कहना है कि एजूटैण्टी के अलावा वह अन्य काम भी सरंजाम देते थे। मिसाल के लिए जैसे यह कि उनका चीफ़ जब ग़ुसल करता था तो वह परेड की पूरी वर्दी में लैस, नीचे से ऊपर ठोड़ी तक बटनों को कसे हुए, उसे साबुन लगाते थे। लेकिन लोगों की सभी बातों पर यक़ीन नहीं किया जा सकता।

---

* 'वादानुवादी पत्रिका'।

जो हो, जेनरल ख्वालीन्स्की अपने फ़ौजी जीवन की चर्चा करने के लिए कभी उतावले नहीं रहते, जो कि एक अजीब बात है। ऐसा मालूम होता है कि उन्हें सक्रिय सर्विस में जाने का कभी अवसर नहीं मिला। अब वह अकेले एक छोटे-से घर में रहते हैं। विवाहित जीवन के सुखों का उन्होंने कभी अनुभव नहीं किया, फलतः अब भी भावी वर के रूप में वह घूमते हैं और सचमुच वह बहुत उपयुक्त वर हो सकते हैं, लेकिन उन्होंने एक भण्डारिन रख छोड़ी है—पैंतीसेक वर्ष की एक ताज़ा-दम स्त्री, काली आंखें, काली भौंहें, गुदगुदी, जिसकी मूंछें भी हैं। सप्ताह के दिनों में भी वह कलफ़दार कपड़े पहनती है, और रविवार के दिन मलमल की आस्तीनें लगा लेती है। व्याचेस्लाव इलरिओनोविच अपने पूरे निखार पर उस समय होते हैं जब गवर्नर तथा अन्य बड़ी विभूतियों के सम्मान में पड़ोस के श्रीमन्त कोई ज़ियाफ़त करते हैं। तब वह, जैसा कि कहते हैं, अपने प्रकृत रंग में होते हैं। ऐसे मौक़ों पर वह अगर गवर्नर के दाहिने बाज़ू नहीं तो कम से कम उससे दूर भी नहीं बैठते। दावत के शुरू में उन्हें निजी प्रतिष्ठा को बनाये रखने का ज़्यादा ध्यान रहता है, और अपनी कुर्सी की पीठ से टिके, अपने सिर को घुमाये बिना मेहमानों की खोपड़ियों और खड़े कालरों पर ऊंचाई से नज़रसानी करते हैं, लेकिन भोज का अन्त होते न होते चारों ओर मुसकराना शुरू करते हैं (गवर्नर की ओर तो वह शुरू से ही मुस्कान-स्वरूप बने हुए थे), यहां तक कि कभी कभी कोमलांगियों के सम्मान में जाम तक पीने का प्रस्ताव करते जिन्हें वह हमारे इस नक्षत्र की शोभा के नाम से पुकारते हैं। तमाम गुरु-गम्भीर सार्वजनिक समारोहों, परीक्षणों, अधिवेशनों और प्रदर्शनियों में भी जेनरल ख्वालीन्स्की का सितारा बुलन्द रहता है। गिरजे में जिस अन्दाज़ से वह आशीर्वाद लेने जाते हैं, उसका जवाब नहीं। व्याचेस्लाव इलरिओनोविच के नौकर-चाकर स्थानों पार करने के जगहों पर या भीड़ भरे रास्तों में कभी हल्ला और आपाधापी नहीं मचाते। भीड़ में से उनके लिए रास्ता बनाते या उनकी गाड़ी का

आह्वान करते समय उनके गले से बहुत ही धीमी, गहरी आवाज़ निकलती है – "ज़रा राह छोड़ना जेनरल ख़्वालीन्स्की को गुज़र जाने दें," या "जेनरल ख़्वालीन्स्की की गाड़ी ..." जेनरल ख़्वालीन्स्की की गाड़ी, यह मानना होगा, कुछ पुराने नमूने की है, और उनके प्यादों की वर्दी झिरझिरी हो चली है (यह कहने की ज़रूरत नहीं कि वह सुरमई रंग की है और सामने की ओर लाल सजावट से लैस है)। उनके घोड़े भी, अपने समय में काफ़ी कड़ी सेवा दे चुके हैं। लेकिन व्याचेस्लाव इलरिओनोविच शान-शौकत के कुछ ख़ास दिलदादा नहीं हैं, यहां तक कि अमीरी का प्रदर्शन करना अपनी मर्यादा के ख़िलाफ़ समझते हैं। वाक-शक्ति की प्रतिभा के भी वह ख़ास धनी नहीं हैं, या यह कहिये कि उसका जौहर दिखाने का उन्हें अवसर नहीं मिलता, कारण कि न केवल वाद-विवाद से ही, बल्कि आम बहसों से भी, उन्हें ख़ास घृणा है, और सभी प्रकार की लम्बी बातचीत से – ख़ास तौर से युवा लोगों के साथ – दूर रहने का वह सतत प्रयत्न करते हैं। और ऐसा करके, निश्चय ही, वह बुद्धिमानी का काम करते हैं। आजकल के लोगों का सबसे बड़ा अवगुण यही है कि अपने से बड़ों के प्रति सम्मान और विनम्रता को भूल जाने के लिए वे जैसे हमेशा तैयार रहते हैं। ऊंचे स्तरवाले लोगों की मौजूदगी में ख़्वालीन्स्की ज़्यादातर चुप रहते हैं, जबकि निचले स्तर के लोगों के बीच – जिनसे वह घृणा करते मालूम होते हैं, हालांकि बराबर उनसे मिलते-जुलते हैं – उनकी टिप्पणियां तेज़ और कटु होती हैं, और इस तरह के वाक्य रह रहकर निरन्तर उनके मुंह से निकलते हैं – "तुम्हारी इस मूर्खता का जवाब नहीं," या "ज़रा होश से बातें करें, श्रीमान," या "तुम्हें मालूम होना चाहिए कि किससे गुफ़तगू कर रहे हो," आदि आदि। पोस्ट-मास्टर, स्थानिक बोर्ड के स्थायी अफ़सर, पोस्टींग स्टेशनों के निरीक्षक उनसे विशेष रूप से भय खाते हैं। वह किसी को अपने घर दावत नहीं देते और, प्रचलित अफ़वाह के अनुसार, कंजूस-मक्खीचूस की भांति जीवन बिताते हैं। लेकिन यह सब होने पर

भी वह एक बहुत बढ़िया भूस्वामी हैं। "पुराना सैनिक, निस्स्वार्थ जीव, सिद्धान्त का धनी, और 'vieux grognard'"* यह पड़ोसी उनके बारे में कहते हैं। प्रान्त का प्रासीक्यूटर ही अकेला ऐसा आदमी है जो, जेनरल ख़्वालीन्स्की के बढ़िया तथा ठोस गुणों का बखान होने पर, मुसकराता नज़र आता है, लेकिन छोड़िये, ईर्ष्या लोगों से जो न कराये थोड़ा...

जो हो, अब हम दूसरे भूस्वामी से भी आपका परिचय करा दें।

मार्दारी अपोलोनिच स्तेगुनोव ख़्वालीन्स्की से क़तई नहीं मिलते—दोनों में कोई साम्य नहीं है। यह सोचना तक कठिन है कि वह सरकार की सेवा में रहे होंगे। ख़ूबसूरत भी वह कभी नहीं रहे। नाटा बूढ़ा आदमी, चर्बी चढ़ी हुई, खल्वाट सिर, दोहरी ठोड़ी, छोटे छोटे मुलायम हाथ और प्रतिष्ठा के अनुकूल तोंद। ख़ूब मेहमाननिवाज़ और ख़ुशमिज़ाज, और आराम के साथ रहनेवाले। गर्मी हो, चाहे जाड़ा, वही एक धारीदार रुई भरा लबादा वह पहनते हैं। केवल एक ही चीज़ में वह जेनरल ख़्वालीन्स्की से मिलते हैं—वह भी अनब्याहे हैं। पांच सौ जीवों के वह मालिक हैं। अपनी जागीर में वह कुछ ऊपरी ढंग की दिलचस्पी लेते हैं। ज़माने से पीछे न रहें, इसलिए उन्होंने दस साल पहले मास्को में बुतेनोप के यहां से गाहने की एक मशीन मंगाई, उसे एक कोठड़ी में डालकर ताला लगा दिया, और फिर इस ओर से निश्चिन्त हो गये। कभी कभी, गर्मियों में जब मौसम सुहावना होता है, वह अपनी बग्घी बाहर निकलवाते हैं, और फ़सलों को देखने तथा फूल बटोरने के लिए अपने खेतों की ओर निकल जाते हैं। उनका जीवन, रहन-सहन, बिल्कुल पुराने ढंग का है। उनका घर पुराने ढंग का बना है। घर की ड्योढ़ी में क्वास, चर्बी की मोमबत्तियों और चमड़े की गंध ख़ूब आती है। बराबर में ही, दाहिनी ओर, काले झींगुरों और तौलियों से भरी एक खाने की चीज़ों

---

*बूढ़ा झक्की।

की अलमारी है। भोजन करने का कमरा परिवार के लोगों के चित्रों, मक्खियों, जिरेनियम फूलों के एक बड़े गुलदान और एक चरमर पियानो से सजा है। दीवानखाने में तीन सोफ़े, तीन मेज़ें, दो आईने और ज़ंग खाये एनामेल का घरघर की आवाज़ करता एक घंटा लगा है जिसकी कांसे की बनी सुइयों पर खोदाई का काम किया हुआ है। अध्ययन-कक्ष में कागज़ों की ढेर लगी एक मेज़, नीले-से रंग की टट्टियां जिनपर पिछली शताब्दी की किताबों में से तस्वीरें काट काटकर लगायी गयी हैं। किताबदान जो जर्जर पुस्तकों, मकड़ियों और काली धूल से अटे हैं, एक गुदगुदी आरामकुर्सी, एक इटालियन खिड़की, एक बन्द दरवाज़ा जिसका रुख़ बाग़ की ओर है... संक्षेप में यह कि हर चीज़ ठीक वैसी ही है जैसी कि होनी चाहिए। नौकर-चाकरों की मार्दारी अपोलोनिच के यहां भरमार है, सबके सब पुरानी चाल के कपड़ों से लैस हैं। नीले रंग के लम्बे ऊंचे कालरों वाले, कोट मटमैले रंग की पतलूनें, और छोटी पीली वास्कटें। वे आनेवालों को श्रीमान कहकर सम्बोधित करते हैं। जागीर की निगरानी का काम एक कार्यचालक करता है। वह एक किसान है जिसकी दाढ़ी उसके भेड़ की खाल के बने हुए कोट पर छायी रहती है। घर की देख-भाल एक मक्खीचूस झुर्रियोंदार बुढ़िया करती है जो सिर पर हमेशा दालचीनी के रंग का रूमाल बांधे रहती है। उनके अस्तबल में विभिन्न प्रकार के तीस घोड़े हैं। सवारी के लिए जागीर में ही बनायी गयी चार टन वज़न की एक गाड़ी है। मेहमानों का बड़ी हार्दिकता से स्वागत और जी खोलकर उनकी ख़ातिर तवाज़ा करते हैं। दूसरे शब्दों में यह कि—भला हो रूसी पाकविद्या की मूर्च्छाकारक शक्ति का—प्रिफ़रेन्स खेलने के अलावा मेहमान और कुछ करने योग्य नहीं रहते। जहां तक उनका अपना संबंध है, वह कुछ नहीं करते। उन्होंने 'सपने' पुस्तक तक पढ़ना छोड़ दिया है। लेकिन रूसी कुलीनों में वह अकेले ही नहीं हैं। ठीक उन जैसे लोग काफ़ी संख्या में हैं। आप पूछ सकते हैं, "तब उनका ज़िक्र करने का मेरा क्या उद्देश्य है?"

ठीक, लेकिन इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए मार्दारी अपोलोनिच के साथ अपनी मुलाक़ातों में से एक का वर्णन करने की मैं इजाज़त चाहूंगा।

गर्मियों की सांझ थी। सात बजे मैं उनके यहां पहुंचा। संध्या-प्रार्थना अभी हो चुकी थी। पादरी जो एक युवा आदमी था और अभी हाल ही में धार्मिक विद्यालय से आया था, दरवाज़े के पास ही दीवानख़ाने में बैठा था, प्रत्यक्षत: बहुत ही सहमा-सा, कुर्सी के एकदम छोर पर। मार्दारी अपोलोनिच ने सदा की भांति, बहुत ही हार्दिकता के साथ, मेरा स्वागत किया। कोई भी आय, उन्हें हार्दिक ख़ुशी होती थी। और कुल मिलाकर, इसमें शक नहीं, वह अत्यन्त भले स्वभाव के आदमी थे। पादरी उठ खड़ा हुआ, और अपनी टोपी संभालने लगा।

"ज़रा ठहरो श्रीमान," मेरे हाथ को अभी भी अपने हाथ में थामे हुए मार्दारी अपोलोनिच ने कहा, "जाओ नहीं। मैंने तो तुम्हारे लिए वोद्का मंगवायी है।"

"नहीं श्रीमान, मैं कभी नहीं पीता," पादरी ने सकपकाते हुए कहा। उसके गाल एकदम कानों तक लाल हो उठे थे।

"सो कुछ नहीं!" मार्दारी अपोलोनिच ने जवाब दिया, "पादरी हो तो क्या! मीश्का! यूश्का! पादरी साहिब के लिए वोद्का लाओ!"

यूश्का लगभग अस्सी वर्ष का एक लम्बा, दुबला-पतला आदमी, काली-सी रकाबी पर वोद्का का छोटा गिलास रखे हाज़िर हो गया। रकाबी पर जहां-तहां चमड़े के रंग के कुछ धब्बे दिखाई देते थे।

पादरी ने ना-नुकर करनी शुरू की।

"अरे बस, तकल्लुफ़ न करो, पी जाओ, श्रीमान," भूस्वामी ने शिकायत के लहजे में कहा, "यह बुरी बात है जो तुम इन्कार करते हो।"

बेचारे युवक को मानना पड़ा।

"ठीक, अब तुम जा सकते हो, श्रीमान।"

पादरी ने विदा होने के लिए माथा नवाना शुरू किया।

"बस, बस, हो गया, अब जाओ! आदमी बढ़िया है," उसे जाता देखते हुए मार्दारी अपोलोनिच कहने लगे, "मुझे बेहद पसंद है। केवल एक ही बात है—अभी अधकचरा है। वन्दना-प्रार्थना में इतना समय गंवा देता है कि वोद्का पीना नहीं सीख सका। लेकिन आप अपनी कहें, श्रीमान, कि क्या हालचाल है? इन दिनों क्या करते रहे? तबीयत तो ठीक है न? अरे चलिये, छज्जे पर चलें—बड़ी सुहावनी सांझ है!"

हम बाहर छज्जे पर निकल आये, और बैठकर बातें करने लगे। मार्दारी अपोलोनिच ने नीचे झांककर देखा, और अचानक बुरी तरह उत्तेजित हो उठे।

"ए, किसकी मुर्ग़ियां हैं वे? किसकी मुर्ग़ियां हैं?" उन्होंने चिल्लाकर कहा, "बग़ीचे में वे किसकी मुर्ग़ियां छुट्टा घूम रही हैं? यूश्का! यूश्का! पूछो, किसकी हैं वे मुर्ग़ियां? जाने कितनी बार मैं इसकी मनाही कर चुका हूं? कितनी बार मैं कह चुका हूं!"

यूश्का दौड़ा हुआ बाहर आया।

"क्या बदइन्तज़ामी है!" मार्दारी अपोलोनिच ने विक्षोभ प्रकट किया, "उफ़, भयानक!"

अभागी मुर्ग़ियां, दो चित्तियोंदार और एक सफ़ेद जिसके मत्थे पर शिखा थी—जैसा कि मुझे अब तक याद है—सेब के पेड़ों के नीचे शान्ति से विचर रही थीं। और रह रहकर अपने भावों को सुदीर्घ कुड़कुड़ाहट में व्यक्त कर रही थीं। तभी यूश्का, नंगे सिर और हाथ में लाठी लिये, प्रौढ़ावस्था के तीन अन्य गृह-दासों के साथ, सहसा और एकबारगी उनकी ओर झपटा, और एक अच्छा-ख़ासा तमाशा शुरू हो गया। मुर्ग़ियां कुड़कुड़ा उठीं, अपने पंखों को उन्होंने फड़फड़ाया, फुदकीं और वह शोर मचाया कि कान सुन्न हो गये। गृह-दास दौड़ रहे थे, गिरते-पड़ते और ठोकरें खाते, और उनका मालिक छज्जे से चिल्ला रहा था, बिल्कुल दीवानों

की तरह, "पकड़ो, पकड़ लो उन्हें! पकड़ो, पकड़ लो उन्हें, पकड़ लो! पकड़ लो! किसकी हैं ये मुर्ग़ियां? किसकी हैं ये मुर्ग़ियां?"

आख़िर एक नौकर शिखावाली मुर्ग़ी को पकड़ने में कामयाब हो गया, वह उसके ऊपर ही जा गिरा, और ठीक उसी क्षण ग्यारहेक वर्ष की एक लड़की गांव की सड़क की ओर से बग़ीचे की बाड़ पर से कूदकर भीतर आ गयी। उसके बाल अस्तव्यस्त थे और अपने हाथ में वह एक टहनी लिये थी।

"ओह, अब मालूम हुआ कि ये किसकी मुर्ग़ियां हैं!" विजयी अन्दाज़ में भूस्वामी ने चिल्लाकर कहा, "ये येर्मीला कोचवान की मुर्ग़ियां हैं। अपनी नताल्का को उसने उनके लिए भेजा है। पराशा को नहीं आने दिया।" भेद भरी मुसकान के साथ धीमी आवाज़ में भूस्वामी ने अन्त में जोड़ा। "ए यूश्का, मुर्ग़ियों को छोड़ो, और इस नताल्का को मेरे पास पकड़ लाओ!"

लेकिन इससे पहले कि हांफता हुआ यूश्का भय से त्रस्त लड़की के पास पहुंच पाता, अचानक भण्डारिन वहां नमूदार हो गयी, बांह पकड़कर उसने लड़की को घसीटा और उसकी पीठ पर कई एक थप्पड़ जमा दिये।

"ठीक, बिल्कुल ठीक!" मालिक चिल्लाया, "तक-तक-तक... और मुर्ग़ियों को अपने पास रखो, अवदोत्या!" ज़ोरदार आवाज़ में उसने कहा और फिर ख़ुशी से चमकते अपने चेहरे को मेरी ओर उसने मोड़ा, "कहिये श्रीमान, कितनी मज़े की धर-पकड़ थी वह? ओह, मैं तो बिल्कुल पसीना पसीना हो गया!"

और मार्दारी अपोलोनिच बार बार ठहाका मारकर हंसने लगे।

हम छज्जे पर ही बैठे रहे। सांझ सचमुच असाधारण रूप में सुन्दर थी।

चाय आ गयी।

"मार्दारी अपोलोनिच," मैंने कहना शुरू किया, "खाई से परे राजमार्ग पर जो झोंपड़ियां नज़र आ रही हैं, क्या वे तुम्हारे किसानों की हैं?"

"हां... लेकिन यह तुम क्यों पूछते हो?"

"तुम्हें देखकर हैरानी होती है, मार्दारी अपोलोनिच। यह सचमुच गुनाह है। किसानों को दी गयीं ये झोंपड़ियां छोटी छोटी खोहें हैं, दमघोट और मनहूस। उनके आस-पास एक भी पेड़ नज़र नहीं आता, यहां तक कि जोहड़ भी वहां नहीं है; केवल एक कुआं है, सो भी किसी काम का नही। उन्हें बसाने के लिए क्या वास्तव में तुम्हें और कोई जगह नहीं मिली? और लोग कहते हैं कि सन की पुरानी ज़मीनें भी तुम उनसे छीन रहे हो?"

"और ज़मीनों की इस तक़सीम का क्या किया जाय?" मार्दारी अपोलोनिच ने जवाब दिया, "क्या आप जानते हैं कि यह तक़सीम मुझे हर वक़्त परेशान किये रहती है, और मुझे उससे कोई भला होता नज़र नहीं आता। और जहां तक मेरे सन के खेतों को हथियाने तथा उनके लिए कोई जोहड़ न खोदने आदि का संबंध है—सो श्रीमान, यह सब मुझे बताने की ज़रूरत नही, मैं अपना काम जानता हूं। मैं सीधा-सादा पुरानी चाल का आदमी हूं। मेरे विचारों के मुताबिक़—अगर कोई मालिक है, तो वह मालिक है, और अगर कोई किसान है, तो वह किसान है। बस, मैं तो यह जानता हूं।"

इतनी साफ़ और दिल में बैठ जानेवाली दलील का बिलाशक कोई जवाब नहीं था।

"और इसके अलावा," वह कहता गया, "ये किसान बड़े गये-बीते लोग हैं, मनहूस। ख़ास तौर से दो परिवार। सच, मेरे स्वर्गीय पिता—भगवान शान्ति दे उनकी आत्मा को—उन्हें सह नहीं सकते थे, क़तई बरदाश्त नहीं कर सकते थे। और आप जानो, मेरा मक़ूला है—

अगर पिता चोर है, तो बेटा भी चोर है; अब आप चाहे जो कहें... खून, खून–ओह, खून का असर बहुत बड़ी चीज है! मुझे आपको यह बताने में कोई संकोच नही कि मैंने उन दो परिवारों के कई एक लोगों को यहां से भर्ती करवाके भेज दिया है जबकि अभी उनकी बारी नहीं आयी थी और अन्य तरीक़ों से भी उनसे छुटकारा पाने की कोशिश की है। लेकिन कम्बख़्त इतनी तेजी से अपनी नसल बढ़ाते हैं कि इन्हें समेटना मुश्किल हो जाता है।"

इस बीच वायु में पूर्ण थिरता आ गयी थी। केवल बिरले ही हवा का कोई झोंका आता था और हमारे घर के पास आतेनआते खो जाता था। आख़िरी झोंके के साथ, अस्तबल की ओर से, समगति से दोहराये गये घूंसों की ध्वनि हमारे कानों से आकर टकरायी। मार्दारी अपोलोनिच चाय से भरी तश्तरी को अपने होंठों से छुवाने जा ही रहे थे और उसकी सुगंधि लेने के लिए उनके नथुनों ने अभी फरफराना शुरू ही किया था–सच्चा जाया कोई भी रूसी, जैसा कि हम सभी जानते हैं। इस प्रारम्भिक क्रिया के बिना चाय नहीं पी सकता–कि एकाएक ठिठक गये, कान लगाकर सुना, अपने सिर को झटका दिया, चाय की चुस्की ली, और तश्तरी को मेज़ पर रखते हुए कल्पनातीत भली मुसकराहट के साथ कुछ इस तरह बुदबुदाये जैसे बरबस आघातों के संग ताल दे रहे हों–"चुकी-चुकी-चुक! चुकी-चुक!"

"यह क्या?" मैंने हैरानी के साथ पूछा।

"ओह, मेरे हुक्म से, वे एक लफ़ंगे आदमी को सज़ा दे रहे हैं... क्या आपको वास्या की याद है, वह जो केंटीन में हाज़िरी देता है?"

"वास्या कौन?"

"अरे वही जो अभी भोजन के समय हमारी हाज़िरी दे रहा था। लम्बे गलमुच्छों वाला।"

भयानकतम क्रोध भी मार्दारी अपोलोनिच की उस निखरी हुई मृदु नज़र की ताब नहीं ला सकता था।

"अरे, यह क्या भाई मेरे, यह क्या?" अपने सिर को हिलाते हुए उसने कहा, "इस तरह क्यों मेरी ओर ताक रहे हो, जैसे मैंने कोई खून या गुनाह किया हो? 'जो प्यार करता है, वही मारता भी है', यह आपसे छिपा थोड़े ही है।"

कोई पन्द्रह मिनट बाद मैंने मार्दारी अपोलोनिच से विदा ली। मेरी गाड़ी गांव को पार कर ही रही थी कि वास्या पर मेरी नज़र पड़ी। वह गांव की सड़क पर से चला आ रहा था, दांतों से गिरियां फोड़ता हुआ। मैंने अपने कोचवान से घोड़ों को रोकने के लिए कहा, और उसे आवाज़ दी।

"कहो, बचुवा, तो आज वे तुम्हें सज़ा दे रहे थे?"

"आपने कैसे जाना?" वास्या ने जवाब दिया।

"तुम्हारे मालिक ने बताया।"

"खुद मालिक ने?"

"बात क्या थी, उसने तुम्हें सज़ा देने का हुक्म क्यों दिया?"

"ओह, श्रीमान, मैं इसी जोग था। वे हमें यों ही नहीं सज़ा देते – छोटी-मोटी बातों के लिए। नहीं, हमारे यहां ऐसा नहीं है। हमारे मालिक ऐसे नहीं हैं, हमारे मालिक... ओह, आप सारे सूबे में घूम आइये, हमारे मालिक जैसा दूसरा कोई नहीं मिलेगा।"

"ए, चलो!" मैंने कोचवान से कहा। "तो ऐसा है हमारा पुराना रूस!" घर की ओर प्रयाण करते समय मैं यही सोचता रहा।

लेबेद्यान

शिकार के मुख्य लाभों में से एक लाभ, प्रिय पाठको, यह है कि वह आपको बराबर एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिए बाध्य करता है। निठल्ले आदमी को इससे बड़ा आनन्द मिलता है। यह सच है कि कभी कभी, ख़ास तौर से बरसात के दिनों में, कच्ची सड़कों को नापना, देहात को पार करना, राह में मिले हर किसान को रोककर उससे यह पूछना—"क्यों भाई, यह तो बताओ कि मोरदोवका पहुंचने के लिए किस रास्ते जाना होगा?" और मोरदोवका पहुंचने के बाद किसी कमसमझ किसान स्त्री से (काम करनेवाले सब लोग खेतों में गये होते हैं) खोद खोदकर यह जानने का प्रयत्न करना कि सड़क पर की सराय क्या बहुत दूर है, और यह कि वहां कैसे जाना होगा—और इसके बाद, कोई पांच-छः मील चलने पर भी जब सराय के बजाय आप ज़मींदार के दरिद्र खुदोबूब्नोवो नामक छोटे गांव से जा टकराते हैं जहां सड़क के बीचोंबीच काली कीचड़ में लोटते सुअरों का समूचा रेवड़ चौंक उठता है जो बिना किसी खटके की सम्भावना के वहां लेटे थे—यह सच है कि तब दिल को बहुत ख़ुशी नहीं होती। न ही उस समय कोई भारी ख़ुशी मिलती है जब पांव के नीचे डगमग करते तख़्तों पर से गुज़रना होता है, नीचे खाई-खड्डों में उतरना और दलदली नदियों को पैदल पार करना पड़ता है। लगातार चौबीस चौबीस घंटे तक हरियाली के सागर से आच्छादित राहों में सवारी करना या (ख़ुदा न करे) लाइनों वाले

मील के पत्थर के सामने जिसकी एक ओर २२ और दूसरी ओर २३ का अंक बना है, घंटों कीचड़ में धंसे रहना भी अति आनन्दप्रद नहीं होता। न ही एक साथ कई कई सप्ताह तक अमूल्य रई की रोटी, अंडों और दूध पर गुज़र करना...

लेकिन इन सारी असुविधाओं तथा तकलीफ़ों के मुक़ाबले में एक दूसरी प्रकार की जो सुविधाएं तथा खुशियां मिलती हैं, उनसे सारी क्षतिपूर्ति हो जाती है। लेकिन छोड़िये, हमें अब अपनी कहानी का सिलसिला पकड़ना चाहिए।

इतना सब कुछ कहने के बाद पाठकों को अब यह बताने की आवश्यकता नहीं कि पांच साल पहले उस समय जबकि मेला पूरे ज़ोरों पर था, मैं लेबेद्यान कैसे जा पहुंचा। हम शिकारियों के साथ ऐसा ही होता है—किसी भी सुहावनी सुबह हम अपने कमोबेश पैतृक घर से निकल पड़ते हैं, पूरी तरह से यह इरादा करके कि दूसरे दिन सांझ को घर लौट आयेंगे पर धीरे धीरे स्नाइप-पक्षी का पीछा करते करते, अन्त में अनायास ही कहीं दूर उत्तर में पेचोरा नदी के पावन तट से जा लगते हैं। इसके अलावा बन्दूक़ और कुत्ते का प्रत्येक प्रेमी दुनिया के सबसे श्रेष्ठ जानवर घोड़े को जी-जान से चाहता है। सो मैं लेबेद्यान की ओर मुड़ चला, एक होटल में मैंने पड़ाव डाला, अपने कपड़े बदले, और मेले में पहुंच गया। (बैरे ने जो बीस वर्ष का एक दुबला-पतला युवक था, अपनी गुनगुनी मधुर आवाज़ में पहले ही मुझे बता दिया था कि महा-महिम प्रिन्स न० भी—जो *** रेजीमेण्ट के लिए घोड़े खरीदते हैं—यहीं इसी होटल में ठहरे हैं और भी अन्य कितने ही महानुभाव आये हुए हैं, कि शाम को जिप्सियों का गाना होता है, नाटक-घर में पान त्वारदोवस्की का खेल होने जा रहा है, कि घोड़ों के अच्छे दाम उठ रहे हैं, और यह कि उनकी नुमाइश देखने लायक़ है।)

बाज़ार के चौक में गाड़ियों की अन्तहीन पांतें लगी थीं, और गाड़ियों के पीछे हर क़िस्म के घोड़े थे – घुड़दौड़ी, बीजाश्व, बोझा खींचनेवाले, गाड़ियों में जुतनेवाले, डाक घोड़े, और किसानों के सीधे-सादे मामूली घोड़े। कुछ मोटे-ताज़े और चमकीले, चुनिन्दा रंगों के घोड़े, धारीदार कपड़ों से ढके हुए, ऊंचे खम्भों से सटकर बंधे हुए, मुड़ मुड़कर चोरी-छिपे अपने मालिकों – घोड़े के सट्टेबाज़ों – की अति परिचित चाबुकों को देख रहे थे। ज़मींदारों के घोड़े, जीर्ण-शीर्ण वृद्ध कोचवानों तथा दो या तीन हट्टे-कट्टे साईस-लड़कों के साथ, जिन्हें सौ या दो-दो सौ मील दूर से स्तेप के कुलीनों ने मेले में भेजा था, अपनी लम्बी गरदनें हिला रहे थे, अपने खुरों को पटक रहे थे और बाड़े की टट्टियों में दांत मार रहे थे। व्यात्का के चितकबरे घोड़े, एक-दूसरे से सटे जा रहे थे। घुड़दौड़ी घोड़े, चित्तीदार-भूरे, काले और लाल मुश्की, जिनके पिछले हिस्से ख़ूब बड़े थे, दुमें हिलती हुई और टांगों पर घने बाल थे, शेरों की भांति शाही थिरता से खड़े थे। पारखी बड़े आदर से उनके सामने ठिठककर खड़े हो जाते। गाड़ियों की पांतों से बनी वीथिकाओं में हर श्रेणी, आयु और रंग-रूप के लोगों की भीड़ जमा थी। नीले लम्बे कोट पहने तथा ऊंची टोपियां लगाये घोड़ों के सट्टेबाज़, अपने काइयां चेहरों से, ख़रीदारों की ताक-झांक कर रहे थे। बड़ी बड़ी आंखों और घुंघराले बालों वाले जिप्सी, बेचैन आत्माओं की भांति, इधर से उधर लपक रहे थे – घोड़ों के मुंहों में आंखें डालकर देखते, उनके खुरों या दुमों को उठाते, चीख़ते-चिल्लाते, गालियां बकते, बिचौलिये का काम करते, पर्चियां डालते, या छज्जेदार टोपी तथा बीवर कालर से युक्त फ़ौजी ग्रेटकोट पहने घोड़ों के किसी फ़ौजी ख़रीदार के साथ हिलते रहते। एक लम्बतड़ंग कज़्ज़ाक हिरण की सी गरदनवाले एक आख्ता घोड़े पर सवार उसे 'एक मुश्त' बेचने के लिए इधर से उधर घूम रहा था – अर्थात् काठी और लगाम समेत।

किसान, भेड़ की खाल के कोट पहने जो बग़लों पर से उधड़ उधड़ रहे थे, भीड़ को चीरकर दीवानावार आगे बढ़ते, या बीसियों की संख्या में एक गाड़ी में चढ़ बैठते जिसमें, परीक्षा करने के लिए एक घोड़ा जुतता, या किसी एक बाज़ू, किसी काइयां जिप्सी की मदद से सौदा करने के लिए उलझते-जूझते, थककर चूर हो जाते, सैकड़ों बार एक-दूसरे के हाथ को दबोचते, दोनों अपनी अपनी बोलियों पर डटे रहते, जबकि उनके इस विवाद का पात्र, चुरमुर चटाई ओढ़े हुए एक मरियल-सा टुइयां घोड़ा, एकदम भावना विहीन अपनी आंखों को मिचमिचाता रहता, मानो उसका इस सब से कोई वास्ता न हो... और सच पूछो तो, सौदा चाहे ऐसे पटे या वैसे, इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है। उसे तो आख़िर जुतना ही पड़ेगा। चौड़े माथेवाले भूस्वामी, मूंछों को रंगे हुए तथा अपने चेहरों पर गर्व की भावना लिये, पोलिश टोप लगाये तथा सूती लबादा आधे बदन पर खींचे, हरे दस्ताने तथा रोएंदार टोपियों से लैस सौदागरों के साथ दयालुतापूर्ण अन्दाज़ में बातें कर रहे थे। विभिन्न रेजीमेंटों के अफ़सर जहां देखो वहीं जमघट लगाये थे। एक जर्मन नसल का असाधारण रूप से दुबला घोड़सवार सैनिक अलस अन्दाज़ में एक लंगड़े सट्टेबाज़ से पूछ रहा था – "यह मुश्की किन दामों बेच पाओगे?" सुनहरे बालों वाला एक युवा हुस्सार, उन्नीस वर्ष का एक लड़का, क़दम चाल चलनेवाले एक छरहरे घोड़े के लिए बाज़ूवाले घोड़े को पसंद कर रहा था। ऊपर से पिचका हुआ हैट लगाये तथा उसके इर्द-गिर्द मोर का पंख लपेटे, भूरा कोट पहने तथा चमड़े के दस्ताने हरे रंग के कमरबंद के पीछे डाले, एक साईस गाड़ी में जोतने लायक़ घोड़े की टोह कर रहा था। कोचवान घोड़ों की दुमों को गूंथ रहे थे, उनकी अयालों को भिगो रहे थे और अदब के साथ श्रीमानों को सलाह-मशविरा दे रहे थे। जो सौदा कर चुके थे, वे होटल या सराय की ओर – अपनी अपनी हैसियत के मुताबिक़ – लपके जा रहे थे... और यह समूची भीड़-भाड़ हरकत कर रही थी, चिल्ला

रही थी, उमड़ रही थी, झगड़ रही थी और फिर सुलह कर रही थी, कोस और हंस रही थी, और एक सिरे से घुटनों तक कीचड़ में लथपथ हो रही थी। अपनी बग्घी के लिए मैं तीन घोड़ों का एक सैट ख़रीदना चाहता था, मेरे पुराने घोड़े अब ढचरा हो चले थे। दो तो मैंने खोज लिये थे, लेकिन तीसरे को पाने में मैं अभी सफल नहीं हुआ था। दिन का भोजन करने के बाद, जिसका वर्णन करने का मेरा मन नहीं मानता (अतीत के दु:खों की याद अंगस तक को कष्टकर मालूम हुई थी) मैंने तथाकथित क़हवाख़ाने की शरण ली जहां, सांझ को, घोड़सवार सेना के वाहनों के ख़रीदार, घोड़ा-पालक और अन्य लोग जमा होते थे। बिलियर्ड रूम में, जो तम्बाकू के धुवें के भूरे बादलों से घिरा था, क़रीब बीस आदमी जमा थे। इनमें बेफ़िक्रे और मौजी स्वभाव के युवा भूस्वामी थे, हंगेरियन कोट और भूरी पतलून कसे, चेहरों पर लम्बी लम्बी छाइयां और अपनी मूंछों को मोम से संवारे हुए। कुलीनों के उद्धत्तपन के साथ अपने इर्द-गिर्द नज़र डाल रहे थे। इनमें कुलीन थे, कज़्ज़ाक पोशाक पहने हुए जिनके गले असाधारण रूप में छोटे थे। उनकी आंखें चर्बी की तहों में खोयी थीं और वे इतनी स्पष्टता के साथ ऊंचा ऊंचा सांस ले रहे थे कि बहुत बुरा मालूम होता था। इनमें सौदागर थे जो सबसे अलग चुपचाप बैठे थे। अफ़सर थे जो आज़ादी के साथ आपस में बतिया रहे थे। बिलियर्ड की मेज़ पर प्रिन्स न० जमे थे, बीस-बाईस वर्ष के युवा आदमी, सजीव चेहरा, लेकिन कुछ हिक़ारत का भाव लिये हुए। वह फ़ॉक-कोट पहने थे जो खुला लटक रहा था, साथ में लाल रेशमी कमीज़ और मख़मल की ढीली-ढाली पतलून। वह अवकाश-प्राप्त लेफ़्टेनंट वीक्तर खलोपाकोव के साथ बिलियर्ड खेल रहे थे।

अवकाश-प्राप्त लेफ़्टेनंट वीक्तर खलोपाकोव तीस वर्ष का दुबला-पतला मुख़्तसर-सा आदमी था, सांवला रंग, काले बाल, भूरी आंखें और मोटी पिचकी-सी नाक, चुनावों और मेलों में घूमनेवाला। चलता है तो

इस तरह जैसे फुदक रहा हो, अपने गावदुम हाथों को शान के साथ फहराता है, टोपी को टेढ़ा रखता है और अपने फ़ॉक-कोट की आस्तीनों को ऊपर चढ़ाये रहता है, जिससे नीचे का काला-नीला सूती अस्तर दिखाई देता रहता है। पीटर्सबर्ग के धनी निठल्लों को खुश करने की कला वह जानता है। उनके साथ वह सिगरेट पीता है, शराब उड़ाता है, ताश खेलता है और तू कहकर उन्हें सम्बोधित करता है। उन लोगों को क्या चीज़ इसमें पसन्द आती है, यह कहना कठिन है। न तो वह चतुर है, न ही वह दिलचस्प है, यहां तक कि वह भांड भी नहीं है। यह सच है कि वे उससे मेल-मिलाप तो रखते हैं, मगर घनिष्टता नहीं है, उसे एक ऐसा आदमी समझते हैं जो स्वभाव का अच्छा है, लेकिन बेवक़ूफ़ है। दो या तीन सप्ताह तक वे उसके साथ खेलते-खाते हैं, और फिर एकदम अचानक हाट-बाज़ार में मिलने पर उसे पहचानते तक नहीं, और वह खुद भी, अपनी ओर से, उन्हें नहीं पहचानता। लेकिन लेफ़्टेनंट खलोपाकोव की मुख्य विशिष्टता यह है कि वह लगातार एक साल तक, और कभी कभी तो लगातार दो साल तक, वक़्त बेवक़्त की कोई पर्वाह किये बिना, एक अपना तकिया-कलाम बनाये रहता है जो, बावजूद इसके कि उसमें हास्य का क़तई कोई पुट नहीं होता, जाने किस वजह से सुननेवालों को हंसा देता है। आठ साल पहले उसका तकिया-कलाम था 'बा अदब मा बुलाहिज़ा' जिसे वह हर मौक़े पर इस्तेमाल करता था, और उस समय के उसके प्रेमी इसे सुनकर हंसी के मारे हमेशा दोहरे हो जाते थे और उससे बार बार दोहराकर कहलाते थे–'बा अदब मा बुलाहिज़ा'। इसके बाद उसने एक और तकिया-कलाम अपनाना शुरू किया जो ज़्यादा पेचीदा था–'नहीं, यह बेहिसाब, बेहिसाब बेहिस्सावनाना है', और इसमें भी उसे उतनी ही सफलता मिली। दो वर्ष बाद उसने एक ताज़ा कथन का आविष्कार किया–'ने सा या, भेड़ की खाल में सिला, गुनाह का पुतला, बिलबिला' आदि आदि। और आश्चर्य

तो यह कि इन तकिया-कलामों की बदौलत—जो कि, जैसा कि आप देख सकते हैं, ऐसा नहीं है कि हास्य से सराबोर हों—उन्हें न खाने की कमी होती है, न पीने की, न कपड़ों की। (अपनी मिल्कियत से हाथ धोये उसे एक मुद्दत गुज़र चुकी है, और एकमात्र मित्रों के सहारे वह जीता है।) इसके सिवा, आप ही देखो, उसमें अन्य कोई आकर्षण क़तई नहीं है। यह सच है कि वह एक दिन में जुकोव तम्बाकू के सौ पाइप पी सकता है, और बिलियर्ड खेलते समय अपनी दाहिनी टांग को सिर से भी ज़्यादा ऊंचा उठा ले जाता है और निशाना साधते समय नुमाइशी अन्दाज़ में अपने क्यु को हिलाता है, लेकिन सच पूछो तो उसके ये गुण ऐसे नहीं है कि हरेक का दिल मोह सकें। वह पीना भी जानता है... लेकिन रूस में पीने के मामले में विशिष्टता प्राप्त करना कठिन है। थोड़े में यह कि उसकी कामयाबी मेरे लिए एक पूर्ण मुइम्मा है। लेकिन उसमें शायद, एक बात है यह कि वह चौकस है। घर से बाहर खुले आम लोगों की छिपी कुचेष्टाओं की चर्चा वह कभी नहीं करता, किसी के ख़िलाफ़ कभी एक शब्द अपने मुंह से नहीं निकालता।

"ओह," खलोपाकोव को देखकर मैंने सोचा, "ख़ुदा जाने, आजकल इसका तकिया-कलाम क्या है?"

प्रिन्स ने सफ़ेद अण्डे पर चोट की।

"तीस लव," तपेदिक के मरीज़-सा मार्कर भनभनाया, जिसका चेहरा सांवला था और आंखों के नीचे स्याह छल्ले पड़े थे।

प्रिन्स ने पीले अण्डे को, खटाक की आवाज़ के साथ, सबसे दूरवाली बिलियर्ड की थैली में रवाना कर दिया।

"ओह!" एक हट्टा-कट्टा सौदागर जो कोने में एक टांगवाली छोटी ढचरा मेज़ पर बैठा था, मुग्ध होकर अपने हृदय की गहराइयों में से चहक उठा, और फिर अपनी इस हरकत पर फ़ौरन ही सकपका गया।

लेकिन भाग्य से उसे किसी ने नहीं देखा। उसने एक लम्बा सांस खींचा और अपनी दाढ़ी को सहलाने लगा।

"छत्तीस लव!" मार्कर गुनगुनी आवाज़ में चिल्लाया।

"बोलो, तुम्हें कैसा लगा, बुढ़ऊ," प्रिन्स ने खलोपाकोव से पूछा।

"क्या-आ! बेशक, रररकालिऊऊऊन, एकदम रररकालिऊऊऊन!"

प्रिन्स हंसी के मारे लोटपोट हो गया।

"क्या? क्या? ज़रा फिर कहना!"

"रररकालिऊऊऊन!" अवकाश-प्राप्त लेफ़्टेनंट ने आत्मतुष्टि के लहजे में कहा।

"सो यह है अब तकिया-कलाम!" मैंने सोचा।

प्रिन्स ने लाल अंडे को थैली में रवाना कर दिया।

"ओह, यह टीक नहीं, प्रिन्स, यह टीक नहीं," सुनहरे बालों वाले एक युवा अफ़सर ने तुतलाते हुए कहा। उसकी आंखें लाल थीं, नाक टुइयां-सी और उनींदा-सा बचकाना चेहरा। "आपको इस तरह नहीं खेलना चाहिए... आपको... नहीं, इस तरह नहीं।"

"तो किस तरह?" प्रिन्स ने ज़रा सिर घुमाकर पूछा।

"आपको यह... ट्रिप्लेट में करना चाहिए!"

"ओह, सचमुच?" प्रिन्स ने बुदबुदाकर कहा।

"हां, तो प्रिन्स, क्या राय है आपकी? आज सांझ जिप्सियों का गाना सुनने चलेंगे न?" सकपकाकर युवा उतावली में कहता गया, "स्तेश्का गायेगी... इल्यूश्का..."

प्रिन्स ने कोई जवाब नहीं दिया।

"रररकालिऊऊऊन, प्यारे!" बाईं आंख मारते हुए खलोपाकोव ने कहा।

और प्रिन्स फिर फूट पड़ा। "उनतालीस लव!" मार्कर ने सुरदार आवाज़ में कहा।

"लव! ज़रा देखते जाओ, उस पीले अण्डे के साथ क्या गुल खिलाता हूं।" क्यु को अपने हाथ में इधर से उधर करते हुए खलोपाकोव ने निशाना साधा, पर चूक गया।

"अरे, रररकालिऊऊऊन!" वह खीझकर चिल्ला उठा।

प्रिन्स फिर हंसा।

"क्या, क्या, क्या?"

लेकिन खलोपाकोव ने, नख़रा करते हुए, अपने तकिया-कलाम को दोहराना नहीं चाहा।

"महामहिम, आप चूक गये," मार्कर ने टिप्पणी की। "लाइये, क्यु में खड़िया लगा दूं... चालीस लव!"

"हां तो महानुभावो," किसी एक को लक्ष्य में रखकर नहीं, बल्कि समूची मण्डली को सम्बोधित करते हुए प्रिन्स ने कहा, "आप जानते हैं, आज रात थियेटर में वेर्जेम्बीत्स्काया को पर्दे के सामने बुलाना चाहिए।"

"बेशक, बेशक, बिलाशक!" एक-दूसरे से होड़-सी लेते और प्रिन्स के सम्भाषण की जी हुजूरी करने के अवसर से अद्भुत रूप में लालायित कई आवाज़ें एक साथ कह उठीं। "वेर्जेम्बीत्स्काया, बेशक ..."

"वेर्जेम्बीत्स्काया बहुत बढ़िया एक्ट्रेस है, सोपन्यकोवा से लाख दर्जे अच्छी," कोने में बैठे एक बदनुमा टुइयां-से आदमी ने हिनहिनाते हुए कहा। वह मुछैल था, और आंखों पर चश्मा चढ़ाये था। हतभागा मरदूद! मन ही मन सोपन्यकोवा के पांवों की धूल बनने के लिए छटपटा रहा था। लेकिन प्रिन्स ने उसकी ओर नज़र तक उठाकर नहीं देखा।

"बै-ह-रा, एक, पाइप लाओ!" लम्बे क़द के एक कुलीन ने अपने क्रैवट में बुदबुदाकर कहा। उसका चेहरा-मोहरा जैसे सांचे में ढला था और

उसका अन्दाज़ अत्यन्त शाहाना था, बल्कि सच पूछो तो अपने बाहरी रंग-रूप से वह अच्छा-ख़ासा पत्तेबाज़ नजर आता था।

एक बैरा पाइप के लिए दौड़ गया और जब वह वापिस लौटकर आया तो उसने महामहिम को सूचना दी कि साईस बाक्लागा श्रीमान को पूछ रहा था।

"ओह, उससे कहो कि एकाध मिनट ठहरे, और उसके लिए कुछ वोद्का लेते जाओ।"

"अच्छा, श्रीमान।"

बाक्लागा, मुझे बाद में पता चला, एक युवा, सुन्दर और अत्यन्त मुंह-चढ़े साईस का नाम था। प्रिन्स उसे चाहते थे, भेंट में उसे घोड़े देते थे, उसके साथ शिकार पर निकलते थे, समूची रातें उसके साथ गुज़ार देते थे। अब इन्हीं प्रिन्स को आप देखें तो कभी न पहचान पायं, कि यही वह हैं जो कभी इतने नाकारा और व्यसनों में गड़गच्च रहते थे! लेकिन अब तो उनका नाम बोलता है, एकदम बेदाग़, अपनी नाक को ऊंचा उठाये हुए, सरकार के पक्के ख़ैरख़्वाह – और सबसे बढ़कर बहुत ही दूरन्देश और न्यायप्रिय!

जो हो, तम्बाकू के धुवें से मेरी आंखें जलने लगी थीं। खलोपाकोव के चहकने और प्रिन्स की निःशब्द खिलखिलाहट को आख़िरी बार और सुनने के बाद मैं अपने कमरे के लिए रवाना हो गया जहां एक तंग सोफ़े पर, जिसकी गद्दी में बाल भरे थे और लोगों के बैठने से गढ़े पड़े थे और जिसकी पीठ ऊंची तथा ख़मदार थी, मेरे आदमी ने पहले से ही मेरा बिस्तर लगाया हुआ था।

अगले दिन अस्तबलों में घोड़े देखने के लिए मैं बाहर निकला, और घोड़ों के प्रसिद्ध सट्टेबाज़ सीत्निकोव से मैंने शुरूआत की। फाटक को पार कर मैंने अहाते में पांव रखा जिसमें बालू छितरा हुआ था। अस्तबल के दरवाज़े बिल्कुल खुले थे और उनके सामने ख़ुद मालिक खड़ा था – एक

लम्बा हृष्ट-पुष्ट आदमी जो अपनी जवानी को पार कर चुका था। वह ख़रगोश की खाल का कोट पहने था जिसका पलटदार कालर ऊंचा उठा था। मुझे देखते ही अगवानी के लिए धीमी गति से वह मेरी ओर बढ़ा। अपनी टोपी को दोनों हाथों में थामे वह उसे सिर से ऊंचे उठाये था। सुरदार आवाज़ में बोला—

"ओह आइये, हमारा सलाम क़बूल हो! शायद आप घोड़ों पर एक नज़र डालना चाहेंगे, ठीक है न?"

"हां, मैं घोड़ों को देखने आया हूं।"

"और कैसे घोड़े चाहिएं आपको, क्या मैं यह जान सकता हूं?"

"तुम्हारे पास जो हों, दिखा दो।"

"ओह, बड़ी खुशी से।"

हमने अस्तबल में प्रवेश किया। कुछ छोटे सफ़ेद कुत्ते, अपनी दुमें हिलाते घास में से निकलकर हमारे पास दौड़ आये, और एक लम्बी दाढ़ीवाला बूढ़ा बकरा, जो नाराज़ नज़र आता था, वहां से खिसक गया। तीन साईस जो मज़बूत किन्तु चीकट भेड़ की खाल के कोट पहने हुए थे, बिना कुछ कहे हमारे अभिवादन में झुक गये। दाहिनी और बाईं ओर, ज़मीन से ऊंचे उठे कटघरों में, क़रीब तीस घोड़े खड़े थे, पूरी तरह निखारे-संवारे हुए। छत की कड़ियों के इर्द-गिर्द कबूतर फड़फड़ा और गुटरगू कर रहे थे।

"हां तो, किस मतलब के लिए आपको घोड़ा ज़रूरत है? सवारी के लिए, या नसल तैयार करने के लिए?" सीत्निकोव ने मुझसे पूछा।

"सवारी और नसल, दोनों के लिए।"

"बेशक, बेशक," हर शब्दांश का साफ़ साफ़ उच्चारण करते हुए घोड़े के सट्टेबाज़ ने अपना अभिमत प्रकट किया। "पेत्या, श्रीमान को 'गोर्नोस्ताई' दिखलाओ।"

हम बाहर अहाते में आ गये।

"हुक्म हो तो वे झोंपड़ी में से बेंच उठा लायं ... ओह, तो आप बैठना नहीं चाहते ... जैसी आपकी मर्ज़ी।"

तख़्तों पर खुरों की चाप सुनाई दी, चाबुक की आवाज़ आयी और सांवला चेचक मुंह-दाग़, चालीस वर्षीय पेत्या एक अपेक्षाकृत अच्छे डील-डौल के घोड़े को साथ लिये अस्तबल में से प्रकट हुआ। उसने घोड़े को पिछले पांवों के बल खड़ा किया, उसके साथ दौड़कर अहाते के दो चक्कर लगाये, और फुर्ती के साथ लगाम खींचकर उसे ऐन ठीक जगह पर खड़ा कर दिया। 'गोर्नोस्ताई' ने अपना बदन सीधा किया।

नथुनों को फरफराया, अपनी पूंछ को ऊंचा उठाया, सिर को झटका दिया और कनखियों से हमारी ओर देखा।

"जानवर सीखा हुआ है," मैंने सोचा।

"घोड़े को खुला छोड़ दो!" सीत्निकोव ने कहा, और मेरी ओर ताककर देखा।

"कहिये, क्या राय है?" अन्त में उसने पूछा।

"घोड़ा बुरा नहीं है—अगली टांगें कुछ एकदम चौकस नहीं मालूम होतीं।"

"उसकी टांगें एक नम्बर की हैं," विश्वासपूर्ण अन्दाज़ में सीत्निकोव ने जवाब दिया, "और उसके पीछे के पुट्ठे... देखिये न श्रीमान ... तन्दूर की भांति चौड़े हैं ... चाहो तो वहां सो सकते हो!"

"इसके टख़ने बहुत लम्बे हैं।"

"लम्बी! खुदा रहम करे! ज़रा चलाकर दिखाओ, पेत्या, चलाकर दिखाओ, लेकिन दुलकी चाल से, बिल्कुल दुलकी ... सरपट नहीं।"

'गोर्नोस्ताई' के साथ पेत्या ने एक बार फिर अहाते का चक्कर लगाया। कुछ देर हम दोनों में से कोई न बोला।

"बस ठीक, अब इसे वापिस ले जाओ," सीत्निकोव ने कहा, "और 'सोकोल' को दिखलाओ।"

'सोकोल' डच नसल का दुबला-पतला जानवर था — गोबरैले की भांति स्याह, पिछले पुट्ठे ढलुवां। वह 'गोर्नोस्ताई' से कुछ अच्छा था। वह उन जानवरों में से था जिनके बारे में घोड़ों के प्रेमी आपसे यह कहते नज़र आयेंगे कि "वे थिरकते, मटकते और खूब नाचते हैं", मतलब यह कि वे खूब फुदकते और अपनी अगली टांगों को दाएं-बाएं फेंकते हैं, लेकिन कुछ आगे बढ़ते नज़र नहीं आते। मझोली आयु के सौदागर ऐसे घोड़ों को बहुत पसन्द करते हैं। उनकी चाल को देखकर किसी चतुर बैंरे की अकड़दार चाल की याद आती है। दिन के भोजन के बाद हवाखोरी के लिए अकेली जोत में वे अच्छे रहते हैं। छोटे छोटे डगों से और गरदन को तिर्छी किये बड़े उछाह से वे अटपटी बग्घी को खींचते हैं जिसपर खूब खाया-पिया कोचवान, बदहज़मी का मारा सौदागर और नीले रंग का रेशमी ढीला-ढाला कोट ओढ़े और सिर पर बैंगनी रुमाल बांधे उसकी मोटी पत्नी बैठी होती है। 'सोकोल' भी मुझे नहीं जंचा। सीत्निकोव ने अनेक घोड़े मुझे दिखाये ... आखिर एक, जो वोयेइकोव नसल का चितकबरा भूरे रंग का घोड़ा था, मुझे पसन्द आ गया। मैं अपने चाव को क़ाबू में नहीं रख सका और मुग्ध भाव से उसकी अयाल को मैंने थपथपाया। सीत्निकोव ने फ़ौरन एकदम उपेक्षा का रूप धारण कर लिया, जैसे उसे क़तई कोई वास्ता न हो।

"हां तो," मैंने पूछा, "जोत में यह ठीक चलता है, न?"

"हां," घोड़ों का सट्टेबाज़ बोला।

"क्या मैं उसे देख सकता हूं?"

"बेशक, अगर आप चाहें। ए, कूज्या, 'दोगोन्याई' को बग्घी में जोत दो।"

कूज्या — घोड़सवारी की कला का असली माहिर — सड़क पर तीन बार हमारे सामने इधर से उधर गुज़रा। घोड़े की चाल अच्छी

थी। न उसने अपने क़दम बदले, न लचका खाया। उन्मुक्त संचरण, पूंछ ऊंची उठी हुई मज़े में रास्ता नापता था।

"हां तो क्या मांगते हो इसका?"

सीत्निकोव ने असम्भव दाम मांगे। हम वहीं सड़क पर खड़े हुए सौदाबाज़ी करने लगे। तभी, एकदम अचानक, तीन घोड़ों की ख़ूब मिलती हुई एक शानदार टुकड़ी आवाज़ करती हुई कोने के उधर से मुड़ी और तेज़ी से सीत्निकोव के घर के फाटक के सामने रुक गयी। बांकी शिकारी टमटम में प्रिन्स न० बैठे थे, और उनके बराबर में खलोपाकोव। बावर्ागा हांक रहा था ... और उसका हांकना! क्या कहने, वह उन्हें कान की बाली में से भी निकाल ले जाता! बाज़ूवाले मुश्की घोड़े, नाटे, धुनी, काली आंख और काली टांगोंवाले जानवर, जैसे मचले जाते थे। वे बराबर अपने पिछले पांवों पर खड़े हो रहे थे—बस, सिसकारने की देर थी, और वे एकदम हवा हो जाते। गहरा मुश्की जोतवाला घोड़ा दृढ़ता से खड़ा था, गरदन हंस की भांति मेहराबदार, सीना आगे को तना हुआ, टांगें जैसे तीर हों। वह अपना सिर हिला रहा था और गर्वीले अन्दाज़ में आंखें सिकोड़े था ... क्या ख़ूब घोड़े थे वे! ज़ार इवान वासील्येविच भी अपनी ईस्टर की सवारी के लिए इनसे बढ़िया जोड़ी की कामना नहीं कर सकता था!

"आइये, महामहिम, किरपा कर भीतर पधारिये," सीत्निकोव ने पुकारकर कहा।

प्रिन्स उछलकर टमटम से बाहर निकल आये। खलोपाकोव दूसरे बाज़ू आहिस्ता से नीचे उतरा।

"अच्छे तो हो, मित्र ... कहो, कुछ घोड़े हैं?"

"बेशक, महामहिम के लिए हमारे पास घोड़े नहीं होंगे तो फिर किसके लिए होंगे! कृपया भीतर चले आइये। पेत्या, 'पवलीन' को बाहर लाओ, और उनसे कहो कि 'पोख़्वालनी' को भी तैयार रख। और आपके

साथ श्रीमान," मेरी ओर मुड़ते हुए उसने कहा, "फिर किसी वक़्त बात करूंगा ... ए फ़ोमका, महामहिम के लिए बेंच तो ले आओ।"

एक ख़ास अस्तबल में से जिसकी ओर पहले मेरा ध्यान नहीं गया था, वे 'पवलीन' को बाहर ले आये। गहरा मुश्की रंग, बहुत ही दमदार। ऐसा मालूम होता था जैसे 'पवलीन' अपनी चारों टांगों को हवा में उठाये अहाते में उड़ा जा रहा हो। सीत्निकोव ने उधर से अपना मुंह तक हटा लिया और अपनी आंखें बंद कर लीं।

"ओह, ररकालिऊन!" खलोपाकोव ने सुर छेड़ा। "ज्हाइमसाह!"

प्रिन्स हंस पड़े।

'पवलीन' बड़ी मुश्किल से रुकने में आया। साईस को अपने साथ वह अहाते में इधर से उधर खींचता रहा। अन्त में धकियाकर दीवार के सहारे उसे रोका गया। वह नथुने फरफरा रहा था, चमक रहा था और अपने पिछले पांवों के बल खड़ा हो रहा था, और सीत्निकोव उसके आगे चाबुक फहराते हुए उसे अभी तक चिढ़ाये जा रहा था।

"ए, उधर क्या देख रहा है? बस बस, एइयू!" दुलार भरी ताड़ना के साथ घोड़े के सट्टेबाज़ ने ख़ुद भी अपने घोड़े पर बरबस मुग्ध होते हुए कहा।

"क्या मांगते हो?" प्रिन्स ने पूछा।

"आपकी ख़ातिर, महामहिम, पांच हज़ार।"

"तीन।"

"नामुमकिन, महामहिम, क़सम से।"

"बस तीन, ररकालिऊन," खलोपाकोव ने ज़ोर डाला।

सौदा पटने तक रुके बिना मैं वहां से चल दिया। सड़क के एकदम दूसरे छोर पर काग़ज़ का एक बड़ा-सा इश्तहार दिखाई दिया जो एक छोटे-से भूरे घर के फाटक पर चिपका था। इश्तहार के ऊपर के हिस्से स्याही और क़लम से घोड़े का एक चित्र बना था जिसकी दुम पाइप की शक्ल

की थी और गरदन का तो जैसे कोई अन्त ही नहीं था। खुरों के नीचे पुरानी चाल की लिखावट में निम्न शब्द लिखे थ—

"यहां भांति भांति के रंगों के घोड़े बेचे जाते हैं। ये घोड़े ताम्बोव प्रान्त के भूस्वामी अनस्तासी इवानिच चेर्नोबाई की सुविख्यात स्तेप की घोड़ाशाला से लेबेद्यान के मेले में लाये गये हैं। ये घोड़े बढ़िया जात के, पूर्णतया सधाये हुए और ऐबों से अछूते हैं। ख़रीदार कृपया ख़ुद अनस्तासी इवानिच से आकर बात करें। अगर वह मौजूद न हों तो कोचवान नज़ार कुबीश्किन से मिलें। ख़रीदने की इच्छा रखनेवाले महानुभाव अपने दर्शनों से एक वृद्ध का गौरव बढ़ाने की किरपा करें!"

मैं ठिठक गया। "चलो," मैंने सोचा, "स्तेप के इस विख्यात घोड़ा-पालक चेर्नोबाई के घोड़ों पर भी एक नज़र डालते चलें।"

मैं फाटक के भीतर जाने ही वाला था कि देखा, आम दस्तूर के ख़िलाफ़, उसमें भीतर से ताला बंद था। मैंने खटखटाया।

"कौन है? कोई गाहक है क्या?" किसी स्त्री की किकियाती हुई सी आवाज़ आयी।

"हां।"

"आयी, श्रीमान, अभी आयी!"

दरवाज़ा खुला। पचास वर्ष की एक किसान स्त्री मेरे सामने खड़ी थी, सिर उघरे, बड़े बूट पहने और भेड़ की खाल का कोट डाले हुए जो आगे से खुला था।

"किरपा कर भीतर चले आइये, दयालु श्रीमान। मैं अभी जाकर अनस्तासी इवानिच को ख़बर करती हूं ... नज़ार, अरे ओ नज़ार!"

"क्या है?" अस्तबल से सत्तर बरस की उम्र के एक वृद्ध की मिमियाती आवाज़ आयी।

"घोड़ा तैयार कर लो। देखो, एक गाहक आय हैं।"

वृद्ध स्त्री घर के भीतर दौड़ गयी।

"गाहक, गाहक," नज़ार जवाब में बुदबुदाया, "अभी तो मैं इन सबकी दुमें तक नहीं धो पाया!"

"ओह, सुन्दर देहात!" मैंने मन में कहा।

"अहोभाग्य, श्रीमान, आपसे मिलकर बड़ी ख़ुशी हुई," पीठ के पीछे मुझे एक समृद्ध, सुहानी आवाज़ सुनाई दी। मैंने घूमकर देखा। मेरी आंखों के सामने, लम्बा घेरेदार नीला ग्रेटकोट पहने मझोले क़द का एक वृद्ध आदमी खड़ा था। उसके बाल सफ़ेद थे, चेहरा मुसकरा रहा था और उसकी नीली आंखें बड़ी सुन्दर थीं।

"तो आपको घोड़े की दरकार है? ज़रूर मिलेगा, श्रीमान, ज़रूर मिलेगा। लेकिन ज़रा भीतर न चले आइये और मेरे साथ पहले एक प्याला चाय पीने की किरपा कीजिये।"

मैंने उसे धन्यवाद दिया और चाय पीने से इन्कार किया।

"अच्छा, अच्छा, जैसी आपकी मर्ज़ी। माफ़ करना श्रीमान, आप जानो, मैं ठहरा पुरानी चाल का आदमी।" (चेर्नोबाई शब्दांश पर ज़ोर देते हुए बातें कर रहा था।) "मैं तो, आप जानो, हर काम सीधे-सादे ढंग से करने का आदी हूं। नज़ार, अरे ओ नज़ार," अन्त में उसने कहा, अपनी आवाज को ऊंचा उठाने के बजाए हर शब्दांश को सुदीर्घ बनाते हुए।

नज़ार, एक बूढ़ा आदमी, झुर्रियां पड़ी हुईं, बाज़ जैसी छोटी नाक और खूंटे की शक्ल की दाढ़ी, अस्तबल के दरवाज़े पर आकर खड़ा हो गया।

"हां तो श्रीमान, आपको किस क़िस्म के घोड़े चाहिएं?" चेर्नोबाई ने फिर कहना शुरू किया।

"ज्यादा महंगे नहीं, जो मेरी छतवाली टमटम में हांकने लायक़ हों।"

"बेशक, आपके काम लायक़ घोड़े हमारे पास हैं। नज़ार, नज़ार, श्रीमान को वह भूरा आख़्ता घोड़ा तो दिखाओ, वह जो एकदम दरवाज़े

के पास खड़ा है, और वह मुश्की लाल जिसके माथे पर तारा है,या दूसरा मुश्की लाल – जानते हो न, वह 'क्सोत्का' की नस्ल में से है।"

नज़ार फिर अस्तबल में लौट गया।

"और मय पगहे के उन्हें ले आना, ठीक उसी हालत में जैसे कि वे हैं," चेर्नोबाई ने उसके पीछे चिल्लाकर कहा। "मेरे यहां आप वह सब कुछ नहीं पायेंगे, समझे श्रीमान," अपनी स्वच्छ कोमल नज़र मेरे चेहरे पर डालते हुए वह कहता गया, "वह सब जो घोड़े के सट्टेबाज़ों के यहां चलता है छरछन्दी कहीं के! दुनिया-भर की दवाइयां – अदरक, नमक, और अनाज के फोक* ओह, ख़ुदा न कराये! मेरे यहां, श्रीमान, आपको हर चीज़ खुली और खरी मिलेगी! चालबाज़ी कुछ नहीं!"

घोड़े भीतर लाये गये। मेरे मन नहीं चढ़े।

"अच्छा, अच्छा, ख़ुदा के लिए इन्हें वापिस ले जाओ," अनस्तासी इवानिच ने कहा। "हमें दूसरे दिखलाओ।"

दूसरे दिखलाये गये। आख़िर मैंने एक को चुना, जो अपेक्षाकृत सस्ता था। दामों को लेकर भाव-ताव हुआ। चेर्नोबाई उत्तेजित नहीं हुआ। इतनी समझ के साथ उसने बातें कीं, कुछ इतनी गरिमा के साथ कि मैं वृद्ध आदमी का सम्मान किये बिना नहीं रह सका। मैंने उसे बयाना दे दिया।

"हां तो अब," अनस्तासी इवानिच ने कहा, "पुरानी चाल के मुताबिक़, इजाज़त हो तो हाथ के हाथ घोड़ा आपको सौंप दूं। उसे पाकर आप मुझे धन्यवाद देंगे – इतना ताज़ा है वह, स्तेप का सच्चा छौना। चाहे जिस गाड़ी में जोत दीजिये, एकदम फ़िट बैठेगा!"

---

*अनाज का फोक खाकर घोड़ा जल्दी जल्दी मोटा हो जाता है।

उसने क्रॉस का निशान बनाया, अपने ग्रेटकोट का पल्ला हाथ के ऊपर रखा, पगहे को थामा और घोड़े को मेरे हाथ में दे दिया।

"अब आप इसके मालिक हो, खुदा की बरकत से। और आप क्या अब भी चाय न पियेंगे, क्यों?"

"नहीं, इसके लिए हृदय से धन्यवाद। घर लौटने का समय हो गया है।"

"जैसा आप ठीक समझें। कहें तो कोचवान को साथ कर दूं? वह घोड़े को आपके पीछे पीछे लिवा ले चलेगा।"

"ठीक है। अगर मुमकिन हो तो।"

"ख़ुशी से, श्रीमान, ख़ुशी से। वसीली, अरे, वसीली! ज़रा श्रीमान के साथ घोड़े को लिवा ले जाओ, और इनसे दाम लेते आना। अच्छा तो विदा, श्रीमान, ख़ुदा आपको सलामत रखे।"

"विदा, अनस्तासी इवानिच!" उसका आदमी घोड़े को मेरे घर तक लिवा ले गया। अगले दिन पता चला कि उसका घोड़ा पंखा-उखड़ा है और टांग लंग मारती है। मैंने उसे जोतवाने की कोशिश की, वह पीछे हट गया, और जब उसे चाबुक छुवाया गया तो वह चमका, उसने दुलत्तियां झाड़ीं और बाक़ायदा ज़मीन पर पसर गया। मैं फ़ौरन चेर्नोबाई की ओर रवाना हुआ। पूछा—"घर पर हैं?"

"हां।"

"क्या मतलब है इसका?" मैंने कहा, "तुमने मेरे सिर पंखा-उखड़ा घोड़ा मढ़ दिया है।"

"सांस उखड़ी हुई है? ख़ुदा न करे!"

"हां, साथ में लंगड़ा भी, और इसके अलावा कुटिल तबीयत का।"

"लंगड़ा? यह मैंने कभी नहीं जाना। हो न हो, आपके कोचवान ने उसके साथ ज़रूर गड़बड़ की होगी। ख़ुदा साक्षी है मैं ..."

"इधर देखो, अनस्तासी इवानिच, जैसी हालत है, उसमें तुम्हें उसे वापिस ले लेना चाहिए।"

तत्याना बोरीसोवना और उसका भतीजा

सहृदय पाठक, आइये, अपना हाथ मेरे हाथ में दीजिये और मेरे साथ चले चलिये। सुहावना मौसम है। मई का महीना, आकाश स्वच्छ नीलिमा में रंगा है। बेंत-वृक्ष की नवजात चिकनी पत्तियां ऐसी चमचमा रही हैं जैसे उनको धोया गया हो। प्रशस्त समतल सड़क पर लालीमायल डण्ठलों वाली छोटी छोटी घास पूर्णतया आच्छादित है, जिसे भेड़ें इतने चाव से चरती हैं। दाहिने और बाएं दीर्घ पहाड़ी ढलुवानों पर हरी रई हल्के हल्के झूम रही है, और छोटे छोटे बादलों की परछाइयां लम्बी पतली धारियों में उनके ऊपर तैर रही हैं। दूर नज़र डालें तो जंगलों के काले समूह, जोहड़ों की चमचमाहट और गांवों के पीले पेबन्द नज़र आते हैं। लार्क-पक्षी, सैंकड़ों की संख्या में, आकाश की ऊंचाइयां नाप रहे हैं, चहचहा रहे हैं, सिर के बल डुबकियां लगा रहे हैं, अपनी गरदनों को फैलाये मिट्टी के ढोंकों के इर्द-गिर्द फ़ुदक रहे हैं। कौवे सड़क पर रुककर खड़े हो जाते हैं, आपकी ओर देखते हैं, धरती पर दबकर बैठे बैठे आपको अपने पास से गुज़र जाने देते हैं, और फिर दो-एक फुदकियां लेकर अलस भाव से अलग हट जाते हैं। खाई के उधर एक पहाड़ी पर किसान हल चला रहा है। घोड़े का एक चितकबरा छौना, डगमगाती टांगों से अपनी मां के पीछे दौड़ रहा है। उसकी दुम के बाल छंटे हैं और छोटी अयाल उलझी हुई है। उसके हिनहिनाने की पैनी आवाज़ सुनाई देती है। बर्च-वृक्षों के जंगल में अब गाड़ी प्रवेश करती है और ताज़ा गंध,

मधुर और तेज़ हम अपने फेफड़ों में भरते हैं। हम गांव के छोर पर पहुंच जाते हैं। कोचवान नीचे उतरता है, घोड़े अपने नथुने फरफराते हैं, बाज़ू के घोड़े इर्द-गिर्द नज़र डालते हैं, बीचवाला घोड़ा अपनी दुम घुमाता और अपनी गरदन जुए से टेक लेता है ... चरचर की आवाज़ के साथ भीमाकार फाटक खुलता है, कोचवान फिर अपनी जगह संभालता है ... गाड़ी बढ़ चलती है। सामने ही गांव है। पांच-एक घरों को पार करने तथा दाहिनी ओर घूमने के बाद एक घाटी में हम प्रवेश करते हैं और बांध के किनारे किनारे, एक छोटे जोहड़ के दूसरे बाज़ू की ओर गाड़ी बढ़ चलती है। बकाइन और सेब के पेड़ों की गोल चोटियों के पीछे लकड़ी की एक छत, जो कभी लाल रही होगी, और उसके दो धुवांकश नज़र आते हैं। कोचवान गाड़ी को बाईं ओर बाड़े के साथ साथ रखता है, और तीन बूढ़े कुत्तों के भौंकने की कर्कश तथा चुरमुर आवाज़ के साथ चौपट खुले फाटक में से गाड़ी को भीतर ले जाता है और चौड़े अहाते में तेज़ी से घूमकर पहले अस्तबल और फिर कोठड़ी को पीछे छोड़ता हुआ, बूढ़ी भण्डारिन को सलाम करता है जो भण्डारे की खुली ड्योढ़ी में आड़े रुख़ जा रही है, और अन्त में रोशन खिड़कियों वाले एक अंधियारे घर की सीढ़ियों के सामने जाकर रुक जाता है ... यही तत्याना बोरीसोवना का घर है। और यह देखिये, वह ख़ुद खिड़की खोलकर तथा सिर हिला हिलाकर हमारा अभिवादन कर रही है ... नमस्कार, श्रीमतीजी!

तत्याना बोरीसोवना पचास वर्ष की महिला है। बड़ी बड़ी ख़ूब उभरी हुई भूरी आंखें, अपेक्षा से अधिक कुन्दा-सी नाक, लाल गुलाबी गाल और दोहरी ठोड़ी। चेहरा मित्रता और सहृदयता से छलछलाता हुआ। किसी ज़माने में विवाह हुआ था, लेकिन जल्दी ही विधवा हो गयी। तत्याना बोरीसोवना बहुत ही विलक्षण महिला है। अपनी छोटी-सी जागीर में रहती है, कभी उसे छोड़ती नहीं, अपने पड़ोसियों से बहुत कम मिलती-जुलती है, सिवा युवा लोगों के न तो अन्य किसी को पसन्द करती है, न ही और

किसी से मिलती है। बहुत ही ग़रीब भूस्वामियों के घर वह जन्मी थी, और कोई शिक्षा उसने प्राप्त नहीं की थी। दूसरे शब्दों में यह कि वह फ़्रेंच नहीं जानती, वह कभी मास्को नहीं गयी – और इन तमाम त्रुटियों के बावजूद, उसका व्यवहार इतना भला और सरल है, अपनी सहानुभूतियों तथा विचारों में वह इतनी उदार है, और यह देखकर कि देहात की अल्प साधनों वाली महिलाओं के पक्षपातों से वह इतनी मुक्त है कि उसको देखकर अचरज होता है... और सचमुच, एक ऐसी महिला जो बारहों महीने देहात में रहे और गपशप न करे, न अपना दुःखड़ा रोती फिरे और न ही किसी की ख़ुशामद करे, न जिज्ञासा से उत्तेजित हो, न उदासी में डूबी रहे और न कौतुक से उमगती-छलछलाती फिरे – तो ऐसी स्त्री सचमुच एक अजूबा है! आम तौर से वह भूरे टाफ़्टा का गाउन, सिर पर सफ़ेद टोपी जिसके साथ लम्बे बैंगनी फ़ीते लगे होते हैं, पहनती है। अच्छा भोजन वह पसन्द करती है, लेकिन अति की सीमा तक नहीं। अचार-मुरब्बे डालने, फल सुखाने और सब्ज़ियों को नमक लगाने आदि का काम उसने भण्डारिन पर छोर रखा है। "तो फिर," आप पूछ सकते हैं, "वह दिन-भर क्या करती है? पढ़ा करती है?" नहीं, वह पढ़ा नहीं करती, और सच पूछो तो, पुस्तकें उसके लिए लिखी ही नहीं गयी हैं। जब उसके पास मेहमान नहीं होते, तब तत्याना बोरीसोवना अपने-आप अकेली खिड़की के पास बैठी हुई जाड़ों में मोज़े बुना करती है। गर्मियों में वह बाग़ में चली जाती है, पौधों को लगाती और फूलों को सींचती है, घंटों तक अपनी बिल्लियों के साथ खेलती और कबूतरों को चुग्गा डालती है। अपनी जागीर की देख-रेख का काम वह ज्यादा नहीं करती। लेकिन जब कोई मेहमान उसके यहां आ जाता है – कोई युवा पड़ोसी जिसे वह पसन्द करती है – तब तत्याना बोरीसोवना में एक स्फूर्ति की लहर दौड़ जाती है। वह उसे बैठाती है, उसके लिए चाय ढालती है, उसकी बातें सुनती है, हंसती-हंसाती है, कभी कभी उसके गालों को थपथपाती है,

लेकिन खुद बहुत कम बोलती है। मुसीबत या शोक में वह ढारस बंधाती है और अच्छी सलाह देती है। जाने कितने लोगों ने अपने पारिवारिक रहस्यों और अपने हृदय की वेदनाओं को उसके सामने उंडेलकर रखा है, उसके कंधों पर सिर रखकर उन्होंने आंसू बहाये हैं! अनेक बार ऐसा होता है कि वह अपने आगन्तुक के सामने बैठ जाती है, मृदु भाव से अपनी कोहनियों पर झुकी हुई, और इतनी सहानुभूति से वह उसके चेहरे की ओर देखती है, इतने दुलार के साथ वह मुसकराती है, कि वह दिल ही दिल में कहे बिना नहीं रह सकता – "तत्याना बोरीसोवना, तुम कितनी प्यारी, और कितनी भली हो! जी चाहता है, तुम्हारे सामने अपना हृदय उंडेलकर रख दूं।" उसके छोटे, सुहावने कमरे देखकर हृदय आनन्द और स्निग्धता से भर उठता है। उसके घर में, यदि मैं कह सकता हूं, हमेशा सुहावना मौसम रहता है। तत्याना बोरीसोवना एक अद्भुत स्त्री है, लेकिन वह किसी को अचम्भे में नहीं डालती। उसकी सुसंगत सहज बुद्धि, उसकी उदारता और दृढ़ता दूसरों के सुख-दुख में उसकी हार्दिक सहानुभूति– एक शब्द में उसके ये सब गुण उसमें इतने स्वाभाविक हैं कि वे जन्मजात मालूम होते हैं, जैसे उन्हें प्राप्त करने में उसे कोई प्रयास न करना पड़ा हो। कभी ख़याल तक नहीं होता कि वह कुछ और भी हो सकती है, और इसलिए उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने की आवश्यकता कभी महसूस नहीं होती। युवा लोगों की चुहलों और शरारतों को वह ख़ास तौर से मुग्ध भाव से देखती है – अपने हाथों को जोड़कर वक्ष के नीचे सटा लेती है, सिर को पीछे की ओर झटका देती है, अपनी आंखों को सिकोड़ती और बैठी हुई उन्हें देखती और मुसकराती रहती है, और फिर – अचानक – उसास लेते हुए कह उठती है – "ओह, बच्चो, मेरे बच्चो!" कभी कभी जी करता है कि लपककर उसके पास पहुंच जाऊं, उसके हाथों को अपने हाथों में लूं और उससे कहूं – "सुनो, तत्याना बोरीसोवना, तुम नहीं जानती कि तुम क्या हो? अपनी इस सारी सादगी और शिक्षा के अभाव के बावजूद

तुम एक अद्भुत स्त्री हो! " उसके नाम तक में एक परिचित मधुर गूंज मालूम होती है। उसका उच्चारण हृदय में खुशी का संचार करता है, और आंखों के सामने तुरत एक मृदु मुसकान तैरने लगती है। मिसाल के लिए, जाने कितनी बार, किसानों से मुझे यह पूछने का इत्तफ़ाक़ हुआ है – "क्यों भाई, ग्राचोवका पहुंचने के लिए कैसे-कहां जाना होगा?" – "सुनो श्रीमान, पहले आप व्याज़ोवोये जायं, और वहां से तत्याना बोरीसोवना के यहां पहुंचे, और तत्याना बोरीसोवना के यहां कोई भी आपको आगे का रास्ता बता देगा।" और तत्याना बोरीसोवना का नाम जब किसान लेता है तो उसका सिर एक खास अन्दाज़ में हिलता है। उसके पास नौकर-चाकर बहुत कम हैं, जैसे कि उसके साधन। घर, लॉण्ड्री, स्टोर और रसोई की देख-रेख भण्डारिन अगाफ़्या करती है, जो कभी उसकी आया थी। वह स्वभाव की भली, आंसू भरी और दांत-विहीन जीव है। उसके तहत में दो हृष्ट-पुष्ट लड़कियां हैं जिनके भरे-पूरे गुलाबी गाल अन्तोनोव सेबों की याद दिलाते हैं। अरदली, बटलर और बुफ़े के कर्मचारी की ड्यूटी पोलिकार्प निबाहता है। वह सत्तर वर्ष का एक असाधारण वृद्ध है, बहुत ही मौजी आदमी, किताबी ज्ञान से भरपूर, किसी ज़माने में वायोलिन बजाता था, विओत्ती का उपासक है, नेपोलियन को – या बोनापार्ती को जैसा कि वह उसे कहता था – अपना निजी शत्रु समझता है और बुलबुलों का बेहद शौक़ीन है। उसके कमरे में हमेशा पांच या छः बुलबुलें रहती हैं। वसन्त के शुरू में वह लगातार कई कई दिन तक पिंजरों के पास बैठा रहता है, उनकी पहली कूक सुनने के लिए, और सुनने के बाद अपने चेहरे को दोनों हाथों से ढक लेता है और कराह उठता है – "ओह, वेदना, कितनी वेदना!" और उसकी आंखों से छलछल आंसू गिरने लगते हैं। पोलिकार्प का पोता वास्या काम में उसका हाथ बंटाता है। घुंघराले बाल, पैनी आंखें। बारह वर्ष के अपने पोते को पोलिकार्प खूब चाहता है, और सुबह से लेकर रात तक उसपर भुनभुनाता है। वह उसकी शिक्षा-दीक्षा

भी करता है। "वास्या," वह कहता है, "कहो – बोनापार्ती डाकू है"। "तो मुझे तुम क्या दोगे, बाबा?" – "क्या दूंगा? कुछ भी नहीं... बोलो, तुम कौन हो? रूसी हो कि नहीं, क्यों?" – "मैं तो अमचेन्स्की हूं, बाबा, अमचेन्स्क* में मैं पैदा हुआ था।" – "ओह, गधे की दुम! लेकिन अमचेन्स्क कहां है?" – "मुझे क्या पता?" – "ऊंह, बेवक़ूफ़, अमचेन्स्क रूस में ही तो है।" – "रूस में ही सही तो फिर?" – "तो फिर? स्वर्गीय प्रिन्स महामहिम मिखइल इलारिओनोविच गोलेनीश्चेव-कुतूज़ोव स्मोलेन्स्की ने, भगवान की मदद से शान के साथ बोनापार्ती को रूस से खदेड़ बाहर किया था। उसी घटना पर तो यह गीत रचा गया है – 'भूल गया नाच-गान, भूल गया छकड़ी' ... क्यों, समझ में आया कुछ? उसने तुम्हारी पितृभूमि को उन्मुक्त किया था।" – "किया होगा, मुझे इससे क्या!" – "ओह, गोबर-गणेश! अरे बुद्धू, अगर महामहिम प्रिन्स मिखइल इलारिओनोविच ने बोनापार्ती को निकाल बाहर न किया होता तो कोई फ़्रांसीसी इस समय तुम्हारी खोपड़ी पर डंडे से नगाड़ा बजाता होता। वह आकर तुम्हारे सिर पर सवार हो जाता और कहता – 'कोमान वू पोर्तें वू?'** और तुम्हारी कनपटी पर पटाक से जड़ देता!" – "लेकिन मैं ऐसा घूंसा जमाता कि उसकी तोंद पिचक जाती!" – "लेकिन वह बोलता – 'बोनज़ूर, बोनज़ूर, वेनें इसी!'*** और सिर के बालों को खींचता।" – "और मैं उसकी टांगें तोड़ देता, अटेरन-सी टांगें!" – "ठीक, बिल्कुल ठीक, उनकी टांगें तो सचमुच अटेरन-सी होती हैं ... लेकिन अगर, मान लो, वह तुम्हारे हाथ बांध लेता तो?" – "मैं बांधने दूं तब न, मदद

---

* साधारणजन म्त्सेन्स्क शहर को अमचेन्स्क कहते हैं और उसके निवासियों को – अमचेन्स्की। म्त्सेन्स्क निवासी बहुत चतुर होते हैं इसलिए हमारे यहां कहावत है कि 'शत्रु के घर अमचेन्स्की जाकर रहे'।

** तुम कैसे हो?

*** नमस्ते, नमस्ते, इधर आओ।

के लिए मैं कोचवान मिखेई को बुला लेता! "–"लेकिन, वास्या, मिखेई के आ जाने पर फ़्रांसीसी उससे जबर पड़े तो?"–"ऊंह, जबर कैसे पड़ेगा? देखते नहीं, मिखेई कितना तगड़ा है!"–"अच्छा, अच्छा, तो तुम उसके साथ क्या करते?"–"हम उसकी पीठ पर घूंसा जमाते!"–"और वह चिल्ला उठता–'पार्दों, पार्दों, सीवूपले!"*–"हम उससे कहते–'बन्द करो अपना यह सीवूपले, फ़्रांसीसी कहीं का!'"–"शाबाश, वास्या! हां तो अब ज़ोरदार आवाज़ में कहो–'बोनापार्ती डाकू है!'"–"तो बाबा, तुम मुझे कुछ शक्कर दो!"–"ओह, बदमाश कहीं का!"

पड़ोस की महिलाओं से तत्याना बोरीसोवना का बहुत ही कम उठना-बैठना है। वे उससे मिलने के लिए उत्सुक नहीं रहतीं, और न ही यह उन्हें मिलना चाहती है और वह उन्हें खुश करना नहीं जानती। उनकी टें-टें सुनकर वह ऊंघने लगती है। वह चौंक उठती है, अपनी आंखों को खुला रखने की कोशिश करती है, पर फिर ऊंघने लगती है। सच तो यह है कि सामान्यतः तत्याना बोरीसोवना स्त्रियों को पसन्द नहीं करती। उसका एक मित्र था, बहुत ही भला, निष्कण्टक, युवा। उसकी एक बहिन थी, अड़तीस वर्षीया चिर-कुमारी। स्वभाव की भली, लेकिन अतिरंजित, बनावटी और उन्मत्त। उसका भाई अक्सर उससे अपनी पड़ोसिन का ज़िक्र किया करता था। एक दिन–सुबह का सुहावना वक़्त था–हमारी इस चिर-कुमारी ने अपना घोड़ा कसवाया और किसी से कुछ कहे बिना तत्याना बोरीसोवना के घर की ओर चल पड़ी। अपना लम्बा गाउन पहने, सिर पर टोपी रखे, हरी जाली ओढ़े और घुंघराले बालों को लहराये, उसने हाल में प्रवेश किया और भय से त्रस्त वास्या के पास से गुज़रती–वह उसे जल-परी समझ बैठा था–भागती हुई दीवानखाने में जा धमकी। तत्याना बोरीसोवना ने भी भयभीत हो उठने की कोशिश की, लेकिन उसकी टांगों ने जवाब दे दिया। "तत्याना बोरीसोवना," आगन्तुका ने विनम्र आवाज में कहना

---

* माफ़ कीजिये, माफ़ कीजिये, कृपया।

शुरू किया, "मेरी बेतकल्लुफ़ी माफ़ करना। मैं तुम्हारे मित्र अलेक्सेई निकोलायेविच क० की बहिन हूं, और मैंने तुम्हारे बारे में उससे इतना कुछ सुना कि मैं रह न सकी, और मैंने तुमसे मिलने का निश्चय कर लिया।" – "बड़ी कृपा... अहोभाग्य," आश्चर्यचकित मालकिन ने बुदबुदाकर कहा। आगन्तुका ने अपना टोप उतारा, अपने घुंघराले बालों को झटका दिया, तत्याना बोरीसोवना के पास आ विराजी और उसका हाथ उसने अपने हाथ में थाम लिया। "तो यह है वह," भावों से ओतप्रोत आवाज़ में उसने कहना शुरू किया, "तो यह है वह मधुर, स्वच्छ, शुभ्र और पवित्र आत्मा! यह है वह, एक ऐसी महिला जो एकबारगी इतनी सरल और इतनी गहरी है! ओह, कितनी ख़ुश हूं मैं! कितनी ख़ुश हूं मैं! ओह, ख़ूब प्यार करेंगे हम दोनों एक दूसरे को! अब मैं आख़िर चैन की सांस ले सकती हूं। मेरी कल्पना ठीक निकली – ठीक इसी रूप में मैं सदा इसे देखा करती थी," फुसफुसाते हुए उसने अन्त में कहा, अपनी आंखों को एकटक तत्याना बोरीसोवना की आंखों में जमाये हुए। "क्यों, आप मुझसे नाराज़ तो नहीं हैं न, मेरी प्यारी सहृदय मित्र?" – "नहीं, मैं सचमुच ख़ुश हूं। चाय तो लेंगी न?" इसपर आगन्तुका संरक्षण के भाव से मुसकरायी – "Wie wahr, wie unreflectiert,"* जैसे वह मन ही मन अपने-आपसे बुदबुदायी। "आओ, तुम्हें अपने गले से तो लगा लूं, मेरी प्रिय!"

चिर-कुमारी तीन घंटों तक तत्याना बोरीसोवना के यहां जमी रही, और एक क्षण के लिए उसकी ज़ुबान ने विश्राम नहीं लिया। उसने अपनी नवपरिचिता को यह समझाने में कोई कसर नहीं छोड़ी कि मानवता के लिए वह कितनी बड़ी वरदान है। इस अप्रत्याशित आगन्तुका के विदा होते ही बेचारी ज़मींदारिन ने स्नान किया, लीपा के फूलों से बनी चाय पी और अपने बिस्तरे पर जाकर पड़ रही। लेकिन अगले दिन चिर-कुमारी फिर आ विराजी, चार घंटे तक जमी रही और जाते समय वादा कर गयी कि

* कैसा सच्चा, कैसा सरल हृदय!

वह रोज़ तत्याना बोरीसोवना के दर्शन करने आया करेगी। उसका इरादा – ज़रा ध्यान तो दीजिये – ख़ुद उसी के शब्दों में, इतनी समृद्ध प्रकृति को विकसित करना, उसकी शिक्षा को पूर्णता तक पहुंचाना था, और शायद सचमुच वह उसकी जान ही ले लेती अगर वह, प्रथमतः एक पखवारे के भीतर अपने भाई की इस मित्र के बारे में 'पूर्णतया' निराश न हो जाती, और दूसरे अगर वह एक युवा विद्यार्थी के साथ – जो कुछ दिनों के लिए आया था – प्रेम-जाल में न फंस जाती। उसके साथ उसने, बड़ी उत्सुकता और कर्मठता के साथ, एकबारगी पत्र-व्यवहार शुरू कर दिया। अपने पत्रों में वह उसे – जैसा कि होता है – ऊंचे और पवित्र जीवन का वाहक मानती थी, उसके लिए एकमात्र बलि के रूप में अपने-आपको न्योछावर करने के लिए तैयार थी, केवल इतना चाहती थी कि वह उसकी बहिन बनी रहे। अपने इन पत्रों में वह प्रकृति का अन्तहीन वर्णन करती थी, ग्येटे, शिलर, बेत्तिना और जर्मन दर्शन के हवाले देती थी, यहां तक कि अन्त में उसने उस अभागे युवक को निराशा की घोरतम स्थिति में पहुंचा दिया। लेकिन युवावस्था ने उभार लिया, एक सुहावनी सुबह जब वह उठा तो 'अपनी बहिन और श्रेष्ठतम मित्र' के प्रति उसका हृदय इतनी तीव्र घृणा से उद्वेलित था कि आवेग में आकर उसने अपने अरदली को मार ही डाला होता, और इसके बाद भी एक लम्बे अर्से तक उसका क्रोध बना रहा। उच्च और निस्वार्थ प्रेम का हल्के से हल्का आभास भी उसे भड़काने के लिए काफ़ी होता। तब से तत्याना बोरीसोवना और भी ज़्यादा सचेत रहने लगी कि पास-पड़ोस की महिलाओं के साथ किसी भी प्रकार की घनिष्ठता न होने पाय।

लेकिन शोक, इस धरती पर चिरस्थायी कुछ भी नहीं होता। अपनी सहृदय पड़ोसी महिला के जीवन के जिस ढंग का यहां मैंने वर्णन किया है, वह सब अतीत की चीज़ बन चुका है। वह शान्ति जो उसके घर में विराजती थी सदा के लिए नष्ट हो चुकी है। एक साल से भी अधिक

अर्से से अब उसके साथ एक भतीजा रह रहा है, पीटर्सबर्ग का एक कलाकार। यह परिवर्तन इस प्रकार हुआ।

आठ साल हुए तत्याना बोरीसोवना के साथ बारह वर्ष का एक लड़का रहता था। वह अनाथ था, उसके भाई का सुपुत्र। अन्द्रयूशा उसका नाम था। बड़ी-बड़ी स्वच्छ नमदार आंखें, छोटा-सा मुंह, सुघर नाक, और सुन्दर ऊंचा माथा। धीमी मीठी आवाज़ में वह बोलता था, साफ़ सुथरे कपड़े पहनता था और शिष्टता से व्यवहार करता था। आगन्तुकों को ध्यान से देखता और लाड़ जताता था, एक अनाथ की संवेदनशीलता के साथ अपनी बुआ का हाथ चूमता था, और इससे पहले कि कोई अपने-आपको व्यक्त करने का मौक़ा पा सके, वह उसके लिए आरामकुर्सी लाकर रख देता था। शैतानी हरकतों से वह बेगाना था और कभी शोर नहीं मचाता था। हाथ में किताब लिये वह कोने में अकेला बैठा रहता, बहुत ही शान्ति और सलीक़े के साथ, यहां तक कि कभी अपनी कुर्सी की पीठ तक का सहारा न लेता। जब कोई मेहमान आता तो अन्द्रयूशा उठकर खड़ा हो जाता, क़ायदे से मुसकराता तो उसके गाल लाल हो जाते; और जब आगन्तुक चला जाता तो वह फिर बैठ जाता, अपनी जेब में से एक ब्रुश और एक आईना निकालता, और अपने बालों को संवारता। एकदम शुरू के सालों में ही वह चित्र बनाने की अपनी रुचि का परिचय देने लगा था। जब कभी काग़ज़ का कोई टुकड़ा उसके हाथ पड़ जाता, तो अगाफ़्या भण्डारिन के पास जाकर वह तुरत क़ैंची की मांग करता, सावधानी के साथ काटकर काग़ज़ का एक चौरस टुकड़ा तैयार करता, उसके चारों ओर हाशिया खींचता और काम में जुट जाता। वह एक आंख बनाता जिसकी पुतली भीमाकार होती, या यूनानी नाक या कोई घर बनाता जिसकी चिमनी में से डाट निकालने के पेचकश की भांति धुवां निकलता होता या फिर कुत्ते का चित्र बनाता जिसमें कुत्ते का मुंह सामने की ओर होता जो कुत्ते से अधिक बेंच की भांति नज़र आता, या पेड़ का चित्र

खींचता जिसपर दो कबूतर बैठे होते और नीचे दस्तख़त करता – 'अमुक वर्ष में अमुक दिन अन्द्रेई बेलोवज़ोरोव द्वारा मालिये व्रीकि गांव में अंकित'। तत्याना बोरीसोवना के जन्मदिन से पहलेवाले पखवारे में वह ख़ास अध्यवसाय से परिश्रम करता, सबसे पहले वह अपनी बधाइयां देता और गुलाबी फ़ीते से बंधा काग़ज़ का एक पुलिन्दा उसको भेंट करता। तत्याना बोरीसोवना अपने भतीजे को चूमती, फ़ीते की गांठ खोलती, पुलिन्दे को खोलती और दर्शक की उत्सुक आंखों के सामने उसे पेश कर दिया जाता – सीपिया रंग में साहस के साथ बनाया हुआ मन्दिर का एक चित्र, सतूनों-खंभों के साथ, और बीच में एक वेदी। वेदी के ऊपर एक जलता हुआ हृदय और एक हार रखा होता, और ऊपर, एक लहरिया पट्टी पर, सुस्पष्ट अक्षरों में लिखा होता – 'अपनी बुआ और हितैषिणी तत्याना बोरीसोवना को, उनके फ़रमानबरदार और प्रिय भतीजे की ओर से, अत्यन्त प्रेम से भेंट'। तत्याना बोरीसोवना एक बार फिर उसे चूमती और चांदी का एक रूबल उसे देती। यों, सच पूछो तो, वह उसके प्रति कोई हार्दिक प्रेम अनुभव नहीं करती थी। अन्द्रयूशा का चापलूसी का तौर-तर्ज़ उसे बहुत अच्छा भी न लगता था। उस बीच अन्द्रयूशा बड़ा होता जा रहा था। तत्याना बोरीसोवना ने उसके भविष्य के बारे में सोचना शुरू किया। तभी एक अप्रत्याशित घटना ने इस समस्या को हल कर दिया।

आठ साल पहले एक दिन श्री बेनेवोलेन्स्की, प्योत्र मिखाइलिच नाम के एक सज्जन उससे मिलने आये। वह एक सम्मान-प्राप्त कोलीजिएट कौन्सिलर थे। श्री बेनेवोलेन्स्की, किसी ज़माने में, ज़िला के एक निकटतम क़स्बे में सरकारी पद पर नियुक्त थे और बड़ी तत्परता के साथ तत्याना बोरीसोवना के यहां हाज़िरी दिया करते थे। इसके बाद वह पीटर्सबर्ग चले गये, किसी मंत्रालय में उन्होंने प्रवेश किया और एक अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण ओहदे पर वह पहुंच गये। अपने सरकारी काम के सिलसिले में वह अक्सर दौरा किया करते। ऐसे ही एक दौरे के दौरान में उन्हें अपनी पुरानी मित्रता

की याद हो आयी और वह उससे मिलने के लिए आये। उनका इरादा था कि अपने सरकारी झंझटों को ताक पर रख, दो एक दिन वह 'प्रकृति की शान्तमयी गोद में' विश्राम करेंगे। तत्याना बोरीसोवना ने अपनी हस्बमामूल हार्दिकता के साथ उनका स्वागत किया और श्री बेनेवोलेन्स्की... लेकिन, प्रिय पाठको, इससे पहले कि हम कहानी के बाक़ी हिस्से को लेकर आगे बढ़ें, आइये, इन नयी विभूति से आपका परिचय करा दें।

मि० बेनेवोलेन्स्की स्थूल काय, मझोले क़द और मृदु शक्ल-सूरत के आदमी थे। छोटी और टुइयां-सी उनकी टांगें थीं, और छोटे तथा मोटे मोटे उनके हाथ थे। वह एक खुला-सा और अत्यन्त बना-चुना फ़ॉक-कोट पहनते थे, ऊंचा और चौड़ा गुलूबंद लगाते थे, बर्फ़ की भांति सफ़ेद बनयान पहनते और उनकी रेशमी वास्कट पर सोने की ज़ंजीर झूलती रहती थी। अपनी बड़ी उंगली में हीरे की अंगूठी पहनते थे तथा सिर पर सफ़ेद बनावटी बाल लगाते थे। वह आत्म-विश्वास के साथ तथा समझाते हुए से बोलते थे, दबे पांव चलते थे। सुहावने अन्दाज़ में वह मुसकराते थे, सुहावनी नज़र से देखते थे और सुहावने अन्दाज़ में अपनी ठोड़ी को अपने गुलूबंद पर टिकाये रहते थे। कुल मिलाकर यह कि वह, सचमुच, सुहावने व्यक्तित्व के धनी थे। खुदा ने उन्हें हृदय भी दिया था, कोमलतम हृदय। न उन्हें आंसू बहाते देर लगती, न आनन्दातिरेक में हिलोरे लेने में। इसके अलावा उनका रोम-रोम कला के प्रति निस्वार्थ अनुराग से ओत-प्रोत था — हां, एकदम निस्वार्थ। यह इसलिए कि, अगर सच पूछो तो, मि० बेनेवोलेन्स्की कला के बारे में क़तई कुछ नहीं जानते थे। और सचमुच, अचरज होता है यह देखकर कि कहां से, किन रहस्यमय और अज्ञात शक्तियों की प्रेरणा से, यह अनुराग उनमें आ समाया। वह एक सज्जन, क़रीने से रहनेवाले आदमी थे, परन्तु उनमें प्रतिभा का अभाव था। एक साधारण-सा आदमी जिस जैसे लोग हमारे यहां रूस में प्रचुर संख्या में पाये जाते हैं।

कला ग्रौर कलाकारों के प्रति इन लोगों का अनुराग एक ऐसी छिछली भावुकता का संचार करता है कि उसे व्यक्त करना कठिन है। उनके साथ उठते-बैठते ग्रौर बातें करते बड़ी कोफ़्त होती है। लगता है जैसे वे निरे काठ के उल्लू हों, शहद में लिपे-पुते। वे मिसाल के लिए, रेफ़ाइल को रेफ़ाइल या कोर्रेजिग्रो को कोर्रेजिग्रो कभी नहीं कहते। "दैवी सानज़ियो, ग्रनुपम ग्राल्लेर्गी," वे बुदबुदाते हैं, सो भी स्वरों को हमेशा चिकड़ाते हुए। हर दम्भी, वनावटी ग्रौर ग्रत्यन्त साधारण तलछटिये को वे प्रतिभा कहकर पुकारते हैं। "इटली का नील ग्राकाश", "दक्खिन के लीमू", "ब्रेन्ता के तटों पर सुहावने समीर के झोंके" हर घड़ी उनकी ज़ुबान पर नाचा करते हैं। "ग्रोह, वान्या, वान्या!" या "ग्रोह, साशा, साशा!" गहरी भावुकता के साथ वे एक-दूसरे से कहते हैं, "चलो, दक्षिण चलें... हमारे हृदयों में यूनान की, प्राचीन यूनान की, ग्रात्मा बसती है।" प्रदर्शनियों में उन्हें देखा जा सकता है, किन्हीं रूसी चित्रकारों की कृतियों के सामने खड़े हुए (ये महानुभाव, ध्यान देने की बात है, ग्रधिकांशतः यों गहरे देशभक्त होते हैं)। पहले वे दो-एक डग पीछे हटते हैं, ग्रपने सिरों को पीछे की ग्रोर फेंकते हैं। इसके बाद वे फिर चित्र के निकट जाते हैं। उनकी ग्रांखों में चिकनी तरलता तैरती है। "क्या चीज़ है, ग्रोह मेरे भगवान!" ग्रन्त में, भावुकता से चूर ग्रावाज़ में वे कहते हैं—"इनमें ग्रात्मा है, ग्रात्मा! ग्रोह, क्या भाव है, कितनी भावना है! ग्रोह, जैसे ग्रात्मा निकालकर रख दी है! भरपूर ग्रौर घनी ग्रात्मा! ग्रौर इसकी सूझ-बूझ! ग्रोह, पहुंचा हुग्रा कलाकार ही ऐसी सूझ-बूझ दिखा सकता है!" ग्रौर ग्रोह, वे चित्र जो ख़ुद उनके दीवानख़ानों को सुशोभित करते हैं! ग्रोह, वे कलाकार जो सांझ को उनके यहां ग्राते हैं, चाय पीते हैं, ग्रौर उनकी बातें सुनते हैं! ग्रौर ख़ुद उनके कमरों के दृश्यचित्र जो कि वे प्रस्तुत करते हैं—दाईं ग्रोर झाड़ू पड़ा हुग्रा, पालिश किये हुए फ़र्श पर धूल का एक छोटा-सा ढेर, खिड़की के पास मेज़ पर पीतवर्ण

समोवार, और सिर पर टोपी तथा ड्रेसिंग-गाउन पहने हुए खुद गृहस्वामी, सूरज की धूप की एक उज्ज्वल रेखा उनके गाल पर तैरती हुई! ओह, लम्बे बालों वाले कला के वे लाले जो, अपने चेहरों पर बल खाती तथा दूसरों के प्रति नफ़रत भरी मुसकान संजोये, उनके इर्द-गिर्द मंडराते हैं! ओह, वे युवती सुन्दरियां हरी आभा से युक्त अपने चेहरों को लिये पियानो पर चिचियाती हैं! और क्यों न हो, यही हम रूसियों का चिरप्रचलित क़ायदा है। आदमी केवल एक ही कला का प्रेमी बनकर नहीं रह सकता – उसे तो सभी चाहिएं। और सो, इसमें अचरज की बात नहीं अगर ये महानुभाव अपने सबल संरक्षण में रूसी साहित्य को भी समेटते नज़र आयं – ख़ास तौर से नाटक साहित्य को ... 'जाकोब सन्नाज़ार्स' जैसी पुस्तकें उन्हीं के लिए लिखी गयी हैं। अप्रशंसित प्रतिभा का समूची दुनिया के ख़िलाफ़ संघर्ष – जो हज़ारों बार चित्रित हो चुका है – उनके हृदयों को अभी भी गहराई से छूता है ...

मि० बेनेवोलेन्स्की के आगमन के अगले दिन, चाय के समय, तत्याना बोरीसोवना ने अपने भतीजे से कहा कि मेहमान को ज़रा अपने चित्र तो लाकर दिखाये। "अरे, तो क्या यह चित्र बनाता है?" अचरज का भाव दिखाते हुए मि० बेनेवोलेन्स्की ने कहा और फिर दिलचस्पी के साथ अन्द्रयूशा की ओर घूम गया। "हां, यह चित्रांकन करता है," तत्याना बोरीसोवना ने कहा, "चित्रों का इसे ख़ूब शौक़ है। और अकेले वह यह सब करता है, बिना किसी मास्टर के!" – "ओह, तो दिखाओ भाई, मुझे दिखाओ!" मि० बेनेवोलेन्स्की ने बरबस कहा। अन्द्रयूशा, मुसकराता और लजाता, अपनी स्कैचबुक लेकर आगन्तुक के निकट आ गया। मि० बेनेवोलेन्स्की ने, पारखी के अन्दाज़ में, उसके पन्ने पलटने शुरू किये। "ख़ूब, मेरे युवा दोस्त," अन्त में उसने राय प्रकट की – "ख़ूब, बहुत ख़ूब!" और उसने अन्द्रयूशा का सिर सहलाया। अन्द्रयूशा ने उसके हाथ को बीच में रोककर उसे चूमा। "सोचो तो, कितनी प्रतिभा

है इसमें! मैं तुम्हें बधाई देता हूं, तत्याना बोरीसोवना!" – "लेकिन मैं भी क्या करूं, प्योत्र मिखाइलिच? इसके लिए यहां कोई मास्टर नहीं मिलता। और नगर से किसी को बुलाना बड़ा खर्चीला होगा। हमारे पड़ोसी अरतामोनोव के यहां एक ड्राइंग-मास्टर है, और लोग कहते हैं कि बहुत ही अच्छा है, लेकिन उसकी मालकिन ने पाबन्दी लगा रखी है कि वह बाहरवालों को न सिखाये – कहती है कि उसकी रुचि खराब हो जायेगी।" – "हूं-ऊं," मि० बेनेवोलेन्स्की ने कहा, कुछ सोचा, और कनखियों से अन्द्रयूशा की ओर देखा। "अच्छा, यह हम तय कर लेंगे," अपने हाथों को मलते हुए उसने कहा। उसी दिन उसने तत्याना बोरीसोवना से अनुरोध किया कि वह अकेले में उससे बात करने की इजाज़त चाहता है। दरवाज़े बन्द कर दोनों एक कमरे में बैठ गये। आधे घंटे बाद उन्होंने अन्द्रयूशा को बुलाया। अन्द्रयूशा ने भीतर प्रवेश किया। मि० बेनेवोलेन्स्की खिड़की के पास खड़ा था। उसका चेहरा कुछ लाल हो उठा था और ख़ुशी से उसकी आंखें चमक रही थीं। तत्याना बोरीसोवना एक कोने में बैठी अपनी आंखों को पोंछ रही थी।

"इधर आओ, अन्द्रयूशा," अन्त में उसने कहा – "और देखो, प्योत्र मिखाइलिच का शुक्रिया अदा करो। वह तुम्हें अपने संरक्षण में रखेंगे, और तुम्हें पीटर्सबर्ग ले जायेंगे।"

अन्द्रयूशा को जैसे एकदम काठ मार गया।

"मुझे सच-सच बताओ," गौरव और संरक्षण की भावना से भरी आवाज़ में मि० बेनेवोलेन्स्की ने कहना शुरू किया, "बोलो, मेरे युवा मित्र, क्या तुम कलाकार बनना चाहते हो? क्या तुम कला की पवित्र सेवा में अपने-आपको न्योछावर कर सकते हो?"

"मैं कलाकार बनना चाहता हूं, प्योत्र मिखाइलिच," अन्द्रयूशा ने कांपती हुई आवाज में घोषणा की।

"बड़ी ख़ुशी हुई, यह सुनकर। इसमें शक नहीं," मि० बेनेवोलेन्स्की

कहते गये, "अपनी आदरणीय बुआ से अलग होना तुम्हारे लिए कठिन होगा। तुम्हें उनका जी-जान से बहुत बहुत कृतज्ञ होना चाहिए।"

"मैं अपनी बुआ को बहुत चाहता हूं," अन्द्रयूशा ने बीच में ही अपनी आंखों को मिचमिचाते हुए कहा।

"बेशक, बेशक, यह सहज ही समझा जा सकता है, और यह तुम्हारे लिए बड़े गौरव की बात है; लेकिन, दूसरी ओर, भविष्य में अपने उस सुख का ... सफलता का ..."

"आओ, मुझे गले से लगाओ, अन्द्रयूशा!" नेकदिल ज़मीन्दारिन बुदबुदायी, और अन्द्रयूशा उसके गले से लिपट गया। "बस, बस, अब अपने इन हितैषी का शुक्रिया अदा करो।"

अन्द्रयूशा ने मि० बेनेवोलेन्स्की के पेट का आलिंगन किया और पंजों के बल खड़ा होकर उनके हाथ तक—जिसे हटाने में उसके हितैषी ने कोई उतावली प्रकट नहीं की—जैसे तैसे अपना मुंह ले गया, और उसे चूमा। उसे, बिलाशक, बच्चे का मन रखना था, और सच पूछो तो, वह अपना मन परचाना चाहता था भी। इसके दो दिन बाद बेनेवोलेन्स्की विदा हो गया, और अपने इस नये 'धरोहर' को, शरणागत को, अपने साथ लेता गया।

अपनी अनपस्थिति के पहले तीन वर्षों में अन्द्रयूशा अक्सर पत्र लिखता, और कभी कभी साथ में ख़त में चित्र भी डाल देता। बीच बीच में मि० बेनेवोलेन्स्की भी अपने दो-चार शब्द जोड़ देता, अधिकतर अनुमोदन प्रकट करते हुए। इसके बाद पत्रों की संख्या अधिकाधिक कम होती गयी, और अन्त में उनका आना बिल्कुल ही बन्द हो गया। इस तरह पूरे एक साल से उसे अपने भतीजे की कोई ख़ैर-ख़बर नहीं मिली थी। तत्याना बोरीसोवना चिन्तित होने लगी, जबकि एक दिन, अचानक, उसे निम्न पुर्ज़ा मिला—

"प्रियतम बुआ!

मेरे संरक्षक प्योत्र मिखाइलिच का, तीन दिन हुए देहान्त हो गया। लक़वे के गहरे आघात ने मुझे अपने एकमात्र सहारे से वंचित कर दिया।

बेशक, मैं अब बीस वर्ष का होनेवाला हूं, और पिछले सात सालों में मैंने काफ़ी तरक़्क़ी की है। अपनी प्रतिभा में मुझे अन्यतम विश्वास है, और उसके सहारे मैं अपनी रोजी कमा सकता हूं। मैं निराश नहीं हूं। फिर भी, अगर हो सके तो, शुरू की ज़रूरतों के लिए ढाई सौ रूबल मुझे भेज दो। अपने हाथ पर मेरा चुम्बन स्वीकार करो। मैं हूं तुम्हारा वही ..." आदि आदि।

तत्याना बोरीसोवना ने अपने भतीजे को ढाई सौ रूबल भेज दिये। दो महीने बाद उसने और रक़म की मांग की। उसके पास जो कुछ था, एक एक कोपेक बटोरकर उसने उसे भेज दिया। छ: सप्ताह भी न बीते होंगे कि उसने तीसरी बार पैसे की फिर फ़रमाइश की, प्रत्यक्षत: रंगों के लिए। प्रिन्सेस तेर्तेरेशेनेवा का वह छवि-चित्र बना रहा था। सो इसके लिए रंग ख़रीदने थे। तत्याना बोरीसोवना ने इन्कार कर दिया। "ऐसी हालत में," उसने उसे लिखा, "मेरा इरादा है कि तुम्हारे पास आकर देहात में अपना स्वास्थ्य ठीक करूं।" और उसी साल मई महीने में अन्द्रयूशा, सचमुच, मालिये ब्रीकि में लौट आया।

तत्याना बोरीसोवना एकाएक, कुछ क्षणों तक, उसे पहचान नहीं सकी। उसके पत्रों से तो ऐसा लगता था कि वह एकदम दुबला हो गया होगा, लेकिन उसने देखा कि एक हृष्ट-पुष्ट, चौड़े-चकले कंधों वाला जीव उसके सामने खड़ा है। ख़ूब बड़ा लाल चेहरा, और चिकने घुंघराले बाल। पीतवर्ण दुबला-पतला अन्द्रयूशा लम्बा-चौड़ा अन्द्रेई इवानोविच बेलोवज़ोरोव बन गया था। और केवल उसका बाह्याकार ही नहीं बदला था। प्रारम्भिक वर्षों की वह विनम्र कोमलता, वह सावधानी और वह सुघरपन विदा हो गया था और उसकी जगह लापर्वाही, उद्धतता और औघड़पन ने ले ली थी, जो एकदम असह्य थी। दाएं-बाएं झूमता हुआ वह चलता था, आरामकुर्सियों में ज़ोर से बैठता था, मेज़ पर कोहनियां टेकता था, बदन को तानता और जम्हाइयां लेता था, अपनी बुआ और नौकरों के साथ

अक्खड़पन से पेश आता था। "मैं कलाकार हूं," वह कहता, "आज़ाद कज़्ज़ाक! ऐसी है हमारी जाति!" कभी कभी, लगातार कई कई दिन तक, वह ब्रुश को छूता तक नही था। इसके बाद प्रेरणा – जैसा कि वह उसे कहता था – उसपर सवार होती, और तब वह इधर उधर से मंडराता, जैसे नशे में हो, भोंडा, अटपटा, और शोर मचाता हुआ। उसके गालों पर भद्दी-सी लाली आ जाती, आंखें धुंधली हो जातीं। वह लम्बे भाषण झाड़ना शुरू करता – अपनी प्रतिभा, अपनी सफलता के बारे में तथा अपने विकास और प्रगति के बारे में ... लेकिन असलियत यह प्रकट हुई कि उसमें इतनी भी प्रतिभा नहीं थी कि साधारण छवि-चित्र तक बना सकता। वह बिल्कुल अज्ञानाचार्य था, उसने कुछ नहीं पढ़ा था। और कलाकार पढ़े भी क्यों, भला? प्रकृति, आज़ादी, कविता उसके उपयुक्त तत्त्व हैं। अपनी ज़ुल्फ़ों को हिलाने, गप्पें हांकने और अपने चिरन्तन सिगरेट के कश खींचने के अलावा उसे और कुछ करने की ज़रूरत नहीं। रूसी मनचलापन एक अच्छी चीज़ है, लेकिन वह हरेक को शोभा नहीं देता। और पोलेजाएवों के नक़ली संस्करण, प्रतिभा से शून्य, सहन नहीं होते। अन्द्रेई इवानिच अपनी बुआ के साथ चिपका रहा। दान की रोटी, कहावत के बावजूद – उसे कड़वी लगती मालूम नहीं होती थी। आगन्तुकों के लिए वह एक जानेवाला ख़ुराफ़त है। वह पियानो पर बैठ जाता है (आपको मालूम होना चाहिए कि तत्याना बोरीसोवना के यहां पियानो भी था) और एक उंगली से बजाना शुरू करता है – 'त्रोइका-गाड़ी उड़ी जाय रे!' वह सुरों को झनझनाता है और लगातार घंटों तक वारलामोव के गीतों – 'एकाकी सनोबर' या 'नहीं डाक्टर, नहीं, आना' चिंघाड़ता रहता है, अत्यन्त कष्टकर ढंग से। उसकी आंखें जैसे एकदम ग़ायब हो जाती हैं और उसके गाल ढोल की भांति फूल जाते हैं। इसके बाद वह एकाएक शुरू करता है – 'रुक जा, प्रेम के तूफ़ान, रुक जा!' और तत्याना बोरीसोवना निश्चित रूप से कांप उठती है।

"अजीब बात है," एक दिन उसने मुझसे कहा, "आजकल जाने कैसे गीत वे बनाते हैं। उन्माद और निराशा से भरे हुए। हमारे ज़माने के गीत इनसे भिन्न थे। उदास गीत तब भी होते थे, लेकिन उन्हें सुनना सुखद मालूम होता था। जैसे—

आ जा सजना! मैं जोहूं बाट खड़ी मैदानों में!
आ जा, नैना बहायें बड़ा नीर सजन, मैदानों में!
हाय! कर दी है बहुत अबेर, मिलूं न मैदानों में!

तत्याना बोरीसोवना वक्र अन्दाज़ में मुसकरायी।

"मेरी आह-कराह, मेरी आह-कराह!" उसका भतीजा बराबरवाले कमरे में चीख़ रहा था।

"बस करो, अन्द्रयूशा!"

"जला डाला तेरी जुदाई ने!" अनथक गायक चीख़े जा रहा था।

तत्याना बोरीसोवना ने अपना सिर हिलाया।

"ओह, ये कलाकार, ये कलाकार!"

तब से एक साल बीत चुका है। बेलोवज़ोरोव अभी भी अपनी बुआ के साथ रह रहा है, और अभी भी पीटर्सबर्ग लौटने की बातें करता रहता है। देहात में रहकर वह उतना ही चौड़ा हो गया है जितना कि वह लम्बा है। उसकी बुआ—कौन कल्पना कर सकता था कि ऐसा भी होगा—उसपर मुग्धभाव से न्योछावर है, और पड़ोस की युवा लड़कियां उसके प्रेम में खिंच रही हैं...

तत्याना बोरीसोवना के पुराने मित्रों में से कितनों ने ही उसके यहां जाना तर्क कर दिया है।

मृत्यु

मेरा एक पड़ोसी है, ज़मींदार और शिकारी, उम्र का जवान। जुलाई का महीना था और सुबह का सुहावना समय; घोड़ा कसवाकर मैं उसके पास जा पहुंचा और उसके सामने प्रस्ताव रखा कि चलिये, हम दोनों एक साथ ग्राउज़-पक्षी के शिकार के लिए चलें। वह तैयार हो गया। "लेकिन इस शर्त पर," उसने कहा, "कि आप हमारे झाड़-वन में चलें जो ज़ूशा में है। इस बहाने मुझे चापलीगिनो पर भी—वह हमारा ओक-वृक्षों का जंगल है—नज़र डालने का मौक़ा मिल जायेगा। वहां इमारती लकड़ी के लिए कटाई चल रही है।"—"मुझे मंज़ूर है, वहीं चलो।" उसने अपने घोड़े को कसवाने का आदेश दिया, बदन पर हरे रंग का कोट डाला जिसमें कांसे के बटन लगे थे जिनपर सूअर के सिर की तस्वीर थी, शिकारियों का थैला लिया जिसपर बटे हुए सूत की क़सीदाकारी बनी थी, और चांदी की एक सुराही। फिर एक बिल्कुल नयी फ़्रांसीसी बन्दूक़ कंधे से लटकाते हुए इत्मीनान के साथ वह आईने की ओर मुड़ा और अपने कुत्ते को उसने पुकारा। कुत्ते का नाम एस्पेरांस था जो उसे अपनी चिरकुमारी चचेरी बहिन ने भेंट किया था। यह बहिन दिल की बहुत अच्छी थी, लेकिन उसके सिर पर के बाल ग़ायब थे। हां तो हम चल पड़े। मेरे पड़ोसी ने गांव के कान्स्टेबल अरख़ीप तथा एक कारिन्दे को भी अपने साथ ले लिया। कान्स्टेबल एक हृष्ट-पुष्ट, नाटा और मोटा किसान था। उसका चेहरा चौरस तथा कपोलास्थियां बाबा आदम की

सी मालूम होती थीं। कारिन्दा एक दुबला-पतला उन्नीस वर्ष का युवक था। उसे उसने हाल ही में बाल्टिक प्रान्त से बुलाकर अपने यहां रखा था। सन जैसे उसके बाल थे, आंखों से कम दिखता था। उसके कंधे ढलुवां और गरदन लम्बी थी, और नाम हेर्र गोत्लिब फ़ोन-देर-कोक था। मेरे पड़ोसी को हाल ही में यह जागीर विरासत में मिली थी। यह जागीर उसे अपनी एक चाची मदाम कारदोन-कतायेवा से विरासत में मिली थी जो एक बड़े पदाधिकारी की विधवा थी। वह एक अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट स्त्री थी जो बिस्तर में पड़ी पड़ी भी कांखती-कराहती रहती थी। हम झाड़-वन जा पहुंचे। "तुम लोग," आरदालियोन मिखाइलिच (मेरे पड़ोसी) ने अपने साथियों को संबोधित करते हुए कहा, "यहां इस खुली जगह में रुककर हमारा इन्तज़ार करो।" जर्मन ने सिर नवाया, अपने घोड़े पर से नीचे उतरा, अपनी जेब से एक किताब निकाली – शायद शोपनहार का कोई उपन्यास था वह – और एक झाड़ी की छांव में बैठ गया। अरख़ीप बिना हिले-डुले, घंटा-भर तक धूप में ही खड़ा रहा। हम इधर से उधर झाड़ियों में सिर मारते रहे, लेकिन ग्राउज़-पक्षियों का कहीं कुछ पता नहीं। आरदालियोन मिखाइलिच ने कहा कि चलो, अब जंगल की ओर चला जाय। लेकिन ख़ुद मुझे, जाने क्यों, अपने भाग्य में यक़ीन नही था कि आज कुछ हाथ लगेगा। मैं भी उसके पीछे पीछे घूमता रहा। हम लौटकर खुली जगह आ गये। जर्मन ने पन्ने का नम्बर देखा, उठकर खड़ा हो गया, पुस्तक को अपनी जेब के हवाले किया और अपने दुमकटे, दम-उखड़े घोड़े पर जो ज़रा-सा भी छूने पर हिनहिनाने और दुलत्तियां झाड़ने लगता था, जैसे-तैसे सवार हुआ। अरख़ीप ने अपने-आपको झटककर चौकस किया, एक साथ दोनों रासों को झटका, अपनी टांगों को हिलाया और अन्त में अपने मरियल तथा नाकस घोड़े को हरकत में लाने में सफल हुआ। हम चल पड़े।

आरदालियोन मिखाइलिच के जंगल से मैं छुटपन से ही परिचित था। अपने फ्रेंच मास्टर m-r Désiré Fleury* के साथ मैं अक्सर चापलीगिनो के चक्कर लगाता था। मेरा वह मास्टर अत्यन्त सहृदय आदमियों में से था, हालांकि हर सांझ लेरोय का काढ़ा पिलाकर जीवन-भर के लिए क़रीब क़रीब उसने मेरा स्वास्थ्य ख़राब कर दिया था। समूचे जंगल में कुल मिलाकर बहुत बड़े बलूत और ऐश के दो या तीन सौ पेड़ थे। पहाड़ी ऐश और अखरोट झाड़ियों की पारदर्शी स्वच्छ हरियावल की पृष्ठभूमि में उनके मोटे मोटे तनों का स्याह रंग बहुत ही शानदार मालूम होता था। ऊपर, स्वच्छ नीले आकाश की पृष्ठभूमि में, कमनीय रेखाओं की भांति, उनकी गांठदार टहनियां छितरी थीं। पेड़ों की निश्चल छतरियों के नीचे बाज़, हनी-बज़र्ड और श्येन-पक्षी अपने परों को फड़फड़ाते उड़ रहे थे, विविध रंगी कठफोड़े मोटी छाल पर ज़ोरों से खुटखुट कर रहे थे। अचानक घनी पत्तियों में से ओरियोल के हर घड़ी बदलते हुए स्वर के बाद ही श्याम-पक्षी की लय सुनाई दी। नीचे झाड़ियों में वार्बलर, सिस्किन और पीविट चीं-चरर कर रहे थे। पगडंडियों के साथ साथ फ़िन्च-पक्षी तेज़ी से दौड़ रहे थे। जंगल के छोर से सटा, एक ख़रगोश चुपचाप भागा जा रहा था। चौकन्ना होकर वह रुका, और फिर लपक गया। एक गिलहरी, मानो खेलती हुई, एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर फुदकती है, फिर एकाएक थिर बैठ जाती है, अपनी पूंछ को चंवर की भांति सिर के ऊपर किये हुए। चींटियों की ऊंची बांबियों के बीच, सुन्दर-सुहावनी, परदार, गहरी छिदी फ़र्न की कोमल छांव में, वायोलेट और लिली खिले हैं, और कुकुरमुत्ते – भूरे, पीले, कत्थई लाल और गुलाबी। घास के छोटे छोटे मैदानों पर, फैली हुई झाड़ियों के बीच, लाल स्ट्राबेरी दिखाई

---

* मोशिये देज़िरे फ़्लेरी।

देती हैं... और ओह, जंगल की छांव! यों अत्यन्त दमघोट गर्मी, ठीक दोपहर, लेकिन जंगल में रात का समा छाया हुआ – कितनी शान्ति, कितनी महक, और कितनी ताज़गी... बहुत ही सुखद क्षण चापलीगिनो में मैं बिता चुका था, और इसलिए मुझे स्वीकार करना चाहिए कि जब मैंने इस जंगल में प्रवेश किया तो मेरा मन उदास हो उठा। १८४० की विनाशकारी तथा बर्फ़-विहीन सर्दियों ने मेरे पुराने संगी-साथियों को – बलूत और ऐश के वृक्षों को – नहीं बख़्शा था। मुरझाये हुए, नंगे-बूचे, जहां-तहां मरी-सी पत्तियां हिलगाये उदास भाव से खड़े थे। उनकी जड़ों में नयी पौध उगी थी जो 'उनका स्थान लिये थी, लेकिन कभी उनके स्थान की पूर्ति नहीं कर सकती थी'।*

कुछ पेड़ जिनके निचले हिस्सों में अभी भी पत्तियां दिखाई देती थीं, अपनी बेजान, नष्टप्राय शाखों को – जैसे निराशा और शिकायत के अन्दाज़ में – ऊपर की ओर उठाये हुए थे। कुछ अन्य पेड़ों में, अभी भी घनी पत्तियों के बीच से – हालांकि हरियाली के पहलेवाले प्रचुर उभार का अब कुछ शेष नहीं रहा था – मोटी, बेजान, सूखी शाखें बाहर निकली

---

*१८४० में गहरा पाला पड़ा था, और एकदम दिसम्बर के अन्त तक नाम को भी बर्फ़ नहीं गिरी थी। जाड़ों की समूची फ़सलों को पाला मार गया था, और ओक-वृक्षों के कितने ही शानदार जंगलों को उस वर्ष क्रूर जाड़े ने नष्ट कर दिया था। उनके स्थान की पूर्ति करना कठिन होगा, धरती की उत्पादन-शक्ति प्रत्यक्षत: घटती जा रही है; 'निषिद्ध' ऊसर भू-खण्डों में (जिन्हें देव-प्रतिमाओं के जलूसों, रथयात्राओं के स्थल होने के कारण हाथ नहीं लगाया जा सकता था) पहले के शुभ्र वृक्षों की जगह बर्च और एस्प अपने-आप उग रहे हैं और, कहने की आवश्यकता नहीं जंगल लगाने का ख़याल तो हम लोगों को कभी आया ही नहीं।

थीं। कुछ पेड़ों पर से छाल गिर पड़ी थी और कुछ पेड़ एकदम गिर गये थे और लाशों की भांति सड़गल रहे थे। और—पहले क्या कोई इसकी कल्पना कर सकता था—अब कहीं भी छांह नहीं थी, चापलीगिनो में छांह की कहीं कोई ठौर नज़र नहीं आती थी! "ओह," मृतप्राय पेड़ों की ओर देखते हुए मैंने मन ही मन कहा—"कितना कटु और अपमानजनक है यह तुम्हारे लिए?" कोल्त्सोव की निम्न पंक्तियां मुझे याद हो आयीं—

मौन हो गया क्यों
वन का रव भैरव?
कहां रुद्र दृढ़ता वह
कहां विगत शुभ गौरव?
कहां खो गया सारा
सघन वृक्षों का वैभव?

"एक बात तो बताओ, आरदालियोन मिखाइलिच," मैंने कहना शुरू किया, "इन पेड़ों को अगले साल ही क्यों नहीं काट दिया गया? देखो न, अब तो उसका दसवां हिस्सा भी उनके पल्ले नहीं पड़ेगा जितना उस वक़्त काटने से उन्हें मिल जाता?"

उसने केवल अपने कंधों को बिचका दिया।

"यह तो आपको मेरी चाची से पूछना चाहिए। लकड़ी के व्यापारी आये, नक़द दाम पेश किये, बल्कि सच पूछो तो इस पर काफ़ी ज़ोर दिया।"

"Mein Gott! Mein Gott!"* फ़ोन-देर-कोक हर क़दम पर कह उठता —"कितना अफ़सोस, ओह कितना अफ़सोस!"

"अफ़सोस क्या?" मेरे पड़ोसी ने मुसकराते हुए कहा।

---

*ओ ख़ुदा, ओ ख़ुदा!

"यानी अफ़सोस की बात्त, अम कैना चात्ता!" (जान पड़ता है कि जो जर्मन हमारी भाषा के 'त' अक्षर का उच्चारण करना सीख लेता है, वह बोलते वक्त सदा उसी पर बल देता रहता है।)

ख़ास तौर से धरती पर पड़े बलूत उसके हृदय को ज़्यादा मथते थे। और इसमें शक नहीं, कितने ही चक्कीवाले उनके लिए अच्छी रक़म दे देते। लेकिन कान्स्टेबल अरख़ीप ने अपनी थिरता को विचलित नहीं होने दिया, कोई शोकोद्गार उसके मुंह से प्रकट नहीं हुआ। इतना ही नहीं बल्कि एक तरह के सन्तोष के साथ वह उनके ऊपर से कूद रहा जान पड़ा था, और अपने चाबुक से उनकी मिज़ाजपुर्सी भी करता जाता था।

अब हम उस जगह के निकट पहुंच चले थे जहां वे पेड़ों को काट रहे थे। तभी, अचानक, गिरते हुए पेड़ की चरचराहट सुनाई दी और हमें किसी के चिल्लाने और जल्दी जल्दी बोलने की आवाज़ सुनाई दी, और कुछ क्षण बीतते न बीतते एक युवा किसान, अस्तव्यस्त चेहरे का रंग उड़ा हुआ, हमारी दिशा में तेज़ी से भागता हुआ आया।

"क्या हुआ? कहां भागे जा रहे हो?" आरदालियोन मिखाइलिच ने उससे पूछा।

वह एकदम रुक गया।

"ओह, आरदालियोन मिखाइलिच, मालिक ग़ज़ब हो गया!"

"क्या हुआ?"

"मालिक, मक्सीम पेड़ के नीचे आ गया।"

"मक्सीम ठेकेदार? सो कैसे?"

"हां मालिक, ठेकेदार। ऐश का एक पेड़ हमने काटना शुरू किया, और वह खड़ा देख रहा था। थोड़ी देर वह वहां खड़ा रहा। इसके बाद कुवें पर चला गया—उसे प्यास लगी थी शायद। तभी अचानक पेड़

चरचराया और बिल्कुल उसी की सीध में गिरने लगा। हम सब चिल्ला पड़े—"भागो, भागो, भागो!" उसे एक बाजू भागना चाहिए था, पर सीधा नाक की सीध में वह भागा। एकदम घबड़ाकर, इसमें शक नहीं। पेड़ की ऊपर की शाख़ों के नीचे दब गया। लेकिन, भगवान जाने, इतनी जल्दी पेड़ क्योंकर गिर पड़ा। शायद वह भीतर तक खोखला हो गया था।"

"तो मक्सीम कुचल गया?"

"हां, मालिक।"

"क्या मर गया?"

"नहीं मालिक, अभी ज़िन्दा है; लेकिन मरे के बराबर। उसकी बांहें और टांगें मलीदा हो गयी हैं। मैं डाक्टर सेलिवेरस्तिच को बुलाने जा रहा हूं।"

आरदालियोन मिखाइलिच ने कान्स्टेबल से कहा कि घोड़े पर दौड़ा जाय और सेलिवेरस्तिच को गांव से बुला लाय, और ख़ुद दुलकी चाल से उस दिशा में बढ़ चला जहां पेड़ गिराये जा रहे थे। मैं भी उसके पीछे पीछे चल पड़ा।

हमने देखा कि अभागा मक्सीम धरती पर पड़ा है। दस-बारह किसान उसके इर्द-गिर्द खड़े थे। हम अपने घोड़ों पर से उतर आये। उसके मुंह से कराहने तक की आवाज़ नहीं निकल रही थी। जब-तब वह अपनी आंखों को पूरा खोलता, चारों ओर देखता—जैसे अचरज से उसकी आंखें फटी हों—अपने होंटों को वह काटता, जो नीले पड़ रहे थे। उसकी ठोड़ी ऐंठ रही थी, उसके बाल उसके माथे से चिपके थे, उसकी धौंकनी उखड़ी हुई चल रही थी—वह मर रहा था। लीपा के एक नवजात पेड़ की हल्की छाया उसके चेहरे पर धीमे से तैर रही थी।

हम उसके ऊपर झुके। उसने आरदालियोन मिखाइलिच को पहचान लिया।

"किरपा, श्रीमान," लड़खड़ाती-सी आवाज़ में उसने कहा—"किरपा कर पादरी... बुलवा लें... कहना ... प्रभु ने मुझे सज़ा दी... बांह, टांगें, सब मलीदा हो गयीं... आज... इतवार... और मैं... मैं... मैंने... आप जानो... आदमियों को छुट्टी नहीं दी।"

वह रुक गया। उसका दम साथ नहीं दे रहा था।

"और मेरी कमाई... घरवाली को दे दें... इसमें से कम करके... ओनिसिम यहां जानता है... किसका... मुझे... कितना देना है... वह निकालकर..."

"सुनो मक्सीम, डाक्टर के लिए आदमी गया है," मेरे पड़ोसी ने कहा, "मुमकिन है तुम बच जाओ।"

उसने अपनी आंखें खोलने की कोशिश की, और जैसे-तैसे अपनी पलकों और भौंहों को उठाया।

"नहीं, मैं मर रहा हूं। यह देखो...वह आ रहा है... वह... आ... मुझे माफ़ करना, साथियो, अगर मुझसे कोई..."

"ख़ुदा तुम्हें माफ़ी देगा, मक्सीम अन्द्रेइच," किसानों ने एक आवाज़ में कहा। उन्होंने अपनी टोपियां उतार लीं, और बोले, "तुम हमें माफ़ करना।"

अचानक, गहरी छटपटाहट के साथ, उसने अपना सिर झटका, बड़े कष्ट के साथ उसने अपना वक्ष उभारा, और फिर ढह गया।

"अरे, तो क्या इसे यहीं पड़े पड़े मर जाने दोगे," आरदालियोन मिखाइलिच चिल्लाया—"जाकर गाड़ी में से चटाई ले आओ, और इसे उठाकर अस्पताल ले चलो।"

दो आदमी भागे हुए गाड़ी की ओर गये।

"मैंने एक घोड़ा ख़रीदा... कल," लड़खड़ाती आवाज़ में मरते हुए आदमी ने कहा, "येफ़ीम से ... सिचोवका में... बयाना दिया... सो घोड़ा मेरा है... उसे... मेरी घरवाली को... दे देना..."

उन्होंने उसे चटाई पर लिटाना शुरू किया। उसका समूचा बदन घायल पक्षी की भांति, थरथराया, और कड़ा हो गया।

"मर गया है," किसानों ने बुदबुदाकर कहा।

ख़ामोशी में हम अपने घोड़ों पर सवार हुए, और वहां से चल दिये।

अभागे मक्सीम की मृत्यु देखकर मैं सोचने लगा। इसमें शक नहीं कि रूसी किसान का अन्त – उसका मरना – अद्भुत होता है, बहुत ही अद्भुत! मन की जिस स्थिति में वह अपने अन्त से भेंटता है, उसे उदासीनता या जड़ता नहीं कहा जा सकता। वह मरता है जैसे कोई धार्मिक कृत्य सम्पन्न कर रहा हो, शान्ति से, सरलता से।

कई साल पहले की बात है। मेरे एक अन्य पड़ोसी के खलिहान में आग लगी और एक किसान जल गया। (वह उसी में पड़ा रहता, लेकिन उधर से एक शहरी आदमी गुज़र रहा था जिसने उसे मृतप्राय हालत में बाहर खींच निकाला। पानी से भरी एक टंकी में वह कूद पड़ा, और जलते हुए गोदाम का दरवाज़ा तोड़ डाला।) मैं उसे देखने के लिए उसकी झोंपड़ी में पहुंचा। झोंपड़ी में अंधेरा था, धुवां भरा था, और दम घुटता था। मैंने पूछा – "रोगी कहां है?" – "वहां पड़ा है, मालिक, तन्दूर के ऊपर," शोकग्रस्त किसान स्त्री ने सुरीली आवाज़ में जवाब दिया। मैं उसके पास पहुंचा। किसान भेड़ की खाल के कोट से ढका पड़ा था, और उसका सांस भारी हो रहा था। "कहो, कैसा जी है?" आहत तन्दूर के ऊपर हिला। वह समूचा जल गया था, लगता था जैसे मरने पर हो। उसने उठने की कोशिश की। "अरे नहीं, हिलो-डुलो नहीं, हिलो-डुलो नहीं... थिर पड़े रहो। हां तो क्या हाल है?" – "हाल तो ज़रूर ख़राब है," उसने कहा। "क्या दर्द है?" – उसने कोई जवाब नहीं दिया। "तुम्हें कुछ चाहिए?" – कोई जवाब नहीं। "तुम्हारे लिए

चाय भेजूं, या कुछ और जो तुम चाहो?" – "कोई ज़रूरत नहीं।" मैं उसके पास से खिसककर एक बेंच पर बैठ गया। वहां मैं पाव घंटे तक बैठा रहा, आधे घंटे तक बैठा रहा। झोंपड़ी में क़ब्र का सा सन्नाटा था। मेज़ के पीछे कोने में, देव-प्रतिमाओं के नीचे, पांच साल की एक लड़की सिकुड़ी-सिमटी बैठी थी और रोटी का एक टुकड़ा लिये खा रही थी। बीच बीच में उसकी मां उसे डपट देती थी। बाहरवाले दालान में लोग आ-जा रहे थे, बातें और शोर कर रहे थे। भाई की घरवाली गोभी काट रही थी। "ए, अक्सीन्या!" आहत आदमी के मुंह से आखिर आवाज़ आयी। "क्या?" – "थोड़ी क्वास।" अक्सीन्या ने उसे थोड़ी क्वास दे दी। इसके बाद फिर खामोशी छा गयी। मैंने फुसफुसाकर पूछा – "प्रायश्चित तो करा दिया है न?" – "हां।" सो, मतलब यह, कि हर चीज़ ठीक-ठाक थी – वह मरने की बाट देख रहा था, और बस। मुझसे यह सहन नहीं हुआ, और वहां से चल दिया...

इसी प्रकार, मुझे एक और दिन की याद आती है कि किस प्रकार मैं अपने एक परिचित तथा जोशीले शिकारी चिकित्सा-सहायक कपितोन से मिलने क्रास्नोगोर्ये गांव के अस्पताल में कुछ देर के लिए रुक गया था।

यह अस्पताल गढ़ी के एक भूतपूर्व उपगृह में था। खुद जागीर की मालकिन ने इसकी नींव रखी थी। दूसरे शब्दों में यह कि उसने फ़रमान जारी किया कि दरवाज़े के ऊपर एक नीली तख़्ती लगा दी जाय। तख़्ती पर सफ़ेद अक्षरों में लिखा था – 'क्रास्नोगोर्ये अस्पताल'। और मालकिन ने, खुद अपने हाथों से, रोगियों के नाम दर्ज करने के लिए कपितोन को एक खूबसूरत-सा अलबम भेंट किया था। अलबम के पहले पन्ने पर लक्ष्मी स्वरूप देवी जी के खुशामदी टट्टुओं में से एक ने निम्न पंक्तियां टांक दी थीं –

Dans ces beaux lieux, où règne l'allégresse,
Ce temple fut ouvert par la Beauté;
De vos seigneurs admirez la tendresse,
Bons habitants de Krasnogorié!*

इसी के नीचे एक अन्य महानुभाव ने यह लिख छोड़ा था—

Et moi aussi j'aime la nature!

Jean Kobyliatnikoff**

चिकित्सा-सहायक ने खुद अपनी जेब से छः खाटें ख़रीदीं और भगवान का नाम लेकर खुदा के बन्दों को निरोग करने के काम में जुट गया। उसके अलावा अस्पताल के कर्मचारियों में दो व्यक्ति और थे—एक तो नक़्क़ाश पावेल जिसे पागलपन के दौरे पड़ते थे, दूसरी एक बांहवाली एक किसान स्त्री मेलिकत्रीसा जो बावर्चिन का काम करती थी। दोनों दवाइयां घोलते तथा भिगोयी हुई जड़ी-बूटियों को सुखाते थे। साथ ही, रोगियों के उद्भ्रान्त होने पर, उन्हें क़ाबू में रखने का काम भी उन्हीं के ज़िम्मे था। पागल नक़्क़ाश हमेशा उदास रहता था और बहुत कम बोलता था। रात होने पर वह 'सुन्दर वीनस' वाला गीत गाता और जो भी मिलता उसी के सिर पड़ जाता, और अनुरोध करता कि वह उसे मलान्या नाम की एक लड़की से शादी करने की इजाज़त दे, हालांकि इस लड़की को मरे एक मुद्दत गुजर चुकी थी। एक बांहवाली किसान

---

*इस मनोरम स्थान में, जहां जीवन का राज्य है,
सुन्दरता ने स्वयं अपने करों से महल यह बनाया था,
क्रास्नोगोर्ये के सहृदय निवासियो,
अपने अधिष्टाताओं की उदारता को देखो!

**और मुझे भी प्रकृति से प्रेम है!

जान कोबील्यात्निकोव।

स्त्री अक्सर उसकी मरम्मत करती और टर्की मुर्गियां ताकने के काम पर उसे लगा देती।

हां तो एक दिन मैं कपितोन के यहां गया हुआ था। पिछले शिकार के बारे में हमने बातें करना शुरू ही किया था कि तभी अचानक, अहाते में एक गाड़ी दाखिल हुई। गाड़ी को एक असाधारण रूप से तगड़ा घोड़ा खींच रहा था। केवल पन-चक्कीवालों के पास ही ऐसे घोड़े दिखाई देते हैं। गाड़ी में मज़बूत काठी का एक किसान बैठा था। वह नया कोट पहने था और उसकी दाढ़ी रंग-बिरंगी थी।

"वसीली द्मीत्रिच!" कपितोन खिड़की में से चिल्लाया, "अरे आओ, भीतर चले आओ।" और फिर मेरे कान में फुसफुसाया– "ल्युबोवशिनो की चक्की का मालिक है।"

किसान गाड़ी में से कराहता हुआ उतरा, चिकित्सा-सहायक के कमरे में आया, और देव-प्रतिमाओं की टोह लेने के बाद क्रॉस का निशान बनाया।

"हां तो, वसीली द्मीत्रिच, कहो, क्या ख़बर है? लेकिन तुम तो बीमार मालूम होते हो। कुछ ठीक नहीं दिखते।"

"हां, कपितोन तिमोफ़ेइच, हां, कुछ ठीक नहीं हूं।"

"क्यों, क्या तकलीफ़ है?"

"तो सुनो, कपितोन तिमोफ़ेइच। बहुत दिन नहीं हुए मैंने नगर में चक्की के लिए कुछ पाट ख़रीदे, सो उन्हें लेकर मैं घर आया, और जब मैं उन्हें गाड़ी में से उतारने लगा तो कोई नस चटख गयी या जाने क्या हुआ। कमर में चटका-सा आया, लगा जैसे कोई चीज़ टूटकर अलग हो गयी हो। तभी से यह गड़बड़ चल रही है। और आज तो सब दिन से ज्यादा बुरा हाल है।"

"हूं-ऊं!" कपितोन ने कहा और एक चुटकी सुंघनी सूंघते हुए

बोला, "निश्चय ही तुम्हारी आंत उतर गयी है। लेकिन क्या इसे काफ़ी दिन हो गये?"

"दस दिन पहले की बात है।"

"दस दिन?" (चिकित्सा-सहायक ने एक लम्बा सांस लिया और अपना सिर हिलाया।) "ज़रा दिखाओ तो... हां तो वसीली द्मीत्रिच," अन्त में उसने घोषित किया, "मुझे तुमसे सहानुभूति है, हार्दिक सहानुभूति है, लेकिन हालत तुम्हारी क़तई अच्छी नहीं है। तुम सख़्त बीमार हो। तुम यहीं मेरे पास रुको। अपनी ओर से मैं कोई कसर नहीं छोड़ूंगा, हालांकि मैं ज़िम्मावारी नहीं ले सकता।"

"तो क्या हालत इतनी ख़राब है?" पन-चक्कीवाला हैरान-सा होकर बुदबुदाया।

"हां, वसीली द्मीत्रिच, हालत ख़राब है। अगर तुम मेरे पास एक या दो दिन पहले और आ जाते तो बात इतनी न बिगड़ती, चुटकियों में मैं तुम्हें अच्छा कर देता। लेकिन अब तो सूजन शुरू हो गयी है, और इससे पहले कि हमें पता चले कि हम कहां हैं, ख़ून में ज़हर फैल जायेगा।"

"लेकिन यह नहीं हो सकता, कपितोन तिमोफ़ेइच!"

"कहता तो हूं कि ऐसा ही है।"

"लेकिन क्यों—सो कैसे?"

चिकित्सा-सहायक ने अपने कंधे बिचकाये।

"और इतनी-सी बात के लिए मुझे मरना होगा?"

"यह मैं नहीं कहता... केवल तुम्हें यहां रुकना पड़ेगा।"

किसान सोचता रहा, सोचता रहा। उसकी आंखें धरती पर टिकी थीं। अन्त में सिर उठाकर उसने हमारी ओर देखा, अपनी खोपड़ी को खुजलाया और अपनी टोपी हाथ में उठा ली।

"अरे, यह तुम कहां चले, वसीली द्मीत्रिच?"

"जाऊंगा कहां? अपने घर, अगर हालत इतनी गयी-बीती है। मुझे सब ठीक-ठाक करना होगा, ऐसी हालत में।"

"लेकिन वसीली द्मीत्रिच, इससे तो तुम खुद अपना नुक़सान करोगे। सच, अपने को नुक़सान पहुंचाओगे। मुझे तो यही देखकर ताज्जुब होता है कि तुम यहां तक आ कैसे सके? नहीं, तुम्हें रुकना चाहिए।"

"नहीं, भाई कपितोन तिमोफ़ेइच, अगर मुझे मरना ही है तो मैं घर पर मरूंगा। यहां मरने से क्या लाभ? ख़ुदा ही जानता है कि मेरे घर का क्या बनेगा और घरवालों की क्या दशा होगी?"

"यह कोई कैसे कह सकता है, वसीली द्मीत्रिच, कि कैसे इसका अन्त होगा। बेशक, ख़तरा है, काफ़ी ख़तरा है, इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता... और ठीक इसी लिए तुम्हें यहां रुकना चाहिए।"

किसान ने अपना सिर हिलाया। "नहीं, कपितोन तिमोफ़ेइच, मैं रुक नहीं सकता... लेकिन शायद आप मेरे लिए कोई दवाई तजवीज़ कर सकें।"

"अकेली दवाई कुछ भला नहीं करेगी।"

"मैं रुक नहीं सकता, यह तय है।"

"अच्छा तो जैसी तुम्हारी मर्ज़ी। बस इतना है कि इसके लिए बाद में मुझे दोष न देना।"

चिकित्सा-सहायक ने अलबम में से एक पन्ना फाड़कर अलग दिया और नुस्ख़ा लिखते हुए उसे समझाया कि इसके अलावा उसे और क्या क्या करना चाहिए। किसान ने काग़ज़ के उस पुर्ज़े को ले लिया, आधा रूबल कपितोन को भेंट किया, और कमरे से बाहर निकल अपनी गाड़ी में बैठ गया। "अच्छा तो अब विदा, कपितोन तिमोफ़ेइच। देखो, मेरी ओर से बुरा न मानना, और अगर कुछ हो जाय तो मेरे अनाथ बच्चों..."

"ओह, रुक जाओ, वसीली!"

किसान ने केवल अपना सिर हिलाया, घोड़े को रास से झटकारा और गाड़ी अहाते से बाहर चली गयी। मैं बाहर आ गया और उसे जाते देखता रहा। सड़क कीचड़ और खाई-खड्डों से भरी थी। पन-चक्कीवाला सावधानी से गाड़ी हांक रहा था, बिना किसी उतावली के, अपने घोड़े को दक्षता से चलाते तथा राह में मिलनेवाले जान-पहचानवालों से सिर हिलाकर दुआ-सलाम करते हुए। इसके तीन दिन बाद वह मर गया।

रूसी लोग सामान्यतः, अद्भुत रूप में मृत्यु से भेंट करते हैं। अनेक मरनेवालों की इस समय मुझे याद आ रही है। मुझे तुम्हारी, मेरे पुराने मित्र की, याद आ रही है जिसने, पढ़ाई के अपने कोर्स को पूरा किये बिना ही, विश्वविद्यालय छोड़ दिया था। अवेनीर सोरोकोऊमोव, बहुत ही ऊंचा और श्रेष्ठतम जीव। तुम्हारा रुग्ण, क्षयग्रस्त चेहरा, तुम्हारे पतले पतले सुनहरे बाल, तुम्हारी कोमल मुस्कान, तुम्हारी उत्साहपूर्ण दृष्टि, तुम्हारे लम्बे अंग-प्रत्यंग मेरी आंखों के सामने मूर्त्त हो उठे हैं। तुम्हारी क्षीण दुलार भरी आवाज़ मुझे सुनाई दे रही है। तुम एक रूसी भू-स्वामी – गूर क्रुप्यानिकोव – के यहां रहते थे, उसके बच्चों फ़ोफ़ा और ज़्योज़्या को रूसी व्याकरण, भूगोल और इतिहास पढ़ाते थे, धीरज के साथ गूर के बोसीदा मज़ाक़ों, बटलर की भोंडी घनिष्ठताओं और नकचढ़े बच्चों की बेहूदा शैतानियों को सहन करते थे, हां तीखी मुस्कान लिये हुए लेकिन बिना किसी शिकायत के उनकी उकतायी हुई मालिकिन की सनकों को पूरा करते थे, और इन सब के बावजूद कितने आनन्द-विभोर, कितने शान्त मालूम होते थे तुम, उस समय जब सांझ को, ब्यालू करने के बाद अन्ततः सभी दायित्वों से मुक्त, खिड़की के सामने बैठकर खोये खोये-से तुम सिगरेट पीते थे या किसी मोटी पत्रिका के चिकने चुरे-मुरे अंक के पन्नों को ललचकर पलटते होते थे जो तुम्हें जरीबकश ने – जो तुम्हारी ही भांति एक और घर-बार विहीन अभागा था – यह पत्रिका नगर से लाकर तुम्हें दी थी। इस पत्रिका के पन्नों को तुम पलटते, और ओह,

किसी भी कविता या उपन्यास को पाकर कितनी ख़ुशी से तुम छलछला उठते, कितनी तत्परता के साथ तुम्हारी आंखों में आंसू भर आते, और कितनी प्रसन्नता के साथ तुम हंसने लगते। दूसरों के लिए कितना सच्चा प्रेम, और हर भली तथा शुभ चीज़ के लिए कितनी उदार सहानुभूति, तुम्हारे निश्छल युवा हृदय में हिलोरें लेती थी। जो सच है, वह कहना चाहिए – तुम्हारी बुद्धि विशेषतः तेज़ नहीं थी। प्रकृति ने न तो तुम्हें याददाश्त दी थी न उद्यमशीलता। विश्वविद्यालय में तुम्हारी गिनती लायक़ छात्रों में भी नहीं थी। लैक्चरों के समय तुम ऊंघते थे, परीक्षाओं के समय तुम गम्भीर मौन धारण कर लेते थे। लेकिन जब कोई मित्र सफलता प्राप्त करता था, जब कोई मित्र विजयी होता था, तो छलछलाती हुई ख़ुशी तथा उछाह से कौन बेदम हो जाता था? अवेनीर ... अपने मित्रों के यशस्वी भविष्य में कौन इतना आंखें बंद करके विश्वास करता? कौन इतने गर्व के साथ उन्हें आकाश में उछालता था? कौन इतनी उत्तेजना और आवेग के साथ उनके पक्ष की हिमायत करता था? ईर्ष्या और साथ ही दम्भ से भी कौन अछूता था? अत्यन्त निःस्वार्थमय आत्म-बलिदान के लिए कौन इतना तत्पर रहता था? कौन इतनी तत्परता से उन लोगों के लिए भी रास्ता छोड़ने को तैयार रहता था जो उसके पांव के जूते खोलने लायक़ भी नहीं थे ... तुम, केवल तुम, भले अवेनीर, तुम! मुझे याद है कि कितने उदास से तुम अपने साथियों से विदा हुए थे, उस समय जब तुम शिक्षक बनने के लिए देहात जा रहे थे। अनिष्ट की आशंका तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ रही थी...

और, इसमें शक नहीं, देहात में तुम्हारे साथ बुरी बीती। वहां कोई न था जिसकी बात तुम मान से सुनते, जिसको तुम सराहते, प्यार करते ... जमीदार – वे भी जो स्तेप की अशिक्षित सन्तान थे, और वे भी जो पढ़े लिखे कुलीन थे – निरे मास्टर के रूप में तुम्हारे साथ व्यवहार करते थे। कुछ अक्खड़पन और उपेक्षा के साथ, और कुछ लापर्वाही के साथ।

इसके अलावा, तुम उन लोगों में से नहीं थे जो दूसरों पर रोब गांठे रहते हैं। तुम संकोची थे, शरमा जानेवाले। तुम्हारे गाल तमतमाने लगते थे और ज़बान हकलाने लगती थी... तुम्हारा स्वास्थ्य भी देहात के वातावरण में बेहतर नहीं हो पाया। तुम, निरीह जीव, बुझती मोमबत्ती की भांति शेष हो गये। यह सच है कि तुम्हारा कमरा बाग़ की ओर खुलता था। वन-चेरी, सेब और लीपा के पेड़ तुम्हारी मेज़ पर, तुम्हारी दावात और तुम्हारी पुस्तकों पर अपने प्रथम पुष्पों की वर्षा करते थे। दीवार पर एक नीली रेशमी घड़ी की गद्दी लटकी थी – वही जो भूरे बालों तथा नीली-सी आंखों वाली एक सहृदय भावुक जर्मन अध्यापिका ने विदाई-भेंट के रूप में तुम्हें दी थी; कभी कभी कोई पुराना मित्र मास्को से तुम्हारे पास आ टपकता था और नयी कविताओं से – जो कभी कभी उसकी अपनी होती थीं – तुम्हें आत्मविभोर कर देता था। लेकिन, ओह, एकाकीपन, और वह असह्य रास्ता जो एक मास्टर के भाग्य में बदा होता है। छुटकारे की आशा नहीं, अन्तहीन शरद् और सर्दियां, और रोग जो कम होने में नहीं आता ... ओह अवेनीर, अभागे मित्र!

उसकी मृत्यु के कुछ दिन पहले मैं सोरोकोऊमोव से मिलने गया था। तब वह चलने-फिरने योग्य भी नहीं रहा था। भूस्वामी गूर क्रुप्यानिकोव ने उसे घर से तो नहीं निकाला था, लेकिन तनख़्वाह देना बन्द कर दिया था, और ज्योज्या के लिए नया मास्टर उसने रख लिया था ... फ़ोफ़ा कैडटों के एक स्कूल में भर्ती हो गया था। अवेनीर खिड़की के पास एक पुरानी आरामकुर्सी में बैठा था। बहुत ही सुहावना मौसम था। लीपा के वृक्षों की गहरी भूरी रेखा के ऊपर शरद् का स्वच्छ उजला नीला आकाश फैला था। वृक्षों के पत्ते झड़ गये थे, केवल जहां-तहां इक्के-दुक्के आख़िरी पत्ते, उजले और सुनहरे, सरसरा और अपने इर्द-गिर्द कानाफूसी कर रहे थे। धरती पर पाला जमा था और सूरज की गुलाबी किरनों में, जो पीली घास पर तिर्छी पड़ रही थीं, अब ओस की बूंदों के रूप में पिघल

रहा था। वायु में एक धुंधली करारी गूंज व्याप्त थी और बाग़ में मज़दूरों की आवाज़ें सुस्पष्ट तथा पृथक रूप में सुनाई पड़ रही थीं। अवेनीर एक फटा बोखारा ड्रेसिंग गाउन पहने था, और हरे रंग का गुलूबंद भयानक कृशकाय चेहरे पर मृत्यु जैसी छाया डाल रहा था। मुझे देखकर वह बेहद खुश हुआ, उसने अपना हाथ बढ़ाया, एकसाथ बातें करना और खांसना शुरू किया। बोलने से मैंने उसे मना किया और उसके पास बैठ गया ... अवेनीर के घुटने पर कोल्त्सोव की कविताओं की एक हस्तलिखित पुस्तक रखी थी। बड़ी सावधानी से कविताओं को उसमें उतारा गया था। मुसकराते हुए उसने उसे सहलाया – "खूब है यह कवि," प्रयास के साथ अपनी खांसी को दबाते हुए हकलाती-सी आवाज़ में उसने कहा, और मुश्किल से सुनाई पड़नेवाली आवाज़ में कविता पढ़ने लगा –

क्या बाज के पंख बंधन में बंधे हैं?
क्या नभ के पथ में भी ये बंधन लगे हैं?

मैंने उसे रोका। डाक्टर ने उसे बोलने से मना किया था। किस चीज़ से वह खुश होगा, यह मैं जानता था। आज के विज्ञान की प्रगति की जानकारी नहीं रखता, लेकिन यह जानने के लिए वह हमेशा व्यग्र रहता था कि अग्रणीय प्रतिभाओं की साधना के क्या परिणाम हुए हैं। कभी कभी अपने किसी मित्र को वह अलग कोने में ले जाता और उससे पूछने लगता। वह सुनता और आश्चर्यचकित रह जाता, हर शब्द को सच मानता और बाद में ऐसे ही कहकर दोहराता। जर्मन दर्शन में वह ख़ास तौर से दिलचस्पी लेता था। मैंने उसे हेगेल के बारे में भाषण देना शुरू किया (आप समझ ही गये होंगे, यह बहुत पहले की बात है)। अवेनीर ने सहमति से सिर हिलाया, अपनी भौंहों को उठाया, और मुसकराकर फुसफुसा उठा – "ओह, समझा, समझा! बढ़िया, बहुत बढ़िया!" इस अभागे, मरते हुए, घर-बार विहीन, उपेक्षित बालक की उत्सुकता देखकर,

मैं ख़त्म हो जाऊंगा। नाहक़ क्यों किसी को तकलीफ़ दूं? इस घर का मैं आदी हो गया हूं। यह सच है कि यहां के मालिक ..."

"क्रूर हैं, क्यों?" मैंने बीच में ही कहा।

"नहीं, क्रूर नहीं, बल्कि हृदयहीन हैं। जो हो, मैं उनकी शिकायत नहीं कर सकता। पड़ोसियों को ही लो ... ज़मींदार कसातकिन की लड़की ... सलीक़ेदार, सहृदय और मोहक ... ग़रूर ज़रा भी नहीं ..."

सोरोकोऊमोव को फिर खांसी ने घेर लिया।

"किसी चीज़ का गिला नहीं," कुछ दम लेकर उसने फिर कहना शुरू किया, "बस, इतना ही है कि वे मुझे अपना पाइप पीने दें ... मरने से पहले भी मैं उसे नहीं छोड़ सकता!" अपनी एक आंख को धूर्तता से बिचकाते हुए अन्त में उसने कहा। "ख़ुदा का शुक्र है, काफ़ी जीवन मैंने देखा। एक से एक अच्छे लोगों से मेरा सम्पर्क हुआ ..."

"लेकिन तुम्हें, कम से कम, अपने सगे-संबंधियों को तो ख़बर कर देनी चाहिए।"

"बेकार है उन्हें लिखना। वे मेरी क्या मदद कर सकते हैं? जब मर जाऊंगा, तो उन्हें पता चल जायेगा। लेकिन छोड़ो, यह सब क्या ले बैठे... अच्छा हो कि तुम दुनिया का कुछ हाल सुनाओ। क्या क्या देखा?"

मैंने उसे अपने अनुभव सुनाने शुरू किये। साफ़ मालूम होता था कि वह ख़ूब रस लेकर सुन रहा है। सांझ होते मैं वहां से चल दिया, और इसके दस दिन बाद मुझे मि० क्रुप्यानिकोव का निम्न पत्र मिला—

'आपकी सेवा में, श्रीमान, सूचित करना है कि आपका मित्र, वह छात्र जो मेरे यहां रह रहा था—मि० अवेनीर सोरोकोऊमोव—तीन दिन हुए दोपहर के दो बजे मर गया, और उसे आज बस्ती के गिरजे में, मेरे ख़र्च पर, दफ़ना दिया गया है। उसने मुझसे कहा था कि पुस्तकें तथा कापियां आपके पास भेज दूं। वे पत्र के साथ भेजी जा रही हैं। साढ़े बाईस रूबल उसके पास मिले जो, उसके अन्य सामान के साथ, उसके संबंधियों

को मिल जायेंगे। आपका मित्र पूर्णतया सचेत अवस्था में मरा और, इजाज़त हो तो कहूं, इतने निरपेक्ष भाव से मरा कि उस समय जबकि हम सब के सब उससे आख़िरी विदा ले रहे थे, खेद या शोक का उसने ज़रा-सा भी चिन्ह प्रकट नहीं किया। मेरी पत्नी क्लेओपात्रा अलेक्सान्द्रोवना आपको अपना अभिवादन भेजती है। आपके मित्र की मृत्यु ने, कहने की आवश्यकता नहीं, उसके स्नायुओं को झंझोड़ दिया है। जहां तक मेरा संबंध है, शुक्र है ख़ुदा का, मैं अच्छी तरह हूं। मैं हूं आपका विनम्र सेवक

गूर क्रुप्यानिकोव।'

इस तरह की और भी कितनी ही मिसालें याद आती हैं, लेकिन सबका वर्णन कर सकना सम्भव नहीं। केवल एक तक ही यहां मैं अपने-आपको सीमित रखूंगा।

देहात की एक वृद्ध ज़मींदारिन की मृत्युशैया के पास मैं मौजूद था। पादरी ने मरने के समय की प्रार्थना पढ़ना शुरू कर दी थी, लेकिन अचानक ऐसा कुछ आभास पाकर कि रोगिणी के प्राण वास्तव में निकला ही चाहते हैं, चूमने के लिए उसने जल्दी से उसकी ओर क्रॉस बढ़ाना चाहा। महिला ने नाराजगी के अन्दाज़ में अपना मुंह फेर लिया। अस्फुट आवाज़ में उसने कहा—"आप बहुत जल्दी में मालूम होते हैं, पादरी, फिर समय काफ़ी है।" उसने क्रॉस का चुम्बन किया, अपने तकिए के नीचे हाथ रखा, और मर गयी। तकिए के नीचे चांदी का एक रूबल था। ख़ुद अपनी मृत्यु-समय के प्रार्थना-पाठ के लिए वह पादरी का देना-पावना चुकता करना चाहती थी ...

यह सच है, रूसियों के मरने का ढंग अद्भुत होता है!

गायक

कोलोतोवका एक छोटा-सा गांव है जो बीते ज़माने में एक ज़मींदारिन की मिल्कियत था, जो अपने गहरे बनियापन की वजह से, पास-पड़ोस में मक्खीचूस के नाम से प्रसिद्ध थी (उसका असली नाम अंधकार के गर्भ में खोया है)। लेकिन इधर कुछ समय से वह गांव पीटर्सबर्ग के एक जर्मन की मिल्कियत में आ गया है। एक वंजर पहाड़ी के ढलुवान पर वह बसा है। एक भारी खाई, ऊपर से लेकर नीचे तक, इस पहाड़ी को दो हिस्सों में काटती है। खाई क्या है, जैसे अतल गर्त मुंह बाये है। उसके इधर-उधर के बाजुओं को बारिश और बर्फ़ ने खोखला कर दिया है और यह बल खाती गांव की राह के ठीक मध्य तक चली गयी है। अभागे गांव के दो हिस्सों को इसने नदी से भी ज़्यादा अलग कर दिया है, कारण कि नदी को तो फिर भी कम से कम, पुल के ज़रिये पार किया जा सकता है। कुछ क्षीणकाय बेंत-वृक्ष सहमे-से इसके रेतीले ढलुवानों से चिपके हैं, और एकदम नीचे – सूखे और पीतवर्ण तले पर – आर्गिलेश्यस पत्थर की भीमाकार शिलाएं पड़ी हैं। उछाह को नष्ट करनेवाली स्थिति है, इसमें सन्देह नहीं, फिर भी आसपास के सभी लोग कोलोतोवका की राह से अच्छी तरह परिचित हैं, वे वहां अक्सर जाते हैं, और वहां जाकर हमेशा खुश होते हैं।

खाई की एकदम चोटी पर, उस स्थल से कुछ डग दूर जहां से वह खाई धरती में एक तंग फांक के रूप में शुरू होती है, एक छोटी-सी

चौरस झोंपड़ी खड़ी है। वह अकेली खड़ी है, अन्य सबसे अलग-थलग। बेंत की इसकी छत है, और धुवांकश भी इसमें मौजूद है। एक खिड़की, एक पैनी आंख की तरह खाई की ओर देखती रहती है। जाड़ों की सांझ में जबकि झोंपड़ी में रोशनी होती है, पाले की धुंधली धुंध के बीच वह दूर से दिखाई देती है, और उसकी रोशनी राह-चलते अनेक किसानों के लिए मार्गदर्शक तारे की भांति टिमटिमाती रहती है। उसके दरवाज़े के ऊपर कीलों से एक नीली तख़्ती जड़ी है। यह झोंपड़ी एक शराबख़ाना है, जो 'स्वागत-गृह' नाम से प्रसिद्ध है। यहां शराब बिकती है, और सम्भवतः आम दामों से कुछ सस्ती नहीं मिलती, लेकिन आसपास की इस तरह की अन्य जगहों के मुक़ाबिले, यहां कहीं ज़्यादा संख्या में लोग आते हैं। इसका कारण इस शराबख़ाने का मालिक निकोलाई इवानिच है।

निकोलाई इवानिच—जो कभी दुबला-पतला, घुंघराले बाल और गुलाबी गालों वाला युवक था, अब एक अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट वयस्क है—सफ़ेद बालवाला, थलथल चेहरा, टुइयां-सी भली और चण्ट आंखें, चिकना माथा जिसके समूचे हिस्से में रेखाओं की भांति झुर्रियां खिंची हैं। वह बीस साल से भी अधिक अर्से से कोलोतोवका में रह रहा है। निकोलाई इवानिच, अधिकांश शराबख़ाना-मालिकों की भांति, गांठ का पक्का और तेज़ आदमी है। हालांकि वह लोगों को ख़ुश करने या उनसे बतियाने की कोई ख़ास कोशिश नहीं करता, फिर भी वह अपने गाहकों को आकर्षित करने तथा हिलगाने की कला जानता है। उन्हें भी अपने इस सुस्त मेज़बान की शांत तथा कोमल, लेकिन चौकस नज़र के नीचे उसके शराबख़ाने में समय बिताना बड़ा अच्छा मालूम होता है। वह काफ़ी सूझ-बूझ का धनी है, भू-स्वामियों, किसानों और शहरियों के जीवन की परिस्थितियों की पूर्ण समझ रखता है। कठिन मामलों में, अगर वह चाहे तो, ढंग की सलाह दे सकता है, लेकिन, एक चौकस तथा स्वार्थी आदमी की भांति, अलग रहना ही पसन्द करता है, और अधिक से अधिक—सो भी केवल

अपने घनिष्टतम गाहकों के लिए—उड़ते इशारों से, जैसे अनजाने और अनायास ही, उन्हें ठीक रास्ते के बारे में सुझाता है। रूसियों के लिए दिलचस्पी या महत्त्व की हर चीज़ की जानकारी रखता है—घोड़ों और मवेशियों की, इमारती लकड़ी और ईंटों की, मिट्टी के बरतनों, कपड़ों, चमड़े तथा नाच और गानों की। जब उसके यहां गाहक नहीं होते तो वह, आम तौर से, अपनी झोंपड़ी के द्वार के सामने धरती पर बोरे की भांति बैठा रहता है, दुबली-पतली टांगों को अपने बदन के नीचे समेटे, हर राह-चलते से अभिवादन के मीठे बोल बोलता रहता है। अपने जीवन में उसने बहुत कुछ देखा है। पचीसियों छोटे कुलीन, जो उसके यहां वोद्का लेने आया करते थे, उसके देखते-देखते रुख़सत हो गये। सौ मील के एटे-पेटे में हर चीज़ की उसे ख़बर रहती है, लेकिन किसी के भेद नहीं बताता और कभी आभास तक नहीं देता कि वह उन चीज़ों को भी जानता है जिनका अत्यन्त चतुर पुलिस अफ़सर तक गुमान नहीं कर सकते। वह अपना भेद छिपाये रखता है, हंसता है, और अपने गिलास को खनकाता रहता है। उसके पड़ोसी उसका आदर करते हैं। ग़ैर फ़ौजी जेनरल—श्चेरेपेतेन्को ज़िले के भू-स्वामियों में जिसका दर्जा सबसे ऊंचा है—जब कभी उसकी छोटी झोंपड़ी के पास से गुज़रता है तो दयालुतापूर्ण अन्दाज़ से सिर हिलाकर उसका अभिवादन करता है। निकोलाई इवानिच असर-रसूख़वाला आदमी है। घोड़ों का एक नामी चोर था। उसने निकोलाई इवानिच के एक मित्र के अस्तबल से घोड़ा चुरा लिया। निकोलाई इवानिच के असर से वह घोड़ा वापिस आ गया। पास के एक गांव के किसानों ने जब किसी कारिन्दे को अपने ऊपर मानने से इन्कार कर दिया था, तो उसने उनके होश ठिकाने लगा दिये, आदि आदि। लेकिन यह समझना ग़लत होगा कि यह सब वह अपनी न्यायप्रियता की वजह से, पड़ोसी के प्रति अपने आदर-भाव की वजह से, करता है—नहीं! वह तो केवल हर उस चीज़ को जो, किसी भी रूप में, उसके आराम और आसाइश में ख़लल डाल सकती

हैं, रोकने का प्रयत्न करता है। निकोलाई इवानिच विवाहित है, और उसके बाल-बच्चे हैं। उसकी घरवाली चपल और चुस्त, पैनी नाक और पैनी नज़रवाली शहरी औरत है। इधर कुछ सालों से, अपने पति की भांति, वह भी मोटा गयी है। वह हर चीज़ के लिए उसपर निर्भर रहता है। कैश-बक्स की कुंजी उसी के पास रहती है। नशे में उत्पात करनेवाले उससे डरते हैं। वह उन्हें पसन्द नहीं करती। पल्ले उनसे कुछ पड़ता नहीं, और दुनिया-भर का शोर वे मचाते हैं। पीने पर भी अपनी ज़बान और शालीनता को क़ायम रखनेवाले उसे अच्छे लगते हैं। निकोलाई इवानिच के बच्चे अभी छोटे हैं। पहले सब मर गये। लेकिन जो बचे हैं, वे अपने माता-पिता पर पड़े हैं। उनके छोटे-छोटे स्वस्थ तथा समझदार चेहरे बड़े प्यारे लगते हैं।

जुलाई का महीना था। असह्य गर्मी पड़ रही थी। तभी, एक दिन, अपने पांवों को जैसे-तैसे घसीटता, कोलोतोवका की खाई के किनारे किनारे, अपने कुत्ते के साथ मैं 'स्वागत-गृह' की ओर बढ़ रहा था। सूरज, जैसा कि कहते हैं, क्रोधोन्मत्त, आकाश से आग बरसा रहा था और निर्ममता के साथ धरती को भून रहा था। हवा में दमघोट धूल भरी थी। चमकीले कौवे अपनी चोंचों को फाड़े, उदासी के साथ राह-चलतों की ओर ताक रहे थे, जैसे रहम की भीख मांग रहे हों। केवल गौरैये उदास नहीं थे, बल्कि अपने परों को फैलाये, और दिनों से भी अधिक जोश के साथ, चहक रहे थे, बाड़ों पर झगड़ते, धूल भरी सड़क पर से एक साथ उड़ते और सन के हरे खेतों के ऊपर भूरे बादलों के रूप में मंडराने लगते। प्यास के मारे मेरा बुरा हाल था। आसपास में पानी का कुछ पता नहीं था। कोलोतोवका में, और इसी प्रकार स्तेप के अन्य कतिपय गांवों में भी लोग जोहड़ में से एक तरह की पतली कीचड़ पीते हैं। कारण, न तो वहां झरने हैं, न कुवें। और इस घिनौने पेय को भला पानी कौन कहेगा? सो एक गिलास बीयर या क्वास पीने की आशा में मैं निकोलाई इवानिच की ओर बढ़ रहा था।

यों तो साल के बारहों महीने — और यह मानना पड़ेगा —कोलोतोवका कभी भी कोई बहुत आकर्षक स्थल नहीं मालूम होता, लेकिन उस समय तो वह ख़ास तौर से उदास मालूम होता है जब जुलाई के चौंधिया देनेवाले सूरज की निर्मम किरनें आग बरसाती हैं। गहरी खाई और घरों की भूरी लड़खड़ाती छतों पर, और झुलसी धूल भरी चरागाह पर क्षीणकाय तथा लम्बी टांगों वाली मुर्गियां निराश भटकती नज़र आती हैं। पुरानी गढ़ी के अवशेषों पर जिसका अब केवल खोखला, एस्प लकड़ी का भूरा ढांचा-भर बाक़ी रह गया है और खिड़कियों की जगह छेद नज़र आते हैं। उसके इर्द-गिर्द बिछुआ, चिरायता और जंगली घास बुरी तरह उग आयी है और जोहड़ काला पड़ गया है। हंसों के परों से छितरा हुआ, किनारों पर अधसूखी कीचड़ जमी हुई है, और उसका टूटा-फूटा-सा बांध जिसके निकट, पांवों से महीन रौंदी हुई राख जैसी धरती के ऊपर भेड़ें, गरमी के मारे बेदम और हांफती, नाचारगी में एक-दूसरे से सटी खड़ी रहती हैं, ऊब से थकीं और अपने सिरों को लटकाये जैसे इस असह्य गर्मी के आखिर ख़त्म होने की प्रतीक्षा कर रही हों। थककर चूर पांवों को घसीटता मैं निकोलाई इवानिच के घर के निकट पहुंचा। गांव के लड़कों के लिए मैं जैसे एक अजूबा था। जैसा कि होता है, बेमतलब और एकटक नज़र से वे मुझे ताकते रहे। और कुत्तों ने, अपना क्षोभ प्रकट करते हुए, गला फाड़कर और इतने ज़ोरों से भौंकना शुरू किया कि लगता था जैसे उनकी आंतें ही निकल जायेंगी — यहां तक कि वे बेदम होकर हांफने लगे। तभी, अचानक, शराबख़ाने के दरवाज़े में एक आदमी प्रकट हुआ — लम्बा क़द, नंगा सिर, ग्रेटकोट पहने जो कमर के नीचे एक नीले कमरबंद से कसा था। वह गृह-दास-सा मालूम होता था। उसके मुरझाये हुए, झुर्रियोंदार चेहरे के ऊपर घने सफ़ेद बाल अस्तव्यस्त खड़े थे। अपनी बांहों से — जो प्रत्यक्षतः ज़रूरत से ज़्यादा हिल रही थीं — वह किसी को इशारे करके पुकार रहा था। साफ़ मालूम होता था कि वह पिये हुए है।

"अरे, आओ, चले आओ!" लड़खड़ाती आवाज़ में उसने कहा, अपनी घनी भौंहों को मुश्किल से चढ़ाते हुए, "अरे आओ, जल्दी आओ, झपकौआ! ओह, भाई, तुम भी क्या चींटी चाल से रेंग रहे हो, सच! ग़ज़ब करते हो, भाई, ग़ज़ब! वे भीतर तुम्हारा इन्तज़ार कर रहे हैं, और तुम अभी रेंग ही रहे हो। आओ, जल्दी आओ।"

"अच्छा अच्छा, आया, अभी आया!" फटी-सी आवाज़ आयी और झोंपड़ी के पीछे से एक टुइयां-सा आदमी प्रकट हुआ – नाटा क़द, मोटा, थलथल, लंगड़ा। वह अपेक्षाकृत साफ़-सुथरा ऊनी कोट एक ही आस्तीन से लटकाये था और सिर पर एक ऊंची नोकदार टोपी लगाये था जो नीचे भौंहों तक खिंची थी। इससे उसका गोल गावदुम चेहरा बड़ा चण्ड और हास्यजनक मालूम होता था। उसकी छोटी छोटी पीली आंखें बेचैनी से इधर-उधर घूम रही थीं और उसके पतले होंठ बराबर एक बाधित मुसकान धारण किये थे। उसकी पैनी और लम्बी नाक, पतवार की भांति, निर्लज्ज अन्दाज़ में आगे को बढ़ी हुई थी। "आया, भाई, आया।" लंगड़ाता हुआ वह शराबख़ाने की ओर बढ़ा। "मुझे किस लिए पुकार रहे हो? कौन मेरी इन्तज़ार कर रहा है?"

"मैं क्यों तुम्हें पुकार रहा हूं?" ग्रेटकोट पहने आदमी ने ताने के लहजे में कहा। "तुम भी अजीब जीव हो, झपकौआ! हम तुम्हें शराबख़ाने में आने के लिए पुकार रहे हैं, और तुम पूछते हो कि क्यों पुकार रहे हो? यहां भले लोग सब के सब, तुम्हारी बाट देख रहे हैं – याकोव-तुर्क, और बन-मास्टर और जीज़्द्रा का ठेकेदार। याश्का ने ठेकेदार के साथ बाज़ी बदी है, एक कुल्हड़ बीयर का, जो एक नम्बर रहेगा, जो सबसे अच्छा गायेगा ... समझे?"

"क्या याश्का गाने जा रहा है?" झपकौआ के नाम से सम्बोधित आदमी ने सजग दिलचस्पी के साथ कहा। "लेकिन कहीं यह तुम हवाई तो नहीं चला रहे हो, बकबक?"

"मैं बकवास नहीं कर रहा," बकबक ने गर्व के साथ कहा, "बकवास तो तुम करते हो। जब बाज़ी लगी है तो सोचना चाहिए कि वह गायेगा। कुछ आया समझ में मेरे बेनज़ीर बुद्धू, गोबर दिमाग़, झपकौए!"

"अच्छा अच्छा, तो चलो, भीतर चलें, मेरे भोले!" झपकौवे ने पलटकर कहा।

"इसी बात पर कम से कम एक चुम्मा तो दो प्यारे!" अपनी बांहों को चौड़ा फैलाते हुए बकबक ने कहा।

"दूर हो, बड़ा आया है प्यार करनेवाला!" अपनी कोहनी से उसे धकियाते हुए झपकौवे ने घृणा से कहा, और दोनों ने झुककर नीचे दरवाज़े में प्रवेश किया।

उनकी बातचीत ने, जो मुझे अनायास ही सुनाई पड़ गयी थी, मेरी उत्सुकता को बेहद जगा दिया। याकोव-तुर्क के बारे में एक से अधिक बार मैं सुन चुका था कि वह इधर के इलाक़े में सबसे अच्छा गायक है, और अब अचानक उसे सुनने का—सो भी कला के एक अन्य माहिर के साथ प्रतियोगिता में—अवसर मेरे सामने प्रस्तुत था। मैंने अपने क़दम तेज़ किये और घर के भीतर पहुंच गया।

हमारे पाठकों में सम्भवतः बहुत ही कम ऐसे होंगे जिन्हें गांव के किसी शराबख़ाने को देखने का मौक़ा मिला हो, लेकिन हम शिकारी लोग सभी जगह पहुंच जाते हैं! उनकी बनावट बहुत ही सीधी-सादी होती है। उनमें आम तौर से एक अंधियारा दालान और एक भीतरी कमरा होता है जो बीच की दीवार द्वारा दो हिस्सों में बंटा होता है। पीछेवाले हिस्से में किसी गाहक को जाने का अधिकार नहीं होता। बीच की दीवार में, बलूत की एक चौड़ी मेज़ के ऊपरवाले हिस्से में, एक चौड़ा छेद कटा है। इस मेज या काउंटर पर शराब बेची जाती है। छेद के ठीक सामने खानों में विभिन्न आकार की बंद बोतलें सजी हैं। कमरे के अगले

हिस्से में, जो गाहकों के काम आता है, बेंचें, दो या तीन खाली पीपे और एक कोने में मेज़ रखी है। गांव के शराबख़ाने ज़्यादातर अंधियारे होते हैं, और उनकी दीवारों पर रंग-बिरंगे सस्ते चित्र कम देखने में आते हैं जोकि गांव के घरों में ज़रूर लगे होते हैं।

जब मैं 'स्वागत-गृह' के भीतर पहुंचा तो वहां काफ़ी बड़ी मण्डली जमा थी।

काउंटर के पीछे अपनी उसी जगह पर, बीच की दीवार के छेद को क़रीब क़रीब पूरी तरह ढके हुए, धारीदार छींट की क़मीज़ पहने निकोलाई इवानिच खड़ा था। अपने मोटे गालों वाले चेहरे पर अलस मुसकान के साथ झपकौआ और बकबक के लिए—उस समय जब कि वे भीतर दाख़िल हुए—अपने मोटे थलथल गोरे हाथ से दो गिलासों में वोद्का ढाल रहा था। उसके पीछे, खिड़की के निकट एक कोने में, पैनी नज़रवाली उसकी पत्नी नज़र आती थी। कमरे के बीचोंबीच याकोव-तुर्क खड़ा था—तेईसेक वर्ष की आयु, दुबला-पतला और सुडौल। वह नीले नानकिन का लम्बे पल्लेवाला कोट पहने था। देखने में एक चुस्त-चपल फ़ैक्टरी-मज़दूर मालूम होता था और आकार-प्रकार से वह कुछ ज़्यादा अच्छे स्वास्थ्य का धनी नहीं जान पड़ता था। उसके धंसे हुए गाल, उसकी बड़ी बड़ी बेचैन-सी भूरी आंखें, सीधी-सतर नाक और कोमल गतिशील नथुने, उसके पीत-सुनहरे घुंघराले बाल जो गोरे-चिट्टे ढलुवां माथे के ऊपर पीछे की ओर उलटकर संवारे हुए थे, उसके भरे हुए किन्तु सुन्दर, भावपूर्ण होंठ और उसका समूचा चेहरा अनुराग भरी तथा संवेदनशील प्रकृति का सूचक था। वह काफ़ी विह्वल मालूम होता था। वह अपनी आंखें टिमटिमा रहा था, उसकी सांस ताबड़तोड़ चल रही थी, उसके हाथ थरथरा रहे थे, जैसे उसे बुख़ार चढ़ा हो, और सचमुच उसे बुख़ार चढ़ा भी था—विह्वलता का आकस्मिक बुख़ार जिससे वे सभी अच्छी तरह परिचित हैं जो श्रोताओं के सामने बोलने या गाने के लिए खड़े होते

हैं। उसके निकट चालीसेक साल का एक और आदमी खड़ा था—चौड़े कंधे और चौड़ी कपोलास्थि, संकरा माथा, संकरी तातार आंखें, छोटी चपटी नाक, चौरस ठोड़ी और चमकीले काले बाल, सुअर के बालों की भांति कड़े। सांवले, सीसे जैसा रंग लिये, उसके चेहरे और ख़ास तौर से पीले होंठों का भाव, अगर वह इतना थिर और स्वप्निल न होता, तो निरा बनैला बनकर रह जाता। वह अपना एक पुट्ठा तक नहीं हिला रहा था, जुए में जुते बैल की भांति धीमे अन्दाज़ में बस अपने इर्द-गिर्द ताक रहा था। चिकने तांबे के बटन लगा फ़ॉक-कोट-सा कुछ वह पहने था जो नया क़तई नहीं था, और अपनी भारी-भरकम गरदन के इर्द-गिर्द काले रेशम का एक पुराना रूमाल लपेटे था। उसे लोग बन-मास्टर कह रहे थे। उसके ठीक सामने, देव-प्रतिमाओं के नीचे एक बेंच पर, याश्का का प्रतिद्वन्दी, जीज़्द्रा का ठेकेदार बैठा था। तीसेक वर्ष का आदमी, नाटा क़द, मज़बूत काठी, चेचक मुंहदाग़, घुंघराले बाल, टुंटी, ऊपर को उठी नाक, सजीव भूरी आंखें और खसरा दाढ़ी। वह पैनी नज़र से इधर-उधर देख रहा था, हाथों को अपने नीचे दाबे था, टांगों को लापर्वाही से हिला रहा था और पांवों को—जो किनारोंदार तर्जदार बड़े बूटों से लैस थे—थपथपा रहा था। मख़मली कालर से युक्त भूरे ऊनी कपड़े का एक नया झिनझिना कोट वह पहने था। इसके नीचे एक लाल क़मीज़ नज़र आती थी जिसके बटन गले से सटकर बंद थे, और जिसका रंग कोट के अनुपात में, और भी ज़्यादा चटक मालूम होता था। सामने के कोने में, दरवाज़े के दाहिनी ओर, मेज़ पर एक किसान बैठा था—एक तंग फटा झगला पहने जो कंधे पर फटा हुआ था। दो छोटी छोटी खिड़कियों के धूल से अटे पल्लों में से सूरज की रोशनी की एक पतली पीतवर्ण धारा भीतर पड़ रही थी, बल्कि कहिये कि कमरे के चिर-निवासी अंधकार से निष्फल संघर्ष कर रही थी। कमरे की हर चीज़ धुंधली नज़र आती थी, जैसे आंशिक रोशनी के धब्बे छितरे हों। लेकिन, दूसरी ओर,

कमरा बहुत कुछ ठंडा मालूम होता था और चौखट को लांघते ही दमघोट गर्मी इस तरह जाती रही जैसे सिर पर से थका देनेवाला बोझ उतार लिया गया हो।

मेरा प्रवेश – और यह मैं साफ़ देख सकता था – निकोलाई इवानिच के गाहकों को पहले-पहल कुछ अखरा, लेकिन यह देखकर कि वह मित्र की भांति मेरा अभिवादन कर रहा है, वे आश्वस्त हो गये और इसके बाद जैसे मुझे भूल गये। मैंने थोड़ी बीयर की फ़रमाइश की और एक कोने में बैठ गया, उस किसान के पास जो फटा हुआ झगला पहने था।

"हां तो," बकबक ने सुरदार आवाज़ में कहा, शराब के अपने गिलास को एक ही घूंट में यकायक अपने गले में उंडेलते तथा अपने उद्गार के साथ हाथों को अजीब अन्दाज़ में हिलाते हुए – जिसके बिना उसके लिए एक भी शब्द जुबान पर लाना सम्भव नहीं मालूम होता था – "अब क्या देर है? जब शुरू ही करना है तो कर डालो। हां तो, याश्का!"

"हां, हो जाय, शुरू हो जाय!" निकोलाई इवानिच ने भी उछाह से सुर में सुर मिलाया।

"बेशक, शुरू हो जाय," आत्मविश्वास से भरी मुसकान के साथ ठेकेदार ने थिर भाव से कहा, "मैं तैयार हूं।"

"और मैं भी तैयार हूं," विह्वलता से उमगती आवाज़ में याश्का ने घोषणा की।

"अच्छा तो शुरू करो," झपकौआ चिचियाया।

लेकिन, सर्वसम्मति से व्यक्त इस इच्छा के बावजूद, दोनों में से एक ने भी शुरू नहीं किया। ठेकेदार तो अपनी बेंच से उठा तक नहीं। लगता था जैसे वे किसी चीज़ की प्रतीक्षा में हों।

"शुरू करो!" तेज़ी के साथ और मुंह फुलाकर बन-मास्टर ने कहा।

याकोव चौंक पड़ा। ठेकेदार उठा, अपनी पेटी को ठीक किया और गले को साफ़ किया।

"लेकिन शुरू कौन करे?" बन-मास्टर से, थोड़े बदले हुए लहजे में, उसने पूछा। बन-मास्टर कमरे के बीचोंबीच अभी भी वैसे ही निश्चल खड़ा था, अपनी ज़बर टांगों को चौड़ा फैलाये और अपनी सबल बांहों को लगभग कोहनी तक शलवार की जेबों में खोंसे।

"तुम, बिलाशक तुम," बकबक ने हकलाते हुए ठेकेदार से कहा, "समझे भाई, तुम!"

बन-मास्टर ने भौंहों के नीचे से उसकी ओर ताका। बकबक ने एक हल्की-सी चीं की, अचकचाकर छत की ओर देखा, अपने कंधों को बिचकाया, और इसके बाद कुछ नहीं बोला।

"चित्त-पट्ट कर लो," बन-मास्टर ने दो-टूक आवाज़ में घोषित किया। "और बोयर के कुल्हड़ को मेज़ पर रखो!"

निकोलाई इवानिच नीचे की ओर झुका, हांफकर फ़र्श पर से बीयर का कुल्हड़ उठाया और उसे मेज़ पर जमा दिया।

बन-मास्टर ने याकोव की ओर देखा, और कहा—"हां तो!"

याकोव ने अपनी जेव को टटोला, एक कोपेक निकाला, अपने दांतों से उसपर निशान लगाया। ठेकेदार ने अपने लम्बे कोट के घेरे के भीतर से चमड़े का एक नया बटुवा निकाला, धीरे धीरे उसकी डोरी खोली, उसे हिलाकर अपनी हथेली पर ज़्यादा रेज़गारी बाहर निकाली, और एक नया कोपेक चुनकर उठा लिया। बकबक ने अपनी मैली टोपी आगे बढ़ायी जिसकी कलगी टूटी थी और अलग लटक आयी थी। याकोव ने अपना सिक्का उसमें डाल दिया, और ठेकेदार ने अपना।

"देखो, एक ही उठाना," बन-मास्टर ने झपकौवे से कहा।

झपकौआ आत्मतुष्टि से मुसकराया, दोनों हाथों में टोपी को उसने थामा, और उसे हिलाने लगा।

एकाएक गहरा सन्नाटा छा गया। सिक्के, एक-दूसरे से टकराकर, धीमी आवाज़ में खनक रहे थे। मैंने ध्यान से अपने इर्द-गिर्द देखा। हर चेहरे पर गहरी उत्सुकता का भाव छाया था। ख़ुद बन-मास्टर तक में व्यग्रता के चिन्ह प्रकट हो रहे थे। यहां तक कि मेरा पड़ोसी किसान भी, जो फटा हुआ झगला पहने था, उत्सुकता से अपनी गरदन को आगे की ओर खींचे था। झपकौवे ने टोपी के भीतर अपना हाथ डाला और ठेकेदार का सिक्का उसने निकाला। हरेक ने एक लम्बी सांस भरी। याकोव का चेहरा गुलाबी हो उठा, और ठेकेदार ने अपने बालों पर हाथ फेरा।

"देखा, मैंने तो पहले ही कहा था कि तुम शुरू करो," बकबक चहका, "क्यों, कहा था न?"

"बस, बस!" बन-मास्टर ने घिनाकर कहा। फिर ठेकेदार की ओर सिर से इशारा करते हुए, "हां तो शुरू करो!"

"कौनसा गीत शुरू करूं?" ठेकेदार ने पूछा, थोड़ा घबराहट का अनुभव करते हुए।

"जो तुम्हें पसन्द हो," झपकौवे ने जवाब दिया, "जो भी तुम चुनो।"

"बेशक, जो तुम चुनो," सीने पर जुड़े अपने हाथों को धीरे धीरे बग़लों के नीचे दबाते हुए निकोलाई इवानिच ने स्वर में स्वर मिलाया। "तुम्हें इसकी पूरी छूट है। जो चाहो गाओ, शर्त यही है कि बढ़िया गाना, और हमारा जो सही फ़ैसला होगा, वह हम बाद में देंगे।"

"सही फ़ैसला, बिलकुल ठीक!" अपने ख़ाली गिलास को चाटते हुए बकबक ने कहा।

"अच्छा तो साथियो, ज़रा मुझे अपना गला साफ़ कर लेने दो," अपने कोट के कालर में उंगली घुमाते हुए ठेकेदार ने कहा।

"बस, बस, ज्यादा नखरे न दिखाओ, शुरू कर दो!" बन-मास्टर ने कहा और नीचे की ओर देखने लगा।

ठेकेदार ने एक क्षण कुछ सोचा, फिर अपने सिर को झटका दिया, और आगे आ गया। याकोव की आंखें उसपर चिपकी थीं।

लेकिन इससे पहले कि मैं ख़ुद प्रतियोगिता का वर्णन करना शुरू करूं, मेरी समझ में यह कुछ बेजा न होगा कि मैं अपनी कहानी में हिस्सा लेनेवाले पात्रों में से प्रत्येक के बारे में दो-चार शब्द कह दूं। इनमें से कुछ के जीवन से तो मैं उन्हें 'स्वागत-गृह' में देखने से पहले ही परिचित था। अन्य के बारे में मुझे कुछ तथ्य बाद में मालूम हुए।

तो बकबक से हम शुरू करें। इस आदमी का असली नाम येवग्राफ़ इवानोव था, लेकिन आसपास के तमाम लोग सिवा बकबक अन्य किसी नाम से उसे नहीं पुकारते थे। और वह ख़ुद भी इसी उपनाम से अपना उल्लेख करता था, इतनी अच्छी तरह से यह नाम उसके साथ चसपां हो गया था। और सचमुच, उसकी नगण्य, सदा बेचैन शकल-सूरत को देखते हुए इससे अधिक उपयुक्त नाम उसके लिए और कोई हो भी नहीं सकता था। वह एक निश्चिंत अन-ब्याहा गृह-दास था, जिसे ख़ुद उसके मालिकों ने एक मुद्दत हुई निकाल बाहर किया था और जो बिना किसी काम-धंधे के, बिना एक कोपेक भी कमाये, दूसरे लोगों के ख़र्च पर प्रतिदिन नशे में धुत्त होने की जुगत भिड़ाना जानता था। उसके जान-पहचानियों की संख्या काफ़ी बड़ी थी जो शराब और चाय से उसकी ख़ातिर करते थे, हालांकि यह वे ख़ुद नहीं बता सकते थे कि वे ऐसा क्यों करते हैं। कारण, मण्डली का मनोरंजन करना तो दूर, अपनी बेमानी बकबक से, अपनी असह्य घनिष्टता से, अपने अनियंत्रित अंग-संचालन तथा कभी न रुकनेवाली अस्वाभाविक हंसी से सबको ऊबा देता था। न वह गा सकता था, न नाच सकता था। अपने जीवन में उसने कभी कोई दक्षतापूर्ण या तुक की बात नहीं कही थी। वह केवल बकबक करता था, हर चीज़ के बारे में झूठ बोलता था। वह पूरा बकबक था। फिर भी, बीस-पच्चीस मील के ऐटे-पेटे में एक भी दारू-पार्टी ऐसी

नहीं हुई जिसमें मेहमानों के बीच, अपने पतले-लम्बे आकार के साथ वह न मौजूद हो। यहां तक कि उसके वे अब आदी हो गये थे, और एक अनिवार्य बुराई के रूप में उसे सहन कर लेते थे। वे सब के सब– यह सच है–उसे नीची नज़र से देखते थे। लेकिन उनमें केवल बन-मास्टर ही एक ऐसा था जो उसकी मूर्खतापूर्ण बकबक को क़ाबू में रखना जानता था।

झपकौवे में और बकबक में ज़रा भी समानता नहीं थी। उसका उपनाम भी उसपर लागू होता था, हालांकि वह अन्य लोगों की अपेक्षा अपनी आंखों को कुछ ज़्यादा नहीं टिमटिमाता था। यह एक जानी-मानी बात है कि रूसी लोग अच्छे उपनाम देने में माहिर होते हैं। बावजूद इसके कि इस आदमी के अतीत के बारे में विस्तार से जानने की मैंने कोशिश की, फिर भी उसके जीवन के कितने ही स्थल मेरे लिए–और शायद अन्य कितने ही लोगों के लिए भी–बराबर अंधकार के धब्बे बने हुए हैं। उसके जीवन की घटनाएं–जैसा किताबवाले कहते हैं–विस्मृति के गर्त में खोयी हैं। मैं केवल इतना ही जान सका कि वह कभी एक सन्तानहीन वृद्धा मालकिन के यहां कोचवान के रूप में नौकरी करता था, और तीन घोड़ों के साथ–जो उसकी देख-रेख में थे–नौ-दो-ग्यारह हो गया था। पूरे एक साल तक वह ग़ायब रहा और, इसमें शक नहीं, कि आवारा जीवन की त्रुटियों तथा कठिनाइयों के अनुभव से उसने कान पकड़े और वह लौटकर फिर वहीं पहुंचा। परन्तु तब वह पंगु हो चुका था। अपनी मालकिन के पांवों पर जा गिरा। अपने अनुकरण-योग्य व्यवहार से, कुछ ही सालों में, उसने अपने अपराध को धो दिया और धीरे धीरे अपनी मालकिन की नज़रों में ऊंचा उठा और उसका पूर्ण विश्वास प्राप्त करते हुए अन्त में कारिन्दे के पद पर पहुंच गया। इसके बाद अपनी मालकिन की मृत्यु हो जाने पर–कैसे, यह कभी नहीं मालूम हो सका–उसे कम्मीगिरी से आज़ादी मिली। उसने

ग्रब शहरियों की श्रेणी में पांव रखा, पड़ोसियों से लगान पर साग-भाजी की कुछ क्यारियां लीं, धन कमाया ग्रौर ग्रब ग्रमन-चैन से दिन बिता रहा था। वह ग्रनुभवी ग्रादमी था। माल काटना जानता था। भलाई या बुराई की भावना से ग्रधिक जिसमें ग्रपना फ़ायदा देखता था वही करता था। उसने काफ़ी पापड़ बेले थे। वह लोगों को समझता ग्रौर उनसे ग्रपना काम निकालना जानता था। वह लोमड़ी की भांति चौकस था, ग्रौर साथ ही उसमें व्यावहारिक सूझ भी थी। हालांकि खुर्राट स्त्रियों की भांति कानाफूसी में वह रस लेता था, फिर भी वह ग्रपना भेद कभी नहीं प्रकट होने देता था, जबकि ग्रन्य लोगों से वह सभी कुछ उगलवा लेता था। भोला बनने या दिखने का वह कभी प्रयत्न नहीं करता था, जैसा कि उस जैसे चालाक लोग ज़्यादातर करते हैं। साथ ही ऐसा करना उसके लिए कठिन था। उस जैसी छोटी छोटी ग्रांखें—काइयां पटबीजनों से ग्रधिक पैनी ग्रौर भीतर तक पैठ जानेवाली ग्रांखें मैंने कभी नहीं देखीं। वे कभी देखती मात्र नहीं थीं, बल्कि उलटती-पुलटती ग्रौर कोना कोना छानती मालूम होती थीं, जैसे कुछ भी उनसे छिपा नहीं रह सकता। कभी, प्रत्यक्षतः किसी मामूली बात को लेकर, एक साथ कई कई हफ़्ते तक वह सोचता रहता, ग्रौर फिर कभी ग्रचानक जोखिम में कूदने का निश्चय कर लेता, लगता जैसे वह ग्रपने को नष्ट ही कर डालेगा। लेकिन फिर सब कुछ ठीक होता नज़र ग्राता, ग्रौर हर चीज़ क़ायदे से चलने लगती। भाग्य का वह सिकन्दर था, ग्रपनी तक़दीर में वह विश्वास करता था, ग्रौर शगुनों-ग्रपशगुनों को मानता था। मोटे तौर से वह बेहद ग्रंधविश्वासी था। उसे लोग बहुत पसन्द नहीं करते थे, क्योंकि वह किसी से कोई ख़ास लगाव नहीं रखता था, लेकिन लोग उसकी इज़्ज़त करते थे। परिवार के नाम, ले-देकर, उसका एक छोटा लड़का था जिसे वह जी-जान से चाहता था ग्रौर जो, ऐसे पिता के हाथों पलकर, दुनिया में ग्रपनी जगह बनाने की सहज ही ग्राशा

कर सकता था। "छोटा झपकौआ बिल्कुल अपने बाप जैसा निकलेगा," बड़े बूढ़े इसके बारे में अभी से कहते हैं, दबे स्वरों में, उस समय जबकि गर्मियों में, सांझ के समय, कच्ची मिट्टी की अपनी मुंडेरों पर बैठकर वे गपशप करते हैं, और उनमें हरेक इसका आशय समझता है। कुछ और कहने की ज़रूरत नहीं।

याकोव-तुर्क और ठेकेदार का जहां तक संबंध है, सो उनके बारे में ज़्यादा कहने की आवश्यकता नहीं। याकोव का उपनाम तुर्क इसलिए पड़ा कि वह सचमुच एक तुर्की स्त्री के रक्त से पैदा हुआ था, जो युद्ध में बन्दी बन गयी थी। प्रकृति से वह कलाकार था, हर मानी में, पेशे से काग़ज़ बनाने के एक कारख़ाने में लेडलर का काम करता था। कोई सौदागर इस कारख़ाने का मालिक था। जहां तक ठेकेदार का संबंध है, सो उसकी क़िस्मत के बारे में—मुझे स्वीकार करना चाहिए—मैं कुछ नहीं जानता। वह मुझे एक चपल शहरी-सा लगा, हर चीज़ पर हाथ आज़माने के लिए प्रस्तुत। लेकिन बन-मास्टर—सो उसका वर्णन अधिक विस्तार से करने की ज़रूरत है।

इस आदमी को देखते ही पहली छाप जो आपके हृदय पर पड़ेगी, उससे एक अनगढ़, बोझिल और दुर्दमनीय शक्ति का बोध आपको होगा। उसका ढांचा बहुत ही अटपटा बना था—एक ही खण्ड का बना हुआ, जैसा हमारे यहां लोग कहते हैं। लेकिन वह अपने इर्द-गिर्द एक विजयी तेज का प्रसार करता मालूम होता था, और—भले ही यह अजीब मालूम हो—उसके इस भालू-से आकार-प्रकार में भी एक तरह की कमनीयता थी जो, सम्भवतः अपनी शक्ति में उसके दृढ़ विश्वास से प्रस्फुटित हुई थी। एकाएक यह निश्चय करना कठिन था कि किस श्रेणी से इस देव का संबंध है। न तो वह गृह-दास मालूम होता था, न शहरी दिखता था, न काम से अलग हुआ फटेहाल क्लर्क, न छोटा दीवालिया कुलीन जो, कुछ न रहने पर शिकारिया या झगड़ालू का धंधा शुरू कर देता

है। सच पूछो तो वह एकदम निराला था। कहां से वह आया है या किस चीज़ ने उसे हमारे ज़िले में बसने के लिए प्रेरित किया है, यह कोई नहीं जानता। लोगों का कहना है कि वह माफ़ीदारों की जाति का है, और यह कि बीते ज़माने में वह कहीं सरकारी नौकरी करता था। लेकिन इस बारे में निश्चय के साथ कुछ नहीं कहा जा सकता। और बिलाशक ऐसा कोई नहीं था जिससे कुछ मालूम किया जा सकता —ख़ुद उससे तो बिल्कुल ही नहीं। वह बेहद चुप रहनेवाला और उदास स्वभाव का आदमी था। और तो और, यह निश्चय से कोई नहीं जानता था कि वह गुज़र कैसे करता था। वह कोई धंधा नहीं करता था, किसी के पास आता-जाता नहीं था। शायद ही किसी से उसकी घनिष्टता या मेल-मिलाप हो। फिर भी ख़र्च करने के लिए उसके पास पैसा था। यह सच है कि अधिक नहीं, फिर भी कुछ तो था ही। रब्त-ज़ब्त में, अपने व्यवहार में, वह एकदम विनम्र हो, ऐसा नहीं था। न! विनम्र शब्द उसके लिए नहीं इस्तेमाल किया जा सकता। वह इस तरह रहता था जैसे अपने आसपास के लोगों से बेख़बर हो। और वह किसी की पर्वाह भी नहीं करता था। बन-मास्टर (यही उपनाम लोगों ने उसका रख छोड़ा था, यों उसका असली नाम पेरेव्लेसोव था) समूचे ज़िले में उसका भारी रोब था। बड़ी तत्परता के साथ लोग उसका कहना मानते थे, हालांकि किसी को हुक्म देने का उसे कोई अधिकार नहीं था, न ही वह ख़ुद कभी लोगों पर—जिनसे मिलने का उसे इत्तफ़ाक़ होता था—अपना अधिकार जताने का ज़रा भी प्रयत्न करता था। वह जो कहता—वे मानते। शक्ति का भी सदा अपना एक प्रभाव होता है। वह दारू को मुश्किल से ही कभी मुंह से लगाता था, स्त्रियों से कोई वास्ता नहीं रखता था, और गाने का बेहद शौक़ीन था। बहुत कुछ उसमें रहस्यमय था। ऐसा मालूम होता था जैसे व्यापक शक्तियां, विक्षोभ से भरी, उसके भीतर बसेरा डाले हैं। ऐसा लगता जैसे एक बार जाग्रत हो जाने

पर, फूट पड़ने का मौक़ा मिलने पर, ये शक्तियां उसे और उसके सम्पर्क में आनेवाली हर चीज़ को नष्ट-भ्रष्ट कर डालेंगी। मैं यह समझता हूं कि इस आदमी के जीवन में ऐसा कोई विस्फोट हो चुका है, और अपने उस अनुभव से सबक़ लेकर ही—नष्ट होने से बाल बाल बचने के बाद—वह अब अपने-आपको इतना कसकर अपनी मुट्ठी में रखता है। सबसे विचित्र बात मुझे यह लगी कि उसमें एक तरह की जन्मजात सहज-स्वाभाविक क्रूरता के साथ साथ उतने ही सहज-स्वाभाविक रूप में उदारता का भी मिश्रण था—एक ऐसा मिश्रण जो अन्य किसी आदमी में मुझे कभी दिखाई नहीं दिया।

हां तो ठेकेदार आगे बढ़ आया और अपनी आंखों को आधा मूंदते हुए अत्यन्त ऊंची आवाज़ में गाने लगा। काफ़ी मीठी और सुहावनी, हालांकि कुछ फटी हुई, उसकी आवाज़ थी। लवा-पक्षी की भांति—वैसी ही आवाज़ में—वह गा रहा था, निरन्तर मुरकियां लेते, आरोह-अवरोह के साथ स्वरों को उठाते-गिराते और हर बार सप्तम तक पहुंचाते हुए जहां वह, बड़ी सावधानी से, टिककर उसे और भी लम्बा खींचता था। इसके बाद वह उसे छोड़ देता, और अचानक फिर शुरू से स्वरों को पकड़ता, अद्‌भुत आवेग और उद्वेग के साथ। उसकी लयकारी कभी अपेक्षाकृत साहसिक रूप धारण कर लेती थी, और कभी अपेक्षाकृत हास्यपूर्ण। पारखी उसे सुनकर भारी सन्तोष प्रकट करते और जर्मन बुरी तरह खीज उठते। यह था रूसी tenore di grazia, ténor léger*। उसने बहुत ही सजीव नृत्य-धुन पर एक गीत गाया। अन्तहीन गलकारियों, तान और अलापों, उद्‌बोधनों तथा पुनरावृत्तियों के आल-जाल के बीच उसके जो थोड़े-बहुत बोल मैं पकड़ सका, वे इस प्रकार थे—

---

* सुरीली हल्की आवाज़।

जोतूंगी धरती,
बोऊंगी लाल लाल फूल!
बोऊंगी लाल लाल फूल!

वह गा रहा था। सब बहुत ही एकचित हो उसे सुन रहे थे। उसे भी जैसे इसका अनुभव प्रतीत होता था कि वास्तव में संगीतप्रिय लोगों की संगत में बैठा है, और अपनी तरफ़ से कोई कसर नहीं छोड़ रहा है। हमारे इलाक़े के लोग सचमुच में संगीतप्रेमी हैं। ओरेल राजमार्ग पर स्थित सेर्गियेव्रकोये गांव अपने सुस्वर सह-गान के लिए ठीक ही रूस के एक छोर से दूसरे छोर तक प्रसिद्ध है। ठेकेदार बहुत देर तक गाता रहा, लेकिन अपने श्रोताओं में किसी ख़ास उछाह का संचार नहीं कर सका। उसे सह-गान का संग प्राप्त नहीं था। लेकिन अन्त में, ख़ास तौर से आवेगपूर्ण आलाप के बाद, जिसे सुनकर बन-मास्टर तक के होंठ खिल गये, बकबक ख़ुशी से चीख़े बिना नहीं रह सका। सभी उछाह से लहरा उठे। बकबक और झपकौवे ने भी दबी आवाज़ में हाथ बढ़ाया और वाह वाह करने लगे – "भई ख़ूब, वाह! यह ले शैतान की दुम! गाये जा, सपोलिये! बांधे रह! फिर लड़खड़ाया, कुत्ते! हैरड तेरी आत्मा को जहन्नुम रसीद करे!" निकोलाई इवानिच काउंटर के पीछे मुग्ध भाव से इस बाज़ू से उस बाज़ू अपना सिर हिला रहा था। बकबक अन्ततः अपनी टांगों को झुला रहा था, अपने पांवों से ताल दे रहा था, अपने कंधों को बिचका रहा था, जबकि याकोव की आंखें अंगारे की भांति ख़ूब लाल दमक रही थीं, वह पत्ते की भांति ऊपर से नीचे तक थरथरा रहा था, और विह्वलता से मुसकरा रहा था। केवल बन-मास्टर ही एक ऐसा आदमी था जिसकी मुद्रा में कोई अन्तर नहीं पड़ा था और वह पहले की भांति निश्चल खड़ा था। लेकिन उसकी आंखें जो ठेकेदार पर जमी थीं, कुछ मुलायम हो आयी थीं, हालांकि उसके होंठों पर

अभी भी हिक़ारत का भाव छाया था। आम उछाह से उत्साहित होकर ठेकेदार ने आलाप का वह समा बांधा, ऐसे ऐसे आलाप लेने शुरू किये, अदाकारी के वे जोड़-तोड़ दिखाये और अपने गले के साथ इतने ज़ोरों से उठका-पटकी की कि अन्त में, पीतवर्ण और थकान से चूर, पसीने में नहाया हुआ, जब उसने क्षीण अन्तिम सुर खींचा और अपने समूचे बदन को पीछे की ओर फेंका तो सब के सब बड़े जोश से एक साथ वाह-वाह कर उठे। बकबक उसकी गरदन से जा लिपटा और अपनी लम्बी हड़ियल बांहों में लेकर उसे दबोचने लगा। निकोलाई इवानिच का चिकना चेहरा लाल हो गया, ऐसा मालूम होता था जैसे वह जवान हो गया हो। याकोव पागलों की भांति चिल्लाया – "लाजवाब, अद्भुत!" यहां तक कि मेरा पड़ोसी भी – फटा झगला पहने वह किसान अपने को नहीं रोक सका और मेज़ पर घूंसा पटकते हुए चिल्ला उठा– "भई वाह... ओह, शैतान उठा ले जाय मुझे... भई वाह!" और निश्चयात्मक अन्दाज़ में एक बाजू मुंह मोड़कर उसने थूक की पिचकारी छोड़ी।

"वाह, भाई, तुमने तबीयत ख़ुश कर दी," बकबक चहका। थककर चूर ठेकेदार को अपने आलिंगनों से अभी तक उसने मुक्त नहीं किया था। "तुमने तबीयत ख़ुश कर दी, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता! बाज़ी तुम्हारे हाथ रही, भाई, बाज़ी तुम्हारे हाथ रही। बधाई, कुल्हड़ अब तुम्हारा है! याकोव तुमसे कोसों पीछे है... सच, कोसों... चाहे मेरी बात गांठ बांध लो!" (और उसने एक बार फिर ठेकेदार को अपने सीने से सटा लिया।)

"बस बस, रहने दो, उसकी जान छोड़ो। ओह, तुमसे तो पीछा छुड़ाना मुश्किल है..." झपकौवे ने कुछ खीज के साथ कहा, "उसे बेंच पर बैठने दो। देखते नहीं, कितना थक गया है। मूर्ख कहीं का! गीले पत्ते की तरह उसके साथ ही चिपक गया है!"

"अच्छा तो यह बैठकर सुस्ताये, तब तक मैं इसके स्वास्थ्य का जाम खनकाता हूं," बकबक ने कहा और काउंटर के सामने पहुंच गया।

"तुम्हारे खाते में, सुना भाई!" ठेकेदार को सम्बोधित करते हुए फिर उसने कहा।

ठेकेदार ने सिर हिलाकर हामी भरी, बेंच पर बैठ गया, अपनी टोपी के भीतर से तौलिया निकाला, और उससे अपना मुंह पोंछने लगा। उधर बकबक ने, लालच भरी उतावली के साथ, वोद्का का गिलास खाली किया, कांखा और चेहरे पर, पक्के पियक्कड़ों की भांति, चिन्ताग्रस्त उदासी का भाव धारण कर लिया।

"तुम बहुत सुन्दर गाते हो, भाई, बहुत सुन्दर!" निकोलाई इवानिच ने दुलराते हुए कहा, "और याकोव, अब तुम्हारी बारी है। और देखो, डरना नहीं। देखें, कौन जीतता है, हां, कौन जीतता है। हालांकि ठेकेदार बहुत सुन्दर गाता है, सच, बहुत सुन्दर गाता है।"

"हां, बहुत सुन्दर!" निकोलाई इवानिच की पत्नी ने भी कहा, और मुसकराहट के साथ याकोव की ओर देखा।

"सुन्दर, वाह!" मेरे पड़ोसी ने दबे स्वर में दोहराया।

"ओह, जंगली कहीं का!" अचानक बकबक उबल पड़ा और मेरी बगल में बैठे कंधे पर से फटा झगला पहने किसान के पास जाते हुए उंगली से उसकी ओर इशारा किया, और उसके इर्द-गिर्द फुदकते हुए हंसने लगा। "दफ़ा हो यहां से! जंगल का, जंगली आदमी! यहां क्यों आ मरा?" ठहाकों के बीच वह चिंघाड़ उठा।

बेचारा किसान सिटपिटा गया, और अभी उठकर जल्दी जल्दी खिसकने ही जा रहा था कि अचानक, बन-मास्टर की लौह आवाज़ सुनाई दी—

"नाक में दम कर दिया कम्बख़्त ने! आख़िर चाहता क्या है?" अपने दांतों को पीसते हुए उसने दो टूक आवाज़ में कहा।

"मैं... मैं... मैं कुछ नहीं," बकबक बुदबुदाया, "कुछ भी तो नहीं... मैं केवल..."

"बस बस, सुन लिया, मुंह बंद कर!" बन-मास्टर ने पलटकर जवाब दिया, "हां तो याकोव, शुरू करो!"

याकोव ने अपने गले को हाथों से पकड़ा।

"हां तो, सच, भाइयो... मैं नहीं जानता... ओह, पता नहीं, क़सम से, जाने क्या..."

"बस बस, रहने दो। डरो नहीं। शरम करो... पीछे क्यों रहते हो? ख़ुदा की देन से गाओ, जितना भी बढ़िया गा सको!"

और बन-मास्टर ने इन्तज़ार में आंखें झुका लीं।

याकोव कुछ क्षण चुप रहा, अपने इर्द-गिर्द उसने नज़र डाली और हाथों से अपना मुंह ढंक लिया। सबकी आंखें जैसे उसपर जमकर रह गयी थीं, ख़ास तौर से ठेकेदार की, जिसके चेहरे पर, आत्मविश्वास की चिर भावना तथा सफलता से उत्पन्न विजयी उल्लास को बेधकर बेचैनी की एक धुंधली झलक बरबस उभर आयी थी। वह दीवार से पीठ टिकाये बैठा था, और दोनों हाथों को उसने फिर अपने नीचे कर लिया था, लेकिन पहले की भांति अपनी टांगों को अब वह नहीं झुला रहा था। आख़िर याकोव ने जब चेहरे पर से अपने हाथ हटाये तो उसका चेहरा मुर्दे की भांति पीला मालूम होता था। झुकी हुई पलकों के नीचे उसकी आंखें कुछ पथरा-सी गयी थीं। उसने एक गहरी सांस भरी और गाना शुरू कर दिया... उसकी आवाज़ की पहली ध्वनि धुंधली और असम थी। ऐसा मालूम होता था जैसे वह उसकी छाती से नहीं, बल्कि कहीं दूर से आ रही हो, और तैरती हुई संयोगवश कमरे में आ पहुंची हो। उसके इस थरथराते गूंजते हुए स्वर ने हम सब में एक अजीब भावना का संचार किया; हमने एक दूसरे की ओर देखा और निकोलाई इवानिच की पत्नी अपने-आपको चौकस करती मालूम हुई। पहले के बाद ही उसने दूसरे स्वर का छोर उठाया, अधिक सबल और लम्बा, लेकिन प्रत्यक्षतः अभी भी थरथराता, साज़ के उस तार की भांति जो, सबल उंगली से झनझनाये

जाने पर, अब अपनी आखिरी – तेज़ी से क्षीण होती हुई – थरथराहट में शेष हो रहा हो। दूसरे के बाद तीसरा – और फिर, क्रमशः, अधिकाधिक आवेग तथा व्यापकता धारण करते हुए एक करुण रागिनी के रूप में वे उमड़ चले। 'खेत में नहीं थी एक ही डगरिया' वह गा रहा था, और गीत के स्वर एक अजीब मिठास तथा उदासी का हमारे कानों में संचार कर रहे थे। ऐसी आवाज़, मुझे स्वीकार करना चाहिए, मैंने बिरले ही कभी सुनी थी। उसकी आवाज़ फटी और टूटी हुई सी थी और इसमें एक तरह की वेदना स्पर्श था। इतना ही नहीं बल्कि वह, शुरू शुरू में, कुछ विकारग्रस्त तक मालूम हुई। लेकिन उसमें सच्चे अनुराग की गहराई थी, यौवन था, माधुर्य था, और एक तरह की मोहक, चिन्तायुक्त तथा करुण उदासी थी। रूसी आवेगपूर्ण और सच्ची भावना उस आवाज़ में गूंज रही थी और हिलोरें ले रही थी, और सीधे हृदय को – हृदय में जो कुछ भी रूसी था उस सबको – छूती मालूम होती थी। गीत उमड़-घुमड़ और प्रवाहित हो रहा था। याकोव, प्रत्यक्षतः अब पूरे रंग में था। उसकी वह झिझक अब लोप हो गयी थी, और अपनी कला के आनन्दोल्लास में – उसके प्रवाह में – उसने अपने आपको पूर्णतया छोड़ दिया था। उसकी आवाज़ में अब वह थरथराहट नहीं थी। उसमें कम्पन था, लेकिन आन्तरिक अनुराग का कम्पन, मुश्किल से पकड़ में आनेवाला, ऐसा जो तीर की भांति श्रोताओं के अन्तर्तम को बेधता चला जाता है। और उसका ज़ोर, दृढ़ता, और विस्तार धीर गति से बढ़ता जाता है। मुझे वह दृश्य याद आता है जो मैंने एक सपाट रेतीले तट पर सूर्यास्त के समय देखा था। ज्वार का उभार कम था और समुद्र की गरज, भारी और आतंकप्रद, कहीं दूर से आ रही थी। सफ़ेद रंग की एक समुद्री चिड़िया निश्चल बैठी थी, उसका रेशमी वक्ष छिपते हुए सूरज की गुलाबी आभा से दमक रहा था और वह, अपने सुपरिचित समुद्र का अभिवादन करने के लिए, डूबते हुए लाल भभूका सूरज का अभिवादन करने के लिए, केवल जब-तब

अपने लम्बे पंखों को चौड़ा फैला लेती थी। याकोव को सुनते समय मुझे उसकी याद हो आयी। वह गा रहा था, अपने प्रतिद्वन्दी और हम सबके अस्तित्व से एकदम बेख़बर। साहसी तैराक के लिए जिस प्रकार लहरें सम्बल बनती हैं वैसे ही हमारी गहरी, अनुरागपूर्ण संवेदना उसका सम्बल थी। वह गा रहा था, और उसकी आवाज़ की प्रत्येक ध्वनि में ऐसा अनुभव होता था जैसे कुछ है जो हमारे अत्यन्त निकट है, जो हमें प्रिय है, कुछ ऐसा जिसमें व्यापकता है, विस्तार है, जैसे हमारे जाने-पहचाने स्तेप हमारी आंखों के सामने खुलते और अन्तहीन विस्तारों में फैलते जा रहे हों। मुझे लगा जैसे मेरे हृदय में आंसू उमड़-घुमड़ रहे हों, और आंखों में तैरने के लिए ऊपर उठ रहे हों। अचानक धुंधली, दबी हुई, सुबकियों ने मेरा ध्यान खींचा... मैंने घूमकर देखा—शराबख़ाने के मालिक की घरवाली रो रही थी, अपने वक्ष को खिड़की की ओटक से सटाये। याकोव ने उड़ती नज़र से उसकी ओर देखा, और वह और भी ज़्यादा मिठास के साथ, और भी ज़्यादा सुरीली आवाज़ में, गाने लगा। निकोलाई इवानिच ने आंखें नीची कर लीं, झपकौवे ने मुंह फेर लिया, बकबक—बिल्कुल द्रवीभूत—खड़ा था, मूर्खों की भांति अपना मुंह बाये, बेचारा किसान कोने में धीमी धीमी सुबकियां ले रहा था और रुआंसी आवाज़ के साथ अपना सिर हिला रहा था, और बन-मास्टर के लौह चेहरे पर—उसकी तनी हुई भौंहों की छांव में—धीरे धीरे एक बड़ा-सा आंसू थिरक रहा था, और ठेकेदार अपनी कसी हुई मुट्ठी को माथे तक उठाये थिर खड़ा था... अगर याकोव अपने स्वर को ख़ूब ऊंचे, असाधारण रूप में कटीले स्तर तक ले जाकर—इस तरह जैसे उसकी आवाज़ टूट गयी हो—अचानक पूर्ण विराम पर न आ जाता, तो मैं नहीं जानता कि किस रूप में इस आम भावावेश का अन्त होता। किसी ने कोई उद्गार व्यक्त नहीं किया, कोई हिला तक नहीं। सब के सब जैसे इस

इन्तज़ार में थे कि वह फिर गाना शुरू करता है या नहीं। लेकिन उसने अपनी आंखें खोलीं, कुछ इस तरह जैसे हमारी इस निस्तब्धता ने उसे अचरज में डाल दिया हो। जिज्ञासा-भरी मुद्रा में उसने हम सब पर नज़र डाली... और देखा कि जीत उसकी है।

"याकोव," उसके कंधे पर अपना हाथ रखते हुए बन-मास्टर ने कहा, और इससे अधिक वह और कुछ नहीं कह सका।

हम सब खड़े थे, जैसे हमें काठ मार गया हो। ठेकेदार धीमे से उठा और याकोव के पास पहुंचा।

"तुम... तुम्हारी... जीत तुम्हारी!" आख़िर जैसे-तैसे उसने अपनी बात को व्यक्त किया, और लपककर कमरे से बाहर चला गया।

उसकी इस द्रुत और निश्चित हरकत ने जैसे उस मोहिनी को भंग कर दिया। अचानक हम ख़ुशी से चहकने और बातें करने लगे। बकबक गेंद की भांति उछल-उचक रहा था, अस्फुट आवाज़ में बोल और बांहों को पनचक्की के पंखों की भांति नचा रहा था। झपकौआ लंगड़ाता हुआ याकोव के पास पहुंच उसे चूमने लगा। निकोलाई इवानिच उठकर खड़ा हुआ और ऐलान किया कि बीयर का दूसरा कुल्हड़ वह ख़ुद अपनी ओर से भेंट करेगा। बन-मास्टर एक तरह की सहृदय, सरल हंसी हंसा, ऐसी जिसे उसके चेहरे पर देखने की मैं कभी आशा नहीं करता था। बेचारा किसान आस्तीनों से आंखों, गालों, नाक और दाढ़ी को पोंछता हुआ अपने कोने में बारबार दोहरा रहा था—"ओह, सुन्दर, ख़ुदा की क़सम, बहुत सुन्दर! मुझे कुत्ते की औलाद कह चाहे, लेकिन सुन्दर, बहुत सुन्दर!" और निकोलाई इवानिच की घरवाली, जिसका चेहरा लाल हो गया था, जल्दी से उठी और वहां से खिसक गयी। याकोव छोटे बच्चे की भांति अपनी विजय का आनन्द ले रहा था। उसके समूचे चेहरे की जैसे कायापलट हो गयी थी और उसकी आंखें ख़ुशी से ख़ूब दमक रही थीं। वे उसे खींचते हुए काउंटर के पास ले गये, रोते हुए किसान

को पास आने का इशारा किया और शराबखाने के मालिक के छोटे लड़के को ठेकेदार की टोह में रवाना कर दिया, लेकिन वह मिला नहीं। मौज-मेले का दौर शुरू हुआ। "तुम्हें फिर हमें अपना गाना सुनाना होगा। खूब जमकर, गयी रात तक!" हवा में अपने हाथों को ऊंचा उठाते हुए बकबक ने रट लगायी।

मैंने याकोव की ओर एक बार फिर देखा, और बाहर निकल आया। मैं अब रुकना नहीं चाहता था, मुझे डर था कि कहीं वह पहला असर बिगड़ न जाय जो मेरे हृदय पर पड़ा था। लेकिन गर्मी अभी भी उतनी ही असह्य थी जितनी कि पहले। ऐसा मालूम होता था जैसे उसकी एक मोटी भारी तह ठीक धरती के ऊपर टंगी हो। लगता था मानो गहरे नीले आकाश की सतह पर नन्ही नन्ही उजली चिंगारियां अत्यन्त महीन, क़रीब क़रीव काली, धूल को आर-पार करती लपक रही थीं। हर चीज़ खामोश थी। और थकान से निढाल हुई प्रकृति की इस गहरी खामोशी में कुछ था जो आशाओं को चूर और हृदय को उत्पीड़ित करता था। आगे डग रखता सूखी घास की एक कोठरी में मैं जाकर ताज़ा कटी घास पर जो अभी भी क़रीब क़रीब सूख चली थी, लेट गया। बहुत देर तक मुझे नींद नहीं आयी, बहुत देर तक याकोव की अदम्य आवाज़ मेरे कानों में गूंजती रही... आखिर गर्मी और थकान ने अपना कब्ज़ा जमाया, और मैं गहरी नींद में खो गया। जब जागा तो देखा, हर चीज़ अंधेरे में लिपटी है। इर्द-गिर्द छितरी घास से तेज़ गंध उठ रही है, और वह कुछ नम मालूम होती है। अधखुली छत की घरनियों में से पीतवर्ण तारे धुंधले टिमटिमा रहे थे। मैं बाहर निकला। सूरज छिपने की दमक कभी की बिला चुकी थी, और उसकी आखिरी निशानी क्षितिज पर धुंधली-सी रोशनी के रूप में दिखाई दे रही थी। लेकिन रात की ताज़गी पर वायुमण्डल में—जिसे सूरज अभी हाल तक

झुलसाता रहा था – अभी भी गर्मी का अहसास था, और हृदय ठंडी हवा के एक झोंके के लिए अभी भी अकुला रहा था। हवा का पता नहीं था, बादल भी कहीं नज़र नहीं आते थे। आकाश चारों ओर से साफ़ था, पारदर्शी काला – मृदुभाव से टिमटिमाते अनगिनत तारों से युक्त, जो मुश्किल से ही दिखाई देते थे। गांव के इर्द-गिर्द रोशनियां टिमटिमा रही थीं, और निकट ही झिलमिल करते शराबख़ाने में से उलझी हुई तथा बेमेल आवाज़ों का शोर सुनाई दे रहा था जिसके बीच मुझे लगा जैसे याकोव की आवाज़ मेरी पहचान में आ रही हो। कभी कभी तूफ़ानी हंसी की एक बाढ़ वहां से फट पड़ती थी। मैं छोटी खिड़की के पास पहुंचा और उसके शीशे से मैंने अपना चेहरा सटा लिया। एक आह्लाद-विहीन, लेकिन विविधतापूर्ण और सजीव दृश्य मुझे दिखाई दिया। सब के सब नशे में धुत्त थे – सब, याकोव समेत। अपना वक्ष उघारे वह बेंच पर बैठा था, और नृत्य की धुन पर कर्कश आवाज़ में कोई बाज़ारू गीत गा रहा था। उसकी उंगलियां अलस भाव से गिटार के तारों को झनझना रही थीं। उसके गीले बालों के गुच्छे उसके चेहरे पर लटक आये थे जो भयानक रूप में पीला लग रहा था। कमरे के बीच में पूर्णतया धुत्त तथा बिना लम्बा कोट पहने, बकबक, किसान के सामने जो भूरे रंग का कोट पहने था, उछल उछलकर नाच रहा था। किसान, अपनी ओर से, कठिनाई के साथ अपने पांव से थिरक और ताल दे रहा था, और अपनी अस्तव्यस्त दाढ़ी के भीतर से निरर्थक हंसी में खीसें निपोर रहा था। रह रहकर वह अपना एक हाथ हवा में लहरा रहा था, मानो वह कह रहा हो – "कुछ भी हो!" और उसका चेहरा अत्यन्त हास्यजनक था। अपनी भौंहों को वह चाहे जितना तोड़ता-मरोड़ता, उसकी आंखों के भारी ढक्कन खुलने का नाम न लेते, ऐसा मालूम होता था जैसे वे उसकी मुश्किल से दिखाई पड़नेवाली, चुंधी और बेजान-सी आंखों के ऊपर चिपक गये हों।

वह नशे में पूरी तरह गड़गच्च आदमी की मुग्ध दशा में पहुंचा हुआ था जिसमें कि हर राह-चलता उसके चेहरे को देखकर कहता है—"वाह भाई, यह क्या हुलिया बना रखा है तुमने!" झपकौआ केकड़े की भांति लाल सुर्ख़, अपने नथुनों को ख़ूब चौड़ा फैलाये, एक कोने में कुत्सा से हंस रहा था। केवल निकोलाई इवानिच ने, जैसा कि शराबख़ाने के एक अच्छे मालिक के अनुकूल है, अपने सन्तुलन को डिगने से बचाये रखा था। कमरे में अनेक नये चेहरों की भरमार थी, लेकिन उनमें मुझे बन-मास्टर नहीं दिखाई दिया।

तेज़ डगों से मैं उस पहाड़ी पर से नीचे उतरने लगा, जिसपर कि कोलोतोवका बसा है। इस पहाड़ी के पदतल में एक चौड़ा मैदान फैलता चला गया है। सांझ के झुटपुटे की धुंधियाली लहरों में डूबा वह और भी भीमाकार मालूम होता था, और जैसे काले पड़ते आकाश में एकाकार हुआ जा रहा था। खाई की किनारेवाली सड़क पर मैं तेज़ डगों से चल रहा था, तभी एकाएक मैदान में कहीं दूर से किसी लड़के की साफ़ आवाज़ सुनाई दी—"अनत्रोप्का! अनत्रोप्का-आ-आ!" वह हठीली और अश्रुपूर्ण निराशा से चिल्ला रहा था, अन्तिम अक्षर को बहुत बहुत लम्बा खींचता हुआ।

कुछ क्षणों के लिए वह चुप हो रहा, इसके बाद उसने फिर चिल्लाना शुरू कर दिया। उसकी आवाज़ थिर, हल्की अलसायी हुई हवा में साफ़ गूंज रही थी। और भी कुछ नहीं तो तीस बार उसने अनत्रोप्का नाम पुकारा होगा। तभी, मैदान के एकदम दूसरे छोर से, मानो किसी दूसरी दुनिया में से, जवाब में क़रीब क़रीब अस्पष्ट-सी आवाज़ तैरती हुई आयी—

"क्या-आ-आ?"

लड़के ने ख़ुशी से छलछलाते और साथ ही ग़ुस्से के साथ जवाब में तुरत चिल्लाकर कहा—

"यहां आओ, शैतान! जंगली भूत!"

"किस लि-ए?" लम्बे वक़्फ़े के बाद उधर से जवाब आया।

"इसलिए कि पिताजी तुम्हारी चमड़ी उधेड़ना चाहते हैं!" पहली आवाज़ ने पलटकर उतावली में जवाब दिया।

इसके बाद दूसरी आवाज़ ने जवाब में फिर कुछ पलटकर नहीं कहा, और लड़के ने एक बार फिर अनत्रोप्का चिल्लाना शुरू कर दिया। उसकी चिल्लाहट, उत्तरोत्तर धुंधली और अधिकाधिक अन्तर के साथ, अभी भी मेरे कानों में तिरती आ रही थी उस वक़्त भी जब एकदम अंधेरा छा गया। मैं जंगल के कोने से मुड़ा जो मेरे गांव को घेरता हुआ फैला है और कोलोतोवका से तीन मील से कुछ अधिक दूर पड़ता है... "अनत्रोप्का-आ-आ!" रात की परछाइयों से घिरी वायु में अभी भी वह आवाज़ सुनाई पड़ रही थी।

प्योत्र पेत्रोविच करातायेव

पांच साल पहले की बात है। शरद् के दिन थे जब, संयोगवश, मास्को से तुला जानेवाली सड़क पर, घोड़ों के इन्तज़ार में, क़रीब क़रीब सारा दिन मुझे एक घोड़ा-चौकी (पोस्टिंग स्टेशन) पर बिताना पड़ा। मैं शिकार के अपने एक दौरे से वापिस लौट रहा था, और इसे मेरी असावधानी ही समझिये कि अपनी त्रोइका-गाड़ी* को मैंने पहले ही आगे रवाना कर दिया था। घोड़ा-चौकी का मैनेजर एक उदास बड़ी उम्र का आदमी था। उसके बाल उसकी नाक तक लटक रहे थे और उनींदी-सी छोटी छोटी आंखें थीं। मेरी तमाम शिकायतों-मनुहारों का असम्बद्ध बड़बड़ाहट के रूप में वह जवाब देता, झुंझलाकर फटाक से दरवाज़ा बंद करता, ऐसा मालूम होता जैसे वह जीवन में अपने पेशे को कोस रहा हो, और बाहर पैड़ियों पर निकलते हुए गाड़ीवानों को गालियां सुनाता था जो लकड़ी के भारी जुवों को अपनी बांहों पर लादे इतमीनान के साथ कीचड़ में इधर उधर आ जा रहे थे, या बेंच पर बैठे जम्भाइयां ले रहे थे और अपना बदन खुजला रहे थे, और अपने मैनेजर के रोषपूर्ण उद्गारों की ओर कोई ख़ास ध्यान नहीं दे रहे थे। मैं खुद भी अब तक तीन बार चाय पी चुका था, और सोने की बेकार कोशिश कर चुका था, दीवारों और खिड़कियों पर टंकी सारी लिखावटों को पढ़ चुका था। भयानक ऊब मुझे जकड़े थी। शीत और असहाय निराशा में मैं अपनी

---

* त्रोइका – तीन घोड़ों वाली गाड़ी।

गाड़ी के ऊपर को उठे हुए बमों की ओर ताक रहा था जब, अचानक, मुझे टुनटुन की आवाज़ सुनाई दी और एक छोटी बग्घी, जिसमें तीन थके-हारे घोड़े जुते थे, पैड़ियों के पास आकर खड़ी हो गयी। नवागन्तुक गाड़ी में से कूदकर बाहर आया और चिल्ला उठा—"घोड़े! झटपट!" फिर कमरे के भीतर लपक गया। इसी बीच जब वह अजीब अचरज के साथ—जैसा कि ऐसी स्थिति में होता है—मैनेजर के जवाबों को सुन रहा था कि घोड़े नहीं हैं, मैंने इस नये साथी पर नज़र डाली और बुरी तरह ऊबे आदमी की भूखी उत्सुकता के साथ सिर से एड़ी तक उसे छान डाला। देखने में वह क़रीब तीस वर्ष का मालूम होता था। चेचक उसके चेहरे पर अमिट दाग़ छोड़ गयी थी। चेहरा रूखा और पीतवर्ण था, और उसमें तांबे जैसे रंग की एक झलक थी जो अच्छी नहीं मालूम होती थी। काले-नीले रंग के उसके लम्बे बाल, छल्लों में, पीछे कालर पर गिर रहे थे, और कनपटी पर बल खाये थे। उसकी छोटी सूजी हुई आंखें एकदम भावशून्य थीं। मूछों की जगह कुछ एक बाल उग आये थे। गांव के किसी निश्चिन्त ज़मींदार और घोड़ों के मेलों के शौक़ीन कुलीन जैसी उसकी साज-सज्जा थी। अपेक्षा से अधिक चिकनी, धारीदार, काकेशी जाकेट, फीकी-सी बैंगनी गुलाबी टाई, पीतल के बटन लगी वास्कट और भूरे रंग की पतलून, जो नीचे से बहुत चौड़ी थी, पहने था। पतलून के भीतर से उसके अनपोंछे जूतों की नोकों की केवल झलकमात्र दिखाई देती थी। वह तम्बाकू और वोद्का से बुरी तरह गंधा रहा था। उसके मोटे-थलथल लाल हाथों में, जो क़रीब-क़रीब आस्तीनों के भीतर छिपे थे, तुला में बनी चांदी की अंगूठियां झलक रही थीं। ऐसे व्यक्ति, दस-बीस नहीं, बल्कि सैंकड़ों की संख्या में रूस में मिलते हैं। उनसे परिचित होकर, अगर सच पूछो तो, कोई ख़ास ख़ुशी नहीं होती। लेकिन, उस दुराग्रह के बावजूद जो नवागन्तुक के प्रति मेरे हृदय में मौजूद था, उसके चेहरे पर कुछ ऐसा लापरवाह और ज़िन्दादिली और अनुराग का भाव छाया था कि मैं उसे नज़रन्दाज़ नहीं कर सका।

"इन महानुभाव को भी यहां एक घंटे से अधिक इन्तज़ार करते हो गया," मेरी ओर इशारा करते हुए मैनेजर ने कहा।

"एक घंटे से भी अधिक!"—मरदूद मेरे साथ मज़ाक़ कर रहा था।

"लेकिन शायद उन्हें उतनी जल्दी न हो, जितनी कि मुझे," नवागन्तुक ने जवाब दिया।

"इस बारे में मैं कुछ नहीं जानता," मैनेजर ने बड़बड़ाते हुए कहा।

"तो क्या यह सचमुच असम्भव है? क्या घोड़े सचमुच नहीं मिल सकते?"

"असम्भव। क़सम खाने को भी यहां घोड़ा नहीं है।"

"अच्छा तो मेरे लिए समोवार भेज दो। थोड़ा इन्तज़ार किये लेता हूं। इसके सिवा और कोई चारा नहीं।"

नवागन्तुक बेंच पर बैठ गया, टोपी उतारकर मेज़ पर पटक दी, और बालों पर अपना हाथ फेरा।

"क्या आप चाय पी चुके हैं?" उसने मुझसे पूछा।

"हां।"

"लेकिन थोड़ी और सही, साथ के लिए, क्यों?"

मैं राज़ी हो गया। स्थूलकाय लाल समोवार चौथी बार फिर मेज़ पर आ विराजा। मैंने रम की बोतल बाहर निकाली। अपने इस नव-परिचित के बारे में मैंने ग़लत अन्दाज़ नहीं लगाया था कि वह देहात का एक कुलीन है, और उसकी मिल्कियत कुछ अधिक नहीं है। प्योत्र पेत्रोविच करातायेव उसका नाम था।

हमने बातचीत का सिलसिला शुरू किया। अपने आने के आध घंटे के भीतर ही, अत्यन्त सरल स्पष्टवादिता के साथ, वह अपना समूचा जीवन मेरे सामने खोलकर रख रहा था।

"मैं अब मास्को जा रहा हूं," अपने चौथे गिलास की चुसकी लेते हुए उसने कहा, "देहात में करने के लिए कुछ है भी नहीं।"

"सो क्यों?"

"हां, हालत ही कुछ ऐसी हो गयी है। मेरी मिल्कियत का हाल बेहाल है, और – सच पूछो तो – अपने किसानों को मैंने बरबाद कर डाला है। कई कई साल बुरे निकले, बुरी फ़सलें, और तरह तरह की मुसीबतें, आप जानो... ऊंह, जैसे मैं," निराशा से दूसरी ओर देखते हुए अन्त में उसने कहा, "मेरे जैसा आदमी जागीर का बन्दोबस्त कर ही कैसे सकता था!"

"ऐसा क्यों?"

"लेकिन, नहीं," वह बीच ही में बोला, "मेरे जैसे लोगों में वह योग्यता नहीं है कि अच्छे मालिक बन सकें! देखा न," अपने सिर को एक बाजू घुमाते तथा लगन के साथ अपने पाइप से कश खींचते हुए उसने कहना जारी रखा, "मेरी ओर देखकर आपको यह निश्चय करते देर नहीं लगेगी कि मैं कुछ... क्या कहते हैं... झूठ क्यों बोलूं – मुझे बहुत ही, औसत दर्जे की शिक्षा मिली। मैं कोई ख़ुशहाल तो था नहीं। ओह, माफ़ करना, मैं खुलकर बात करनेवाला आदमी हूं और अगर सच पूछो तो..."

उसने अपना वाक्य पूरा नहीं किया, और अपने हाथ को हवा में फहराकर चुप हो गया। मैंने उसे इत्मीनान दिलाना शुरू किया कि उसने ग़लत समझा, कि उससे मिलकर मुझे भारी ख़ुशी हुई है, आदि आदि; और अन्त में अपनी राय प्रकट की कि मिल्कियत का अच्छा बन्दोबस्त करने के लिए भरपूर शिक्षा कोई बहुत ज़रूरी चीज़ नहीं है।

"माना," उसने जवाब दिया। "मैं आपकी बात मानता हूं। लेकिन फिर भी इसके लिए एक ख़ास क़िस्म का स्वभाव ज़रूरी है। कुछ लोग होते हैं जो किसानों का ख़ून निचोड़ लेते हैं... और सब ठीक रहता है! लेकिन मैं... माफ़ कीजिये क्या मैं जान सकता हूं कि आप कहां रहते हैं – पीटर्सबर्ग, या मास्को में?"

"पीटर्सबर्ग में।"

उसने अपने नथुनों में से धुवें का एक लम्बा चक्कर छोड़ा।

"और मैं सरकारी अफ़सर बनने की टोह में मास्को जा रहा हूं।"

"किस महकमे में जाने का इरादा है?"

"सो नहीं जानता। जैसा भी संयोग हो। आपसे क्या छिपाना है, सरकारी नौकरी से मैं डरता हूं। फ़ौरन ज़िम्मेदारी लद जाती है। मैं सदा देहात में रहा हूं, और आप जानो, उसका आदी हो गया हूं... लेकिन अब, किया भी क्या जाय... ग़रीबी जो न कराय! ओह, ग़रीबी, कितनी घृणा है मुझे उससे!"

"लेकिन अब तो तुम राजधानी में जाकर रहोगे।"

"राजधानी में... राजधानी में ऐसा क्या सुख है, मैं नहीं जानता। चलो, यह भी पता चल जायेगा। शायद वहां भी सुख हो। लेकिन मेरी समझ में तो, देहात का कोई मुक़ाबिला नहीं कर सकता।"

"तो क्या तुम्हारे लिए अपने गांव में रहना सचमुच असम्भव है?"

उसने एक उसास छोड़ी।

"एकदम असम्भव। अब वह, जैसा कि कहते हैं, मेरा नहीं रहा।"

"अरे, सो कैसे?"

"एक भले आदमी की बदौलत... पड़ोसी... वह आया... एक हुंडी।"

बेचारे प्योत्र पेत्रोविच ने चेहरे पर अपना हाथ फेरा, क्षण-भर तक कुछ सोचा, फिर अपना सिर हिलाया।

"तो फिर? मुझे मानना चाहिए, हालांकि," क्षण-भर चुप रहकर उसने फिर कहा, "मैं दोष किसी को नहीं दे सकता। दोष तो खुद मेरा अपना है। मुझे शान से रहने की लत थी, शान से रहने का मैं शौक़ीन हूं, ख़ुदा ग़ारत करे मुझे!"

"तो यह कहो कि देहात में मौज से जीवन बिताते थे?" मैंने उससे पूछा।

"हां, श्रीमान," उसने धीरे से कहा, सीधे मेरे चेहरे की ओर देखते हुए–"मेरे पास हैरियर कुत्तों के बारह झुंड थे–बारह झुंड, और आपसे क्या बताऊं, ऐसे कि बिरले ही आपके देखने में कहीं आयं।" (अन्तिम शब्दों का उसने विलम्बित में और सन्तोष के साथ उच्चारण किया।) "पलक झपकते वे भूरे ख़रगोश को दबोच लेते। और लाल लोमड़ी के पीछे–ओह, वे शैतान थे, पूरे सांप। और मेरे ग्रे हाउंड भी कुछ कम नहीं थे। झूठ क्यों बोलूं, ये सब अब अतीत की बातें बनकर रह गयी हैं। मैं शिकार के लिए निकला करता था। मेरे पास एक कुतिया थी–कोन्तेस्का–पीछा करने में अद्भुत, गंध पकड़ने में एक नम्बर–क्या मजाल जो कोई बचकर निकल जाय। कभी-कभी मैं किसी दलदली इलाक़े की ओर निकल जाता और पुकारता, 'शेर्शे!' अगर वह मुंह फेर लेती तो फिर चाहे कुत्तों की पूरी फ़ौज ही क्यों न ले आओ, क्या मजाल जो कुछ पल्ले पड़े। लेकिन जब वह किसी के पीछे लगती थी–ओह, तब देखते ही बनता था। और घर में इतने सलीक़े से रहती थी कि कुछ न पूछो। अगर आप अपने बाएं हाथ में रोटी लेकर उससे कहें–'यह यहूदी की जूठी है,' तो वह उसे छुवेगी तक नहीं, लेकिन अगर आप रोटी को अपने दाहिने हाथ में लेकर उससे कहें–'इसे एक लड़की ने चखा है,' तो वह उसे तुरत ले लेगी और चटकर जायेगी। मेरे पास उसका एक पिल्ला था–बहुत ही शानदार पिल्ला। मैं उसे अपने साथ मास्को लाना चाहता था, लेकिन एक मित्र ने उसके लिए मुझसे कहा, और साथ में बन्दूक़ के लिए भी। बोला–'मास्को में आपके लिए और बहुत से शग़ल होंगे।' सो मैंने उसे वह पिल्ला और बन्दूक़ दे दी, और अब–आप जानो–पूरी तरह सब कुछ छोड़ छाड़कर मैं चल पड़ा हूं।"

"लेकिन मास्को में भी तो आप शिकार के लिए जा सकते हैं।"

"नहीं, बेकार है सब। मैं अपने पर अंकुश नहीं रख सका, सो

"नहीं, नहीं, यह औपचारिकता कैसी? जो मन में आय कहो।"

"हां," एक उसास छोड़ते हुए उसने कहना जारी रखा, "कभी-कभी ऐसी घटनाएं... मिसाल के लिए, जैसे मेरी... अच्छा, अगर आपको बुरा न लगे, तो बता दूंगा। हालांकि, सच पता नहीं कि..."

"बताओ भी, प्रिय प्योत्र पेत्रोविच, बताओ न।"

"अच्छी बात है। लेकिन, हालांकि, यह एक... देखो न..." उसने कहना शुरू किया। "लेकिन, सच मानो, मैं नहीं जानता..."

"बस बस, बहुत हो चुका, प्रिय प्योत्र पेत्रोविच!"

"अच्छी बात है। हां तो सुनो, मेरे साथ क्या गुज़री। मैं देहात में रह रहा था। बिल्कुल अचानक, एक लड़की पर मेरा मन आ गया। ओह, क्या लड़की थी वह! सुन्दर, होशियार, और इतनी अच्छी और मीठी। उसका नाम मत्र्योना था। लेकिन वह कुलीना नहीं थी। यानी, आप समझ गये न, वह एक दासी थी, निरी कम्मीगिरी करनेवाली। सो भी मेरी नहीं, वह किसी और की मिल्कियत थी। यही मुसीबत थी। हां तो मैं उसे प्यार करता था—और सच, यह एक ऐसी बात है जिसपर कोई... हां तो, वह ख़ुद भी मुझे प्यार करती थी। सो मत्र्योना ने मुझसे मनुहार करनी शुरू की कि मैं उसे उसकी मालकिन से ख़रीद लूं। यों, सच पूछो तो, यह बात ख़ुद मेरे दिमाग़ में भी आयी थी। लेकिन उसकी मालकिन पैसेवाली थी, बूढ़ी खूसट, एकदम भयानक। उसका घर मेरे यहां से कोई दस मील दूर था। सो एक दिन, शुभ मुहूरत में, जैसा कि कहते हैं, अपनी बग्घी में मैंने तीन घोड़ों की तिकड़ी जोतने का आदेश दिया—बीच में बढ़िया, एक नम्बर चालवाला ग़ैर मामूली तौर पर तेज़ घोड़ा था—इतना कि उसका नाम ही लामपुरदोस पड़ गया था। मैंने बढ़िया से बढ़िया कपड़े पहने और मत्र्योना की मालकिन की ओर चल दिया। वहां पहुंचा। काफ़ी बड़ा घर था—उपगृहों और बाग़ से लैस। मत्र्योना सड़क के मोड़ पर मेरी राह देख

रही थी। उसने मुंह से कुछ कहना चाहा, लेकिन केवल मेरा हाथ चूमकर मुड़ गयी। हां तो मैंने हाल में प्रवेश किया और पूछा कि क्या मालकिन घर पर है। एक लम्बा प्यादा मेरी ओर मुख़ातिब हुआ—'उनसे क्या जाकर कहूं कि कौन आये हैं?' मैंने जवाब दिया, 'कहना, भाई, कि भूस्वामी करातायेव एक काम के सिलसिले में आया है।' प्यादा चला गया। मैं अपने-आप में अकेला बाट देखता रहा। मैंने सोचा—'कौन जाने, पासा किस बल पड़े? यह तो तय है कि निर्दयी बुढ़िया कसकर दाम ऐंठना चाहेगी। आख़िर है तो पैसेवाली न! पांच सौ रूबल भी मांग बैठे तो अचरज नहीं।' आख़िर प्यादा लौटा। बोला—'चलिये, भीतर पधारने की कृपा करें।' मैं उसके साथ चल दिया। दीवानख़ाने में पहुंचा। एक टुइयां-सी बूढ़ी स्त्री—रंग पीला पड़ा हुआ—आरामकुर्सी में बैठी अपनी आंखें मिचमिचा रही थी। 'कहिये, क्या काम है? बताइये।' शुरू में तो मैंने यही कहना उचित समझा कि आप से मिलकर मुझे भारी खुशी हुई है। 'आप ग़लत समझे। मैं यहां की मालकिन नहीं हूं। मैं उसकी एक नातेदार हूं। आप क्या चाहते हैं?' इसपर मैंने कहा—'मुझे ख़ुद मालकिन से बात करनी है।'—'मारिया इल्यीनिश्ना आज किसी से नहीं मिल रहीं। उनकी तबीयत ठीक नहीं है। कहिये, आप क्या चाहते हैं?'—'अब कोई चारा नहीं,' मैंने मन में सोचा। सो मैंने उसे अपनी स्थिति बतायी। वृद्धा सुनती रही। अन्त में बोली—'मत्र्योना? कौन मत्र्योना?'—'मत्र्योना फ़्योदोरोवा, कुलीक की लड़की।' 'फ़्योदोर कुलीक की लड़की... लेकिन तुम्हारी उससे कैसे जान-पहचान हुई?'—'संयोग से।'—'और क्या वह तुम्हारे इरादे से परिचित है?'—'हां।' वृद्धा क्षण-भर चुप रही। इसके बाद—'ओह, मैं उसे बताऊंगी, घूरे की कुतिया!' उसने कहा। मैं स्तब्ध रह गया, सच। 'सो किस लिए? देखिये न, मैं अच्छी रक़म देने को तैयार हूं, अगर आप बताने की कृपा करें।'

"बुढ़िया निश्चित रूप में मुझपर फुंकार उठी। 'वाह, यह ख़ूब सोचा तुमने। मानो हम तुम्हारे धन की भूखी हों। मैं उसे ठीक करूंगी, उसे बताऊंगी। सारा फ़तूर निकाल दूंगी।' घृणा से वृद्धा का दम घुटा जा रहा था। 'यहां हमारे साथ क्या वह मज़े में नहीं थी? श्रोह, भुतनी कहीं की! ख़ुदा मेरे अपराधों को क्षमा करे!' मेरे बदन में आग लग गयी, सच। 'उस बेचारी लड़की की जान पर क्यों आ रही हो? उसने भला क्या क़सूर किया है?' वृद्धा ने क्रॉस का निशान बनाया। 'श्रोह, प्रभु मुझपर रहम करे! क्या तुम समझते हो कि मैं अपने दासों की मालकिन नहीं—उनके साथ चाहे जो नहीं कर सकती?'—'लेकिन आप जानती हैं, वह आपकी नहीं है!'—'श्रोह, यह बात मारिया इल्यीनिश्ना स्वयं समझ सकती हैं। समझे श्रीमान, आपको इसमें दख़ल देने की ज़रूरत नहीं। लेकिन मैं इस मत्र्योना को बता दूंगी कि वह किसकी मिल्कियत है।' और सच मैंने उस बुढ़िया को दबोच ही लिया होता, यदि मुझे मत्र्योना का ख़याल न आ गया होता, और मेरे हाथ ढीले पड़ गये। मैं इतना डर गया कि कह नहीं सकता। मैंने वृद्धा से मनुहार करना शुरू की। 'जो चाहो मुझसे ले लो,' मैंने कहा। 'लेकिन तुम उसे लेकर करोगे क्या?'—'मैं उसे चाहता हूं, ज़रा अपने-आपको मेरी स्थिति में रखकर देखिये। इजाज़त हो तो मैं आपका हाथ चूमना चाहता हूं।' और मैंने सचमुच उस चमरचट्टो का हाथ चूमा। 'अच्छी बात है,' बूढ़ी चुड़ैल बुदबुदायी, 'मैं मारिया इल्यीनिश्ना से कहूंगी—वही इसका फ़ैसला कर सकती हैं। दो-चार दिन में आना।' भारी बेचैनी के साथ मैं घर लौटा। मुझे सन्देह होने लगा कि कुछ ढंग से काम नहीं किया, कि मैंने उसे अपनी मनस्थिति का परिचय देकर ग़लती की, लेकिन अब क्या हो सकता था। यह सब तो पहले ही सोचना चाहिए था। दो दिन बाद मैं फिर मालकिन से मिलने गया। एक निजी कक्ष में मुझे ले जाया गया। वहां फूलों और शानदार

फ़र्नीचर की भरमार थी। खुद मालकिन एक बहुत ही बढ़िया आरामकुर्सी में बैठी थी, उसका सिर पीछे एक तकिये पर टिका हुआ था, और उसकी वह नातेदार भी वहां मौजूद थी। इनके अलावा वहां एक युवा स्त्री और थी, सफ़ेद बाल, आड़ा तिर्छा-सा अटपटा मुंह, हरा गाउन पहने हुए—शायद कोई संगी-साथिन। वृद्ध महिला ने गुनगुनी आवाज़ में कहा—'कृपा कर बैठ जाइये।' मैं बैठ गया। उसने मुझसे पूछ-ताछ शुरू की—यह कि मैं कितना बड़ा हूं, और कहां किस जगह मैं काम कर चुका हूं, और आगे क्या करना चाहता हूं। यह सब पूरी गम्भीरता और अक्खड़पन के साथ उसने पूछा। एक एक बात का बारीकी के साथ मैंने जवाब दिया। वृद्धा ने मेज़ पर पड़ा रूमाल उठाया, और उसे लहराया और पंखे की भांति झलने लगी। 'कातेरीना कारपोवना ने,' उसने कहा, 'मुझे आपकी योजना के बारे में बताया, मुझे उससे सूचित किया। लेकिन मैंने यह नियम बना लिया है कि,' उसने कहा, 'अपने आदमियों को अपनी चाकरी न छोड़ने दूंगी। यह ठीक नहीं है, और क़तई मुनासिब नहीं है कि एक सुव्यवस्थित घराने में ऐसा हो। यह बद-इन्तज़ामी है। मैं अपने आदेश भी जारी कर चुकी हूं,' उसने कहा, 'इसके लिए आपको और अधिक तकलीफ़ उठाने की ज़रूरत नहीं,' उसने कहा। 'ओह, तकलीफ़ काहे की, सच। लेकिन क्या मत्र्योना फ्योदोरोवा की सचमुच आपको इतनी ज़रूरत है?'—'नहीं,' उसने कहा, 'वह ज़रूरी नहीं है।'—'तो फिर आप क्यों नहीं मुझे ले लेने देतीं?'—'इसलिए कि मैं ऐसा नहीं चाहती। मैं नहीं चाहती, और बस। मैं अपने आदेश दे चुकी हूं—स्तेप के एक गांव के लिए उसका परवाना काटा जा रहा है।' उसने कहा। मुझपर जैसे बिजली गिरी। वृद्धा ने फ़्रांसीसी भाषा में उस महिला से कुछ कहा जो हरा गाउन पहने थी। वह बाहर खिसक गयी। 'मेरे अपने सिद्धान्त हैं,' उसने कहा, 'और मेरा स्वास्थ्य नाज़ुक है। मैं परेशान होना बरदाश्त नहीं

कर सकती। तुम अभी जवान हो, और मेरे बाल पक चुके हैं, और मैं तुम्हें सीख देने का दावा कर सकती हूं। तुम्हारे लिए क्या यह ज़्यादा अच्छा न होगा कि अब थिर होकर बैठो, शादी कर लो। अपने लिए कोई अच्छी-सी बहू देखो। पैसेवाली दुलहिनें तो कम हैं, लेकिन कोई ग़रीब लड़की, एकदम ऊंचे चरित्र की, मिल सकती है।' मैं, आप जानो, वृद्धा की ओर ताक रहा था, और मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या कह रही है। यह तो मैंने सुना कि वह विवाह के बारे में कुछ कह रही है, लेकिन मेरे कानों में तो बराबर स्तेप का वह गांव गूंज रहा था। विवाह कर लो... ओह, शैतान की ख़ाला!"

कहते कहते वह अचानक रुक गया और उसने मेरी ओर देखा।

"आप शादी-शुदा नहीं हैं, शायद?"

"नहीं।"

"ठीक, सो तो—बिलाशक—मुझे पहले ही नज़र आ रहा था। ख़ैर, मैं बरदाश्त नहीं कर सका। 'आप यह सब कह क्या रही हैं? शादी का इसके साथ क्या सम्बन्ध है? मैं तो आपसे केवल इतना जानना चाहता हूं कि आप अपनी बन्धक-लड़की मत्र्योना को अपने से अलग करने के लिए तैयार हैं या नहीं?' वृद्धा ने आह-ऊह करना और कांखना-कराहना शुरू कर दिया। 'ओह, यह तो मेरी जान खा रहा है! ओह, इसे यहां से हटाओ! ओह!' नातेदार लपककर उसके पास पहुंची, और मुझे झिड़कने लगी। वृद्धा बराबर कांख और कराह रही थी। 'मैंने किसी का क्या बिगाड़ा है? लगता है जैसे मैं खुद अपने घर की भी मालकिन नहीं? ओह, ओह!' मैंने झपटकर अपना हैट उठाया और पागल की भांति भागकर घर से बाहर आ गया।

"हो सकता है," उसने फिर कहना शुरू किया, "नीचे दरजे की एक लड़की के साथ इतना आन्तरिक लगाव रखने के लिए आप मुझे दोषी ठहरायें। और ठीक मैं खुद भी अपने आपको सही ठहराना नहीं

चाहता... लेकिन हुश्रा ऐसा ही। शायद श्राप यक़ीन न करें, लेकिन न मुझे दिन में चैन पड़ता था, न रात को। यातना का अन्त नहीं था। क्यों मैंने उस ग़रीब लड़की का जीवन नष्ट कर दिया? कभी ख़याल आता, वह एक खाल का कोट पहने हंसों को हांक रही होगी, मालकिन के आदेश से उसके साथ बुरा व्यवहार किया जाता होगा, और गांव का मुखिया – कोलतारी बूट पहने एक किसान – उसे गालियों से लांछित करता होगा। सच मेरा सचमुच बुरा हाल था। आख़िर मुझसे नहीं रहा गया। मैंने पता लगाया कि किस गांव में उसे भेजा गया है, अपने घोड़े पर सवार हुआ, और निकल पड़ा। अगले दिन कहीं सांझ को मैं वहां जा पहुंचा। प्रत्यक्षत: उन्हें उम्मीद नहीं थी कि मैं ऐसी कोई कार्रवाई करूंगा, और मेरे बारे में उन्होंने कोई आदेश जारी नहीं कर रखे थे। मैं सीधा गांव के मुखिया के पास पहुंचा जैसे पड़ोसी हूं। मैंने अहाते में प्रवेश किया और अपने इर्द-गिर्द नज़र डालकर देखा। अपनी कोहनी पर झुकी मत्र्योना पैड़ियों पर बैठी थी। उसके मुंह से चीख़ निकलना ही चाहती थी, कि मैंने उंगली उठायी और बाहर की ओर, खुले खेत की ओर, इशारा किया। मैं झोंपड़ी के भीतर पहुंचा। गांव के मुखिया से कुछ देर बातचीत की, दस हजार झूटों का अम्बार लगाया और उपयुक्त मौक़ा देख बाहर मत्र्योना के पास खिसक गया। वह, अभागी लड़की, क़रीब क़रीब मेरी गरदन से लिपट गयी। उसका बदन छीज गया था, रंग सफ़ेद पड़ गया था – ओह, मेरी नन्ही गुड़िया! और, आप जानो, मेरे मुंह से बार बार यही निकलता रहा – 'बस करो, मत्र्योना, बस करो। ठीक है, सब ठीक है। अरे नहीं, रोओ नहीं, मत्र्योना!' मैं यह कहता जाता था और ख़ुद अपने आप आंसू बहा रहा था, बहाये जा रहा था। हां तो आख़िर, जैसे शरमाते हुए, मैंने उससे कहा – 'मत्र्योना, जब सिर पर आ पड़ी हो तो आंसुओं से काम नहीं चलता। तब, जैसा कि कहते हैं, अमल करना चाहिए, मज़बूती

के साथ। चलो, मेरे साथ भाग चलो। यही हमें अब करना चाहिए।' मत्र्योना के तो जैसे होश ही उड़ गये। 'यह कैसे हो सकता है! मैं मारी जाऊंगी। वे मुझे एकदम जीता नहीं छोड़ेंगे!'—'बिल्कुल पगली हो तुम! भला, तुम्हारी टोह किसको मिलेगी?'—'ओह, वे पता लगा लेंगे, बिल्कुल लगा लेंगे। बहुत बहुत धन्यवाद, प्योत्र पेत्रोविच—तुम्हारी मेहरबानी मैं कभी नहीं भूलूंगी। लेकिन अब मुझे छुट्टी दो। लगता है, मेरे भाग्य में ऐसा ही बदा है।'—'ओह, मत्र्योना, मत्र्योना, मैं तो समझा था कि तुम में कुछ दम होगा।' और सचमुच, उसमें काफ़ी साहस था। उसका हृदय ऐसा था जैसे खरा सोना! 'तुम्हें यहां क्यों छोड़ा जाय? कुछ फ़र्क़ नहीं पड़ेगा। भला इससे ज़्यादा बुरा और क्या होगा? बोलो, सच सच कहो—क्या गांव के मुखिया के लात-घूंसों का तुम्हें अनुभव हो गया है?' मत्र्योना के गाल क़रीब क़रीब लाल हो गये और उसके होंठ कांपने लगे। 'मेरे पीछे वे मेरे घरवालों का जीवन दूभर कर देंगे।'—'क्यों, तुम्हारे घरवालों से क्या मतलब, क्या वे उन्हें भी भेज देंगे?'—'हां, वे मेरे भाई को भेज देंगे।'—'और तुम्हारे बाप को?'—'नहीं, वे बाप को नहीं भेजेंगे। हम सबमें एक वही तो दर्ज़ी का बढ़िया काम जानता है।'—'तब तो, देखो न, तुम्हारे भाई की जान पर कोई मुसीबत नहीं आयेगी,' मैंने उससे कहा। शायद आप यक़ीन न करें, लेकिन उसे समझाने में आकाश-पाताल एक कर देना पड़ा। उसने तो यहां तक कहा कि इसके लिए मुझे ज़िम्मेवार ठहराया जायेगा। 'लेकिन इसके लिए तुम क्यों चिन्ता करती हो,' मैंने कहा। जो हो, मैं उसे ले ही आया... उसी समय नहीं, बल्कि दूसरे समय। एक रात गाड़ी लेकर मैं पहुंचा और उसे वहां से निकाल लाया।"

"निकाल लाये?"

"हां। तो वह मेरे घर में रहने लगी। छोटा-सा घर था, गिने-चुने नाम के ही नौकर थे। मेरे आदमी, तुमसे भला क्या छिपाना है,

मेरी इज़्ज़त करते थे। इनाम के लालच में भी वे मेरे साथ दग़ा न करते। मैं इतना सुखी था जैसे कि कोई राजा हो। मत्र्योना को आराम मिला, और उसकी सेहत सुधरने लगी। मैं उसे हृदय से प्यार करने लगा। ओह, क्या लड़की थी वह! ऐसा मालूम होता था जैसे प्रकृति ने ख़ुद अपने हाथों से उसे घड़ा हो। वह गाती थी, नाचती थी, और गितार बजाती थी—सभी कुछ जानती थी... मैंने पड़ोसियों तक उसकी हवा नहीं पहुंचने दी। मुझे डर था कि वे दो की चार लगायेंगे। लेकिन एक जीव था, मेरा दिली दोस्त गोरनोस्तायेव पान्तेलेई—आप उसे नहीं जानते, क्यों? वह जैसे उसपर लट्टू था। वह उसका हाथ चूमता, इस तरह जैसे वह कुलीन घर की रानी हो। सच, वह इसी तरह उसका हाथ चूमता। और आप जानो, गोरनोस्तायेव मेरे जैसा नहीं था, वह पढ़ा-लिखा आदमी था—सुसंस्कृत। उसने पुश्किन की सब किताबें पढ़ डाली थीं। कभी कभी वह मत्र्योना और मुझे ऐसी ऐसी बातें बताता कि हम दत्तचित्त होकर सुनते। उसने उसे लिखना सिखाया। सच, इतना अजीब जीव था वह! और कैसे कपड़े मैं उस लड़की को पहनवाता था—सच, एकदम गवर्नर की बीवी से भी अच्छे। गुलाबी मख़मल का एक चुग़ा मैंने उसके लिए बनवाया था जिसके किनारों पर फ़र लगी थी। ओह, कितनी फबती थी वह उसके बदन पर! मास्को की एक महिला ने उसे बनाया था। बिल्कुल नये फ़ैशन की, कमर से सटी हुई। और ख़ुद मत्र्योना—ओह, कितनी अद्भुत थी वह! कभी वह मन ही मन कुछ सोचने लगती, और धरती पर नज़र गड़ाये घंटों बैठी रहती, क्या मजाल जो बदन का कोई भी हिस्सा हिले या डुले। और मैं भी बैठ जाता, उसे देखता रहता और देखते रहने से कभी जी नहीं भरता। ऐसा लगता जैसे मैं उसे पहली बार ही देख रहा हूं। इसके बाद वह मुसकराती, और मेरा हृदय इस तरह उछल पड़ता जैसे किसी ने उसे गुदगुदा दिया हो। या फिर अचानक हंसने लगती, ठिठोली करती, नाचती-थिरकती।

वह मुझे इतनी गरमाहट से, इतने अनुराग से, अपनी बांहों में बांधती कि मेरा सिर घूम जाता। सुबह से लेकर सांझ तक सिवा इसके मैं और कुछ नहीं सोचता कि उसे खुश रखने के लिए क्या कुछ न मैं कर डालूं। और क्या आप यक़ीन करेंगे? मैं उसे—ओह, मेरी गुड़िया—उपहार भेंट करता था, केवल यह देखने के लिए कि वह उन्हें लेकर कितनी खुश होती है। खुशी से छलछलाकर वह एकदम लाल हो जाती। मेरी भेंटों को पहन पहनकर देखती, अपनी इन नयी चीज़ों में सजी मेरे सामने प्रकट होती, और मेरा मुंह चूमती। उसके पिता कुलीक को, जाने कैसे, इसकी गंध मिल गयी। बूढ़ा हमारे यहां आया, और ओह, आंसुओं में नहा गया... पांच महीने इस तरह बीत गये, और मैं खुशी के साथ चिरकाल तक इसके संग बना रहता, लेकिन यह कमबख़्त दुर्भाग्य कुछ होने दे तब न!"

प्योत्र पेत्रोविच रुक गया।

"क्यों, फिर क्या हुआ?" मैंने सहानुभूति से पूछा।

उसने हवा में अपना हाथ हिलाया।

"हर चीज़ पर शैतान का साया पड़ा। मैंने उसका भी नाश कर दिया। मेरी गुड़िया—मेरी मत्र्योना—बर्फ़-गाड़ी में घूमने की बेहद शौक़ीन थी। और वह खुद उसे हांका करती थी। वह अपना चुग़ा बदन पर डालती, हाथों में अपने कामदार तोरजोक दस्ताने पहनती, और घोड़ों को ललकारती। हम हमेशा सांझ को बर्फ़-गाड़ी में सैर करने जाते थे ताकि, आप जानो, किसी से मुठभेड़ न हो। सो एक दिन—ओह, बहुत ही बढ़िया दिन था वह—पाला पड़ा था मगर आसमान साफ़ था, आंधी-वांधी बिल्कुल नहीं थी... हम घूमने निकले। रास मत्र्योना के हाथ में थी। मैंने ताककर देखा—किधर का रुख़ वह किये है। कहीं ऐसा तो नहीं कि वह कुकुयेवका की—अपनी मालकिन के गांव की—ओर लपक रही हो? हां, वह कुकुयेवका गांव की ओर ही जा रही थी।

मैंने उससे कहा—'क्या पागल हो गयी हो? यह कहां जा रही हो?' उसने कंधे के ऊपर से मेरी ओर देखा, और हंस पड़ी। 'चलने दो,' उसने कहा, 'मजा रहेगा!'—'अच्छी बात है,' मैंने सोचा, 'जो होगा, देखा जायेगा!' अपनी मालकिन के घर के पास से गुज़रना—क्यों थी न बढ़िया सूझ? आप खुद ही बताइये—थी न बढ़िया सूझ? सो हम बढ़ चले। बीचवाला घोड़ा ऐसा मालूम होता था जैसे हवा में तैर रहा हो, और बाज़ूवाले घोड़े—ओह, कुछ न पूछो—बाक़ायदा बगूला बने हुए थे। आख़िर कुकुयेवका गिरजा दिखाई देने लगा। तभी, अचानक हरे रंग की एक पुरानी कोच-गाड़ी रेंगती हुई नज़र पड़ी जिसके पायदान पर पीछे दास खड़ा था। यह मालकिन थी—मालकिन जो गाड़ी में सामने से हमारी ओर आ रही थी! मेरा हृदय बैठ गया। लेकिन मत्र्योना—ओह, किस तरह वह घोड़ों को रासों से पीट रही थी! वह सीधी कोच की दिशा में उड़ चली! कोचवान, आप समझो, कोचवान ने देखा कि हमारी गाड़ी सीधी उसकी ओर उड़ी जा रही है, सो—आप जानो—वह एक बाज़ू हटने लगा, और इतनी तेज़ी से मुड़ा कि कोच बर्फ़ के एक ढूह में उलट गयी। खिड़की टूट गयी और मालकिन चीखी—'ऐ-ऐ-ऐ-ऐ-ऐ!' संगी ने गुंहार की—'पकड़ो! पकड़ो!' और हम, भरसक तेज़ गति से, पास से निकल गये। हम तेज़ी से लपके जा रहे थे, लेकिन मैंने सोचा—'इसका नतीजा बुरा होगा। मैंने ग़लती की जो उसे कुकुयेवका की ओर बढ़ने दिया।' और आप क्या सोचते हैं? सोचना क्या, मालकिन ने मत्र्योना को पहचान लिया था, और साथ ही मुझे भी, बूढ़ी डायन कहीं की! और उसने मेरे ख़िलाफ़ शिकायत दर्ज करा दी। 'मेरी लापता बन्धक लड़की,' उसने कहा, 'मि० करातायेव के यहां रह रही है!' साथ ही उसने माक़ूल नज़राना भी भेंट किया। फिर क्या था, देखते न देखते पुलिस अफ़सर मेरे सामने आ मौजूद हुआ। वह मेरी जान-पहचान का आदमी था, स्तेपान सेर्गेइच कुज़ोवकिन, यारबाश

जीव, यानी, सचमुच में बाक़ायदा टुच्चा। सो वह मेरे पास आया, कुछ इधर-उधर की बातें कीं, और फिर बोला—'आपने यह कैसे किया, प्योत्र पेत्रोविच? मामला संगीन है, और क़ानून इस मामले में बहुत ही स्पष्ट है।' मैंने उससे कहा—'अच्छा, अच्छा, इसके बारे में भी बात करेंगे लेकिन अभी सफ़र से चले आ रहे हो, ताज़ा होने के लिए पहले कुछ ले लो!' कुछ लेने के लिए वह राज़ी हो गया, लेकिन उसने कहा—'न्याय का भी कुछ दावा होता है, प्योत्र पेत्रोविच, सो अपनी फ़िक्र रखना।'—'न्याय, बेशक, बेशक,' मैंने कहा, 'लेकिन मैंने सुना है कि आपके पास एक काला घोड़ा है। क्या आप मेरे लामपुरदोस की उससे अदल-बदल करना पसंद करेंगे? लेकिन सुनो, मत्र्योना फ़्योदोरोवा नाम की लड़की तो कोई मेरे यहां है नहीं।'—'बस, रहने दो, प्योत्र पेत्रोविच,' उसने कहा, 'लड़की तुम्हारे पास है। तुम जानो, हम कोई स्विज़रलैण्ड के रहनेवाले तो हैं नहीं... हालांकि मेरे घोड़े की लामपुरदोस से अदल-बदल की जा सकती है, मैं तुम्हारे लामपुरदोस को एक तोहफ़े के रूप में भी स्वीकार कर सकता हूं।' लेकिन उस बार जैसे-तैसे मैंने उससे पीछा छुड़ा लिया। लेकिन वृद्धा चुप नहीं बैठी, उसने पहले से भी ज़्यादा वावैला मचाया। दस हज़ार रूबल, उसने कहा, और वह सौदा करने से मुंह नहीं मोड़ेगी। और आप जानो, जब उसने मुझे देखा था तो अचानक उसके दिमाग़ में यह ख़याल पैदा हुआ था कि हरा गाउन पहने अपनी उस युवा संगिनी-महिला से वह मेरा विवाह करा देगी। यह मुझे बाद में मालूम हुआ, और इसी लिए वह इतनी ग़ुस्सा से भर गयी थी। इन श्रीमन्ताओं के दिमाग़ों का भला क्या ठिकाना, कुछ भी वे सोच सकती हैं! मेरी समझ में यह सब अकर्मण्यता की करामात है। उधर मेरा बुरा हाल था। मैंने पैसे को पैसा नहीं समझा, और मत्र्योना को छिपाये रखा। उन्होंने मुझे परेशान किया, ख़ूब अलटा-पलटा। मैं क़र्ज़ से दब गया। मेरा स्वास्थ्य गिर गया।

सो एक रात, उस समय जबकि मैं बिस्तर में पड़ा सोच रहा था, 'हे भगवान, यह सब मैं किस लिए सहूं? तुम्हीं बताओ, मैं क्या करूं, ऐसी हालत में जबकि मैं उसे प्यार किये बिना नहीं रह सकता? हां, यह मेरे बस का नहीं, और बस!'—तभी मत्र्योना ने कमरे में प्रवेश किया। फ़िलहाल अपने घर से डेढ़-एक मील दूर एक गांव में मैंने उसे छिपा दिया था। मैं डरा। 'अरे यह क्या? क्या उन्होंने तुम्हें वहां भी खोज निकाला?'—'नहीं, प्योत्र पेत्रोविच,' उसने कहा, 'बुबनोवो में मुझे कोई दिक़ नहीं करता। लेकिन कब तक? मेरा हृदय, छलनी हो गया है, प्योत्र पेत्रोविच। तुम्हारे लिए मैं दुःखी हूं, मेरे प्रिय धन। तुम्हारी भलमनसाहत को मैं कभी नहीं भूल सकती, प्योत्र पेत्रोविच, लेकिन इस समय मैं तुमसे विदा लेने आयी हूं।'—'यह क्या कहती हो तुम, क्या मतलब है तुम्हारा, पागल लड़की? विदा—विदा कैसी?' 'हां, मैं अपने को सौंपने जा रही हूं।'—'लेकिन मैं तुम्हें अटारी में बंद करके ताला डाल दूंगा, पागल कहीं की! क्या तुम मुझे नष्ट करने पर तुली हो? क्या तुम मुझे मार डालना चाहती हो?' लड़की चुप थी। नीचे फ़र्श पर नज़र जमाये थी। 'बोलो, कहो, क्या कहना चाहती हो तुम!'—'मैं तुम्हें अब और कष्ट नहीं देना चाहती, प्योत्र पेत्रोविच।' अब चाहे वह कुछ भी क्यों न करे... 'लेकिन क्या तुम्हें मालूम है पगली, क्या तुम जानती हो, पागल लड़की...'"

और प्योत्र पेत्रोविच बुरी तरह सुबक उठा।

"हां तो क्या सोचते हैं आप?" मेज़ पर घूंसा पटकते और अपनी भौंहों को सिकोड़ने का प्रयत्न करते हुए उसने कहना जारी रखा। जबकि उसके गाल तमतमा रहे थे और आंसू अभी तक उनपर से ढुरक रहे थे। "लड़की ने अपने को सौंप दिया... वह गयी और अपने-आपको उसने सौंप दिया..."

"घोड़े तैयार हैं," कमरे में प्रवेश करते हुए मैनेजर ने विजयी अन्दाज़ में कहा।

हम दोनों उठ खड़े हुए।

"मत्र्योना का फिर क्या हुआ?" मैंने पूछा।

करातायेव ने हवा में अपना हाथ हिलाया।

* * *

करातायेव से मिले एक साल हो चुका था। संयोगवश मुझे मास्को जाना पड़ा। एक दिन, भोजन से पहले, जाने कैसे मैं ओखोतनी र्याद के पार स्थित क़हवाखाने में पहुंचा। यह एक मास्को का मौलिक क़हवाख़ाना था। वहां, बिलियर्ड रूम में, धुवें के बादलों की झिलमिल में से तमतमाये हुए चेहरों, मूंछों, कलग़ी की तरह खड़े बालों, पुरानी चाल के हंगेरियन कोटों और नयी काट-छांट के स्लाव लिबासों की झलक दिखाई दे रही थी।

टुइयां-से दुबले-पतले वृद्ध साधारण लबादा पहने रूसी समाचारपत्र पढ़ रहे थे। बैरे तश्तरियां लिये हुए, हरे क़ालीनों पर अछुवाये-से डग रखते, अदा के साथ इधर से उधर तैर रहे थे। सौदागर, कष्टप्रद एकाग्रता के साथ, चाय पी रहे थे। अचानक बिलियर्ड रूम में से एक आदमी बाहर निकला, अपेक्षाकृत अस्तव्यस्त, पांव कुछ डगमगाते हुए। उसने जेबों में अपने हाथ डाले, अपना सिर झुकाया, और निरुद्देश्य भाव से अपने चारों ओर नज़र डालकर देखा।

"ओ... ओ! प्योत्र पेत्रोविच! कहो, कैसे हो?"

प्योत्र पेत्रोविच क़रीब क़रीब मेरी गरदन पर ढह गया और लड़खड़ाते-से डगों से, मुझे खींचता हुआ अपने साथ एक छोटे-से एकान्त कमरे में ले गया।

"हां इधर," सावधानी के साथ मुझे एक आरामकुर्सी में बैठाते हुए उसने कहा, "यहां तुम आराम से बैठोगे। ए बैरा, बीयर लाओ! नहीं,

मतलब यह कि शैम्पेन! भई ख़ूब, सच जानो, मुझे उम्मीद नहीं थी, क़तई उम्मीद नहीं थी... यहां क्या काफ़ी दिनों से हो? क्या काफ़ी दिन हो गये तुम्हें यहां आये हुए? भई वाह, जैसा कि कहते हैं, ख़ुदा ने फिर हम दोनों को मिला दिया!"

"हां, तुम्हें याद है न..."

"बेशक, याद है, मुझे याद है... बेशक मुझे याद है!" उतावली में उसने मुझे टोका, "एक मुद्दत हो गयी..."

"हां, तो यहां अब क्या कर रहे हो, प्रिय प्योत्र पेत्रोविच?"

"ज़िन्दा हूं, जैसा कि तुम देख ही रहे हो। मज़े से कट रही है। बड़े ख़ुशमिज़ाज लोग हैं यहां। अब जी शान्त है।"

उसने एक उसास छोड़ी और आंखें उठाकर छत की ओर देखा।

"क्या सरकारी नौकरी करते हो?"

"नहीं, अभी तक तो नौकरी नहीं करता, लेकिन उम्मीद है कि मिल जायेगी। लेकिन नौकरी में क्या रखा है? मुख्य चीज़ तो लोग हैं। और कितने बढ़िया लोगों से मिलना होता है यहां!"

काली तश्तरी में शैम्पेन की बोतल लिये एक लड़के ने भीतर प्रवेश किया।

"यह भी एक बढ़िया जीव है। क्यों, सच है न वास्या, कि तुम बढ़िया जीव हो? तुम्हारे स्वास्थ्य के नाम पर।"

लड़का क्षण-भर खड़ा रहा, अन्दाज़ के साथ उसने अपना सिर हिलाया, मुसकराया और बाहर चला गया।

"हां, लोग यहां बहुत ही बढ़िया हैं," प्योत्र पेत्रोविच ने कहना जारी रखा। "ऐसे लोग जिनके दिल हैं, जो महसूस करना जानते हैं। चाहो तो मैं उनसे आपका परिचय करा सकता हूं। ओह, बहुत ही ख़ुशबाश आदमी हैं! वे सब आपसे मिलकर ख़ुश होंगे। सच, मैं जो कहता हूं... बोबरोव मर गया। बुरा हुआ।"

"बोबरोव कौन?"

"सेर्गेई बोबरोव। क्या आदमी था वह! निरा जंगली बेवक़ूफ़ उसने मुझे समझकर अपने बाज़ू में ले लिया था। और पान्तेलेई गोरनोस्तायेव भी मर गया। सब मर गये, सब के सब!"

"क्या तब से बराबर मास्को में ही रह रहे हो? कभी देहात जाना नहीं हुआ?"

"देहात? मेरा देहात बिक गया।"

"बिक गया?"

"नीलामी में। सच, बड़ा अफ़सोस है तुमने उसे नहीं ख़रीद लिया।"

"गुज़ारे के लिए तुमने क्या सोचा है, प्योत्र पेत्रोविच?"

"मैं भूखा नहीं मरूंगा। जब मेरे पास कुछ न होगा, ख़ुदा देगा। अगर पैसा नहीं, मित्र तो होंगे। फिर धन क्या है? धूल और मिट्टी। सोना हाथ का मैल है।"

उसने अपनी आंखें मूंद लीं, अपनी जेब को टटोला, और अपने हाथ को मेरी ओर बढ़ाया। उसकी हथेली पर दो पन्द्रह कोपेक के और एक दस कोपेक का – तीन सिक्के रखे थे।

"ये क्या हैं? धूल और मिट्टी ही न?" (और सिक्के फ़र्श पर लुढ़कने लगे।) "लेकिन छोड़ो, यह बताओ, क्या तुमने पोलेजायेव को पढ़ा है?"

"हां।"

"और हैमलेट में मोचालोव को अभिनय करते देखा है?"

"नहीं, उसे नहीं देखा।"

"अरे, उसे नहीं देखा, तुमने उसे नहीं देखा!" (और करातायेव का चेहरा सफ़ेद हो चला, उसकी आंखें बेचैनी से अस्थिर हो उठीं; उसने मुंह घुमा लिया और उसके होंठों पर एक वेदना का हल्का-सा बल पड़ गया।) "ओह, मोचालोव! मोचालोव! 'मर जाय – सो जाय!'" उसने भरभराई आवाज़ में कहा।

बस बस; यदि चिर निद्रा में डूबकर हम कहें
कि इससे हृदय की पीड़ा शान्त होगी, और सहस्रों यातनाओं
का अन्त होगा
जिनसे हमारा शरीर पीड़ित है, तो हम ऐसे अन्त की
हृदय से कामना करेंगे। मृत्यु का आलिंगन, चिर निद्रा!

"चिर निद्रा, चिर निद्रा!" वह कई बार बुदबुदाया।

"कृपा कर यह तो बताओ," मैंने कहना चाहा, लेकिन वह आवेग के साथ कहता गया—

कौन है वह, जो समय की मार और उपेक्षा को सहन करेगा,
ज़ालिम के ज़ुल्म को, घमंडी की घृणा को,
न्याय की धूर्तता को, और मूर्ख की दुतकार को—
जिसे शान्ति से, योग्य व्यक्ति सहन करता है
जब वह अपने को ही
नंगी कटार से शान्त कर सकता है।
सुन्दरी, अरुणोदय बेला में प्रार्थना के समय
मेरे पापों के लिए क्षमा मांगना।

और उसने अपना सिर मेज़ पर गिरा लिया। अस्फुट और असम्बद्ध शब्द वह बुदबुदा रहा था।

"सिर्फ़ एक ही माह में!"—नये उद्वेग के साथ उसने उसका पाठ किया।

सिर्फ़ एक माह; या कहो,
वे जूतियां भी पुरानी नहीं पड़ी होंगी
जिनको पहन वह मेरे पिता की अर्थी के पीछे पीछे गयी थी,
आंसू बहाती हुई, बिल्कुल निओबी बनी; वह ही, अरे वही—

हे प्रभो! पशु भी एक, जिसमें कुछ बुद्धि नहीं होती है,
अधिक दिनों तक मृत का शोक करता है!

शैम्पेन का गिलास उठाकर वह अपने होंठों तक ले गया, लेकिन उसने उसे पिया नहीं, और पढ़ता गया—

हेक्यूबा के लिए!
कौन है हेक्यूबा उसकी, कौन लगता है वह हैक्यूबा का
जो इतना अधिक रोता-तड़पता है?
लेकिन मैं हूं अल्पबुद्धि, अपने में उलझा हुआ निरा मूर्ख,
कौन कहता है बुज़दिल मुझे? झूठ को मेरे गले मढ़ता है?
... नहीं, मुझे मानना ही चाहिए; है भी शायद यही बात
मेरा दिल नाज़ुक है; मुझमें नहीं है वह विष
यातना को और भी जो कड़ुवा बना देता है...

करातायेव ने गिलास नीचे रख दिया और अपने सिर को पकड़ लिया। मुझे लगा जैसे मैंने उसकी वेदना को समझ लिया हो।

"जो हो," अन्त में उसने कहा, "अतीत को कुरेदने से कोई लाभ नहीं। क्यों, ठीक है न?" (वह हंसा) "तुम्हारे स्वास्थ्य के लिये!"

"तो क्या मास्को में ही रहोगे?" मैंने उससे पूछा।

"हां, मास्को में ही मैं मरूंगा।"

"करातायेव!" बराबरवाले कमरे में से किसी ने पुकारा, "करातायेव, अरे कहां हो तुम? यहां आओ, मेरे भाई!"

"वे मुझे बुला रहे हैं," अपनी जगह से बोझिल-से अन्दाज़ से उठते हुए उसने कहा। "अच्छा, अब विदा। हो सके तो कभी मिलना। मैं *** में रहता हूं।"

लेकिन अगले ही दिन, कुछ अप्रत्याशित कारणों से, मुझे मास्को से चल देना पड़ा, और इसके बाद प्योत्र पेत्रोविच करातायेव से फिर कभी भेंट नहीं हुई।

मिलन-वेला

शरद् के दिन थे। लगभग सितम्बर महीने का मध्य रहा होगा। बर्च-वृक्षों के एक बनखंड में मैं बैठा था। तड़के से ही हल्की हल्की बौछार पड़ रही थी। बीच बीच में, जब-तब, सुहावनी धूप निकल आती थी। मौसम में अस्थिरता थी। कभी आकाश सफ़ेद मुलायम बादलों से छा जाता था, कभी सहसा – आंशिक रूप में – जैसे कुछ क्षणों के लिए, खुल जाता था, और तब छंटते हुए बादलों की ओट में से, किसी की सुन्दर आंख की भांति, उजली और कोमल नीलिमा झलक उठती थी। मैं बैठा था, अपने इर्द-गिर्द देख और सुन रहा था। सिर के ऊपर पत्तों में हल्की हल्की सरसराहट थी। अकेले उनकी ध्वनि ही यह बताने के लिए काफ़ी थी कि कौनसी ऋतु चल रही है। वसन्त का वह आह्लादपूर्ण छलछलाता कम्पन उसमें नहीं था, न ही वह मन्द फुसफुसाहट थी – वह सुदीर्घ कानाफूसी जो ग्रीष्म की विशेषता होती है, न वह ठंडी और सहमी-सी फरफराहट जो शरद् के उत्तरार्द्ध में सुनाई देती है, बल्कि एक अस्पष्ट – मुश्किल से सुनाई पड़नेवाली – और उनींदी-सी मर्मर ध्वनि थी। पेड़ों के ऊपरी हिस्सों में हल्की हवा की मृदु – धुंधली – गूंज भरी थी। वर्षा से भीगा बनखंड, अपनी आन्तरिक गहराइयों में, सूरज के चमक उठने या किसी बादल की ओट में हो जाने के साथ, हर घड़ी बदल रहा था और धूप-छांव के रंगों में रंग रहा था। एक क्षण वह समूचा उमग उठता, जैसे उसकी हर चीज अचानक मुसकरा रही हो – छोटे छोटे बर्च-वृक्षों के कोमल तने,

एकाएक, सफ़ेद रेशम की मृदु आभा से चमकने लगते, धरती पर पड़े नन्हे पत्ते अचानक ऐसे चमकने लगते जैसे किसी ने गुलाबी सोने के पत्तर छितरा दिये हों, और घुंघराले ऊंचे फ़र्न की कमनीय टहनियां – अति पके अंगूर के से अपने शारदीय रंगों से सज्जित – आपस में गुंथी ऐसी मालूम होतीं जैसे कोई अन्तहीन जाल बुन रही हों। इसके बाद, अचानक, हर चीज़ फिर धुंधली नीलिमा में डूब जाती। शोख़ रंग पलक झपकते तिरोहित हो जाते, बर्च-वृक्ष एकदम सफ़ेद और आभा-शून्य हो जाते, ताज़ा गिरी बर्फ़ की भांति सफ़ेद, जिसे जाड़ों के सूरज की ठंडी किरनों ने अभी दुलराना शुरू नहीं किया हो। और चतुराई के साथ, मानो चोरी-छिपे से, महीन महीन वर्षा की झड़ी और फुसफुसाहट शुरू हो जाती। बर्च-वृक्षों के पत्ते अभी प्राय: सबके सब हरे थे, हालांकि उनमें पीलेपन की झलक आ चली थी। केवल कहीं कहीं इक्के-दुक्के नन्हे नन्हे पत्ते, एकदम लाल या सुनहरे, हिलगे थे और सूरज की रोशनी में उनकी लपक देखते ही बनती थी जब सूरज की किरनें, चमचमाती बारिश से सद्यस्नात कोमल टहनियों के आल-जाल और रोशनी के चिन्दों के भंवर को छेदतीं अचानक उनका स्पर्श करती थीं। एक भी पक्षी चहचहा नहीं रहा था। सबके सब नज़र से ओझल और चुप थे, सिवा इसके कि कभी कभी खिल्ली-सी उड़ाते टामटिट की धातुवी, घंटी जैसी, आवाज़ गूंज उठती थी। बर्च-वृक्षों के इस बनखंड में रुकने से पहले, अपने कुत्ते के साथ, ऊंचे एस्प-वृक्षों के एक बन में से मुझे गुज़रना पड़ा था। मैं मानता हूं कि इस पेड़ के लिए – एस्प-वृक्ष के लिए – मेरे मन में कोई ख़ास चाह नहीं है, जो अपने हल्के बैंगनी रंग के तने को लिये हुए अपनी भूरी-हरी धातुवी पत्तियों को भरसक ऊंचे फेंकता और कांपते पंखे की भांति ऊपर हवा में खुलता मालूम होता है। लम्बे डंठलों से अटपटे ढंग से हिलगी उसकी गोल भद्दी पत्तियों का चिर-कम्पन मुझे मुग्ध नहीं करता। वह केवल तभी कुछ सुहावना लगता है जब, ग्रीष्म ऋतु की किसी सांझ को, नीची हरियाली से एकाकी ऊंचा उठा

हुआ, छिपते हुए सूरज की लाल पड़ती किरनों की ओर मुंह किये, चमकता और थिरकता है, ऊपर से नीचे तक एक अखंडित आभा से निखरा हुआ, या फिर उस समय जब दिन खुला और हवादार होता है, और उसका रोम रोम हिलोरें लेता, सरसराता और नीले आकाश से कानाफूसी करता है, और उसका प्रत्येक पत्ता जैसे उससे अलग होने की लालसा से अभिभूत हो, उड़कर मंडराता हुआ कहीं दूर चला जाना चाहता है। लेकिन, यों नियमतः, यह पेड़ मेरे जी को नहीं भाता, और इसलिए एस्प के पेड़ों के झुरमुट में रुककर सुस्ताने की बजाय मैं बर्च-वृक्षों के बनखंड में चला आया, और एक पेड़ की छाया में मैंने डेरा जमाया जिसकी टहनियां धरती के निकट काफ़ी नीचे अपनी बांहें फैलाये थीं, और फलतः वर्षा से मेरा बचाव करने में समर्थ थीं। चारों ओर की दृश्यावली की कुछ देर सराहना करने के बाद मैं एक बहुत ही मीठी और निर्विघ्न नींद की गोद में ढुरक गया जिसके सुख से केवल शिकारी ही परिचित होते हैं।

नहीं कह सकता कि कितनी देर तक मैं सोता रहा, लेकिन जब मैंने आंखें खोलीं तब बनखंड की तमाम गहराइयों में सूरज की रोशनी फैली हुई थी, और सभी दिशाओं में—खुशी से सरसराते पत्तों के झरोखों में से—गहरा नीला आकाश झांकता और जैसे अपनी आभा की दमक दिखाता मालूम होता था। बादल ग़ायब हो गये थे, मुखरित हवा के झोंके उन्हें अपने साथ भगा ले गये थे, मौसम खुल गया था और हवा में एक विशेष प्रकार की खुश्क ताज़गी का अनुभव होता था, एक ऐसी ताज़गी का जो हृदय में आह्लाद का संचार करती है और प्रायः अदबदाकर—वर्षा के दिन के बाद—और भी अधिक उजली सांझ की निश्चित सूचना देती है। मैं उटने और एक बार अपना भाग्य आज़माने की कोशिश करने जा ही रहा था कि, अचानक, एक निश्चल मानवीय आकृति पर मेरी नज़र पड़ी। मैंने ध्यान से देखा। वह एक किसान लड़की थी। वह मुझ से बीसेक डग दूर बैठी थी। उसका सिर जैसे किसी सोच में झुका था।

उसके हाथ उसके घुटनों पर पड़े थे। उनमें से एक में जो अधखुला था, वह जंगली फूलों का एक गुलदस्ता थामे थी जो, हर सांस के साथ, चारखाने के उसके पेटीकोट से लगा हिल रहा था। उसका साफ़-सुथरा सफ़ेद झगला, जिसके गले और कलाइयों के बटन बंद थे, छोटी छोटी मृदु सिलवटों में उसके बदन से लिपटा था। बड़े बड़े पीतवर्ण मनकों की दो लड़ियां उसके गले को छूतीं उसके वक्ष पर झूल रही थीं। वह बहुत ही सुन्दर थी। बहुत ही प्यारे, क़रीब क़रीब खाकी आभा से युक्त उसके घने सफ़ेद बाल सावधानी से संवारे हुए दो अर्द्ध-वृत्तों में विभाजित थे और उनके ऊपर गुलाबी रंग का एक सकरा फ़ीता बंधा था जो काफ़ी नीचे, उसके हाथीदांत के से सफ़ेद माथे पर से होता हुआ, गुज़रता था। उसके बाक़ी चेहरे का रंग सुनहरा गेहुवां था, ठीक वैसा ही जैसा कि मृदु त्वचा के संवलाने पर हो जाता है। उसकी आंखें मैं नहीं देख सका, वह उन्हें नीचे ही झुकाये रही, लेकिन उसकी कमान-सी ऊंची भौंहें और लम्बी पलकें दिखाई दे रही थीं। वे भीगी थीं और उसके एक गाल पर सूरज की रोशनी में तेज़ी से सूखते हुए आंसुओं के अवशेष – जो ठीक अपेक्षा से अधिक पीतवर्ण उसके होंठों तक ढुरक आये थे – झिलमिला रहे थे। नन्हा-सा उसका चेहरा, कुल मिलाकर, बहुत ही मुग्ध कर देनेवाला था। यहां तक कि उसकी मोटी और बैठी हुई सी नाक भी भद्दी नहीं मालूम होती थी। उसके चेहरे के हाव-भाव ने – मुख की मुद्रा ने – मुझे ख़ास तौर से प्रभावित किया। वह कुछ इतना सरल और कोमल था, कुछ इतना उदास और अपनी इस उदासी पर कुछ ऐसे बालसुलभ अचरज से भरा था कि देखते ही बनता था। साफ़ था कि वह किसी का इन्तज़ार कर रही है। किसी चीज़ के चटकने की धुंधली-सी आवाज़ सुनाई दी। उसने तुरत अपना सिर उठाया और अपने इर्द-गिर्द देखा। पारदर्शी छांव में उसकी बड़ी बड़ी, स्वच्छ और हिरनी की भांति सहमी-सी आंखों की मुझे एक द्रुतगामी झलक दिखाई दी। कुछ क्षणों तक वह टोह लेती रही,

उस स्थल की ओर अपनी पूरी खुली आंखों से, बिना डिगे देखते हुए जहां से कि वह अस्पष्ट-सी आवाज़ आयी थी। फिर उसने एक उसास भरी, धीरे-से अपना सिर घुमाया, और भी ज़्यादा नीचे झुक गयी, और अपने फूलों को छांटने-चुनने लगी। उसकी पलकें लाल हो गयी थीं, होंठों में हल्के बल पड़ चले थे, और उसकी घनी पलकों की ओट में से एक आंसू ढुरक आया था, और उसके गाल पर थिर होकर चमक रहा था। इस प्रकार काफ़ी से ज़्यादा समय हो गया, बेचारी लड़की हिली-डुली तक नहीं, सिवा इसके कि उसके हाथ, बीच बीच में, गहरी निराशा से कसमसा उठते थे, और वह बराबर सुन रही थी, बराबर टोह में लगी थी ... एक बार फिर जंगल में कड़कड़ की आवाज़ हुई। वह चौंकी। आवाज़ बन्द नहीं हुई, उत्तरोत्तर ज़्यादा स्पष्ट होती और निकट आती गयी। आख़िर तेज़ तेज़ और सुनिश्चित डगों की चाप सुनाई दी। उसने अपने-आपको चौकस किया, और लगा जैसे कुछ सहम गयी हो। उसकी एकटक दृष्टि जैसे कांप रही थी, आशा से उमंगी पड़ रही थी। झुरमुट में से एक पुरुष का आकार प्रकट हुआ। उसने उसकी ओर देखा, सहसा उसके गालों पर लाली दौड़ गयी, होंठों पर एक उजली, उल्लास में पगी, मुसकान खेलने लगी, उसने उठने की कोशिश की, लेकिन जैसे उठी थी वैसे ही फिर बैठ भी गयी, सकपकायी-सी, चेहरे का रंग उड़ा हुआ। केवल उसकी आंखें, जो थरथरा और क़रीब क़रीब याचना-सी करती मालूम होती थीं, निकट आते हुए आदमी की ओर उठीं। वह आया और उसके बराबर में आकर खड़ा हो गया।

अपनी ओट की जगह से मैंने उत्सुकता के साथ उसे देखा। सच मानिये, मुझे वह आदमी कोई बहुत पसन्द नहीं आया। बाहरी टीमटाम से वह किसी धनी युवा कुलीन का मुंहचढ़ा अरदली मालूम होता था। उसकी साज-सज्जा से तरहदारी और फ़ैशनेबल लापर्वाही की बू आती थी। वह छोटी काट का कोट पहने था, कत्थई रंग का, शायद ही उसके

मालिक की उतरन, बटन ऊपर तक बन्द किये, गुलाबी क्रैवट जिसके छोर हल्के बैंगनी रंग के थे, और सिर पर सुनहरी फ़ीते से लैस काली मख़मली टोपी वह पहने था जिसे उसने आगे की ओर ठीक भौंहों तक नीचे खींच रखा था। उसकी सफ़ेद क़मीज़ का गोल कालर निर्ममता के साथ उसके कानों तक उठा हुआ था और उसके गालों में चुभ रहा था, और उसकी आस्तीन के कलफ़दार कफ़ उसके समूचे हाथ को – उसकी टेढ़ी-तिर्छी लाल उंगलियों समेत – ढके थे। उंगलियों में वह सोने और चांदी की अंगूठियां सजाये था जिनमें एक तरह के फूल की शकल के फ़ीरोज़े जड़े थे। उसका लाल, ताज़ा और उद्धत-सा दिखनेवाला चेहरा – जहां तक तजुर्बा है – उन चेहरों की कोटि का था जो प्रायः हमेशा मर्दों को घिनौने और दुर्भाग्यवश स्त्रियों को अक्सर आकर्षक मालूम होते हैं। वह अपनी औघड़ मुखाकृति पर, प्रत्यक्षतः हिक़ारत और ऊब का भाव धारण करने का प्रयत्न कर रहा था। वह अपनी दूधिया-कंजी आंखों को, जो पहले से ही काफ़ी छोटी थीं, निरन्तर सिकोड़े था। वह नाक-भौं सिकोड़ता, होंठों के छोर नीचे गिरा लेता, जमुहाई लेने का अभिनय करता और लापर्वाही – लेकिन एकदम सहज लापर्वाही नहीं – के साथ अपनी तरहदार घुंघराली लाल कनपटी के बाल को पीछे की ओर फेंकता, या अपने उपरले मोटे होंठ पर उगी लाल लाल मूंछों को मरोड़ता – गर्ज़ यह कि उसका हाव-भाव एकदम असह्य था। ज्यों ही उसकी नज़र उस युवा किसान लड़की पर पड़ी, जो उसकी इन्तज़ार कर रही थी, उसने अपनी पैंतरेबाज़ी शुरू कर दी। धीमे, झूमते डगों से वह उसके निकट पहुंचा, क्षण-भर अपने कंधों को बिचकाये खड़ा रहा, कोट की जेबों में अपने दोनों हाथ डाले, और बेचारी लड़की के सामने उड़ती हुई तथा उपेक्षापूर्ण नज़र से एक बार देख भर लेने के बाद धरती पर बैठ गया।

"हां तो," उसने कहना शुरू किया, अब भी दूसरी ओर देखते, अपनी टांग को झुलाते और जमुहाई लेते हुए, "क्या बहुत देर हो गयी तुम्हें यहां बैठे?"

लड़की एकाएक जवाब नहीं दे सकी।

"हां, काफ़ी देर हो गयी, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच," आख़िर मुश्किल से सुनाई पड़नेवाली आवाज़ में उसने कहा।

"ओह!" (उसने अपनी टोपी उतारी, शाहाना अन्दाज़ में अपने घने, कड़े घुंघराले बालों पर हाथ फेरा जो नीचे क़रीब क़रीब उसकी भौंहों तक उग आये थे, फिर गर्व के साथ अपने चारों ओर नज़र डाली और सावधानी के साथ अपने बेशक़ीमती सिर को ढक लिया।) "मुझे तो एकदम भूल ही गया था। इसके अलावा, बारिश हो रही थी!" (उसने फिर जमुहाई ली।) "काम इतना था कि बाप-रे! किसका ध्यान रखे, और किसका नहीं, तिस पर हर घड़ी की डांट-डपट। तो हम कल जा रहे हैं..."

"कल?" किशोर लड़की के मुंह से निकला, और उसकी हैरान आंखें उसपर जम गयीं।

"हां, कल। अरे बस, बस!" उसके समूचे बदन को सुबकता और उसके सिर को धीरे धीरे नीचे झुकता हुआ देखकर चिढ़ के स्वर में उसने कहा। "देखो, रोओ नहीं, आकुलीना। तुम जानती हो, मुझसे यह बरदाश्त नहीं हो सकता।" (और अपनी टुंटी-सी नाक को उसने सिकोड़ा।) "नहीं तो मैं तुरत चल दूंगा... क्या मूर्खता है, रोना-बिसूरना!"

"अच्छा तो नहीं, मैं नहीं रोऊंगी!" जैसे-तैसे अपने आंसुओं को रोकते हुए आकुलीना बोली। "तो कल जा रहे हो?" कुछ देर रुककर उसने फिर कहा, "भगवान ख़ैर करे, एक-दूसरे से जाने फिर कब मिलना होगा वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच!"

"मिलेंगे, हम ज़रूर मिलेंगे। अगर अगले साल नहीं, तो फिर कभी। लगता है, मालिक पीटर्सबर्ग सरकारी नौकरी करना चाहते हैं," वह कहता गया, अपने प्रत्येक शब्द के – उपेक्षापूर्ण कृपालुता के अन्दाज़ में – गुनगुनाकर कहते हुए। "और शायद हमें विदेशों में भी जाना पड़े।"

"तुम मुझे भूल जाओगे, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच," आकुलीना ने उदास स्वर में कहा।

"नहीं, भूल क्यों जाऊंगा? मैं तुम्हें नहीं भूलूंगा। तुम बस चौकस रहना, कोई बेवक़ूफ़ी न करना। बप्पा का कहना मानना ... और मैं तुम्हें नहीं भूलूंगा, न-हीं!" (और उसने इत्मीनान के साथ बदन को फिर सीधा किया और जमुहाई ली।)

"मुझे भूलना नहीं, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच," याचना के स्वर में वह कहती गयी, "जितना मैं तुम्हें चाहती हूं, सच, उतना और कोई नहीं चाह सकता। मैंने सभी कुछ तुम्हें सौंप दिया है। तुम कहते हो, मैं अपने बप्पा का कहना मानूं। लेकिन, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच, मैं अपने बप्पा का कहना कैसे मान सकती हूं?"

"क्यों?" (उसने इस शब्द का जैसे अपने पेट के भीतर से उच्चारण किया, कमर के बल लेटते और अपने हाथों को सिर के नीचे लगाते हुए।)

"नहीं, यह कैसे हो सकता है, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच? तुम ख़ुद भी जानते हो..."

उसकी आवाज़ टूट गयी। वीक्तोर अपनी घड़ी की इस्पाती ज़ंजीर से खेल रहा था।

"तुम मूर्ख नहीं हो, आकुलीना," उसने अन्त में कहा, "सो फ़िज़ूल की बात न करो। मैं तुम्हारा भला चाहता हूं, समझ रही हो न? बिलाशक, तुम मूर्ख नहीं हो, एकदम निरी गंवार, जैसा कि कहते हैं। और तुम्हारी मां भी हमेशा देहातिन नहीं थी। फिर भी तुम पढ़ी-लिखी नहीं हो–सो तुम से जो कह रहा हूं, वह तुम्हें मानना चाहिए।"

"लेकिन मुझे तो डर लगता है, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच।"

"ओह-ह! सो कुछ नहीं, मेरी गुड़िया! डर की बात भी तुमने ख़ूब कही! भला डर काहे का?" उसने कहा और फिर उसके निकट खिसकते हुए बोला, "यह क्या है, फूल?"

"हां," आकुलीना ने भरी-सी आवाज़ में कहा और इसके बाद कुछ खिलते हुए बोली – "यह देखो, बन-तैन्सी के फूल मैंने चुने हैं जो बछड़ों के लिए अच्छे रहते हैं। और यह कलीदार गेंदा है – कण्ठमाला से बचानेवाला। कितना ख़ूबसूरत यह फूल है! इतना ख़ूबसूरत फूल मैंने पहले कभी नहीं देखा। और ये मुझे-न-भूलना हैं, और ये मां-के-छौने ... और ये – इन्हें मैंने तुम्हारे लिए बटोरा है।" पीतवर्ण तैन्सी के नीचे से नीलपोथों का एक गुच्छा, जो घास की एक महीन पत्ती से बंधा था, निकालते हुए अन्त में उसने कहा, "क्यों तुम्हें पसन्द है न?"

वीक्तोर ने अलस भाव से हाथ बढ़ाया, फूलों को लिया, लापर्वाही के साथ उन्हें नाक से लगाया और फिर, ऊपर की ओर देखते हुए, उन्हें अपनी उंगलियों में मरोड़ने लगा। आकुलीना उसे देख रही थी। उसकी उदास आंखें मृदु भक्ति, मुग्ध समर्पण और प्रेम में पगी थीं। वह उससे डर रही थी, रोने का साहस उसमें नहीं था, उससे विदा ले रही थी, और मुग्धा की भांति आख़िरी बार उसे देख रही थी। और वह, धरती पर लेटा, सुलतान की भांति मटकता शाही उदारता और अनुकम्पा के अन्दाज़ में, उसकी सराहना को सहन कर रहा था। और, मुझे कहना चाहिए कि, मैं बड़े गुस्से से उसके लाल चेहरे को देख रहा था जिसपर हिक़ारत भरी उपेक्षा का नक़ाब चढ़ा था, और उसके नीचे उसका तुष्ट तथा दुलराया हुआ अहम् प्रकट होता था। और आकुलीना उस समय कितनी प्यारी, कितनी मधुर मालूम होती थी। उसकी समूची आत्मा, विश्वास और अनुराग में पगी, निरावरण उसके आगे बिछी थी, आशा-आकांक्षा और दुलार भरी कोमलता से हुमकती, जबकि वह... उसने नीलपोथों को नीचे गिरा दिया, अपने कोट की बग़लवाली जेब में से आंख का एक गोल शीशा निकाला जो पीतल के घेरे में जड़ा था, और उसे अपनी आंख में चिपकाने का प्रयत्न करने लगा। अपनी भौंहों को सिकोड़कर, अपने गाल और नाक को ऊपर की ओर समेट बिचकाकर,

उसने बहुत कोशिश की कि शीशा वहां जमा रहे, लेकिन जितना ही वह कोशिश करता, उतना ही वह बार बार उसके हाथ में आ गिरता।

"यह क्या है?" अन्त में आकुलीना ने अचरज से पूछा।

"ऐनक का शीशा," उसने गर्व के साथ जवाब दिया।

"क्या होता है इससे?"

"अरे, ख़ूब साफ़ दिखता है।"

"ज़रा देखूं।"

वीक्तोर ने भौंहें चढ़ायीं, लेकिन शीशा उसे दे दिया।

"देखो, इसे तोड़ न डालना।"

"डरो नहीं। नहीं तोड़ूंगी।" (उसने उसे अपनी आंख से लगाया।) "मुझे तो कुछ दिखाई नहीं देता," भोलेपन के साथ उसने कहा।

"लेकिन तुमने अपनी आंख तो बंद की नहीं," नाराज़ हुए शिक्षक के स्वर में उसने जवाब दिया। (उसने अपनी वही आंख मूंद ली जिसके सामने शीशा था।)

"यह नहीं, यह नहीं, बल्कि दूसरी—मूर्ख कहीं की!" वीक्तोर ने चिल्लाकर कहा और इससे पहले कि वह अपनी ग़लती ठीक कर पाती, उसने उसके हाथ से शीशा छीन लिया।

आकुलीना के गालों पर हल्की लाली दौड़ गयी, धीमे से वह मुसकरायी, और अपना मुंह दूसरी ओर फेर लिया।

"साफ़ बात तो यह कि यह हम जैसे लोगों के लिए नहीं है," उसने कहा।

"बेशक, सो तो मालूम ही होता है।"

बेचारी लड़की चुप हो गयी, और उसने एक उसास भरी।

"ओह, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच, तुम्हारे बिना जाने मेरा क्या हाल होगा!" अचानक उसके मुंह से निकला।

वीक्तोर ने शीशे को अपने कोट के पल्ले से साफ़ किया और उसे फिर अपने जेब के हवाले कर दिया।

"सो तो है," अन्त में उसने कहा, "शुरू शुरू में, इसमें शक नहीं, तुम्हें बड़ा कठिन मालूम होगा।" (मेहरबाना अन्दाज़ में उसने उसके कंधे को थपथपाया। उसके हाथ को लड़की ने धीमे से अपने कंधे पर से हटाया और डरते डरते उसे चूमा।) "अरे बस, बस, देखो, कितनी अच्छी लड़की हो तुम, सच!" आत्मसन्तुष्ट मुसकान के साथ वह कहता गया, "लेकिन किया भी क्या जाय? तुम खुद ही देखो। मैं और मेरे मालिक सदा तो यहां रह नहीं सकते। जाड़ा अब आया ही चाहता है, और जाड़ों में देहात – तुम खुद जानती हो – बस, तबीयत घिन्ना जाती है। और पीटर्सबर्ग – वहां की तो बात ही दूसरी है। वहां ... वहां ऐसी ऐसी चीज़ें हैं कि तुम्हारे जैसी मूर्खा लड़की सपने में भी उनकी कल्पना नहीं कर सकती। ऐसे ऐसे घर और सड़कें, और सभा-समाज, और अदब-क़ायदे – बस, एकदम अद्भुत!" (आकुलीना अति व्यग्र आकुलता से – एकाग्रता से – सुन रही थी, उसके होंठ बच्चों की भांति अधखुले थे।) "लेकिन बेकार," धरती पर करवटें बदलते हुए अन्त में उसने कहा, "तुम्हें यह सब बताने से क्या फ़ायदा? तुम्हारी समझ में यह बातें कहां आयेंगी?"

"ऐसा क्यों, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच! मैं समझती हूं, मैं हर चीज़ समझती हूं।"

"अरे बाप रे, क्या लड़की है यह!"

आकुलीना ने आंखें झुका लीं।

"वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच, एक समय था जब तुम मुझसे इस तरह की बातें नहीं करते थे," उसने कहा और अपनी आंखों को नीचे झुकाये रही।

"एक समय? एक समय! ओह भगवान!" उसने जैसे क्षोभ से कहा।

दोनों चुप थे।

"अच्छा तो अब चलना चाहिए," उसने कहा और कोहनी के बल उठना भी शुरू कर दिया।

"अरे नहीं, थोड़ा और ठहरो," याचना के स्वर में आकुलीना ने मनुहार की।

"किस लिए? क्यों, तुमसे विदा तो ले ही चुका हूं।"

"थोड़ा और ठहरो," आकुलीना ने दोहराया।

वीक्तोर फिर लेट गया और सीटी बजाने लगा। आकुलीना ने क्षण-भर के लिए भी अपनी आंखें इधर-उधर नहीं कीं – बराबर उसे देखती रही। साफ़ मालूम होता था कि वह क्रमशः भावों से अभिभूत होती जा रही है। उसके होंठों में बल पड़ रहे थे, और उसके पीले गालों में एक हल्की दमक दौड़ गयी थी...

"वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच," टूटी हुई आवाज में आख़िर उसने कहना शुरू किया, "यह तुम बहुत बुरा कर रहे हो, बेशक, यह तुम बहुत बुरा कर रहे हो, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच!"

"बुरा क्या कर रहा हूं?" उसने भौंहें चढ़ाते हुए पूछा, थोड़ा-सा सिर उठाया और उसकी ओर उन्मुख हो गया।

"यह बहुत बुरा है, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच। विदा के समय कम से कम सहानुभूति का एकाध शब्द तो तुम कह सकते थे, मुझ अभागी, बेसहारा और ग़रीब के लिए कुछ तो तुम्हारे मुंह से निकल सकता था..."

"लेकिन मैं तुमसे कहूं क्या?"

"मैं नहीं जानती। यह तुमसे ज़्यादा और किसे मालूम होगा, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच। तुम यहां से जा रहे हो, और एक छोटा-सा शब्द भी... ऐसा मैंने क्या किया है जिसकी मुझे तुम यह सज़ा दे रहे हो?"

"तुम भी अजीब हो! भला मैं क्या कर सकता हूं?"

"कम से कम एक शब्द..."

"बस, वही एक रट!" उसने खीजकर कहा और उठ खड़ा हुआ।

"गुस्सा न करो, वीक्तोर अलेक्सान्द्रिच," उसने हड़बड़ाकर कहा, अपने आंसुओं को मुश्किल से दबाते हुए।

"गुस्सा-वुस्सा कुछ नहीं, केवल तुम्हारी यह मूर्खता ... आख़िर तुम चाहती क्या हो? तुम जानती हो कि मैं तुमसे विवाह नहीं कर सकता – ठीक है न? नहीं, मैं नहीं कर सकता। तो फिर, बोलो, तुम क्या चाहती हो?" (उसने अपना मुंह आगे की ओर कर लिया जैसे उसके जवाब को लपकना चाहता हो, और अपने हाथों की उंगलियां फैला लीं।)

"मैं कुछ नहीं चाहती ... नहीं, कुछ नहीं," उसने लड़खड़ाती-सी आवाज़ में कहा, और साहस बटोरते हुए अपना कांपता हुआ हाथ उसकी ओर बढ़ाया। "बस, विदा के समय केवल एक शब्द ..."

और आंसू उसकी आंखों से फूट पड़े।

"यह देखो, मतलब यह कि अब इसने आंसुओं की नदी बहानी शुरू कर दी," वीक्तोर ने कहा, स्थिर भाव से, अपनी टोपी को नीचे आंखों तक खींचते हुए।

"मैं कुछ नहीं चाहती," वह कहती गयी, सुबकते और अपने चेहरे को हाथों से ढकते हुए। "घर में मेरे लिए क्या है? क्या है मेरे सामने? क्या बनेगा मेरा? किस घाट जाकर लगूंगी मैं अभागिन? किसी चंडूल के गले से वे मुझे बांध देंगे... मेरा कोई नहीं... मुझ अभागिन का कोई नहीं!"

"अलापे जाओ, अपना यह राग अलापे जाओ!" दबी आवाज़ में वीक्तोर बुदबुदाया, बेसब्री से वहीं अपनी जगह पर कसमसाते हुए।

"कुछ तो वह अपने मुंह से कह सकता था, एक शब्द... केवल इतना – आकुलीना... मैं..."

हृदय को चूर कर देनेवाली सुबकियों की बाढ़ उटी और वह अपना वाक्य पूरा नहीं कर पायी। धरती पर गिरकर घास में उसने

अपना मुंह दुबका लिया और बुरी तरह, फूट फूटकर, रोने लगी... उसका समूचा शरीर बुरी तरह हिल रहा था, उसकी गरदन धौंकनी की भांति उठ-गिर रही थी... जाने कब से दबा हुआ उसका दुःख, उसकी वेदना, आखिर बांध तोड़कर फट चली। वीक्तोर उसके ऊपर झुका खड़ा था, क्षण-भर खड़ा रहा, फिर मुड़ा और डग नापता वहां से चल दिया।

कुछ क्षण गुज़र गये। वह अब थिर हुई, सिर ऊंचा किया, उछलकर उठ खड़ी हुई, इर्द-गिर्द देखा, और अपने हाथों को मसला। उसने उसके पीछे लपकने की कोशिश की, लेकिन उसकी टांगें जवाब दे गयी—वह घुटनों के बल गिर पड़ी... मुझसे रहा नहीं गया। लपककर उसके पास पहुंचा। लेकिन ठीक इससे पहले कि वह मुझे देख भी पाती, इतरमानवीय साहस करके हल्की-सी चीख़ के साथ वह उठी और पेड़ों के पीछे ग़ायब हो गयी। उसके फूल धरती पर बिखरकर वहीं छूट गये।

मैं क्षण-भर खड़ा रहा, झुककर नीलपोथों का गुच्छा उठाया और जंगल से निकल खुले खेत में आ गया। पीतवर्ण निर्मल आकाश में सूरज नीचे उतर गया था, उसकी किरनें भी पीली और ठंडी पड़ गयी मालूम होती थीं। उनमें चमक नहीं थी। वे अनटूटे, पीले आलोक में समा गयी थीं। सूरज को छिपे आध घंटा भी नहीं हुआ होगा, लेकिन सांझ की दमक मुश्किल से ही कहीं नज़र आती थी। हवा के झोंके, पीले झुलसे हुए ठूंठों को पार करते मेरी ओर बढ़े आ रहे थे। चुरमुराकर दोहरी हुई छोटी छोटी पत्तियां, भंवर बनी हुई, झोंकों के साथ आगे आगे आतीं और सड़क को पार क़रतीं और बनखंड के किनारे किनारे उड़ चलतीं। बन के पेड़ों की वह पांत जो दीवार की भांति खेतों की ओर उन्मुख थी, समूची हिल रही थी और प्रकाश की लघु रेखाओं से आलोकित थी। प्रकाश की रेखाओं में उजलापन था, लेकिन दमक नहीं थी। लाली मायल पौधों पर, घास पर, इर्द-गिर्द के घास-फूस पर, शरदकालीन

मकड़ी के जालों के अनगिनत सूत्र चमचमा और थिरक रहे थे। मैं टिटककर खड़ा हो गया। मेरा हृदय भारी था। धुंधली पड़ती प्रकृति की उजली किन्तु ठंडी मुसकराहट के आवरण में आसन्न शीत का उदास भय मेरी रगों में सरसराता मालूम होता था। खूब ऊंचे सिर के ऊपर कोई चौकन्ना कौवा, अपने पंखों से हवा को चीरता—सप्रयास और तेज़ी के साथ—मंडरा रहा था। उसने अपना सिर मोड़ा, कनखियों से मेरी ओर देखा, अपने पंखों को फड़फड़ाया और, एकाएक कांव की आवाज़ करता जंगल में ओझल हो गया। कबूतरों का एक भारी झुंड, मगन भाव से, खलिहान से हवा में उड़ा, और दलबद्ध रूप में अचानक चक्कर लगाता हुआ, व्यस्तता के साथ, खेत में इस-उस ओर बिखर चला। शरद् का असंदिग्ध चिन्ह! पहाड़ी के नंगे-बूचे ढलुवान पर से कोई गाड़ी को हांकता चला आ रहा था। गाड़ी ख़ाली थी, और उसके पहिए ज़ोरों से खड़खड़ की आवाज़ कर रहे थे...

मैंने घर का रुख़ किया। बेचारी आकुलीना का चेहरा बहुत देर तक मेरी आंखों के सामने तैरता रहा, और नीलपोथों का उसका वह गुच्छा—जो जाने कब का मुरझा चुका है—आज दिन भी मेरे पास सुरक्षित है...

श्चिग्री ज़िले का हैमलेट

अपने भ्रमण में एक बार मुझे एक धनी ज़मींदार तथा शिकारी अलेक्सान्द्र मिखाइलिच ग० के यहां भोज का निमंत्रण मिला। उसकी मिल्कियत उस छोटे-से गांव से तीनेक मील दूर थी जहां कि उस समय मैं टिका हुआ था। मैंने फ़ॉक-कोट पहना, एक ऐसी चीज़ जिसके बिना यात्रा पर निकलने की—यहां तक कि शिकार के लिए भी जाने की—मैं किसी को सलाह नहीं दूंगा, और अलेक्सान्द्र मिखाइलिच के घर की ओर चल दिया। भोज का समय छः बजे नियत था। मैं पांच बजे पहुंचा, और देखा कि पहले से ही काफ़ी कुलीन वहां मौजूद हैं। कितने ही वर्दियां पहने थे, अनेक मामूली लिबास में थे, बाक़ी पंचमेली साज़-सज्जा में आये थे। मेज़बान ने बड़े तपाक से मेरा स्वागत किया, लेकिन जल्दी ही बटलर के भंडारख़ाने की ओर लपक गया। वह किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के आने की प्रतीक्षा कर रहा था और काफ़ी उद्विग्न हो उठा था, हालांकि समाज में उसकी स्वतंत्र स्थिति थी और उसकी सम्पत्ति को देखते हुए उसका इतना उद्विग्न हो उठना कुछ अटपटा-सा मालूम होता था। अलेक्सान्द्र मिखाइलिच ने कभी विवाह नहीं किया था, और स्त्रियों से वह कोई लाग-लगाव नहीं रखता था। उसका घर चिर-कुमारों का अड्डा था। वह राजसी ठाट से रहता था। अपने पूर्वजों की गढ़ी का उसने विस्तार कर लिया था और शान के साथ नये सिरे से उसे सजाया था। मास्को से मदिरा मंगाने पर वह हर साल पन्द्रह

हज़ार रूबल ख़र्च करता था और उच्चतम सार्वजनिक प्रतिष्ठा का उपभोग करता था। सर्विस से अवकाश ग्रहण किये उसे एक मुद्दत हो चुकी थी और सरकारी मान-मर्यादा पाने की कोई इच्छा उसमें नहीं थी। तब फिर क्या बात थी जो, अपनी लीक से हटकर, उसे उच्च सरकारी पद के मेहमान को बुलाने की ज़रूरत महसूस हुई, और भोज के दिन सुबह से ही उद्विग्नता ने उसे घेर लिया? लेकिन यह एक ऐसा रहस्य है जो अज्ञात के गर्भ में छिपा है, जैसे कि मेरा एक अटार्नी मित्र कहा करता था। जब कोई उससे पूछे कि वह घूस लेता है या नहीं तो उसका भी यही जवाब होता था।

मेज़बान के खिसक जाने के बाद मैंने कमरों का रौंद लगाना शुरू किया। प्रायः सब के सब मेहमान मेरे लिए एकदम अनजाने थे। क़रीब बीसेक लोग ताश की मेज़ों पर पहले से ही आसन जमाये थे। प्रिफ़रेन्स (ताश का खेल) के इन भक्तों में दो योद्धा थे, जिनके चेहरे रईसाना लेकिन कुछ निःसत्व-से मालूम होते थे, कुछ ग़ैरफ़ौजी लोग थे, गलों में ऊंचे तथा तंग क्रैवट कसे हुए और ख़िज़ाब लगी मूंछें नीचे को झुकी हुईं—ऐसी जो केवल दृढ़ चरित्र पर हितैषी व्यक्तियों में पायी जाती हैं। घमंड के साथ वे अपने ताशों को उठाते थे और, बिना अपनी गरदन को जुम्बश दिये, कनखियों से हर आनेवाले को अपनी नज़र में उतारते जाते थे। इनके अलावा पांच या छः प्रांतीय अधिकारी थे—गोल तोंदें, छोटे छोटे थलथल नम हाथ, और गुरू-गम्भीर, छोटी छोटी, निश्चल टांगें। ये महानुभाव दबी आवाज़ों में बोलते थे, कृपापूर्ण अन्दाज़ में चारों ओर अपनी मुसकानों की वर्षा करते थे, ताश के पत्तों को बहुत निकट एकदम अपनी क़मीज़ों के अग्रभाग से सटाकर थामते थे, और जब वे तुरुप चलते तो अपने ताशों को मेज़ पर पटकते नहीं थे, बल्कि—इसके प्रतिकूल—लहराते हुए उन्हें मेज़ के हरे कपड़े पर तैराते थे, और एक हल्की तथा अलंकारिक ध्वनि के साथ जीत के पैसे संभालते थे।

बाक़ी सब लोग सोफ़ों पर बैठे थे, या टुकड़ियों के रूप में दरवाज़ों अथवा खिड़कियों के पास हिलगे थे। स्त्रियों जैसी शकल-सूरत के एक महानुभाव—जो अब युवा नहीं रहे थे—एक कोने में खड़े कांप रहे थे, शरमा-सकुचा रहे थे और घड़ी की अपनी सील को, अन्यमनस्कता में, अपने पेट पर झुलाते जा रहे थे, हालांकि उनकी ओर कोई नज़र तक नहीं डाल रहा था। कुछ अन्य लोग जो चिड़ैया-दुमवाले फ़ॉक-कोट तथा चारख़ाना पतलून पहने थे—उनके ये कोट और पतलून दर्ज़ियों की कार्पोरेशन के अध्यक्ष मास्को के दर्ज़ी फ़ीर्स क्ल्यूखिन की कारीगरी का नमूना थे—असाधारण सहज भाव और ज़िन्दादिली के साथ आपस में बतिया रहे थे और बातों के दौरान में, बिना किसी प्रयास के, अपने सफाचट तथा चिकने सिरों को इस बाज़ू से उस बाज़ू मोड़ रहे थे। लघु-दृष्टि और सुनहरे बालों वाला बीस वर्ष का एक युवा, सिर से पांव तक काले कपड़ों से सजा, प्रत्यक्षतः सलज्ज, व्यंग से मुसकरा रहा था...

मैंने ऊबना शुरू ही किया था कि तभी, अचानक, एक युवक मुझसे आ मिला। वोइनित्सिन उसका नाम था। वह एक छात्र था—बिना किसी डिग्री का छात्र। वह अलेक्सान्द्र मिखाइलिच के यहां रहता था... किस हैसियत से, यह ठीक से कहना कठिन है। वह एक नम्बर का निशानेबाज़ था, और कुत्तों को साधना, उन्हें ट्रेन करना जानता था। मैं उसे पहले से जानता था, मास्को में मेरा उससे सम्पर्क रह चुका था। वह उन युवकों में से था जो हर परीक्षा के मौक़े पर 'मूक भूमिका का निर्वाह' करते हैं, मतलब यह कि परीक्षक के सवालों के जवाब में एक शब्द भी मुंह से नहीं निकालते। ऐसे लोगों को 'दढ़ियल छात्रों' की भी संज्ञा दी जाती थी। (आप समझ गये होंगे कि यह बहुत पहले की बात है।) उन दिनों यह इस तरह होता। मिसाल के लिए वे वोइनित्सिन का नाम पुकारते। वोइनित्सिन, जो सिर से पांव तक पसीने में नहाया हुआ अपनी जगह पर सीधा-सतर और निश्चल बैठा

रहता था, धीरे धीरे और निरुद्देश्य भाव से अपने इर्द-गिर्द देखता, उठकर खड़ा होता, हड़बड़ी में अण्डरग्रेजुएट की अपनी वर्दी के बटन बंद करता, और जैसे-तैसे परीक्षक की मेज़ के किनारे जा खड़ा होता। "कृपा कर एक प्रश्न-पत्र उठा लीजिये," परीक्षक प्रसन्न भाव से कहता। वोइनित्सिन अपने हाथ फैलाता और कांपती उंगलियों से प्रश्न-पत्रों के ढेर में टटोलता। "छांटिये नहीं, मेहरबानी करके," खरखरी आवाज़ में सहायक-परीक्षक टिप्पणी जड़ता। वह चिड़चिड़े स्वभाव का एक वृद्ध था, किसी अन्य विभाग का प्रोफ़ेसर। अभागे 'दढ़ियल छात्र' को देखकर वह अचानक खीज से भर जाता। वोइनित्सिन भाग्य के भरोसे अपने-आपको छोड़ देता, कोई एक प्रश्न-पत्र उठाता, उसपर अंकित नम्बर दिखाता, और खिड़की के पास जाकर बैठ जाता, जबकि उससे पहले नम्बरवाला छात्र अपने सवालों के जवाब दे रहा होता। खिड़की के पास बैठा वोइनित्सिन एक क्षण के लिए प्रश्न-पत्र से—बदन का एक भी पुट्ठा हिलाये बिना—अपनी नज़र न हटाता, केवल उस समय को छोड़कर जब वह—पहले की भांति—धीमे धीमे अपने इर्द-गिर्द नज़र डालता था। आख़िर उससे पहलेवाला छात्र छुट्टी पाता और, जैसी भी उसकी योग्यता होती—"ठीक, अब तुम जा सकते हो," या "वेशक ठीक, बहुत ठीक!" तक कहकर उसे विदा कर दिया जाता। इसके बाद वोइनित्सिन को बुलाया जाता। वोइनित्सिन उठकर खड़ा होता और डग जमा जमाकर मेज़ के पास पहुंचता। "अपना प्रश्न-पत्र पढ़ो," वे उससे कहते। वोइनित्सिन पर्चे को दोनों हाथों में लेकर ठीक अपनी नाक तक ऊंचा उठाता, धीरे धीरे उसे पढ़ता और फिर अपने हाथों को धीरे धीरे नीचे गिरा लेता। "हां तो कृपया अब जवाब देना शुरू करो," वही प्रोफ़ेसर अलस भाव से कहता, अपनी कमर को पीछे की ओर फेंकता और बांहों को अपने वक्ष पर से ले जाकर बग़लों में दाब लेता। श्मशान जैसा सन्नाटा। "अरे, तुम चुप क्यों हो?" वोइनित्सिन तो

भी गूंगा बना रहता। सहायक-परीक्षक खुदफुदाना शुरू करता। "कुछ कहते क्यों नहीं!" वोइनित्सिन अब भी वैसे ही मुर्दे की भांति सुन्न खड़ा रहता। उसके तमाम साथी जिज्ञासा से उसकी मोटी, महीन बाल-छंटी, निश्चल गुद्दी की ओर ताकते। सहायक-परीक्षक की आंखें जैसे अपने कोटरों से बाहर निकल पड़ना चाहतीं। वोइनित्सिन से वह निश्चित रूप में घिन्ना उठता। "ओह, यह अजीब तमाशा है, सच!" दूसरा परीक्षक अपना मत प्रकट करता। "गूंगे की भांति क्यों खड़े हो? बोलो, क्या तुम्हें जवाब नहीं मालूम? बोलो, न हो तो यही कह दो!" —"मुझे दूसरा प्रश्न-पत्र लेने की अनुमति दें," अभागे के मुंह से भरभरायी-सी आवाज़ निकली। प्रोफ़ेसरों ने एक-दूसरे की ओर देखा। "अच्छी बात है, लो, उठा लो," प्रमुख परीक्षक ने हवा में हाथ हिलाते हुए जवाब दिया। वोइनित्सिन ने फिर एक पर्चा उठाया, फिर खिड़की के पास गया, फिर मेज़ के पास आकर खड़ा हुआ, और फिर श्मशान की भांति सन्नाटा छाया रहा। सहायक-परीक्षक तो जैसे उसे ज़िन्दा ही निगल जाता। अन्त में उन्होंने उसे विदा कर दिया और उसके नाम के आगे गोल अण्डा बना दिया। आप सोच सकते हैं कि अब, कम से कम, वह अपना रास्ता नापेगा। लेकिन नहीं, उसने क़तई ऐसा नहीं किया। वह अपनी जगह पर गया, परीक्षा के अन्त तक वैसे ही निश्चल बैठा रहा, और बाहर निकलते समय कह उठा—"एकदम चौपट!" और उसने समूचा दिन मास्को में इधर-उधर भटकते बिता दिया। बीच बीच में, जब-तब, वह अपना सिर पकड़ता, और बुरी तरह अपनी भाग्यहीनता को कोसता। वह, कहने की आवश्यकता नहीं, कोई पुस्तक उठाकर न देखता, और अगले दिन भी फिर उसी कहानी की आवृत्ति होती।

सो यही वह वोइनित्सिन था जो भोज में मुझसे टकरा गया। हमने मास्को के बारे में बातें कीं, शिकार की चर्चा चलायी।

"अगर आप चाहें तो," सहसा फुसफुसाकर उसने मुझसे

के साथ, अपने किसानों का इलाज कर रहे हैं। वे भी, इसमें शक नहीं, उसी आदरभाव से इसका ऋण चुकाते हैं।"

"कितना विचित्र आदमी है यह!" किरीला सेलिफ़ानिच बुदबुदाया और हंस पड़ा।

"बोलो, मेरे मित्र, अपनी ज़ुबान का कुछ तो जौहर दिखाओ!" लुपीखिन ने फिर कहना शुरू किया। "अरे, वे तुम्हें जज चुन सकते हैं। अचरज की बात नहीं, देख लेना, वे तुम्हें ज़रूर अपना जज बनायेंगे। यों, बिलाशक, तुम्हें अपने दिमाग़ पर ज़ोर देने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी—यह काम तुम्हारे असेसर किया करेंगे। क्यों, ठीक है न? लेकिन, फिर भी, तुम्हें अपनी ज़ुबान से तो काम लेना ही पड़ेगा—भले ही यह काम दूसरों के विचारों को ही अपने मुंह से बोलना हो। समझो कि गवर्नर आता है, और पूछ बैठता है—जज हकलाता क्यों है? और वे, मान लो, कहते हैं, 'लक़वे का असर है'।—'ठीक,' वह कहता है—'इसका लहू निकालो।' तब, यह तुम्हें मानना पड़ेगा। कितनी भद्द होगी तुम्हारी—एकदम बुरी!"

शहद-चीनी का वह पुतला हंसी के मारे बिल्कुल लोटपोट हो रहा था।

"देखा आपने, यह हंसता है," किरीला सेलिफ़ानिच के धौंकनी बने पेट पर हिक़ारत भरी नज़र फेंकते हुए लुपीखिन ने कहना जारी रखा, "और वह हंसे क्यों नहीं?" मेरी ओर मुड़ते हुए फिर बोला, "खाने को बहुत है, स्वास्थ्य अच्छा है, और बाल-बच्चों के झंझट से मुक्त है। इसके किसान रहन नहीं रखे हैं—और वह उनकी दवा-दारू करता है—और इसकी घरवाली के दिमाग़ का पुर्ज़ा ढीला है।" (किरीला सेलिफ़ानिच ने थोड़ा मुंह फेर लिया, जैसे कुछ सुन ही न रहा हो, हालांकि वह अभी भी हंस रहा था।) "मैं भी हंसता हूं, और उधर मेरी घरवाली किसी पटवारी के संग लापता हो जाती है।" (वह बत्तीसी निपोरता है।) "अरे, तो क्या तुम्हें यह नहीं मालूम?

कुछ न पूछो, मौक़ा देख एक दिन वह उसके संग भाग गयी और मेरे लिए चिट्ठी छोड़ गयी। 'प्यारे प्योत्र पेत्रोविच,' ख़त में उसने लिखा था, 'मुझे माफ़ करना। प्रेम के वश अपने एक प्यारे के संग मैं जा रही हूं...' और पटवारी पर उसके मुग्ध होने का कारण केवल यह था कि वह अपने नाखून नहीं काटता था और तंग मोहरी की पतलून पहनता था। क्यों, तुम्हें अचरज होता है इस पर? 'अजब आदमी है यह,' तुम सोचते होगे, 'सभी कुछ उगल देता है!' लेकिन खुदा रहम करे, हम जैसे देहाती लोग कुछ ज़रूरत से ज्यादा सच कहने के आदी हैं, एकदम लट्ठमार ढंग से। लेकिन चलो, थोड़ा यहां से खिसक चलें... हम क्यों भावी जज की बग़ल में खड़े हों..."

उसने मेरी बांह थामी, और हम एक खिड़की के पास खिसक गये।

"यहां मसख़रे के रूप में मेरी शोहरत है," बातचीत के दौरान में उसने मुझसे कहा। "लेकिन तुम्हें इसपर विश्वास करने की ज़रूरत नहीं। मैं केवल खार खाया आदमी हूं, और खुले मुंह अपनी जलन निकालता हूं। इसी लिए मैं इतना खुलकर और बिना किसी अटकाव के अपनी बात कहता हूं। और यों सच पूछो तो, लाग-लपेट के फेर में मैं क्यों पड़ूं? तिनका-भर भी मैं किसी की राय की पर्वाह नहीं करता, न ही मैं कोई अपना उल्लू सीधा करना चाहता हूं! मैं क्रोध से भरा हूं, लेकिन इससे क्या? क्रोध से भरे आदमी को कम से कम, तेज़ दिमाग़ की कोई ज़रूरत नहीं। और तुम विश्वास नहीं करोगे कि यह कितनी ताज़गी प्रदान करता है... और नहीं तो अब अपने इन मेज़बान को ही लो! देखो न, क्या इधर से उधर लपक-झपक रहा है? आख़िर किस लिए? बाप रे, किस तरह अपनी घड़ी को बराबर देखे जा रहा है, मुसकरा रहा है, पसीना इसका चू रहा है, चेहरे को गम्भीर बनाये है और हम सबको भोज की आस में भूखा मार रहा है! है न अद्‌भुत! असली दरबारी श्रीमन्त! अरे देखो, देखो, वह फिर दौड़ रहा है— एकदम चौकड़ी भरता हुआ—देखो!"

ग्रौर लुपीखिन कर्कश हंसी हंसा।

"अफ़सोस इतना ही है कि स्त्रियां यहां नहीं हैं," गहरी उसास छोड़ते हुए उसने फिर कहना शुरू किया—"यह चिर-कुमारों की पार्टी है, वरना ग्रापका यह दास रंग में ग्रा गया होता। ग्ररे देखो, देखो," सहसा उसने चिल्लाकर कहा, "वह प्रिन्स कोज़ेल्स्की पधार रहे हैं—वही जिनका क़द लम्बा है, दाढ़ी से सुशोभित, ग्रौर पीले दस्ताने पहने हुए। देखते ही पता चल जाता है कि विदेश से ग्राये हैं... ग्रौर हमेशा ऐसे ही देर करके ग्राते हैं। ग्रौर वह, सच कहता हूं, उतने ही कुन्द दिमाग़ हैं जितने कि किसी सौदागर के घोड़े, ग्रौर तुम देखना, किस दयालुतापूर्ण ग्रन्दाज़ से वे हम जैसे छोटे लोगों के साथ बातें करते हैं, किस उदारतापूर्ण ग्रन्दाज़ में वह हमारी भूखी मा-बेटियों की नफ़ासत पर मुसकराने की कृपा करते हैं! ग्रौर कभी कभी वह हंसी-दिल्लगी भी करते हैं, बावजूद इसके कि वह थोड़ी देर ही यहां टिकेंगे, ग्रौर उनकी हंसी-दिल्लगी—ग्रोह! एकदम ऐसा मालूम होता है जैसे कुंठित चाकू से किसी रस्सी को काटने की कोशिश की जा रही हो। वह मुझे सहन नहीं कर सकते... ग्रच्छा तो यह लो, मैं उनका ग्रादाब बजा लाऊं!"

ग्रौर लुपीखिन प्रिन्स से मिलने लपक गया।

"वह देखो, उधर, वह मेरा निजी दुश्मन चला ग्रा रहा है," एकाएक मेरे पास ग्राकर उसने कहा, "वह मोटा थलथल ग्रादमी, गेहुंवा रंग, बाल सूग्रर की भांति सिर पर खड़े हुए, वही जो टोपी ग्रपने हाथ में दबोचे दीवार के सहारे रेंग रहा है ग्रौर भेड़िये की भांति घूर घूरकर चारों ग्रोर ताक रहा है। इसके हाथों ग्रपना एक हज़ार का घोड़ा चार सौ रूबल में मैंने बेचा था, ग्रौर इस काठ के उल्लू को ग्रब पूरा ग्रधिकार है कि मुझे घृणा की दृष्टि से देखे। हालांकि इसका दिमाग़ हर घड़ी घास चरा करता है, खास तौर से सुबह के समय चाय से

पहले, या भोजन के बाद, इस हद तक कि अगर तुम उससे 'नमस्ते!' कहो तो वह जवाब में कहेगा, 'क्या है?' और यह देखो, जेनरल चला आ रहा है," लुपीखिन कहता गया, "ग़ैरफ़ौजी जेनरल, अवकाश-प्राप्त और दीवालिया जेनरल। इसके एक लड़की है, चुकन्दर की चीनी से बनी और एक फ़ैक्टरी जिसे कण्ठमाला का रोग है... ओह, माफ़ करना, मैं भी क्या उलटी बात कह गया... लेकिन छोड़ो, मतलब तो तुम समझते ही हो। ओहो, यह इमारती नक़्शे बनानेवाला भी यहां आ धमका! जर्मन, मूंछदार, और धंधे के नाम कोरा, कुछ नहीं जानता—अजीब बात है! यों, सच पूछो तो, इसे अपने धंधे को जानने की ज़रूरत भी क्या है, जब तक कि घूस का बाज़ार गर्म है और हमारे समाज के स्तम्भों की रुचि के मुताबिक़ हर कहीं स्तम्भ खड़े करना वह जानता है!"

लुपीखिन फिर हंसा... लेकिन तभी अचानक, इस छोर से उस छोर तक सारे हाल में हलचल की एक लहर-सी दौड़ गयी। बड़ा रईस आ पहुंचा था। मेज़बान लपककर ड्योढ़ी में जा पहुंचा। उसके पीछे घराने के कुछ अन्य लग्गू सदस्य तथा उत्साही मेहमान भी दौड़ चले। शोरशराबे के साथ बातचीत ने धीमी सुहावनी चर्चा का रूप धारण कर लिया, जैसे वसन्त के दिनों में मधु-मक्खियां अपने छत्तों में भनभना रही हों। केवल मुंहज़ोर लुपीखिन और शानदार भौंरे कोज़ेल्स्की ने अपना स्वर नीचा नहीं किया... और आख़िर, रसराज भी आ विराजा—महान विभूति ने प्रवेश किया। उससे मिलने के लिए हृदय उछले, बैठे हुए आकार उठे, यहां तक कि लुपीखिन से घोड़ा सस्ते दाम ख़रीदनेवाले महानुभाव की ठोड़ी भी अपने वक्ष से आ लगी। महान विभूति अपनी महानता को बेजोड़ ढंग से ऊंचा उठाये थे—वह अपने सिर को अभिवादन करने के अन्दाज़ में पीछे की ओर फेंकते, अनुमोदन में दो-चार शब्द मुंह से निकालते, विलम्बित गुनगुनी आवाज़ में हर शब्द आ-आ से शुरू करते हुए। विक्षोभ के साथ, जैसे निगल जाना

चाहते हों, उन्होंने प्रिन्स कोज़ेल्स्की की दाढ़ी की ओर ताका, और फ़ैक्टरी तथा एक लड़की के बाप दीवालिया ग़ैरफ़ौजी जेनरल के आगे अपने बायें हाथ की तर्जनी उंगली पेश की। कुछ मिनट बाद – जिनके दौरान में महान विभूति ने दो बार इस बात पर खुशी प्रकट की कि भोज के लिए ऐसी कुछ देर से वह नहीं आया – सारी मण्डली बाक़ाइदगी से भोज के कमरे में दाखिल हुई। बड़ी नाकवाले सबसे आगे।

पाठकों के सामने यह सब वर्णन करने की ज़रूरत नहीं कि महान विभूति को किस प्रकार उन्होंने ग़ैरफ़ौजी जेनरल तथा ज़िले के मारशल के बीच सबसे महत्वपूर्ण स्थान पर बैठाया। मारशल महोदय चेहरे से आज़ाद और रोबदार मालूम होते थे, और उनकी क़मीज़ का कलफ़दार अग्रभाग, उनकी वास्कट का फैलाव, और फ़्रांसीसी सूंघनी से भरी उनकी गोल डिबिया भी उतनी ही रोबदार थी। न ही इस बात का वर्णन करने की ज़रूरत है कि मेज़बान किस प्रकार लट्टू की तरह चक्कर काट रहे थे, इधर से उधर लपक रहे थे, आडम्बर कर रहे थे और मेहमानों पर खाने के लिए ज़ोर दे रहे थे, आते आते महान विभूति की पीठ पर मुसकान न्योछावर कर रहे थे, और स्कूली बच्चों की भांति छिपकर कोने में शोरबे की तश्तरी या गोश्त के कतले उतावली के साथ निगल रहे थे, किस प्रकार बटलर फूलों से सजायी हुई गज़-भर लम्बी मछली ले आया और किस प्रकार वर्दी से लैस देखने में कठोर और उदास प्यादे हर महानुभाव को शराब हाज़िर कर रहे थे – कभी मलागा, कभी खुश्क मदिरा; और यह कि क़रीब क़रीब सभी कुलीन, खास तौर से वे जो बड़ी उम्र के थे, कुछ ऐसे अन्दाज़ में मानो मजबूरन अपने कर्त्तव्य का पालन कर रहे हों, गिलास के बाद गिलास ढाल रहे थे; और सबसे अन्त में यह कि किस प्रकार वे शैम्पेन की बोतलों के काग उड़ा रहे थे और शुभ-कामनाओं के साथ गिलासों को खनका रहे थे। ये सब बातें ऐसी नहीं जिनसे पाठक खूब अच्छी तरह से परिचित न हों। लेकिन जो चीज़ मुझे सबसे

उल्लेखनीय मालूम हुई, वह एक चुटकुला था जिसका वर्णन खुद महान विभूति ने किया था और जिसे सबने, आह्लादपूर्ण ख़ामोशी के साथ, सुना था। किसी ने—अगर मैं भूलता नहीं तो फटेहाल जेनरल ने जो आधुनिक साहित्य से परिचित था—आम तौर से सभी पुरुषों पर और युवा लोगों पर ख़ास तौर से, स्त्रियों के प्रभाव का ज़िक्र किया। "हां, हां," महान विभूति ने स्वर में स्वर मिलाया, "यह सच है। लेकिन युवा लोगों को कड़ी निगरानी में रखना चाहिए, नहीं तो—बहुत सम्भव है कि वे हर पेटीकोट को देखकर जामे से बाहर होना शुरू कर दें।" (बाल-सुलभ ख़ुशी की मुसकान से सभी मेहमानों के चेहरे खिल उठे, और एक महानुभाव की आंखें तो एकदम कृतज्ञता से चमकने लगीं।) "कारण, युवा लोग जाहिल होते हैं।" (महान विभूति, सम्भवतः अधिक रोब डालने के लिए, कभी कभी प्रचलित परिपाटी से भिन्न रूप में शब्दों के उच्चारण का प्रयोग करते थे।) "मिसाल के लिए मेरे लड़के इवान को ही लो," वह कहते गये, "वह मूर्ख अभी केवल उन्नीस ही साल का तो है, लेकिन एकबारगी वह मेरे पास आया और बोला, 'मैं शादी करना चाहता हूं, पिताजी'। मैंने उसे बताया कि वह पागल है, कहा कि पहले उसे सरकारी नौकरी में लगना चाहिए। बस, फिर क्या था, उसने हाय-तोबा की, आंसू बहाये, लेकिन मैं... मेरे साथ... कोई..." (ऐसा मालूम होता था जैसे 'कोई' शब्द गले से ज्यादा उनके पेट में से निकल रहा हो। वह रुक गये और शान के साथ अपने पड़ोसी पर—जेनरल पर—उन्होंने नजर डाली, अपनी भौंहों को इतना ऊंचा चढ़ाते हुए कि कोई सोच भी नहीं सकता था। ग़ैरफ़ौजी जेनरल ने बड़ी मृदुता से सिर हिलाया, और फिर सहसा अपनी वह आंख मिचमिचाने लगा जो महान विभूति की ओर थी।) "और क्या आप कल्पना कर सकते हैं?" उसने फिर कहना शुरू किया, "अब वह खुद मुझे लिखता है, और धन्यवाद देता है कि नादानी के दिनों मैंने उसे ठीक

रास्ते पर चलाये रखा। यह है काम करने का तरीक़ा।" सारे के सारे मेहमान, बिलाशक, वक्ता से पूर्णतया सहमत थे, और उससे मिले सुख तथा सीख से एकदम खुश नज़र आते थे। भोजन के बाद सब के सब उठे और खूब चहचहाते हुए, जैसे इस मौक़े के लिए स्वच्छन्द हों लेकिन अदब-क़ायदे के साथ, दीवानख़ाने में दाखिल हुए। वहां पहुंचकर वे ताश की मेज़ों पर जम गये।

जैसे-तैसे मैंने सांझ तक का समय व्यतीत किया और अपने कोचवान को अगली सुबह पांच बजे गाड़ी तैयार रखने का आदेश देकर मैं अपने कमरे में चला गया। लेकिन उसी दिन, भाग्य से, एक अन्य शानदार आदमी से मेरा परिचय होना बदा था।

मेहमान काफ़ी संख्या में मौजूद थे, इसलिए किसी को भी अकेला सोने का अलग कमरा नहीं मिला था। अलेक्सान्द्र मिखाइलिच का बटलर मुझे जिस छोटे, हरियाली-मायल और सीलन भरे कमरे में लिवा ले गया, उसमें एक मेहमान पहले से ही मौजूद था, एकदम कपड़े उतारे हुए। मुझे देखते ही उसने जल्दी से बिस्तरे में डुबकी लगायी, नाक तक अपने-आपको ढका, परों के मुलायम बिस्तर पर थोड़ा कसमसाया और चुपचाप पड़ रहा। वह रात की सूती टोपी पहने था और उसकी गोल झालर के नीचे से बराबर बाहर का अता-पता ले रहा था। मैं दूसरे बिस्तर के पास गया (कमरे में दो ही बिस्तर थे) कपड़े उतारे और सीले हुए बिछावन पर पड़ रहा। मेरे पड़ोसी ने बिस्तर पर करवट बदली। मैंने उससे गुड-नाइट की।

आध घंटा गुज़र गया। बहुत कोशिश करने के बाद भी मुझे नींद नहीं आयी। एक के बाद एक, निरुद्देश्य और धुंधले विचार एक अडिग और एकरस क्रम में, जल निकालनेवाली मशीन में लगी डोलचियों की भांति, मेरे मन में घूमते रहे।

"लगता है, तुम्हें नींद नहीं आयी, क्यों?" मेरे पड़ोसी ने कहा।

"नहीं, तुम देख ही रहे हो," मैंने जवाब दिया। "और उनींदे तो खुद तुम भी नहीं मालूम होते—क्यों, ठीक है न?"

"उनींदा तो मैं कभी नहीं होता।"

"तो फिर?"

"ओह, जाने कैसे। बस, बिस्तर पर पड़ा रहता हूं, पड़ा रहता हूं, और फिर नींद आ जाती है।"

"लेकिन नींद लगने से पहले तुम बिस्तर पर जाते ही क्यों हो?"

"और नहीं तो मैं क्या करूं, तुम्हीं बताओ?"

अपने पड़ोसी के इस सवाल का मैंने कोई जवाब नहीं दिया।

"आश्चर्य होता है," थोड़ी खामोशी के बाद उसने फिर कहना शुरू किया, "कि यहां पिस्सू क्यों नहीं हैं? अगर यहां पिस्सू न होंगे तो फिर और कहां होंगे, समझ में नहीं आता।"

"उनका अभाव शायद तुम्हें खल रहा है," मैंने टिप्पणी की।

"नहीं, मुझे उनका अभाव खल नहीं रहा। लेकिन मैं हर चीज़ को क्रमबद्ध देखना पसंद करता हूं।"

"ओह," मैंने मन में कहा, "क्या शब्द इस्तेमाल करता है।"

मेरा पड़ोसी फिर खामोश हो गया।

"क्या तुम मुझसे शर्त लगाना पसंद करोगे?" उसने फिर कहा। इस बार उसकी आवाज़ अपेक्षा से अधिक तेज़ थी।

"किस बात पर?"

मुझे वह मज़ेदार आदमी मालूम हुआ।

"हूं-ऊं... किस बात पर? अच्छा तो सुनो—मैं यह दावे के साथ कह सकता हूं कि तुम मुझे मूर्ख समझते हो।"

"नहीं तो," मैं बुदबुदाया, चकित और स्तब्ध।

"एकदम निरक्षर, स्तेप का गंवार। बोलो, सच सच कहो.

"मुझे तुम्हें जानने का कभी सौभाग्य नहीं मिला," मैंने जवाब दिया, "जाने कैसे तुमने यह अन्दाज़ लगाया..."

"क्यों, तुम्हारा लहजा ही इसके लिए काफ़ी है। कितनी लापर्वाही से तुम मुझे जवाब देते हो। लेकिन तुमने जैसा समझा है, वैसा मैं क़तई नहीं हूं।"

"अरे, सुनो तो..."

"नहीं, सुनो तुम। पहली बात तो यह कि मैं भी वैसी ही फ़्रेंच बोल लेता हूं जैसी कि तुम, और जर्मन तो तुम से भी अच्छी तरह। दूसरे यह कि मैं तीन साल विदेशों में बिता चुका हूं, अकेले बर्लिन में ही मैं आठ महीने तक रहा था। और माननीय श्रीमान, हीगल का मैंने अध्ययन किया है, ग्येटे मुझे ज़ुबानी याद है। इसके अलावा एक लम्बे अर्से तक एक जर्मन प्रोफ़ेसर की लड़की से मैं प्रेम करता रहा, और अपने देश में तपेदिक की मरीज़ एक युवती से मेरी शादी हुई। उसके सिर के बाल सफ़ाचट थे, लेकिन व्यक्तित्व उसका शानदार था। सो मैं तुम्हीं लोगों की जात का हूं, स्तेप का गंवार नहीं जैसा कि तुम सोचते हो। मैं भी चिन्ताशील आदमी हूं, और मुझमें ऐसा कुछ नहीं है जो सतही कहा जा सके।"

मैंने अपना सिर उठाया और दुगने ध्यान से इस अजीब जीव की ओर देखा। लैम्प की धुंधली रोशनी में उसका नाक-नक़्शा पहचानना मुश्किल था।

"ओह, तो तुम अब मेरी ओर देख रहे हो," अपनी रात की टोपी को सीधा करते हुए वह कहता गया, "और शायद तुम मन ही मन सोच रहे होगे, 'इस आदमी पर कैसे आज मेरी नज़र नहीं गयी?' मैं तुम्हें बताता हूं कि क्यों मैं तुम्हारी नज़र से ओझल रहा। इसलिए कि मैं ऊंची आवाज़ में नहीं बोला, इसलिए कि मैं दरवाज़े के पीछे खड़ा दूसरों की ओट में छिपा रहा, इसलिए कि जब बटलर मेरे पास से गुज़रता था तो अपनी कोहनियों को मेरे वक्ष के स्तर पर उठा लेता था... और यह

सब किस लिए, क्यों यह सब होता है? इसके दो कारण हैं। पहला, मैं ग़रीब हूं, और दूसरे, मैं विरक्त हो चुका हूं... बोलो, सच सच बताओ, क्या तुमने मुझे देखा था, क्या मुझपर तुम्हारी नज़र गयी थी?"

"सचमुच, मुझे यह सौभाग्य नहीं..."

"वही तो, वही तो," उसने बीच में ही टोका, "मैं पहले ही जानता था।"

वह उठ बैठा और अपनी बांहों को उसने जोड़ लिया। उसकी टोपी की विलम्बित छाया दीवार पर से मुड़कर छत तक फैली हुई थी।

"और यह मानने में भी तुम्हें अब कोई उज्र नहीं होना चाहिए," एकाएक कनखियों से मेरी ओर देखते हुए उसने कहा, "कि मैं तुम्हें कुछ अजीब, मौलिक, जैसा कि कहा जाता है, जीव मालूम होता हूं—या फिर तुम मुझे इससे भी बुरा समझते हो—शायद यह कि मैं अपने-आपको मौलिक जताने का प्रयत्न कर रहा हूं।"

"मैं फिर वही दोहराना चाहता हूं कि मैं तुम्हें नहीं जानता..."

क्षण-भर के लिए उसने अपनी आंखें नीची कर लीं।

"पता नहीं कि मैं तुमसे—एकदम अजनबी आदमी से—इस तरह अचानक क्यों बातें करने लगा? भगवान, केवल भगवान ही यह जानता है!" (उसने एक उसास भरी।) "इसलिए नहीं कि हम दोनों की आत्माओं में सहज साम्य है! हम दोनों—तुम और मैं—प्रतिष्ठित जाति के लोग हैं, यानी अहंवादी हैं। न तुम और न मैं, दोनों में से कोई भी एक-दूसरे से क़तई लगाव नहीं रखता। क्यों, ठीक है न? लेकिन हम दोनों में से किसी एक को नींद भी नहीं आ रही है—न तुम्हें, न मुझे। सो क्यों न बातचीत ही की जाय? मेरा जी चाहता है, और बिरले ही मेरे साथ ऐसा होता है। आप जानो, मैं संकोची हूं। संकोची इसलिए नहीं कि मैं देहात का रहनेवाला हूं, मेरी कोई हैसियत नहीं है और यह कि मैं ग़रीब हूं। नहीं, बल्कि इसलिए कि मैं भयानक रूप में स्वाभिमानी

हूं। लेकिन कभी कभी, जब परिस्थितियां अनुकूल होती हैं, पहले से अनजाने और अनचीते मौक़ों पर ऐसा भी होता है कि मेरा संकोच एकदम ग़ायब हो जाता है, मिसाल के लिए जैसा कि इस समय। इस समय चाहे तुम मुझे लामा महान के सामने मुंह दर मुंह खड़ा कर दो, उससे एक चुटकी सुंघनी मांगने में मुझे ज़रा भी संकोच नहीं होगा। लेकिन छोड़ो, शायद तुम्हें नींद आ रही है?"

"बिल्कुल नहीं," मैंने तुरत जवाब दिया, "उलटे तुम से बातचीत करने में आनन्द आ रहा है।"

"यानी मैं तुम्हें दिलचस्प मालूम होता हूं, यही तुम कहना चाहते हो न! चलो, अच्छा है। और सो, मैं तुम्हें बता दूं, वे मुझे यहां मौलिक कहते हैं। हां वे यही मुझे कहते हैं, गपशप के दौरान में जब कभी यों ही मेरा ज़िक्र आ जाता है। मेरी हालत को लेकर कोई ख़ास परेशान नहीं होता। वे सोचते हैं कि इससे मुझे चोट लगेगी। ओह, मेरे भगवान! अगर वे केवल यह जानते... ओह, ठीक यही तो मेरा दुर्भाग्य है, कि मुझमें क़तई कुछ मौलिकता नहीं है—बिल्कुल नहीं है, सिवा ऐसी अनोखी बातों के जैसी कि, मिसाल के लिए, इस समय मैं तुमसे कर रहा हूं। लेकिन ऐसी अनोखी बातों का मूल्य क्या है, कुछ भी नहीं। यह मौलिकता है, लेकिन सबसे सस्ती, और सबसे निचले दर्जे की।"

मुड़कर उसने मेरी ओर मुंह किया, और हवा में अपने हाथ हिलाये।

"माननीय श्रीमान," उसने ज़ोरों से कहा, "मेरा यह मत है कि इस धरती पर, नियमतः, जीवन केवल उन्हीं के लिए कोई मानी रखता है जो मौलिक हैं। केवल उन्हें ही जीवित रहने का अधिकार है। Mon verre n'est pas grand, mais je bois dans mon verre *, किसी ने कहा है। सो देखा आपने," स्वर को धीमा करते हुए वह बोला,

* मेरा प्याला बड़ा नहीं, लेकिन पीता हूं मैं अपने ही प्याले में।

"फ्रेंच का मेरा उच्चारण कितना अच्छा है। लेकिन इससे किसी को क्या ग़रज़ अगर किसी का मस्तिष्क विशाल है, अगर कोई हर चीज़ समझता और बहुत कुछ जानता है, अगर कोई ज़माने के साथ चलता है पर उसका कोई व्यक्तित्व नहीं! उसका भी दिमाग़ घिसी-पिटी आम कहावतों से भरा पड़ा है, बस। उससे औरों को क्या फ़ायदा? नहीं, इससे तो मूर्ख होना ही अच्छा, लेकिन अपने ख़ास ढंग से। आदमी में उसकी एक अपनी रमक होनी चाहिए, ख़ास अपनी रमक। यही मुख्य चीज़ है। लेकिन यह न समझना कि इस रमक के मामले में मैं किसी बहुत ही ख़ास चीज़ पर ज़ोर देता हूं। ख़ुदा न करे! जिस तरह के मौलिक लोगों से मेरा मतलब है, वैसे अनगिनत मिल जायेंगे। चाहे जिधर नज़र डालो – मौलिकता दिखाई देगी। हर जीवित आदमी मौलिक होता है। लेकिन मेरा उनमें शुमार नहीं हुआ!"

"जो हो," थोड़ी ख़ामोशी के बाद वह कहता गया, "अपनी युवावस्था में लोगों को कैसी कैसी आशाएं मुझमें थीं। विदेश-यात्रा से पहले, और वहां से लौटने के बाद भी – शुरू शुरू में–अपने व्यक्तित्व को कितना मूल्यवान मैं समझता था, कितनी ऊंची राय थी मेरी अपने बारे में! हां तो विदेश में सदा सावधान रहा, सबसे अलग-थलग रहा, जैसा कि मेरे जैसे आदमी के लिए मौज़ूं था जो सदा ख़ुद अपने-आप चीज़ों को आर-पार देखने का आदी हो और अन्त में मालूम यह हो कि उसने कुछ भी नहीं देखा!"

"मौलिक, मौलिक!" शिकायत के अन्दाज़ में अपने सिर को हिलाते हुए वह कहता गया। "वे मुझे मौलिक कहते हैं। लेकिन असल में निकलता यह है कि दुनिया में एक भी जीव ऐसा नहीं है जो तुम्हारे इस विनम्र सेवक से कम मौलिक हो। यहां तक कि मेरा जन्म भी किसी अन्य की नक़ल पर हुआ होगा। भगवान की क़सम! ऐसा मालूम होता है कि मेरा जीने का ढंग भी उन विभिन्न लेखकों की नक़ल है जिनका

मैं अध्ययन कर चुका हूं। मैं खून-पसीना एक करता हूं। मैंने अध्ययन किया है, प्रेम किया है, और शादी की है, लेकिन सच पूछो तो अपनी निजी इच्छा से नहीं – जैसे कोई कर्त्तव्य सिर पर आ पड़ा जिसे पूरा किया जा रहा है, अथवा भाग्य का लेखा अपना रंग दिखा रहा है, यह कौन जाने?"

उसने अपने सिर से रात की टोपी खींचकर उतारी और उसे बिस्तर पर पटक दिया।

"क्या तुम मेरे जीवन की कहानी सुनना पसंद करोगे?" दो-टूक आवाज़ में उसने मुझसे पूछा, "या कहो तो कुछ घटनाएं ही सुना दूं?"

"ज़रूर सुनाओ।"

"या, नहीं, अच्छा यह होगा कि मैं तुम्हें अपने विवाह का क़िस्सा सुनाऊं – यह कि कैसे मेरा विवाह हुआ। तुम जानते हो, विवाह एक महत्त्वपूर्ण चीज़ है, एक ऐसी कसौटी जिस पर समूचा मानव परखा जाता है – इसमें, जैसे कि आईने में ... लेकिन छोड़ो, यह काफ़ी घिसी-पिटी तुलना है... अगर इजाजत हो तो थोड़ा हुलास ले लूं।"

उसने अपने तकिए के नीचे से सुंघनी की एक डिबिया निकाली, उसे खोला, और खुली हुई डिबिया को फहराते हुए फिर कहना शुरू किया।

"माननीय श्रीमान, अपने-आपको ज़रा मेरी स्थिति में रखकर देखिये और खुद इस बात का फ़ैसला कीजिये कि क्या, हां क्या, कृपा कर मुझे यह बताइये कि हीगल के ज्ञान-कोष से मेरा क्या भला हो सकता था? उस ज्ञान-कोष में और रूसी जीवन में, आप ही बताइये, क्या साम्य है? और यह कि आपकी राय में, उसे अपने जीवन में कैसे काम में लाया जा सकता है, और उसे ही नहीं – केवल उस ज्ञान-कोष को ही नहीं– बल्कि सामान्यतः समूचे जर्मन दर्शन को। बल्कि मैं तो और भी आगे बढ़कर कहना चाहूंगा – खुद ज्ञान-विज्ञान को?"

आवेग के साथ वह बिस्तर पर उछला और गुस्से से अपने दांतों को पीसता हुआ मन ही मन कुछ बुदबुदाया—

"यह बात है, यह बात है... तब विदेशों की धूल छानने मैं क्यों गया? अपने ही घर में बैठकर चारों ओर के जीवन का, वहां का वहीं, अध्ययन क्यों नहीं किया? उसकी ज़रूरतों और भविष्य का तब शायद मैं कोई ओर-छोर पा सकता, अपने लक्ष्य को स्पष्टता से समझ सकता। लेकिन," वह कहता गया, अपने स्वर को कुछ इस तरह बदलते हुए जैसे दबे दबे अपने को सही ठहराने का प्रयत्न कर रहा हो, "तुम ही बताओ जिसे कोई द्रष्टा अभी तक किसी पुस्तक में नहीं अंकित कर सका, उसका कैसे अध्ययन किया जाय? बेशक, मुझे उससे—मतलब रूसी जीवन से—सीखकर ख़ुशी होती। लेकिन वह तो गूंगा है, बेचारा! वह जैसा है, उसे उसी तरह होना चाहिए। लेकिन यह मेरे बस की बात नहीं। मुझे तुक चाहिए, निष्कर्ष चाहिए। यह लो, निष्कर्ष भी यहां मौजूद है—मास्को के पंडितों की वाणी सुनो—क्या कोयल-राग अलापते हैं वे? क्यों, ठीक है न? और यही अफ़सोस की बात है, यह कि वे कूर्स्क की कोयल की भांति सुर अलापते हैं, इस तरह बातें नहीं करते जैसे कि साधारण लोग करते हैं। और मैंने सोचा, बहुत बहुत सोचा—'विज्ञान, बिलाशक,' मैंने सोचा, 'सब जगह एक-सा है, और सत्य सदा एक-सा है'। सो मैंने बंधना-बोरिया उठाया और भगवान का नाम लेकर चल पड़ा—विदेशों की धूल मैंने छानी, नास्तिकों के बीच मैं घूमा... लेकिन हुआ क्या? युवावस्था और घमंड का ज़ोर था और मैं, आप जानो, समय से पहले मोटियाना नहीं चाहता था, हालांकि लोग इसे स्वास्थ्य की निशानी मानते हैं। यों, सच पूछो तो, यह कुदरत की बात है। अगर वह तुम्हारी हड्डियों पर मांस न चढ़ाये, तो चर्बी कहां से चढ़ेगी!"

"लेकिन ओह," क्षण-भर सोचने के बाद उसने फिर कहा, "यह सब मैं क्या कहने लगा। मैंने तो तुम्हें अपने विवाह का क़िस्सा सुनाने

का वायदा किया था। अच्छा, सुनो। सबसे पहले तो तुम्हें यह बताना ज़रूरी है कि मेरी पत्नी अब जीवित नहीं है। और दूसरे... दूसरे अपनी युवावस्था के बारे में तुम्हें कुछ ज़रूर बताना चाहिए, वरना तुम कुछ समझ नहीं पाओगे... लेकिन ऐसा तो नहीं कि तुम्हें नींद आ रही हो?"

"नहीं, मुझे नींद नहीं आ रही।"

"तब अच्छा है। अरे सुनो... बराबरवाले कमरे में कितने भद्दे ढंग से मि० कान्ताग्र्युखिन खर्राटे भर रहा है! मेरे माता-पिता छोटी मिल्कियत के आदमी थे। मैंने कहा माता-पिता – इसलिए कि परिपाटी के अनुसार मेरे एक पिता भी था। पिता की मुझे कुछ याद नहीं। सुना है कि वह संकुचित विचारवाला आदमी था। लम्बी नाक, चितयल और लाल बाल। अपनी नाक की एक ही नासिका में वह हुलास लेने का आदी था। मेरी मां के शयनकक्ष में उसकी एक तस्वीर टंगी रहती थी, और उसमें वह कानों तक खिंचा काला कालर लगाये लाल वर्दी पहने बहुत ही विकराल मालूम होता था। वे मुझे उस चित्र के सामने ले जाकर कोड़ों से पीटते थे, और मेरी मां ऐसे मौक़ों पर उसकी ओर इशारा करते हुए हमेशा कहा करती थी, 'अगर वह होता तो तुम्हारी और भी ज़्यादा चमड़ी उधेड़ता!' अब आप ही सोचिये कि इसका कितना उत्साहवर्द्धक असर मुझपर पड़ता होगा। भाई-बहिन मेरे कोई नहीं था, यानी यह, अगर एकदम ठीक जानना चाहो तो, किसी ज़माने में मेरा एक भाई था जिसके सिर में कोई अंग्रेज़ी रोग था, लेकिन वह जल्दी ही मर गया। और सच, ताज्जुब होता है यह देखकर, कि यह इंग्लिस्तान का रोग कूर्स्क प्रान्त के श्चिग्री ज़िले में किस लिए आ पहुंचा? लेकिन छोड़ो, यह बेमतलब की बात है। स्तेप की एक ज़मींदारिन के से उत्साह के साथ मेरी मां ने मेरी शिक्षा-दीक्षा का बीड़ा उठाया, और मेरे जन्म के शुभ दिन से लेकर सोलह वर्ष की आयु तक वह इसमें जुटी रही... क्यों, सुन रहे हो न?"

"हां हां, कहे जाओ।"

"अच्छी बात है। हां तो जब मैं सोलह वर्ष का हुआ तो मेरी मां

ने फ़्रेंच पढ़ानेवाले मेरे शिक्षक को तुरत बरख़ास्त कर दिया। वह जर्मन था, नाम फ़िलिपोविच, नेजिन का यूनानी। उसे बरख़ास्त करने के बाद वह मुझे मास्को लिवा ले गयी, विश्वविद्यालय में मुझे भर्ती करा दिया, और मुझे मेरे चाचा के हाथों में सौंपकर खुद भगवान की शरण में चली गयी। मेरे चाचा कोल्तून-बाबूर अटार्नी थे और उनकी सुख्याति केवल शिचग्री ज़िले तक ही सीमित नहीं थी। मेरे चाचा अटार्नी कोल्तून-बाबूर ने, परिपाटी के अनुसार आख़िरी पाई तक मुझे लूट लिया—मेरे पल्ले एक पाई नहीं छोड़ी। लेकिन यह भी बेमतलब की बात है, मैं फिर भटक गया। हां तो मैंने विश्वविद्यालय में प्रवेश किया, और भला हो मेरी मां का—उसे उचित श्रेय देना ही होगा—कि उसने मेरी ज़मीन काफ़ी मज़बूत बना दी थी, लेकिन मौलिकता का अभाव तब भी नज़र आता था। मेरा बचपन, किसी मानी में भी, अन्य युवा कुलीनों के बचपन से भिन्न नहीं था। उतने ही बेजान तथा टस तरीक़े से मैं बड़ा हुआ था—एकदम जैसे मुलायम कम्बल में लिपटा हुआ। ठीक उतनी ही कम उम्र में मैंने भी कविताओं को ज़बानी पढ़ना और सपनीले अन्दाज़ में आवारागर्दी करने का आडम्बर शुरू कर दिया... किस लिए?—ओह, सौन्दर्य के लिए... आदि आदि। तो उन्हीं की भांति मैंने विश्वविद्यालय में पांव रखा, और तुरत एक मण्डल में शामिल हो गया। वह ज़माना ही दूसरा था ... लेकिन शायद तुम्हें यह न मालूम हो कि छात्रों का यह मण्डल किस बला का नाम है? मुझे शिलर की याद आती है। उसने कहीं कहा था—

Gefährlich ist's den Leu zu wecken,
Und schrecklich ist des Tigers Zahn,
Doch das schrecklichste der Schrecken
Das ist der Mensch in seinem Wahn!*

---

* सिंह को जगाना आपत्ति को बुलाना है,
दुष्कर अति सिंह के दांतों की गणना है,
किन्तु इन सबसे भयानक और दुष्कर तो
अपने प्रति भ्रम में पड़े मानव से लड़ना है।

"लेकिन उसका आशय, आप विश्वास करें, यह नहीं था। वह कहना चाहता था–"Das ist ein 'मण्डल'... in der Stadt Moskau!"*

"लेकिन मण्डल में ऐसी क्या बात थी जो वह तुम्हें इतना भयावह मालूम हुआ?" मैंने पूछा।

मेरे पड़ोसी ने झपटकर अपनी टोपी को पकड़ा और उसे नीचे नाक तक खींच लिया।

"मुझे वह क्यों इतना भयावह मालूम हुआ?" उसने ज़ोर के साथ कहा, "तो सुनो, मण्डल का मतलब है सम्पूर्ण व्यक्तिगत विकास पर कुठाराघात। समाज, नारी और जीवन का स्थान यह घिनौना मण्डल लेता है। मण्डल... ओह, ज़रा ठहरो, मैं तुम्हें बताता हूं कि मण्डल क्या है। मण्डल नाम है एक ऐसे निठल्ले और नीरस सामुदायिक जीवन का जिसके ऊपर भारी महत्त्व तथा युक्तियुक्त क्रियाशीलता की प्रदर्शन करनेवाली तख़्ती लगी रहती है। मण्डल में बातचीत – वार्तालाप – की जगह बहसें होती हैं, निष्फल विवादों में आपको ट्रेन करता है, एक निष्ठ उपयोगी श्रम से आपको दूर खींचता है, लेखक बनने की आप में हविस जगाता है, सच पूछो तो, सारी ताज़गी तथा आत्मा के अछूते उछाह से आपको वंचित कर देता है। मण्डल... भाईचारे और मित्रता की ओट में गंदगी और ऊब का वह घर है, संवेदन और खुलेपन के नाम पर ग़लतफ़हमियों और झूठी निन्दाओं का वहां तूमार बांधता है। प्रत्येक मित्र को प्राप्त इस अधिकार की बदौलत कि वह, हर समय और हर घड़ी, अपने साथी की आत्मा के अन्तर्तम कोनों में अपनी गंदी उंगली डाल सकता है – मण्डल में एक भी जीव ऐसा नहीं मिलेगा जिसकी आत्मा का रत्ती-भर भी अंश निर्मल और अविकृत कहा जा सके। मण्डल में उसी के सामने सब माथा नवाते हैं जो छिछली, शेखी-भरी और चलती हुई बातों का

---

*यह एक 'मण्डल' है... मास्को शहर में!

कोरा है, स्वाभिमान पंडित होता है, समय से पहले बूढ़ा होता है वही तुक्कड़ वहां पूजा जाता है जो कवित्व से शून्य और 'सूक्ष्म' विचारों से लैस होता है। मण्डल में सत्रह सत्रह बरस के कमसिन छोकरे स्त्रियों और प्रेम के बारे में इस तरह जुबान के घोड़े दौड़ाते हैं जैसे बहुत बड़े जानकार हों, लेकिन जब स्त्रियों के सामने आते हैं तो गूंगे बन जाते हैं या किताब की भांति बोलते हैं—और बाप रे, वे बोलते क्या हैं? मण्डल में जुबान ऐसे चलती है जैसे कतरनी चल रही हो। मण्डल में वे एक दूसरे की ख़ुफ़ियागीरी करते हैं, पुलिस अफ़सरों की भांति... ओह, मण्डल! तू मण्डल नहीं, बल्कि मंत्र फूंका हुआ जाल है। जाने कितने भले जीवों को तू ग़ारत कर चुका है!"

"अरे नहीं, यह तुम बढ़ा-चढ़ाकर कह रहे हो," मैंने टोका।

उस साथी ने ख़ामोशी के साथ मुझपर नज़र डाली।

"हो सकता है, ख़ुदा जाने, तुम्हारी बात शायद सही हो। लेकिन, देखो न, तुम्हारे इस विनम्र सेवक के लिए जीवन में सिवा इसके और रस भी क्या रह गया है—सिवा अतिरंजना के। हां तो मास्को में चार साल मैंने इस तरह बिताये। मैं कह नहीं सकता, श्रीमान, कि कितनी जल्दी—कितने भयानक रूप में जल्दी—वे दिन गुज़रे। उनकी याद हृदय में दु:ख और झुंझलाहट का संचार लिये बिना नहीं रहती। सुबह उठो तो दिन इस तरह गुज़रता है जैसे बर्फ़-गाड़ियों में पहाड़ी ढलुवानों पर से फिसल रहे हों... इससे पहले कि नज़र दौड़ाने का मौक़ा मिले, नीचे जा पहुंचे। सांझ हो आती है, और ओंधाया-सा प्यादा आपको फ़ॉक-कोट पहनाता नज़र आता है। कपड़े पहने, और किसी मित्र के यहां चल दिये। पाइप से धुवां उड़ाया, गिलासों हल्की हल्की चाय पी, जर्मनी के दर्शन, प्रेम, आत्म के चिरन्तन उल्लास और दीन-दुनिया से दूर अन्य विषयों की चर्चा की। लेकिन मौलिक और मौलिक लोग मुझे वहां भी दिखाई दिये।

कुछ लोग चाहे जितनी भी बेतुकी बातें करें और चाहे जितने भी अटपटे बाने में वे नज़र आयं लेकिन उनकी सहज प्रकृति फिर भी उभर ही आती है। केवल मैं ही एक ऐसा अभागा था जिसने मुलायम मोम की भांति अपने-आपको ऐसा ढाला कि मेरी तुच्छ जान ने भूलकर भी कभी प्रतिरोध नहीं किया। इस तरह इक्कीस साल की आयु तक मैं पहुंच गया। मेरी विरासत, या अधिक सही शब्दों में मेरी विरासत का यह अंश जिसे मेरे संरक्षक ने मेरे लिए छोड़ना मुनासिब समझा था, मेरे अधिकार में आ गयी। उन्मुक्त हुए एक गृह-दास वासीली कुद्र्याशेव के हाथों में मैंने अपनी समूची पैतृक सम्पदा की देख-भाल का काम सौंपा और ख़ुद बर्लिन के लिए रवाना हो गया। विदेश में, जैसा कि मैं पहले आपको बता भी चुका हूं, तीन साल तक रहा। हां तो वहां, विदेश में भी, मैं जैसा का तैसा अमौलिक जीव बना रहा। कहने की आवश्यकता नहीं, कि युरोप के बारे में, युरोपीय जीवन के बारे में, वास्तव में मैंने कोई जानकारी हासिल नहीं की। मैं जर्मन प्रोफ़ेसरों को, और जर्मन पुस्तकों को, उनके अपने जन्म-स्थान में सुनता और पढ़ता था। बस इतना ही अन्तर था। मैं साधुओं की भांति एकाकी जीवन बिताता था। अवकाश-प्राप्त रूसी लेफ़टीनेन्टों के साथ मेरी अच्छी पटती थी। मेरी ही भांति उनपर भी ज्ञान की भूख सवार थी। लेकिन वे हमेशा इतने मन्दबुद्धि होते कि उनका दिमाग़ कुछ पकड़ नहीं पाता था। वाणी के भी वे धनी नहीं थे। पेंज़ा के तथा अन्य कृषिप्रधान प्रान्तों के कुन्द दिमाग़ परिवारों से मेरी दोस्ती थी; कहवाखानों में जाता था, पत्रिकाएं पढ़ता था, और सांझ को थियेटरों की रौनक़ बढ़ाता था। देशज लोगों से मेरा बहुत कम वास्ता था। उनसे बात करते मेरी ज़ुबान अटकती थी, और उनमें से किसी को भी मैं अपने घर नहीं बुलाता था, सिवा उन दो या तीन मान न मान मैं तेरा मेहमान क़िस्म के यहूदी जीवों के जो जब देखो तब मुझसे आ टकराते और – भला हो मेरे रूसी भोलेपन का – मुझसे बराबर उधार झटक ले जाते। अन्त में, एक विचित्र संयोग

ही इसे कहिये, अपने प्रोफ़ेसरों में से एक के घर मैं जा लगा। यह इस प्रकार हुआ। मैं एक पाठ्यक्रम में अपना नाम लिखाने उस प्रोफ़ेसर के पास गया था। उसने, एकदम अचानक, अपने यहां एक संध्या-भोज में शामिल होने का निमंत्रण दे दिया। उसके दो लड़कियां थीं, लगभग सत्ताईस वर्ष की, नाटी और गुदगुदी – भगवान की उनपर कृपा हो – राजसी नाक, लच्छेदार घुंघराले बाल, हल्की नीली आंखें, और लाल हाथ जिनके नाखून हाथीदांत की भांति सफ़ेद थे। इनमें एक का नाम था लिनखेन और दूसरी का मिनखेन। मैंने प्रोफ़ेसर के यहां जाना शुरू कर दिया। यहां आप यह और जान लें कि प्रोफ़ेसर एकदम बुद्धू तो नहीं, लेकिन कुछ हक्का-बक्का-सा था। जब वह पढ़ाता था तो काफ़ी सुसम्बद्ध रूप में बोलता था, लेकिन घर आते ही तुतलाने लगता था और चश्मे को हमेशा अपने माथे के ऊपर चढ़ाये रहता था। यों वह बहुत विद्वान आदमी था। हां तो एकाएक मुझे मालूम हुआ कि मैं लिनखेन से प्रेम करने लगा हूं, और पूरे छः महीने तक मैं इस ख़याल में मुब्तिला रहा। यह सच है कि मैं उससे बातें बहुत कम करता था, ज़्यादातर उसे देखता ही रहता था। लेकिन मैं उसे पुस्तकों में से विभिन्न हृदयस्पर्शी अंश, ऊंचे ऊंचे पढ़कर सुनाया करता था, नज़र बचाकर उसका हाथ भी दबाता था, और सांझ के समय, चांद की ओर एकटक देखते या अपनी आंखों को यों ही ऊपर उठाये, उसके पास बैठा हुआ सपनों में खो जाता था। इसके अलावा, वह बहुत ही बढ़िया कॉफ़ी बनाती थी! कोई पूछे – भला इससे अधिक और क्या चाहिए? लेकिन एक चीज़ थी जो मुझे परेशान करती थी। जैसा कि कहते हैं, आनन्दातिरेक के ठीक उन अकथनीय क्षणों में, ऐसा मालूम होता था जैसे मेरा अन्तर, भीतर ही भीतर, किसी अतल गहराई में समाता जा रहा हो, और एक ठंडी सुरसुरी-सी मेरी रीढ़ में दौड़ जाती थी। आख़िर इस सुख को मैं सह नहीं सका और वहां से भाग खड़ा हुआ। उसके बाद पूरे दो साल मैं विदेशों में घूमता रहा। मैं इटली गया।

रोम में ट्रांसफ़िगरेशन और फ़्लोरेन्स में वीनस की प्रतिमा के सामने, मैं खड़ा हुआ सहसा अतिरंजित भावातिरेक में उमड़ पड़ता, ऐसा मालूम होता जैसे क्रोध ने मुझे जकड़ लिया हो। सांझ को मैं तुकबन्दियां करता, डायरी लिखता। मतलब यह कि वहां भी मेरा व्यवहार वैसा ही था जैसा कि अन्य सबका। फिर भी ज़रा देखिये न, मौलिक बनना कितना आसान है। मिसाल के लिए, चित्र और शिल्प-कला की मुझे कोई समझ नहीं। लेकिन इससे क्या, केवल ज़ोरों से घोषणा करने पर ... नहीं, मेरे लिए यह असम्भव था। इसके लिए ज़रूरी था कि किसी पारखी को मैं अपने साथ लूं और भित्तिचित्रों को जाकर देखूं!"

उसने फिर नीचे की ओर देखा, और अपनी रात की टोपी को फिर खींचकर उतार लिया।

"हां तो, अन्त में मैं अपने देश लौटा," थकी-सी आवाज़ में वह कहता गया। "मैं मास्को गया। मास्को में मुझमें एक अद्भुत परिवर्तन हुआ। विदेशों में मैं ज़्यादातर चुप रहता था, लेकिन यहां अचानक– अप्रत्याशित चपलता के साथ–मेरी ज़बान खुल चली। और साथ ही अपने बारे में तरह तरह के विचार तत्त्व भी मेरे दिमाग़ में आने लगे। ऐसे मेहरबान लोगों की कमी नहीं थी जिन्हें मैं एकदम प्रतिभा का पुंज मालूम होता था। कुलीन महिलाएं सहानुभूति के साथ मेरी लनतरानियों को सुनती थीं। लेकिन अपने गौरव के इस शिखर पर मैं टिका नहीं रह सका। एक दिन मैंने देखा कि मेरे बारे में गपशप का उदय हो गया है (कह नहीं सकता, किसने इसकी शुरूआत की। निश्चय ही पुरुष जाति के किसी खूसट विधुर ने इसकी शुरूआत की होगी। मास्को में ऐसे विधुरों की कमी नहीं है।) हां तो गपशप का उदय हुआ और स्ट्रॉबेरी के पौधे की भांति उसने अपनी शाख-प्रशाखाएं फैलानी शुरू कर दीं। मैं सन्न रह गया। मैंने उसमें से निकलने और उसके लेसदार फन्दों को तोड़ फेंकने की कोशिश की, लेकिन बेकार... मैं वहां से चला गया। हां तो इसमें भी, मैंने अपने-

आपको मूर्ख सिद्ध किया। मुझे धीरज से इन्तज़ार करना चाहिए था। तूफ़ान अपने-आप ठंडा पड़ जाता, जैसे जुलपित्ती का दौरा ठंडा पड़ जाता है, और वही मेहरबान लोग मेरे लिए फिर अपनी बांहों को फैला देते, वही कुलीन महिलाएं मुग्ध मुसकान के साथ फिर मेरी टिप्पणियों को सुनतीं। लेकिन असल मुसीबत तो यह है कि मैं मौलिक आदमी नहीं हूं। मेरी अन्तरात्मा ने, कृपया ध्यान से सुनो, मुझे कचोटना शुरू कर दिया। बातें करते – जाने क्यों – मुझे शर्म आने लगी। बातें करते, बिना रुके बातें करते, निरी बातें करते – कल अरबात में, आज त्रूबा में, कल सिवत्सेव-व्राजेक में, और हर बार एक उसी चीज़ के बारे में... लेकिन इसका क्या इलाज अगर लोग यही मुझसे चाहें? ज़रा उन लोगों पर नज़र डालिये जो इस दिशा में वास्तव में सफल हुए हैं। वे इस फेर में नहीं पड़ते कि यह उपयोगी है या नहीं। इसके प्रतिकूल, वे केवल बातों से वास्ता रखते हैं। कुछ तो लगातार बीस बीस साल ज़ुबान के घोड़े दौड़ाये जाते हैं, और हमेशा एक ही दिशा में। सब आत्मविश्वास और स्वाभिमान की बदौलत। यों उससे – स्वाभिमान से – मैं भी शून्य नहीं था। सच पूछो तो वह अब भी एकदम मर नहीं गया है। लेकिन असल मुसीबत यह थी कि – मैं फिर दोहराता हूं – कि मुझमें मौलिकता नहीं थी। मैं अधबीच में ही अटका था। चाहिए यह था कि प्रकृति मुझे और अधिक स्वाभिमानी बनाती या फिर बिल्कुल वंचित रखती। लेकिन शुरू शुरू में यह परिवर्तन मुझे बहुत भारी मालूम हुआ। इसके अलावा, प्रवास ने भी, मेरे साधनों को खोखला कर दिया था। फिर सौदागर की एक युवा तथा जैली की भांति गिलगिली लड़की से विवाह करने के लिए मैं तैयार नहीं था। सो मैंने अपने देहात में आकर शरण ली। लेकिन सोचता हूं कि," कनखियों से मेरी ओर देखते हुए उसने फिर कहा, "देहाती जीवन के पहले प्रभावों को, प्रकृति के सौन्दर्य और एकाकी जीवन की मृदु रमणीयता आदि आदि को, मैं यहां दरगुज़र कर जाऊं।"

"बेशक, वह सब छोड़ सकते हो," मैंने कहा।

"और भी अधिक इसलिए" वह कहता गया, "कि वह सब फ़िज़ूल है, कम से कम मुझे ऐसा ही मालूम होता है। देहात में मैं वैसे ही ऊब गया जैसे ताले में बन्द पिल्ला ऊब जाता है। लेकिन मुझे स्वीकार करना चाहिए कि घर लौटते समय जब मैं बर्च-वृक्षों के पहली बार अपने परिचित जंगल में से गुज़रा—वसन्त के दिन थे—मेरे मस्तिष्क में एक नशा-सा छा गया और मेरा हृदय एक धुंधली, मधुर आशा से थिरकने लगा। लेकिन ये धुंधली आशाएं—जैसा कि आप खूब जानते होंगे—कभी पूरी नहीं उतरतीं। उलटे, उनसे बिल्कुल भिन्न चीज़ें सामने आती हैं, जिनकी कि आप क़तई आशा नहीं करते थे, जैसे डंगरों की महामारी, बक़ाया, नीलाम, आदि आदि। अपने कारिन्दे याकोव की मदद से—भूतपूर्व मैनेजर की जगह अब वही काम कर रहा था—जैसे-तैसे आये दिन के काम का मैंने ढर्रा बैठाया। लेकिन वह भी, आगे चलकर ज्यादा नहीं तो उतना ही बड़ा लुटेरा सिद्ध हुआ। इसके अलावा अपने कोलतारी बूटों की गंध से उसने मेरे जीवन को जो विषैला बनाया सो अलग। इसी बीच एक दिन, अचानक, मुझे अपने एक परिचित पड़ोसी परिवार की याद आयी। यह एक अवकाश-प्राप्त कर्नल की विधवा पत्नी और उसकी दो लड़कियों का परिवार था। मैंने अपनी बग्घी जुतवायी और उनसे मिलने चल दिया। वह दिन मेरे लिए हमेशा स्मरणीय रहेगा—छः महीने बाद अवकाश-प्राप्त कर्नल की दूसरी लड़की के साथ मैं विवाह-सूत्र में गुंथ गया!"

वक्ता ने अपना सिर लटका लिया और उसके हाथ हवा में ऊंचे उठ गये।

"और अब," वह उद्वेग के साथ कहता गया, "अपनी स्वर्गीय पत्नी के बारे में कोई बुरा शब्द मुंह से निकालना मैं बरदाश्त नहीं कर सकता। नहीं, खुदा न करे ऐसा हो! वह अत्यन्त उदार और मधुरतम

जीव थी। प्यार भरा स्वभाव, हर प्रकार का आत्मत्याग करने के लिए तैयार। यों, और यह अपने बीच की बात है, मुझे स्वीकार करना चाहिए, अगर उसे खोने का यह दुर्भाग्य मेरे साथ न घटता, तो शायद आज मैं तुमसे यहां बातें करता नज़र न आता। मेरी कोठड़ी में वह कड़ी आज भी मौजूद है जिससे लटककर जान देने का इरादा मैं बारहा कर चुका था ..."

"कुछ नाशपातियों को," थोड़ा विराम लेकर उसने फिर कहना शुरू किया, "कहते हैं कि जब तक कुछ दिनों तक ज़मीनदोज़ तहख़ाने में नहीं रखा जाता तब तक उनका असली ज़ायक़ा नहीं खुलता। मेरी पत्नी भी, ऐसा मालूम होता है, प्रकृति की ऐसी ही देन थी। यह तो केवल अब मैं उसके साथ न्याय कर सका हूं। केवल अब ऐसा हुआ है कि उन संध्याओं की याद करते समय जो विवाह से पहले मैंने उसके साथ बितायी थीं, मेरे हृदय में अब ज़रा भी कटुता नहीं उठाती, बल्कि मेरी आंखें प्रायः नम हो आती हैं। वे धनी लोग नहीं थे। बहुत ही पुराने ढंग का लकड़ी का बना हुआ उनका घर था। लेकिन था आरामदेह। एक पहाड़ी पर झाड़-झंखाड़ भरे सहन और जंगल बने बग़ीचे के बीच वह स्थित था। पहाड़ी की तलहटी में एक नदी बहती थी। घनी पत्तियों के बीच से उसकी झलक-भर दिखाई देती थी। घर से बग़ीचे तक एक चौड़ा बरामदा खिंचा था। बरामदे के सामने फूलों की एक लम्बी क्यारी थी जिसमें गुलाब खिले थे। क्यारी के दोनों छोरों पर बबूल के दो पेड़ उगे थे। स्वर्गीय स्वामी ने इन्हें इस तरह साधा था कि वे पेंच के आकार में उगते मालूम होते थे। कुछ और आगे चलकर, रसभरी की उपेक्षित तथा मनमानी उगी झाड़ियों के ठीक बीचोंबीच, एक लतामण्डप था, भीतर से खूब रंगा-चुना, लेकिन बाहर से इतना जीर्ण और जर्जर कि देखने तक को जी न चाहे। बरामदे में कांच का एक दरवाज़ा था जो दीवानख़ाने में खुलता था। एक कुतूहली दर्शक की नज़र दीवानख़ाने में

किन चीज़ों पर पड़ती थी, वे ये हैं–कोनों में डच टाइलों की अंगीठियां, दाहिनी ओर चरमर करता एक पियानो जिसके ऊपर स्वर-पाण्डुलिपियों का ढेर लगा था, एक सोफ़ा जिसपर सफ़ेदी-मायल फूलों से युक्त नीला कपड़ा चढ़ा था। कपड़े का रंग उड़ चुका था। एक गोल मेज़, दो छोटी अलमारियां जो कैथरीन के समय के चीनी की छुट-पुट चीज़ों तथा मनकों से लदी थीं। दीवार पर सुनहरे बालों वाली एक लड़की का प्रचलित चित्र जो अपने वक्ष से कबूतर सटाये आकाश की ओर देख रही है। मेज़ पर गुलाब के ताज़ा फूलों का एक गुलदस्ता... सो देखा आपने, कितनी बारीकी के साथ मैं उसका वर्णन करता हूं। इस दीवानखाने में, उस बरामदे में, मेरे प्रेम के सभी दृश्य–दुखद भी और सुखद भी–घटित हुए थे। कर्नल की पत्नी स्वयं एक चुड़ैल थी। ओछी और चिड़चिड़ी–कुत्सा से भरी इतना टर्राती थी कि उसका गला हमेशा बैठा रहता था। लड़कियों में से एक, वेरा, बिल्कुल वैसी ही थी जैसी कि देहात की लड़कियां हुआ करती हैं–हर तरह से साधारण। दूसरी, सोफ़्या–उसने ही मेरे हृदय में घर किया। दोनों बहिनों के पास एक छोटा कमरा और था। इसी में समान रूप से वे सोती भी थीं। कमरे में दो छोटे छोटे, मासूम-से, लकड़ी के पलंग बिछे थे। पीली पड़ी अलबमें, मिगनोनेट के फूल, पेन्सिल से खींचे हुए मित्रों के रेखा-चित्र जो कुछ अच्छे नहीं बने थे, (इनमें से एक महानुभाव के चेहरे पर असाधारण स्फूर्ति का भाव छाया था, और उससे भी अधिक स्फूर्ति के साथ चित्र के नीचे दस्तख़त बने थे। युवावस्था ने अनुपात से कहीं अधिक आशाएं जगायीं, लेकिन अन्त में, हम सब की भांति, शून्य के सिवा कुछ पल्ले नहीं पड़ा) शिलर और ग्येटे के बस्ट, जर्मन पुस्तकें, सूखे हुए हार तथा अन्य चीज़ें जिन्हें यादगार के रूप में संजोकर रखा हुआ था। लेकिन इस कमरे में मैं बिरले ही पांव रखता था और सो भी बेमन। जाने क्यों, उसमें मेरा दम घुटता था। और, कहते अजीब

मालूम होता है, सोफ़्या भी मुझे तभी सबसे अच्छी लगती थी जबकि मैं उसकी ओर पीठ करके बैठा होता था। या इससे भी अधिक शायद उस समय जब मैं बरामदे में उसके बारे में सोचता था और सपनों के जाल बुनता होता था। छिपते हुए सूरज की ओर मैं देखा करता, पेड़ों और नन्ही नन्ही हरी पत्तियों की ओर ताका करता, अंधेरे में काली पड़ जाने पर भी जो गुलाबी आकाश की पृष्ठभूमि में स्पष्ट नजर आतीं। दीवानख़ाने में सोफ़्या पियानो पर बैठी निरन्तर कोई प्रिय धुन–बीटहोवन की कृति–बजाती रहती; चिड़चिड़ी बुढ़िया सोफ़े पर बैठे बैठे आराम से ख़र्राटे लेती। लाल आलोक से प्लावित भोजन के कमरे में वेरा चाय के लिए खटर-पटर करती। समोवार आनंद में आकर सिसकारी छोड़ता–जैसे किसी चीज़ से प्रसन्न हो उठा हो। कुरकुरे बिस्कुट करारेपन के साथ चटकते और चम्मचें प्यालों से टकराकर खनखनातीं। पिंजरे का पक्षी जो दिन-भर बेरहमी से टिटियाता रहा था, अचानक चुप हो जाता और केवल जब-तब ही उसकी चिचियाहट सुनाई देती। ऐसा मालूम होता जैसे किसी चीज़ की याचना कर रहा हो। एक हल्के पारदर्शी बादल से कुछ उड़ती हुई सी बूंदें गिरतीं... और मैं बैठा रहता, बस बैठा रहता, मेरे कान सुनते रहते, सुनते रहते, और आंखें देखती रहतीं, बस देखती रहतीं। मेरा हृदय फैलता और मैं एक बार फिर अनुभव करता कि प्रेम से मैं अभिभूत हूं। हां तो ऐसी ही एक सांझ के प्रभाव में एक दिन मैंने उस चिड़चिड़ी बुढ़िया के सामने प्रस्ताव रखा कि मैं उसकी लड़की से विवाह करना चाहता हूं, और इसके दो मास बाद मेरा विवाह हो गया। मुझे ऐसा मालूम होता था जैसे मैं उससे प्रेम करता हूं... अब तक, बिलाशक, मुझे कभी का मालूम हो जाना चाहिए था, लेकिन ख़ुदा साक्षी है, मैं आज दिन भी नहीं जानता कि क्या मैं सचमुच सोफ़्या से प्रेम करता था। वह बड़ी मधुर जीव थी–चतुर, ख़ामोश और सहृदय, लेकिन केवल ख़ुदा ही बता सकता है कि किस वजह से–देहात में

दीर्घकाल तक रहने या अन्य किसी वजह से—उसकी आत्मा की अन्तर्तम तह में (अगर आत्मा की ऐसी तह होती हो तो) कोई गुप्त ज़ख़्म था, या अधिक सही शब्दों में एक नन्हा-सा खुला नासूर था जो किसी चीज़ से नहीं अच्छा हो सकता था, और जिसे न तो वह कोई नाम दे सकती थी और न ही मैं। इस नासूर के अस्तित्व के बारे में, कहने की आवश्यकता नहीं, केवल विवाह के बाद ही मैं कुछ अन्दाज़ लगा सका। उफ़, कितनी कशमकश थी... लेकिन सब बेकार। बचपन में मेरे पास एक छोटी-सी चिड़िया थी। उसे एक बार बिल्ली ने अपने पंजों में दबोच लिया था। जान तो उसकी बचा ली गयी, देख-संभार भी उसकी की गयी, लेकिन बेचारी फिर चंगी होकर नहीं जी। वह आंखें मूंदे बैठी रहती, वह क्षीण होती गयी, उसका चहचहाना बंद हो गया... अन्त में एक रात उसके खुले हुए पिंजरे में एक चूहा घुस गया और उसने उसकी चोंच कुतर डाली। इसके बाद, अन्ततः उसने मरने की ठान ली। मैं नहीं जानता कि मेरी पत्नी को किस बिल्ली ने अपने पंजों में दबोचा था, लेकिन वह भी ठीक उस अभागी चिड़िया की भांति ही आंखें मूंदे घुलती रहती। कभी कभी, प्रत्यक्षतः, उबरने का प्रयास करती, खुली हवा, सूरज की धूप और आज़ादी का आनन्द लेना चाहती। वह कोशिश करती, और फिर अपने-आप में सिकुड़-सिमटकर रह जाती। और आप जानो, वह मुझसे प्यार करती थी, जाने कितनी बार उसने मुझे आश्वस्त किया कि उसके हृदय में कोई साध अब बाक़ी नहीं है। ओह, शैतान उठा ले जाय मेरी इस आत्मा को! और उसकी आंखों की जोत बराबर मन्द होती जा रही थी। मैं आश्चर्य करता कि उसके अतीत में तो कोई ऐसी बात नहीं हुई है। मैंने खोजबीन की, लेकिन कुछ हाथ नहीं लगा। जो हो, आप अपनी राय खुद क़ायम कर सकते हैं। अगर कोई मौलिक आदमी होता तो वह अपने कंधों को बिचकाता, शायद एक या दो बार उसासें भरता, और अपने ढंग से जीवन बिताने

के लिए आगे बढ़ जाता। लेकिन मैंने, मौलिकता से शून्य जीव होने के कारण, कड़ियों और शहतीरों को गिनना शुरू कर दिया। मेरी पत्नी चिरकुमारी की आदतों – बीटहोवन, सांझ की सैर, मिगनोनेट, सहेलियों से चिट्ठी-पत्री, अलबम, आदि आदि – में इतनी पूर्णता के साथ पगी थी कि वह कभी जीवन के किसी अन्य ढंग के साथ अपनी पटरी नहीं बैठा सकी, ख़ास तौर से घर की मालकिन जैसे जीवन के साथ। जो हो, एक विवाहित स्त्री के लिए अस्पष्ट उदासी में घुलते रहना तथा सांझ को गीत गुनगुनाना, इस क़िस्म के 'उसे तड़के न जगाइये', बहुत ही बेढंगा मालूम होता था।

"हां तो, इस ढंग से, तीन साल तक हम स्वर्ग-सुख का भ्रम पाले रहे। चौथे साल में, पहली ज़चगी में, वह मर गयी। और कहते आश्चर्य होता है कि मुझे जैसे यह पहले ही भास हो गया था कि वह मुझे बेटी या बेटा देने में असमर्थ है – इस धरती को एक नया निवासी प्रदान करना उसके बस की बात नहीं है। मुझे याद है कि किस प्रकार उसे दफ़नाया गया। वसन्त के दिन थे। हमारी बस्ती का गिरजा छोटा और पुराना था, उसकी पार्टीशन काली पड़ गयी थी, दीवारों पर कोई देव-चित्र न थे, ईंटों के फ़र्श में गड्ढे पड़े थे, और हर ड्योढ़ी में पुराने ढंग की एक बड़ी धार्मिक मूर्ति लगी थी। ताबूत को वे भीतर ले आये, धर्म-द्वारों के सामने बीच में उसे रखा, धुंधली-सी एक चादर उसके ऊपर फैला दी, और तीन मोमबत्तियां उसके इर्द-गिर्द लगा दीं। विधि शुरू हुई। एक बूढ़ा और जर्जर डीकन, पीछे की ओर बालों का एक छोटा-सा गुच्छा हिलगाये और हरी पेटी को नीचे बांधे, डैस्क के पीछे खड़ा शोकपूर्ण अन्दाज़ में मिमिया रहा था। एक पादरी, उतना ही बूढ़ा, सहृदय और चुंधा चेहरा लिये, पीले फूलों से युक्त बैंगनी रंग का चोग़ा पहने, ख़ुद अपने और डीकन के लिए संस्कार सम्पन्न करा रहा था। खुली हुई सभी खिड़कियों पर किशोर नये पत्ते सरसरा और कानों ही

कानों में बतिया रहे थे। बाहर गिरजे के अहाते में घास की महक हिलोरें ले रही थी। मोमबत्तियों की लाल लौ वसन्त के दिन की उजली रोशनी में पीली पड़ गयी थी। गिरजे के समूचे ओर-छोर में गौरयां चहचहा रही थीं और जब-तब गुम्बद के नीचे भीतर उड़ आनेवाली अबाबील की गूंजदार टिटियाहट सुनाई दे जाती थी। सूरज की किरनों के सुनहरी धूलिकणों में गिनती के कुछ किसानों के भूरे सिर बराबर उठ और गिर रहे थे। वे लगन के साथ मृतात्मा के लिए प्रार्थना में रत थे। धूपदान के छेदों में से धूम्र की एक पतली नीली धारा प्रवाहित हो रही थी। मैंने अपनी पत्नी के मृत चेहरे पर नज़र डाली... हे भगवान, मृत्यु—खुद मृत्यु भी—उसे बन्धन-मुक्त नहीं कर पायी थी, उसके घाव को नहीं भर सकी थी—अब भी वह वैसी ही रुग्ण, सहमी-सी और मौन दिखती थी, मानो अपने ताबूत में भी वह उखड़ी उखड़ी-सी महसूस कर रही हो! मेरा हृदय कड़ुवाहट से भर गया। मधुर, बहुत ही मधुर जीव थी वह, और अपने लिए उसने यह अच्छा ही किया जो इस दुनिया से विदा हो गयी!"

वक्ता के गाल लाल हो उठे थे और उसकी आंखें धुंधली पड़ गयी थीं।

"अन्त में," उसने फिर कहना शुरू किया, "उस उदासी से उबरने पर जिसने पत्नी की मृत्यु के बाद मुझे अभिभूत कर लिया था, मैंने अपने-आपको काम में लगाने का निश्चय किया। प्रान्त के नगर में एक सरकारी दफ़्तर में मैंने प्रवेश किया, लेकिन सरकारी संस्था के बड़े बड़े कमरों में मेरा सिर दर्द करने लगा, मेरी आंखों ने भी जवाब देना शुरू कर दिया और कुछ अन्य कारण भी आ मिले। मैंने वहां से अवकाश ग्रहण किया। मास्को जाने का मेरा विचार था, लेकिन सबसे पहली बात तो यह कि मेरे पास पैसे नहीं थे, और दूसरे... सो मैं आपको बता ही चुका हूं—मैं विरक्त हो चुका हूं। इस विराग ने जिस रूप में मुझे पकड़ा है, उसे आकस्मिक कहा जा सकता है, और नहीं भी। भावना का जहां

तक संबंध है, मैं बहुत पहले ही विरक्त हो चुका था, लेकिन मेरा मस्तिष्क अभी उसका जुआ सहने को तैयार नहीं था। अपने तुच्छ विचारों और मस्तिष्क की इस स्थिति का कारण मैंने देहात के जीवन तथा अपने दु:ख को समझा। दूसरी ओर, काफ़ी दिनों से यह देखने में आ रहा था कि मेरे पड़ोसी, बूढ़े और जवान सभी, जो पहले मेरी शिक्षा-दीक्षा, विदेशों में मेरे प्रवास, और शिक्षा से प्राप्त मेरे अन्य गुणों से भयभीत हो उठे थे, न केवल यह कि मुझसे पूर्णतया अभ्यस्त होने का अवसर नहीं पा सके, बल्कि वे मेरे साथ अर्द्ध-रुक्षता तथा अर्द्ध-घृणा तक से व्यवहार करने लगे थे। मैं जो कहता उसे नहीं सुनते थे और मुझसे बातें करते समय सम्मान के ऊपरी चिन्हों का प्रयोग करना उन्होंने अब छोड़ दिया था। और हां, मैं आपको यह बताना भी भूल गया कि अपने विवाह के बाद पहले साल के दौरान में मैंने अपनी उदासी दूर करने के लिए साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश करने का प्रयत्न किया था, यहां तक कि एक पत्रिका को कोई चीज़ भी भेजी थी – एक कहानी, अगर मैं भूलता नहीं हूं तो। लेकिन कुछ ही दिनों के बाद मुझे संपादक का शिष्ट पत्र मिला जिसमें, अन्य चीज़ों के अलावा, मुझे बताया गया था कि इस बात से तो इन्कार नहीं किया जा सकता कि मुझमें बुद्धि है, लेकिन साथ ही यह भी कहना पड़ता है कि प्रतिभा का मुझमें अभाव है, और प्रतिभा ही एक ऐसी चीज़ है जिसका होना साहित्य के लिए आवश्यक है। इसके साथ साथ, मुझे मालूम हुआ कि एक युवक ने – सो भी अत्यन्त भले स्वभाव के युवक ने – जो मास्को से आया था, गवर्नर के यहां एक संध्या-पार्टी में मेरा उल्लेख करते हुए कहा कि मैं एक छिछला, घिसा-पिटा तथा समय से पिछड़ा आदमी था। लेकिन मैं अपनी धृष्टता में अब भी अंधा बना हुआ था – ख़ुद अपने मुंह पर, आप जानो, चपत मारने के लिए मैं तैयार नहीं था। आख़िर एक सुहावनी सुबह मेरी आंखें खुलीं। घटना इस प्रकार हुई। पुलिस इंस्पेक्टर मुझसे मिलने आया, ताकि उस

जर्जर पुल की ओर मेरा ध्यान खींच सके जो मेरी मिल्कियत में था और जिसकी मरम्मत के लिए मेरे पास क़तई पैसे नहीं थे। वोद्का का एक गिलास और धुएं में सूखी हुई मछलियों का नाश्ता चट करने के दौरान क़ानून-व्यवस्था के इस दयाशील संरक्षक ने पिता की भांति मेरी लापर्वाही पर मुझे झिड़का, लेकिन मेरी स्थिति से सहानुभूति भी प्रकट की और एकमात्र यह सलाह दी कि मैं अपने किसानों को हुक्म देकर किसी भी मिट्टी से पुल की टूट भरवा दूं। इसके बाद उसने अपना पाइप सुलगाया और आगामी चुनावों के बारे में बातें करने लगा। ओरबस्सानोव नाम का एक आदमी उन दिनों प्रान्त का मारशल का प्रतिष्ठित पद पाने के लिए उत्सुक था। वह शोरगुल मचानेवाला एक छिछला आदमी था। ऊपर से घूस अलग लेता था। इसके अलावा न तो वह वंश की दृष्टि से उल्लेखनीय था न धन की दृष्टि से। उसके बारे में मैंने अपनी सम्मति प्रकट की, सो भी यों ही। ओरबस्सानोव को, मैं स्वीकार करता हूं मैं अपने से निम्नस्तर का समझता था। पुलिस इंस्पेक्टर ने मेरी ओर देखा, प्यार से मेरे कंधों को थपथपाया, और भले स्वभाव के साथ कहा—'बस बस, वासीली वासील्यिच, उस जैसे लोगों की आलोचना करना हम-तुम जैसे लोगों का काम नहीं है—इतनी योग्यता भला हममें कहां है? अच्छा यही है कि मोची अन्त तक अपने मोचीपन को न छोड़े।' —'लेकिन, सच कहता हूं,' खीज के साथ मैंने कहा, 'ओरबस्सानोव किस बात में मुझसे अच्छा है?' पुलिस इंस्पेक्टर ने पाइप अपने मुंह से निकाल लिया, अपनी आंखों को खूब चौड़ा कर बड़ा किया और हंस पड़ा। 'भई वाह, तुम भी मज़ेदार आदमी हो!' अन्त में उसने अपना मन्तव्य प्रकट किया हंसी से लोटपोट होते और अपने गालों पर से आंसू ढुरकाते हुए, 'क्या मजाक सूझा है तुम्हें... ओह, मज़ेदार जीव हो तुम!' और जब तक वह विदा न हो गया, एक क्षण के लिए भी मेरी खिल्ली उड़ाना उसने बंद नहीं किया, रह रहकर अपनी कोहनी से मेरी

पसलियों में ठहोका देता और तू कहकर पुकारता था। आख़िर वह विदा हुआ। बहुत हो चुका था और मेरा प्याला छलकना ही चाहता था। अनेक बार कमरे के फ़र्श को मैंने इधर से उधर नापा, आईने के सामने रुककर स्थिर खड़ा हुआ और देर तक, काफ़ी देर तक, शीशे के सामने खड़ा अपने परेशान चेहरे को उसमें ताकता रहा फिर, धीरे धीरे अपनी जीभ को बाहर निकालते हुए, तीखी मुसकान के साथ मैंने अपना सिर हिलाया। मेरी आंखों की मांडी उतर गयी, आईने में अपने चेहरे से भी अधिक साफ़ मुझे नज़र आ गया कि कितना छिछला, तुच्छ, निकम्मा और अमौलिक जीव हूं मैं!"

उसने विराम लिया।

"वाल्टेयर की एक दु:खान्त रचना में," अलसाहट के साथ वह फिर कहता गया, "एक सज्जन है जो इस बात से ख़ुश है कि दु:ख की चरम सीमा पर वह पहुंच गया है। हालांकि मेरे भाग्य में दु:खान्त जैसी कोई चीज़ नहीं है, फिर भी मैं स्वीकार करूंगा कि उससे मिलती-जुलती चीज़ का अनुभव कर चुका हूं। निर्मम निराशा के तीखे प्यालों का स्वाद मैंने चखा है, और उस मिठास का मैंने अनुभव किया है जो बिस्तर पर पड़े पड़े, समूची की समूची सुबह, अपने जन्म की घड़ी तथा दिन को जान बूझकर एक साथ अभिशप्त क़रार देने में प्राप्त होती है। एकबारगी ही मैं विरक्त नहीं हो सका। और, ख़ुद आप सोचकर देखिये, इसके सिवा होता भी क्या—धन के अभाव ने मुझे देहात में बांधे रखा, जिससे मैं घृणा करता था। अपनी ज़मीन का बन्दोबस्त करने के लिए विधाता ने मुझे नहीं गढ़ा था, न ही जन-सेवा के मैं उपयुक्त था, न साहित्य के। अपने पड़ोसियों से मैं कोई वास्ता नहीं रखता था, और पुस्तकें मुझे भार मालूम होती थीं। और जहां तक नि:सत्व तथा विकृति की हद तक भावुक स्त्रियों का संबंध था जो अपनी लटों को लहरातीं और आवेग के साथ स्वतंत्रता शब्द का राग अलापती रहती

थीं, उनके लिए अब मुझमें कोई आकर्षण नहीं रहा था, जब से मैंने बात बघारना और उत्साहित होना छोड़ दिया था। और पूर्ण एकान्त मैं सह नहीं सकता था ... मैंने – क्या आप कल्पना कर सकते हैं – मैंने इधर-उधर मंडराना, अपने पड़ोसियों के सिर पड़ना, शुरू किया। दुनिया-भर के छुट-पुट अपमानों को मैं जान बूझकर ओटता, आत्म-घृणा के नशे ने जैसे मुझे अभिभूत कर लिया था। भोजन के समय मेज़ पर मुझे भुला दिया जाता, उद्धत उपेक्षा से मेरे साथ पेश आया जाता, और अन्ततः मुझे एकदम दरगुज़र कर दिया जाता। आम बातचीत तक में मुझे हिस्सा न लेने दिया जाता और मैं ख़ुद अपने-आप इरादतन किसी मूर्ख वक्ता के समर्थन में अपने कोने से बोल उठता – ऐसे वक्ता के समर्थन में जो मास्को में पुराने दिनों गद्गद होकर मेरे पांव की धूल चाटता और मेरे ग्रेटकोट के छोर को चूमता... मैं अपने-आपको इस विश्वास तक में मुब्तिला न होने देता कि ऐसा करके मैं व्यंग के तीखे सन्तोष का उपभोग कर रहा हूं... और सच निराले में आदमी व्यंग का उपभोग भला कर भी क्या सकता है! हां तो कई साल तक इस तरह मैंने व्यवहार किया, और आज भी इसी तरह व्यवहार करता हूं..."

"वाक़ई, यह तो हद हो गयी," बग़लवाले कमरे में से मिस्टर कान्ताग्र्युखिन की उनींदी आवाज़ आयी, "जाने किस बेवक़ूफ़ को यह रात-भर बातें करने का ख़ब्त सवार हुआ है!"

वक्ता तुरत बिस्तर में दुबक गया, और सहमे-से अन्दाज़ में झांकते हुए मुझे चेताने के लिए अपनी उंगली उठायी।

"शि-शि!" वह फुसफुसाया, और जैसे कान्ताग्र्युखिन की आवाज़ की दिशा में क्षमार्थी की भांति सिर नवाते हुए सम्मानपूर्ण अन्दाज़ में बोला – "मानता हूं, श्रीमान, मानता हूं। क्षमा चाहता हूं ... उनके लिए सोना जायज़ है, उन्हें सोना चाहिए ही," फुसफुसाकर वह फिर कहता गया, "उन्हें अपनी शक्तियों का संचय करना चाहिए – अगर

और किसी लिए नहीं तो इसलिए कि कल उसी चटखारे के साथ अपना भोजन कर सकें। हमें कोई अधिकार नहीं है कि उन्हें परेशान करें। इसके अलावा, मेरा ख़याल है कि जो भी मुझे बताना था, वह सब बता चुका। शायद तुम्हें भी नींद आ रही है। नमस्ते!"

उद्वेगपूर्ण तेज़ी के साथ उसने करवट ली और तकिए में अपना सिर छिपा लिया।

"कम से कम यह तो मुझे मालूम होना चाहिए," मैंने पूछा, "कि किससे बातें करने का मुझे यह सौभाग्य..."

तेज़ी से उसने अपना सिर उठाया।

"नहीं, इसके लिए मुझपर रहम करो!" उसने बीच में ही मेरी बात काटी, "मुझसे या दूसरों से मेरे नाम-धाम के बारे में पूछ-ताछ न करो। एक अनजान जीव ही मुझे अपने लिए बना रहने दो—कोई वासीली वासील्यिच—भाग्य का कुचला हुआ। इसके अलावा, मौलिकता से शून्य होने के कारण, मैं कोई व्यक्तिगत नाम रखने के योग्य भी नहीं हूं... लेकिन अगर आप सचमुच मुझे कोई संज्ञा देना चाहते हैं, तो मुझे... तो मुझे श्चिग्री ज़िले का हैमलेट कह लीजिये। हर ज़िले में इस तरह के कितने ही हैमलेट हैं, लेकिन शायद आपका इन दूसरे हैमलेटों से वास्ता नहीं पड़ा। अच्छा तो अब नमस्ते।"

उसने फिर अपने-आपको परों के कम्बल के नीचे दुबका लिया, और अगली सुबह जब मुझे जगाया गया तो वह कमरे में नहीं था। दिन का उजाला होने से पहले ही वह चला गया था।

चेरतोपखानोव और नेदोप्यूस्किन

गर्मी के दिन थे। शिकार करने के बाद मैं एक गाड़ी में घर लौट रहा था। येरमोलाई मेरी बग़ल में बैठा ऊंघ रहा था। कुत्ते भी उनींदे थे और बेजान पिण्डों की भांति हमारे पांवों में पड़े धचकोलों के साथ उछल और गिर रहे थे। कोचवान घोड़ों पर बैठी डांसों को अपने चाबुक से दुत्कारने में जुटा था। गाड़ी के पीछे सफ़ेद धूल का एक झीना बादल उठ रहा था। हम झाड़ियों के बीच से गुज़र रहे थे। सड़क यहां लीकों से अटी थी, और पहियों ने टहनियों में उलझना शुरू कर दिया था। येरमोलाई सहसा चौकस हुआ, अपने इर्द-गिर्द उसने नज़र डाली। "ओह!" उसने कहा, "यहां ग्राउज़ होने चाहिएं। चलो, उतर चलें।" रुककर हमने एक झुरमुट में प्रवेश किया। मेरा कुत्ता ग्राउज़-पक्षियों के एक झुंड के पास जा पहुंचा। मैंने गोली दाग़ी, और बन्दूक़ को फिर भरने जा ही रहा था कि तभी, अचानक, मेरे पीछे ज़ोरों से कड़कड़ की एक आवाज़ सुनाई दी। घोड़े पर सवार एक आदमी मेरी ओर बढ़ आया, अपने हाथों से झाड़ियों को इधर-उधर धकेलते हुए बोला, "क्या मैं जान सकता हूं... श्रीमान," अक्खड़ आवाज में उसने कहना शुरू किया, "कि यहां शिकार करने का... अर्र... आपको क्या अधिकार है?" असाधारण तेजी के साथ, रुक रुककर और गुनगुनी आवाज़ में अजनबी बोल रहा था। मैंने उसके चेहरे पर नज़र डाली। अपने जीवन में पहले कभी मैंने उस जैसा कोई जीव नहीं देखा था। सहृदय पाठको,

ज़रा कल्पना कीजिये – सन-से बालों वाला एक टुइयां-सा आदमी, थोड़ी ऊपर को मुड़ी हुई लाल नाक, और लम्बी लम्बी लाल मूछें। गुलाबी कपड़े की कलगी से लैस नोकदार ईरानी टोपी, भौंहों तक अपने माथे पर खींचे हुए। पुराना ढीला-ढाला पीले रंग का काकेशी जाकेट पहने जिसके वक्ष पर काले रंग की कारतूस रखने की मख़मली जेबें लगी थीं और जिसकी सारी सीवनों पर कलौंस-चढ़ा रुपहला गोटा टंका था। उसके कंधे पर एक सिंगा लटका था और अपने पटके में वह एक ख़ंजर खोंसे था। एक मरियल-सा, आगे को मुड़े हुए नाकवाला और मुश्की रंग का घोड़ा उसके बोझ से डगमगा रहा था। दो दुबले-पतले, टेढ़े पंजों वाले शिकारी कुत्ते, ठीक घोड़े के पांवों के इर्द-गिर्द घूम रहे थे। चेहरा, देखने का ढंग, आवाज़, प्रत्येक हरकत, अजनबी का समूचा व्यक्तित्व, प्रचण्ड साहस और निर्बाध तथा अनबूझ गर्व व्यक्त कर रहा था। उसकी हल्की-नीली बिल्लौरी आंखें, अग़ल-बग़ल से तिर्छी, शराबी की भांति इधर से उधर भटक रही थीं। अपना सिर पीछे की ओर उसने फेंका, अपने गालों को फुलाया, नाक से फुंकार छोड़ी और ऊपर से नीचे तक हुमका, मानो गर्व फटा पड़ रहा हो – एकदम टुर्की मुर्ग़ की भांति। उसने फिर अपना प्रश्न दोहराया।

"मुझे मालूम नहीं था कि यहां शिकार करना मना है," मैंने जवाब दिया।

"यहां आप, श्रीमान जी," वह कहता गया, "मेरी ज़मीन पर हैं।"

"आप कहें तो मैं यहां से चला जाऊं।"

"लेकिन यह पूछने की मुझे अनुमति दें," उसने फिर कहा, "कि क्या एक कुलीन से बातें करने का मुझे सम्मान प्राप्त हो रहा है?"

मैंने अपना नाम बताया।

"तब तो, यहां शिकार करके मुझे कृतार्थ कीजिये। मैं ख़ुद भी कुलीन हूं, और कुलीनों की कोई भी सेवा करके मुझे भारी ख़ुशी होती है ... और मुझे पान्तेलेई चेरतोपखानोव कहते हैं।"

उसने सिर नवाया, हिचकी ली, अपने घोड़े की गरदन पर चाबुक सरसराया। घोड़े ने अपने सिर को झटका दिया, पिछले पैरों के बल उचका, एक तरफ़ लपका जिससे एक कुत्ते के पंजे पर उसका पांव पड़ गया। कुत्ता बुरी तरह किकियाया। चेरतोपखानोव एकदम गुस्से से उबल पड़ा और हांपते हुए घोड़े के सिर पर कानों के बीच घूंसा जमाया और बिजली से भी अधिक तेज़ गति से उछलकर नीचे ज़मीन पर आ गया, कुत्ते के पंजे को देखा, घाव पर थूका और उसका किकियाना बंद करने के लिए उसकी पसलियों में लात जमायी, घोड़े की अयाल को पकड़ा और रकाब में अपना पांव रखा। घोड़े ने हवा में अपना सिर उछाला, पूंछ को ऊंचा उठाया और कन्नी काटता झाड़ियों में बढ़ चला। एक टांग से फुदकता वह उसके साथ हिलगा रहा, आख़िर काठी पर सवार हुआ, झुंझलाहट उतारने के लिए अपने चाबुक को फटकारा, सिंगे को बजाया और तेज़ी से हवा हो गया। चेरतोपखानोव के इस अप्रत्याशित दर्शन से अभी मैं उबर भी न पाया था कि अचानक क़रीब क़रीब बिना किसी आहट के, झाड़ियों में से एक हृष्ट-पुष्ट आदमी प्रकट हुआ – चालीसेक वर्ष की आयु, काले रंग के एक छोटे-से घोड़े पर सवार। वह रुका, हरे रंग की चमड़े की अपनी टोपी को उसने सिर पर से उठाया और क्षीण दबी हुई आवाज़ में मुझसे पूछा – "मुश्की घोड़े पर सवार किन्हीं सज्जन को तो आपने नहीं देखा है?" मैंने जवाब दिया कि हां, देखा है।

"किधर को गये हैं वह सज्जन?" उसी लहजे में, अपनी टोपी को अभी भी सिर पर से हटाये हुए, उसने फिर पूछा।

"उधर? बहुत बहुत धन्यवाद, श्रीमान!"

अपने होंठों से पुचकारने की उसने आवाज़ की, अपनी टांगों से घोड़े की पसलियों को थपथपाया, और धीमी समगति से इंगित दिशा की ओर चल दिया। मैं उसे जाते हुए देखता रहा, जब तक कि उसकी नोकदार टोपी टहनियों की ओट में ओझल नहीं हो गयी। यह दूसरा

तीर की भांति लपका। वह न तो चिल्ला रहा था, न कुत्तों को उकसा रहा था, न हांक लगा रहा था। उसका सांस फूला हुआ था और वह हांफ रहा था। वह मुंह बाये था और टूटी-फूटी और निरर्थक ध्वनियां रह रहकर उसके मुंह में से निकल रही थीं। आंखें फाड़े आगे की ओर देख रहा था और अपने अभागे घोड़े पर बुरी तरह चाबुक झटकारता तेज़ी से लपक रहा था। शिकारी कुत्ते ख़रगोश पर हावी हो चले—क्षण-भर के लिए वह ख़रगोश पसरा, कमर को मोड़कर एकदम दोहरा हुआ, और तीर की भांति येरमोलाई के पास से होता झाड़ियों में घुस गया... कुत्ते भी पीछे लपके। "दे-ख-ना! जाने न पा-आ-ये!" जैसे-तैसे, बमुश्किल तमाम थकान से चूर घोड़सवार ने मुंह से निकाला, हकलाते हुए—"देखना, भाई!" येरमोलाई ने गोली दाग़ी... आहत ख़रगोश चिकनी सूखी घास पर गेंद की भांति लुढ़का, हवा में उछला, और उद्विग्न कुत्ते के दांतों में फंसा दयनीय भाव से चिचिया उठा। शिकारी कुत्ते उसके इर्द-गिर्द बटुर आये।

चेरतोपखानोव, तीर की भांति, अपने घोड़े से उतरा, ख़ंजर को उसने अपनी मुट्ठी में दबोचा, दौड़कर कुत्तों के बीच लपका और गालियां बकते हुए क्षत-विक्षत ख़रगोश को उनसे छीना और अपने समूचे चेहरे को सिकोड़-समेटकर, एकदम मूठ तक, ख़ंजर उसके गले में धंसा दिया... धंसाया, और हांक लगाने लगा। जंगल के छोर पर तीख़ोन इवानिच की शक्ल दिखाई दी। "हो-हो-हो-हो!" चेरतोपखानोव ने दूसरी हुलूध्वनि की। "हो-हो-हो-हो," उसके साथी ने थिरता के साथ जवाब में दोहराया।

रौंदी हुई जई की ओर इशारा करते हुए मैंने चेरतोपखानोव से अपना अभिमत प्रकट किया—"लेकिन, आप जानो, सच बात तो यह है कि गर्मियों में शिकार नहीं करना चाहिए।"

"यह मेरा खेत है," चेरतोपखानोव ने हांपते हुए जवाब दिया।

उसने खींच-खांचकर मारे हुए ख़रगोश को संवारा, उसे अपनी काठी से लटकाया, और उसके पंजे कुत्तों के बीच फेंक दिये।

"शिकार के नियमों के अनुसार, मेरे मित्र मुझे तुमको कारतूस देना होगा," येरमोलाई को सम्बोधित करते हुए उसने कहा। "और आपको, प्रिय श्रीमान," उसी झटकेदार, आकस्मिक आवाज़ में उसने फिर कहा, "मेरा धन्यवाद।"

वह अपने घोड़े पर सवार हो गया। "इजाज़त हो तो पूछूं... आपका नाम मेरे ध्यान से उतर गया।"

मैंने उसे फिर अपना नाम बता दिया।

"आपसे परिचय पाकर ख़ुशी हुई, मौक़ा मिलने पर आशा है कि आप इधर आयेंगे और दर्शन देंगे। लेकिन, तीख़ोन इवानिच, वह फ़ोमका कहां रह गया?" बड़े उत्साह के साथ उसने कहा। "उसका कुछ पता नहीं, और यहां ख़रगोश का शिकार भी हो गया।"

"उसका घोड़ा उसके नीचे दबकर मर गया," मुसकराते हुए तीख़ोन इवानिच ने जवाब दिया।

"मर गया? ओरबस्सान मर गया?" उसने सीटी बजायी। "कहां है वह?"

"उधर जंगल के पीछे!" चेरतोपखानोव ने अपने घोड़े की थूथनी पर चाबुक मारा, और गरदन-तोड़ गति से हवा हो गया। तीख़ोन इवानिच ने दो बार अपना माथा नवाया—एक बार ख़ुद अपनी ओर से, दूसरी बार अपने साथी की ओर से—और दुलकी चाल से फिर झाड़ियों के बीच चल दिया।

इन दोनों सज्जनों ने मुझमें गहरी उत्सुकता जगा दी। इतने भिन्न जीवों को इतनी अभिन्न मित्रता के सूत्र में गुंथने का क्या रहस्य हो सकता है? मैंने पूछ-ताछ शुरू की। जो मालूम हुआ, वह इस प्रकार है।

पान्तेलेई येरेमेइच चेरतोपखानोव आसपास के समूचे इलाक़े में एक

ख़तरनाक, सिर-फिरे, उद्धत और अत्यन्त झगड़ालू जीव के रूप में प्रसिद्ध था। बहुत ही थोड़े समय के लिए वह सेना में रहा था, और 'कठिनाइयां' उत्पन्न हो जाने के कारण उसे नौकरी से अवकाश ग्रहण करना पड़ा था। वह अफ़सर था, लेकिन उस कोटि का जिसे आम तौर से किसी कोटि में नहीं रखा जाता। उसका जन्म एक पुराने परिवार में हुआ था जो कभी धनी रहा था। उसके पूर्वज समृद्ध जीवन बिताते थे, स्तेप के चलन के अनुसार, अर्थात् वे सभी का, आमन्त्रित तथा अनामन्त्रित दोनों का, स्वागत करते थे, उन्हें इतना खिलाते थे कि उनमें दम न रहता था, चार मन के हिसाब से उनके मेहमानों के कोचवानों को घोड़ों के लिए जई देते थे, संगीतज्ञों, गायकों, विदूषकों, और कुत्तों को रखते थे। ख़ुशी-त्योहार के दिनों में अपनी रैयत को दारू और बीयर से ख़ुश करते थे, जाड़ों में अपने निजी घोड़ों के साथ, भारी-भरकम पुरानी गाड़ियों में मास्को जाते थे, और कभी कभी, पास में बिना एक कौड़ी के, केवल घरेलू पैदावार के सहारे, कई कई महीने गुज़ार देते थे। पान्तेलेई येरेमेइच के पिता के हाथों में जब जागीर आयी तब वह अंग-भंग हालत में थी। अपने समय में उसने भी उसे उजाड़ा, और जब मरा तो अपने एकमात्र उत्तराधिकारी पान्तेलेई के लिए बन्धक रखा हुआ एक छोटा-सा बेस्सोनोवो नामक गांव, मय पैंतीस पुरुषों और छिहत्तर स्त्री जीवों के, और कोलोब्रोदोवो बंजर की साढ़े अठाईस एकड़ निकम्मी ज़मीन छोड़ गया। मृतक के काग़ज़ों में इनके बारे में कोई ख़रीद का दस्तावेज़ नहीं मिला। मृतक ने, यह मानना पड़ेगा, बहुत ही अजीब ढंग से अपने को बरबाद किया था—'दूरदर्शी व्यवस्था' उसके विनाश का कारण थी। उसकी धारणाओं के अनुसार किसी भी कुलीन को सौदागरों, शहरियों और इस तरह के 'लुटेरों'—जैसा कि वह उन्हें कहता था—पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। इसलिए हर तरह के धंधे और दस्तकारी उसने अपनी जागीर में स्थापित

कर ली थी। "यह देखने में भी भला लगता है और सस्ता भी," वह कहा करता, "यह दूरदर्शी व्यवस्था है।" अपने जीवन के अन्त तक इस घातक धारणा को एक क्षण के लिए भी उसने नहीं छोड़ा। और, निस्संदेह यही उसे ले डूबी। लेकिन, तब फिर, उसे इसमें क्या मज़ा मिलता था! जिस चीज़ की भी उसे झक चढ़ आती, उसे वह कभी पूरा किये बिना नहीं रहता। उसके करिश्मों में से एक भीमाकार घरेलू बग्घी थी जिसे उसने अपनी निजी योजना के अनुसार किसी ज़माने में बनवाया था। वह इतनी भीमाकार थी कि समूचे गांव से बटोरे गये किसानों के घोड़ों और साथ में उनके मालिकों के संयुक्त प्रयासों के बावजूद वह पहले पहाड़ी ढलुवान पर ही फिस्स हो गयी और खण्ड खण्ड होकर बिखर गयी। येरेमेई लुकीच ने (पान्तेलेई के पिता का नाम येरेमेई लुकीच था) उस ढलुवान पर एक स्मारक खड़ा करने का आदेश दिया, और चाहे जो हो—इस मामले में वह ज़रा भी नहीं झिझका। तरंग में आकर एक गिरजा बनाने का ख़याल उसके दिमाग़ में उपजा—बिलाशक अपने-आप—बिना किसी शिल्पी की मदद के। ईंटें बनाने के फेर में उसने एक समूचा जंगल जला डाला, भीमाकार नींव रखी—मानो कैथेड्रल (बड़ा गिरजा)—बनाया जानेवाला हो, दीवारें उठायीं और गुम्बद चढ़ाना शुरू किया। लेकिन गुम्बद गिर पड़ा। उसने फिर कोशिश की—गुम्बद फिर ढह गया। उसने तीसरी बार कोशिश की—गुम्बद तीसरी बार भी गिरकर टुकड़े टुकड़े हो गया। नेक येरेमेई लुकिच चिन्तित हुआ। ज़रूर इसमें कोई ऐसी-वैसी बात है, उसने सोचा... ज़रूर किसी डायन ने जादू-टोना किया है... और उसने फ़ौरन गांव की तमाम बूढ़ी स्त्रियों को कोड़े लगाने का आदेश जारी कर दिया। उन्होंने बूढ़ी स्त्रियों को कोड़े लगाये, लेकिन यह सब करने पर भी गुम्बद चढ़ नहीं पाया। नयी योजना के अनुसार उसने किसानों की झोंपड़ियों का पुनर्निर्माण शुरू किया, और यह सब उसकी उसी दूरदर्शी व्यवस्थावाली प्रणाली का ही अंग था।

उसने उनके लिए एक साथ तीन घर, त्रिकोण का आकार बनाते हुए, खड़े किये, और एक खम्भा खड़ा किया जिसपर एक ध्वज तथा एक चिड़ियाखाना खड़ा किया। आये दिन किसी न किसी नये अजूबे का वह आविष्कार करता। कभी पत्तों का शोरबा बन रहा है, कभी गृह-दासों के वास्ते टोपियां बनाने के लिए घोड़ों की पूंछों को काटा जा रहा है। कभी सन के बदले बिछुए से काम लेने का प्रस्ताव किया जा रहा है, कभी सूअरों को कुकुरमुत्तों का खाद्य देने का प्रस्ताव किया जा रहा है... जो हो, उसका शौक़ एक मात्र नयी नयी आर्थिक योजनाओं तक ही सीमित नहीं था, किसानों की ख़ुशहाली से भी वह लगाव रखता था। एक बार 'मास्को गज़ट' में उसने एक लेख पढ़ा जिसे खारकोव के ज़मींदार ख्र्याक-ख्रुप्योर्स्की ने लिखा था। किसानों की ख़ुशहाली में नैतिकता का महत्त्व इस लेख का विषय था। इसके बाद, अगले ही दिन, अपने तमाम किसानों के नाम खारकोव भूस्वामी के उस लेख को फ़ौरन ज़बानी याद करने का फ़रमान कर दिया। और तदनुसार किसानों ने उसे याद कर लिया। मालिक ने उनसे पूछा कि उसमें जो कुछ कहा गया है, वह उनकी समझ में भी आया? कारिन्दे ने जवाब दिया—यह कोई शक करने की बात नहीं है! क़रीब क़रीब इन्हीं दिनों उसने अपनी सारी रियाया को—सुचारु और दूरदर्शी व्यवस्था को बनाये रखने की दृष्टि से—आदेश दिया कि हर एक का अपना नम्बर हो, और प्रत्येक के कालर पर उसका नम्बर टंका हो। अब जब भी मालिक से भेंट होती, वह चिल्लाकर कहता, "अमुक नम्बर हाज़िर है!" और मालिक मिलनसारी के साथ जवाब देता—"जुटे रहो, ख़ुदा का नाम लेकर!"

लेकिन, सुचारु और दूरदर्शी व्यवस्था के बावजूद, येरेमेई लुकीच क्रमशः बहुत कठिन परिस्थिति में फंस गया। पहले अपने गांवों को बन्धक रखने से उसने शुरूआत की और फिर उनके बिकने की नौबत आ पहुंची। पूर्वजों का आख़िरी घर, अधूरे गिरजेवाला वह गांव, अन्त में सरकारी

बक़ाया चुकाने में बिक गया। सौभाग्य से उसके जीवन-काल में नहीं– ऐसे आघात को वह कभी सहन न कर पाता–बल्कि उसकी मृत्यु के पन्द्रह दिन बाद। अपने घर पर, अपने निजी बिस्तर पर, अपने लोगों से घिरे हुए तथा ख़ुद अपने डाक्टर की देख-संभार में मरने का उसे श्रेय प्राप्त हुआ, और बेचारे पान्तेलेई के लिए सिवा बेस्सोनोवो के और कुछ भी बाक़ी नहीं बचा।

पान्तेलेई ने जब अपने पिता की बीमारी का समाचार सुना तब वह सेना में था, और वे 'कठिनाइयां', जिसका पहले ज़िक्र किया जा चुका है, अपने पूरे उभार पर पहुंची हुई थीं। वह अभी उन्नीसवें वर्ष में था। अपने बचपन के एकदम शुरू से लेकर वह कभी अपने पिता के घर और अपनी मां वासिलीसा वासील्येवना की देख-संभार से अलग नहीं हुआ था। उसकी मां एक बहुत ही भली लेकिन पूर्णतया मूढ़ स्त्री थी। वह बहुत सिर चढ़ा और दम्भी बन गया। अकेले मां ने ही उसकी शिक्षा-दीक्षा संभाली। येरेमेई लुकीच अपनी आर्थिक कपोल-कल्पनाओं में इतना डूबा रहता कि इस ओर ध्यान देने का उसके पास समय नहीं था। यह सच है कि एक बार उसने ख़ुद अपने हाथों से, वर्णमाला के एक अक्षर का ग़लत उच्चारण करने पर, अपने बेटे को सज़ा दी थी, लेकिन उसी दिन येरेमेई लुकीच को एक निर्मम आघात सहना पड़ा था, और वह भीतर से दुःखी था–उसका सबसे अच्छा कुत्ता एक पेड़ से टकराकर मर गया था। जो हो, पान्तेलेई की शिक्षा से संबंधित वासिलीसा वासील्येवना के प्रयास एक विकट चेष्टा से आगे नहीं बढ़ सके–अपनी एड़ी-चोटी का पसीना एक करते हुए जैसे-तैसे उसने एक शिक्षक रखा जिसका नाम बिरकोप्फ़ था। वह एक अवकाश-प्राप्त एलसाशियन सैनिक था। उसके सामने, अपनी मृत्यु के दिन तक, वह पत्ते की भांति कांपती रही। "ओह," वह सोचती, "अगर यह हमें छोड़कर चला गया, तो मैं कहीं की न रहूंगी! मैं कहां जाऊंगी? दूसरा शिक्षक कहां मुझे मिलेगा?

ओह), अपने पड़ोसियों से इसे अपने यहां खींच लाने में कितना कष्ट, कितनी जान मुझे खपानी पड़ी थी!" और बिरकोप्फ़ ने, चतुर होने के कारण, अपनी इस बेजोड़ स्थिति से तुरत फ़ायदा उठाया। मछली की भांति वह पीता, और सुबह से रात तक लम्बी तानता। 'विज्ञान का पाठ्यक्रम' पूरा करने के बाद पान्तेलेई ने सेना में प्रवेश किया। वासिलीसा वासील्येवना अब जीवित नहीं थी। इस महत्त्वपूर्ण घटना से छः महीने पहले ही वह चल बसी थी, भय के कारण। सपने में उसे दिखाई दिया कि एक सफ़ेद आकृति भालू पर सवार चली आ रही है जिसके वक्ष पर 'ईसा-द्रोही' का चिन्ह अंकित है। इसके शीघ्र बाद ही येरेमेई लुकीच ने भी अपनी अर्द्धान्गिनी का अनुसरण किया।

उसकी बीमारी की पहली ख़बर पाते ही पान्तेलेई ताबड़तोड़ गति से घर पहुंचा, लेकिन वह उसे जीवित नहीं पा सका। कर्तव्यपरायण बेटे के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब उसने देखा कि वह धनी उत्तराधिकारी से एकबारगी एक ग़रीब आदमी बन गया है! इतनी तेज़ उलट-फेर को सही-सलामत सहने की सामर्थ्य कम ही लोगों में होती है। पान्तेलेई का दिल कटुता से भर उठा, मानव-मात्र से वह घृणा करने लगा। एक ईमानदार, उदार और सदाशय जीव से–हालांकि वह बिगड़ा हुआ और तेज़ मिज़ाज था–वह उद्धत और झगड़ालू आदमी बन गया। उसने पड़ोसियों से मिलना-जुलना छोड़ दिया। धनियों के यहां जाने में उसका अहम् आड़े आता और ग़रीबों को वह नीची नज़र से देखता। हरेक के साथ–यहां तक कि माने हुए अधिकारियों के साथ भी–वह ऐसी उद्धत्तता से व्यवहार करता जैसी कि पहले कभी नहीं सुनी थी। "प्राचीन ख़ानदानी कुलीनों के घराने से मेरा संबंध है," वह मन ही मन कहता। एक बार तो उसने कान्स्टेबल को गोली से उड़ा ही दिया होता। यह इसलिए कि टोपी सिर से उतारे बिना ही वह उसके कमरे में चला आया था। अधिकारी भी, कहने की आवश्यकता नहीं, अपनी ओर से इसका बदला

लेते, और उसे अपनी सत्ता का अहसास कराने के किसी भी अवसर से न चूकते। फिर भी वे उससे डरते थे। कारण, उसका स्वभाव दुस्साहसी था, और दूसरा शब्द मुंह से निकालते ही छुरों से द्वन्द्वयुद्ध करने पर उतर आता था। ज़रा-सा भी प्रत्युत्तर मिलने पर उसकी आंखें दहकने लगतीं, उसकी आवाज़ लड़खड़ा जाती। "आह, अर्रे-अर्रे-अर्रे," वह हकलाता, "शैतान की पनाह!" और क्या मजाल जो फिर कोई उसे रोक सके। और, इसके अलावा, वह बेदाग़ चरित्र का आदमी था। उसने कभी किसी ऐसी चीज़ में हाथ नहीं डाला जो ज़रा भी गड़बड़ हो। उसके पास भी, कहने की आवश्यकता नहीं,-कोई नहीं आता था... और यह सब होने पर भी वह एक भले हृदय का—यहां तक कि अपने ढंग से एक महान हृदय का—आदमी था। अन्याय और उत्पीड़न के कृत्यों को वह कभी दरगुज़र नहीं करता था। चट्टान की भांति अपने किसानों का वह पक्ष लेता था। "क्या?" ख़ुद अपने सिर पर ज़ोर से घूंसा मारते हुए कहता, "रैयत के भला कोई हाथ तो लगाकर देखे! मेरा नाम भी चेरतोपखानोव नहीं अगर..."

पान्तेलेई येरेमेइच की भांति तीखोन इवानिच नेदोप्यूस्किन अपने वंश-स्रोत पर गर्व नहीं कर सकता था। उसका पिता माफ़ीदारों के वर्ग का जीव था, और पूरे चालीस साल तक सेवा में एड़ियां रगड़ने के बाद ही वह कुलीनों की पांत में प्रवेश कर सका था। उसका पिता, नेदोप्यूस्किन, उन लोगों में से था जिनका, मानो गांठ बांधकर, दुर्भाग्य पीछा करता है। ऐसा मालूम होता था जैसे दुर्भाग्य को उनसे कीना हो। पूरे साठ साल तक—ठीक उसके जन्म से लेकर एकदम उसकी मृत्यु के दिन तक—बेचारे को दुनिया-भर की कठिनाइयों, विपत्तियों और अभावों से जूझना पड़ा, जैसा कि अल्पसाधन लोगों के साथ होता है। दोनों जून पेट भरने के लिए उसने जान तोड़ संघर्ष किया। न कभी भर पेट खाना मिला, न सोना। एड़ियां रगड़ना, चिन्ता में घुलना, थककर चूर चूर होना,

पाई पाई के लिए झींकना, 'अकारण' ही अपमानित होते रहना और अन्त में खुद अपने या अपने बच्चों के लिए रोटी के एक एक टुकड़े के लिए संघर्ष करते करते किसी कोठड़ी या तहख़ाने में दम तोड़ देना। भाग्य ने ख़रगोश की भांति उसका पीछा किया था। वह भले स्वभाव का और ईमानदार आदमी था, हालांकि वह अपने 'पद की मर्यादा के अनुसार' घूस लेता था—दस कोपेक से लेकर दो रूबल तक। नेदोप्यूस्किन के पत्नी थी, क्षीणकाय और तपेदिक की मरीज़-सी। उसके बाल-बच्चे भी थे। सौभाग्य से वे सभी कम उम्र में ही मर गये, तीखोन और एक लड़की को छोड़कर जिसका नाम मित्रोदोरा था—यों उसे 'सौदागर की सुन्दरी' कहते थे। अनेक दुःखद तथा बेढंगे अभिसारों के बाद एक अवकाश-प्राप्त अटार्नी से उसका ब्याह कर दिया गया था। अपनी मृत्यु से पहले मिस्टर नेदोप्यूस्किन तीखोन को किसी दफ़्तर में साधारण क्लर्क की जगह दिलाने में सफल हो गये थे, लेकिन अपने पिता की मृत्यु होते ही तीखोन उस जगह से रीटायर हो गया। अनन्त चिन्ताओं, सर्दी और भूख से बचने के लिए हृदय-वेधी संघर्ष, मां की चिन्ता, जर्जर उदासी, पिता की हृदयवेधी खिन्नता, भू-स्वामिनियों और दूकानदारों की भोंड़ी ज्यादतियां, जीवन की कभी न चुकनेवाली दैनिक यंत्रणाओं ने तीखोन में एक अतिरंजित भीरुता का संचार कर दिया था। अपने अफ़सर की शकल-भर देखने से उसे ग़श आ जाता था, और बन्दी हुए पक्षी की भांति वह कांपने लगता था। उसने अपने दफ़्तर को छोड़ दिया। प्रकृति अपनी उपेक्षा से, या शायद व्यंग से, लोगों में दुनिया-भर के ऐसे गुणों तथा प्रकृतियों का बीज डाल देती है जिनका उनके साधनों तथा समाज में उनकी स्थिति से क़तई कोई मेल नहीं होता। ग़रीब क्लर्क के लड़के तीखोन को—भावुक, निरुद्योगी, मृदु और स्पन्दनशील जीव को—एक ऐसे जीव को जो एकमात्र सुखभोग के लिए उपयुक्त तथा गंध और रुचि की अत्यन्त कोमल चेतना से सज्जित था—प्रकृति ने विशेष

सावधानी और चाव से गढ़ा था... उसने उसे गढ़ा था, अत्यन्त सावधानी के साथ उसे अन्तिम स्पर्श दिया था, और अपनी इस रचना को छोड़ दिया था, पात गोभी तथा गंधाती मछली के सहारे बड़ा होने के लिए। और, देखो तो, जैसे भी बना प्रकृति का बनाया यह जीव पलता ही गया। और इस तरह उस चीज का सूत्रपात हुआ जिसे 'जीवन' कहते हैं। इसके बाद तमाशा शुरू हुआ। भाग्य, जिसने इतनी बेरहमी के साथ पिता नेदोप्यूस्किन को सताया था, अब बेटे के पीछे पड़ा। लगता है जैसे उसे इसका चसका पड़ गया था। लेकिन तीखोन के साथ अपने व्यवहार में उसने दूसरी योजना से काम लिया। उसने उसे सताया नहीं, बल्कि उसके साथ खेल करना शुरू किया। उसने एक बार भी उसे मरता क्या न करता की स्थिति में नहीं डाला, भूख की नीचे गिरानेवाली वेदनाओं को सहने की ओर उसे नहीं धकेला, लेकिन उसने उससे समूचे रूस में इस छोर से उस छोर तक खूब नाच नचाया—एक के बाद एक अपमानजनक तथा बेहूदा स्थितियों में डालकर। कभी भाग्य ने उसे एक क्रोधी, चिड़चिड़ी सम्पन्न महिला का बटलर बनाया, कभी एक धनी कंजूस सौदागर के टुकड़ों पर जीनेवाला एक विनीत जीव; इसके बाद आंखें टेरनेवाले एक मास्को श्रीमन्त का उसे प्राइवेट सेक्रेटरी बनाया जिसके बाल अंग्रेज़ी ढंग से कटे रहते थे। फिर शिकार के प्रेमी और झगड़ालू स्तेप के एक ज़मींदार के यहां—भंडारी तथा भांड के बीच के पद पर—उसे पहुंचा दिया... संक्षेप में यह कि भाग्य ने बूंद बूंद करके तीखोन को परजीवी अस्तित्व का विषभरा कटु प्याला पीने के लिए बाध्य किया। अपने समय में सनकों के हाथों का खिलौना तथा काहिली में डूबे मालिकों की गंवार खिलवाड़ों का वह पात्र बना। जाने कितनी बार, अपने घोड़ा-नाच से मेहमानों की भीड़ का खूब अच्छी तरह मन बहलाने के बाद, अन्त में चैन की सांस लेने का अवसर मिलता तब वह अपने कमरे में अकेला शर्म से कटकर और आंखों में निराशा के निर्मम आंसू भरे हुए

प्रतिज्ञा करता कि वह चुपचाप भाग खड़ा होगा और शहर में जाकर क़िस्मत आज़मायेगा। क्लर्क आदि की छोटी-मोटी जगह वह अपने लिए तलाश कर लेगा, या हमेशा के लिए सड़कों पर भूख से दम तोड़कर मर जायेगा। लेकिन, पहली बात तो यह कि विधाता ने उसे चरित्र की दृढ़ता नहीं दी थी, दूसरे, उसकी भीरुता उसे शिथिल कर देती थी, और तीसरे वह अपने लिए कोई जगह कहां पाता? किसके आगे वह हाथ पसारता? "वे कभी मुझे कोई नौकरी नहीं देंगे," भाग्य का मारा निःसत्व भाव से अपने बिस्तर पर करवट लेता हुआ बुदबुदाता, "वे कभी मुझे कोई नौकरी नहीं देंगे।" और अगले दिन वह फिर उसी जीवन का दामन पकड़ता। उसकी स्थिति और भी अधिक दुःखद इसलिए थी कि प्रकृति ने, अपनी तमाम सावधानी के बावजूद, उस प्रतिभा और गुणों का ज़रा-सा भी समावेश उसमें नहीं किया था जिनके बिना भांड का धंधा निबाहना क़रीब क़रीब असम्भव हो जाता है। मिसाल के लिए, उसमें इतनी क्षमता नहीं थी कि भालू की खाल के कोट को उल्टा पहने हुए वह उस समय तक नाचता रहे जब तक कि गिर न पड़े, न ही एकदम सिर पर सनसनाते हुए कोड़ों की छाया में चुटकले बनाना तथा कलाबाज़ी खाना उसके बस की बात थी। जब उसे नंगा बीस डिग्री नीचे के तापमान में बाहर बरफ़ पर खड़ा कर दिया जाता तो वह कभी कभी सर्दी से बीमार पड़ जाता। उसका पेट भी ऐसा था कि शराब में मिली स्याही तथा अन्य खुराफ़ात नहीं पचा सकता था, न ही वह सिरके में बना कुकुरमुत्तों का कीमा खा सकता था। कौन जाने, तीखोन का क्या हश्र होता, अगर उसके आखिरी हितैषी को—एक ठेकेदार को जो धनी बन गया था—यह न सूझता और तरंग में आकर वह अपनी वसीयत में यह न लिखा जाता—'और ज्योज्या (यानी तीखोन) नेदोप्यूस्किन के लिए—क्योंकि वह बड़ी अच्छी सीटी बजाता है—उसके और उसके उत्तराधिकारियों के स्थायी अधिकार में—मैं बेस्सेलेन्देयेवका गांव, मय सारे लवाज़मात के, छोड़े

जाता हूं जिसे मैंने क़ानूनी तौर से प्राप्त किया है।' इसके कुछ ही दिन बाद, स्तर्जन मछली का शोरबा खाते समय हितैषी को लक़वा हो गया। भारी कुहराम मचा। पदाधिकारी आये, और मिल्कियत पर मोहर लगा गये। सगे-संबंधी आये, वसीयत को खोला और पढ़ा गया, और उन्होंने नेदोप्यूस्किन को बुला भेजा। नेदोप्यूस्किन प्रकट हुआ। अधिकांश मण्डली जानती थी कि तीखोन इवानिच अपने हितैषी के घराने में किस प्रकार की ड्यूटी सरंजाम देता था। सो कानफोड़ किलकारियों तथा व्यंगपूर्ण बधाइयों से उन्होंने उसका अभिषेक किया। "भूस्वामी, यह हैं नये भूस्वामी!" अन्य उत्तराधिकारी चिल्लाये। "सचमुच," उनमें से एक ने स्वर मिलाया जो अपने मज़ाक तथा हंसोड़पन के लिए नामी था, "भई, सचमुच, कहा जा सकता है... कि वाक़ई इन्हें... कि सचमुच यह... उत्तराधिकारी कहलाने योग्य हैं!" और वे सब के सब किलकारियों में बह चले। काफ़ी देर तक नेदोप्यूस्किन अपने इस सौभाग्य पर विश्वास नहीं कर सका। उन्होंने उसे वसीयत दिखायी वह विह्वल हो उठा, उसने अपनी आंखें मूंद लीं शर्म से लाल हो गया और आंसुओं में फूट पड़ा। मण्डली की हंसी एक गहरी सर्वसम्मिलित चिल्लाहट में परिवर्तित हो गयी। बेस्सेलेन्देयेवका गांव केवल बाईस दासों का गांव था, ऐसा नहीं था कि उसके जाने का किसी को गहरा खेद हो, क्यों न उससे थोड़ा जी ही बहला लिया जाय! उत्तराधिकारियों में से एक पीटर्सबर्ग से आया था। वह एक सुडौल आदमी था—यूनानी नाक और चेहरे पर राजसी भाव लिये। रोस्तिस्लाव अदामिच श्तोप्पेल—यही उसका नाम था—इतना आगे बढ़ा कि नेदोप्यूस्किन के निकट जा पहुंचा और अपने कंधे के ऊपर से दम्भ के साथ उसने उसकी ओर देखा। "जहां तक मैं देख सकता हूं, माननीय श्रीमान," तिरस्कारपूर्ण लापर्वाही के साथ उसने कहा, "आदरणीय फ़्योदोर फ़्योदोरोविच के घराने में उनके मन-बहलाव के लिए सदा तत्पर रहते थे?" पीटर्सबर्ग के इन महानुभाव ने

असह्य रूप में परिष्कृत, चुस्त और चौकस शैली में अपने-आपको व्यक्त किया। नेदोप्यूस्किन, विचलित और घबराया हुआ, अपरिचित महानुभाव के शब्दों को नहीं पकड़ सका, लेकिन अन्य सब तुरत चुप हो गये, मज़ाक़िया दयालुतापूर्ण अन्दाज़ में मुसकराये। मि० श्तोप्पेल ने अपने हाथों को मला और अपने प्रश्न को दोहराया। नेदोप्यूस्किन ने चकित भाव से अपनी आंखें ऊपर को उठायीं, और उसका मुंह खुला का खुला रह गया। रोस्तिस्लाव अदामिच ने व्यंग से अपनी पलकों को नीचा किया।

"मैं आपको बधाई देता हूं, प्रिय श्रीमान, मैं आपको बधाई देता हूं," वह कहता गया, "यह सच है, अगर मुझसे पूछो तो इस ढंग से अपनी रोज़ी का जुगाड़ करना हर कोई नहीं चाहेगा! लेकिन de gustibus non est disputandum*, अर्थात् हरेक की अपनी अपनी रुचि है... क्यों?"

पीछे की ओर किसी ने, सराहना तथा ख़ुशी से भरी एक द्रुत किलकारी भरी।

"तो हमें बताओ," समूची मण्डली की मुसकानों से उत्साहित मि० श्तोप्पेल ने कहना जारी रखा, "अपने इस सौभाग्य के लिए किस ख़ास प्रतिभा के आप ऋणी हैं? नहीं, शरमाओ नहीं, हमें बताओ, हम सब यहां, जैसा कि कहते हैं en famille**, एक ही परिवार के हैं, क्यों महानुभावो, en famille?" उसने कहा।

लेकिन, इस सवाल के साथ अपने जिस संबंधी की ओर रोस्तिस्लाव अदामिच मुड़ा वह, दुर्भाग्य से, फ़्रेंच नहीं जानता था, सो वह अनुमोदन में धीमे से घुरघुराकर रह गया। लेकिन एक अन्य संबंधी ने जो माथे पर पीली चित्तियों से भरा युवक था, अविलम्ब स्वर में स्वर मिलाया – "वूइ, वूइ, बेशक, बेशक!"

---

*हरेक की अपनी अपनी रुचि है।

**एक ही परिवार के।

"शायद," मि० श्तोप्पेल ने फिर कहना शुरू किया, "आप अपने हाथों के बल चल सकते हैं, टांगों को ऊंचा उठाये, मतलब हवा में हिलाते हुए?"

नेदोप्यूस्किन ने त्रस्त भाव से नज़र घुमाकर देखा—प्रत्येक चेहरा व्यंगपूर्ण मुसकान धारण किये था, प्रत्येक आंख खुशी से चमक रही थी।

"या शायद आप मुर्ग़े की भांति कुड़कुड़ा सकते हैं?"

हर तरफ़ से हंसी का एक ज़ोरदार झोंका उमड़ा, और तुरत ही ख़ामोशी में बदल गया, आगे की उत्सुकता ने उसका मुंह बंद कर दिया।

"या शायद अपनी नाक के ऊपर आप..."

"बंद कीजिये यह सब!" अचानक एक ज़ोरदार सख़्त आवाज़ ने रोस्तिस्लाव अदामिच को टोका, "आश्चर्य कि इस बेचारे को सताते आपको शर्म नहीं आती!"

सभी ने घूमकर देखा। दरवाज़े में चेरतोपखानोव खड़ा था। मृत ठेकेदार का चार पुश्त दूर का भतीजा। इस नाते संबंधियों की इस सभा के लिए उसे भी निमंत्रण का पर्चा मिला था। वसीयत के पढ़े जाने के समूचे काल में उसने, जैसा कि वह हमेशा करता था, दम्भ के साथ अन्य सबसे अपने-आपको अलग रखा।

"बंद करो यह सब!" उसने दोहराया, गर्व के साथ अपने सिर को पीछे की ओर फेंकते हुए।

मि० श्तोप्पेल तेज़ी से घूमा, और ग़रीबाना कपड़ों में अनाकर्षक शकल के आदमी को सामने खड़ा देख दबे हुए स्वर में अपने पड़ोसी से (सावधानी हमेशा अच्छी होती है) उसने पूछा—

"यह कौन है?"

"चेरतोपखानोव—एक नगण्य-सा आदमी जिसे कोई पूछता नहीं," कान में फुसफुसाते हुए पड़ोसी ने कहा।

रोस्तिस्लाव अदामिच उद्धत हो उठा।

"और आप कौन होते है हुक्म देनेवाले?" गुनगुने स्वर में उसने कहा, अपनी पलकों को हिक़ारत से भींचते हुए, "किस बाग़ की मूली हो तुम, क्या मैं यह पूछ सकता हूं?"

चेरतोपखानोव चिंगारी पड़ने पर बारूद की भांति भभक उठा। गुस्से से उसका गला रुंध गया।

"रस-रस-रस!" उन्मत्त की भांति उसने फुंकारा, और फिर एकबारगी गरजा—"मैं कौन हूं? कौन हूं मैं? मैं हूं पान्तेलेई चेरतोपखानोव, ख़ानदानी कुलीनों के एक प्राचीन घराने की सन्तान, मेरे पूर्वज ज़ार की सेवा करते थे। और आप—आप कौन हैं?"

रोस्तिस्लाव अदामिच का रंग सफ़ेद पड़ गया, और डग उठाकर पीछे की ओर हटा। वह इस तरह मुंह की खाने की आशा नहीं करता था।

"मैं ... मैं ... मैं पंछी हूं!"

चेरतोपखानोव तीर की भांति आगे की ओर लपका, श्तोप्पेल भारी घबराहट के साथ उछलकर परे हो गया, अन्य सब उत्तेजित ज़मींदार के पास जा खड़े होने के लिए दौड़े।

"द्वन्द्व, द्वन्द्व, द्वन्द्व, इसी दम, रूमाल का पाला बनाकर!" गुस्से के आवेश में पान्तेलेई चिल्लाया, "या माफ़ी मांगिये मुझसे, और उससे भी ..."

"कृपया माफ़ी मांग डालिये," सब संबंधी श्तोप्पेल के इर्द-गिर्द खड़े बुदबुदाये, "यह तो पागल आदमी है, क्षण-भर में गला काटकर रख देगा।"

"माफ़ कीजिये, मुझे माफ़ कीजिये," श्तोप्पेल हकलाया, "मुझे मालूम नहीं था, मैं नहीं जानता था ..."

"और इससे भी माफ़ी मांगिये!" ज़रा भी नर्म न पड़नेवाले पान्तेलेई ने ज़ोरों से कहा।

"मैं आपसे भी माफ़ी मांगता हूं," रोस्तिस्लाव अदामिच ने कहा,

नदोप्यूस्किन को संबोधित करते हुए जो इस तरह कांप रहा था जैसे उसे जूड़ी चढ़ी हो।

चेरतोपखानोव शान्त हो गया, बढ़कर तीखोन इवानिच के पास पहुंचा, उसके हाथ को उसने अपने हाथ में थामा, आक्रोश के साथ घूमकर देखा। किसी ने उसकी ओर नहीं देखा। वह विजयी अन्दाज़ में गहरी ख़ामोशी के बीच कमरे से बाहर हो गया, विधिवतप्राप्त बेस्सेलेन्देयेवका गांव के नये स्वामी को अपने साथ में लिये हुए।

उस दिन से वे कभी अलग नहीं हुए (बेस्सेलेन्देयेवका गांव बेस्सोनोवो से केवल सात मील दूर था)। नेदोप्यूस्किन की अगाध कृतज्ञता ने देखते न देखते अत्यन्त मुग्ध श्रद्धा का रूप धारण कर लिया। दुर्बल, कोमल तीखोन – जो एकदम बेदाग़ नहीं था – निर्भीक और एकदम बेदाग़ पान्तेलेई के पांवों की धूल चूमता। "यह क्या कोई मामूली चीज़ है," अपने मन में वह कभी कभी सोचता, "सीधे गवर्नर के चेहरे पर आंखें गाड़े बात करना ... परमात्मा की सौगन्ध – सच, वह ऐसे देखता है उसे कि बस!"

वह चकित और विस्मित होता, उसकी प्रशंसा में अपनी आत्मा की समूची शक्ति को ख़र्च कर डालता, उसे एक असाधारण विभूति समझता – इतना चतुर, इतना विद्वान! और इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि बावजूद इसके कि चेरतोपखानोव ने ऐसी कोई ख़ास अच्छी शिक्षा नहीं पायी थी, फिर भी – तीखोन की शिक्षा के मुक़ाबिले में – उसे विलक्षण कहा जा सकता था। यह सच है कि चेरतोपखानोव थोड़ा बहुत रूसी पढ़ रहा था, और फ़्रेंच की उसकी जानकारी बहुत ही गयी बीती थी – इतनी गयी बीती कि एक बार, स्विस शिक्षक के इस सवाल का, "Vous parlez français, monsieur?"* उसने जवाब दिया, "मैं समझ ..." और एक क्षण सोचने के बाद उसने जोड़ा "नहीं"। लेकिन

---

* क्या आप फ़्रेंच बोलते हैं, श्रीमान?

यह सब होने पर भी, वह वाल्टेयर के अस्तित्व से परिचित था – यह कि पहले किसी ज़माने में वह हुआ था, और यह कि वह बहुत ही बढ़िया व्यंग-लेखक था। वह यह भी जानता कि प्रूशिया के राजा फ़्रेडरिक महान ने सैनिक कमाण्डर के रूप में भारी ख्याति प्राप्त की थी। रूसी लेखकों में वह देरजाविन का सम्मान करता था, लेकिन पसन्द मर्लीन्स्की को करता था, और उसके कुत्तों में से जो सबसे अच्छा था उसका नाम उसने अम्मलत-बेक रखा था ...

दोनों मित्रों से मेरी पहली भेंट के कुछ दिन बाद पान्तेलेई येरेमेइच से मिलने मैं बेस्सोनोवो गांव के लिए रवाना हुआ। उसका छोटा घर काफ़ी दूर से देखा जा सकता था। वह गांव से आधा-एक मील दूर एक नंगी-बूची जगह पर, जोते हुए खेत में बाज़ की भांति, स्थित था। चेरतोपखानोव की जागीर में विभिन्न आकार की चार ख़स्ताहाल इमारतों के अलावा और कुछ नहीं था। ये चार इमारतें थीं – उपगृह, एक अस्तबल, एक कोठड़ी, और एक स्नानघर। प्रत्येक इमारत अपने-आप में अकेली खड़ी थी। न तो चारों ओर कोई बाड़ा था, और न ही कोई फाटक नज़र आता था। मेरा कोचवान चकराकर एक कुवें के पास रुक गया जिसे भर दिया गया था, और जो क़रीब क़रीब लुप्त हो गया था। कोठड़ी के पास कुछ क्षीण-काय और लावारिस-से पिल्ले एक मृत घोड़े को झंझोड़ रहे थे जो सम्भवतः ओरबस्सान था। उनमें से एक ने ख़ून सनी अपनी नाक को ऊपर उठाया, उतावली के साथ भौंका, और फिर नंगी पसलियों को चिचोड़ने में जुट गया। घोड़े के पास सत्रहेक वर्ष का एक लड़का खड़ा था – कुप्पा-सा पीला चेहरा, नौकरों जैसे कपड़े पहने, और नंगे पांव। वह कुत्तों की देखभाल करने का दिखावा कर रहा था जोकि उसकी सुपुर्दगी में थे, और जब-तब उनमें सबसे ज़्यादा लालची कुत्ते की अपने चाबुक से ख़बर भी लेता जाता था।

"क्या तुम्हारे मालिक घर पर हैं?" मैंने पूछा।

"ख़ुदा जाने!" लड़के ने जवाब दिया। "दरवाज़ा खड़काकर देख लें।"

मैं कूदकर बग्घी से बाहर आ गया और उपगृह की पैड़ियों के पास पहुंचा।

मि० चेरतोपखानोव का घर बहुत ही उदास दृश्य प्रस्तुत करता था—कड़ियां काली पड़ गयी थीं और बीच में से आगे को उभर आयी थीं, चिमनी गिर गयी थी, घर के कोने सीलन से ख़राब हो गये थे और बीच में बाहर की ओर बैठ चले थे। छोटी छोटी, धूल-धूसरित नीली-सी खिड़कियां, बाहर को लटक आयी ऊबड़-खाबड़ छत के नीचे से, झांक रही थीं—इतनी उदास मुद्रा में कि वर्णन नहीं किया जा सकता। कुछ खूसट बेसवाएं कभी कभी ऐसी ही आंखों से देखा करती हैं। मैंने दरवाज़ा खटखटाया। कोई जवाब नहीं मिला। लेकिन, दरवाज़े के भीतर से, कोई तेज़ तेज़ आवाज़ में बोल रहा था।

"क, ख, ग—समझे, मूर्ख!" बैठी हुई सी एक आवाज़ कह रही थी, "क, ख, ग, घ... नहीं! घ, ङ, च, च, च! हां तो अब, मूर्ख!"

मैंने दूसरी बार दरवाज़ा खटखटाया।

वही आवाज़ चिल्लायी—"चले आइये, कौन है?"

मैंने एक छोटी ख़ाली ड्योढ़ी में पांव रखा और खुले हुए दरवाज़े में से ख़ुद चेरतोपखानोव पर मेरी नज़र पड़ी। एक चीकट बोख़ारे का चोग़ा, शलवार और लाल रंग की चिन्दिया-सी टोपी पहने वह एक कुर्सी पर बैठा था। अपने एक हाथ में वह किशोर छोटे कुत्ते का मुंह दबोचे था, और दूसरे हाथ में ठीक उसकी नाक के ऊपर रोटी का एक टुकड़ा थामे था।

"ओह!" अपनी जगह से बिना हिले ही उसने गरिमा के साथ कहा, "बड़ी ख़ुशी हुई आपको देखकर। कृपया बैठिये। मैं ज़रा वेज़ोर के साथ व्यस्त हूं ... तीख़ोन इवानिच," अपनी आवाज़ को ऊंचा उठाते

हुए उसने जोड़ा, "ज़रा इधर आओ, आ रहे हो न? यह देखो, मेहमान आये हैं।"

"आया, आ रहा हूं," तीखोन इवानिच ने दूसरे कमरे से जवाब दिया। "माशा, ज़रा गुलूबंद तो देना!"

चेरतोपखानोव फिर वेन्ज़ोर के साथ जुट गया और रोटी का टुकड़ा उसकी नाक पर रखा। मैंने इर्द-गिर्द नज़र डाली। सिवाय एक दीमक लगे, लम्बे फ़ोल्डिंग मेज़ के जिसकी तेरह टांगें थीं, कोई लम्बी कोई छोटी, और इस्तेमाल करते करते बीच में बैठी हुई चार गयी बीती बेंत की कुर्सियों के कमरे में और किसी तरह का फ़र्नीचर नहीं था। दीवारों पर से, जिन पर जगह जगह नीले धब्बे पड़े थे और जिनपर जाने किस युग में सफ़ेदी की गयी थी, पपड़ियां उतर रही थीं। खिड़कियों के बीच की जगह में, लकड़ी के भीमाकार चौखटे में जड़ा, एक खंडित ज़ंग आलूदा शीशा लटक रहा था। चौखटे पर रोग़न किया हुआ था जिससे वह महोगनी जैसा मालूम होता था। कोनों में पाइप-स्टेण्ड और बन्दूक़ें रखी थीं, और छत से घने काले जाले लटक रहे थे।

"क, ख" चेरतोपखानोव ने धीरे धीरे दोहराया, और अचानक गुस्से से चिल्ला उठा – "खा, खा, खा! उफ़, कितना बेवक़ूफ़ जानवर है!"

लेकिन भाग्यविहीन पिल्ला केवल थरथराया, और यह निश्चय नहीं कर सका कि अपना मुंह खोले या नहीं। वह अब भी बेचैनी से अपनी दुम दबाकर वैसे ही बैठा था। उसने अपने मुंह को सिकोड़ा, निराशा से अपनी आंखों को मिचमिचाया और भींचा जैसे अपने-आप से कह रहा हो – "बेशक, जैसी आपकी इच्छा हो!"

"अच्छा तो यह ले, खा! ले न, पहले!" अनथक मालिक ने दोहराया।

"आपने इसे डरा दिया है," मैंने कहा।

"तो यह ले, दफ़ा हो जा यहां से!"

उसने उसे लात जमायी। ग़रीब कुत्ता उठ खड़ा हुआ, नाक पर रखा टुकड़ा धीमे से नीचे जा गिरा और वह – जैसे पंजों के बल ड्योढ़ी की ओर चल दिया – अत्यन्त आहत भाव से कि एक अजनबी के सामने, जो पहली बार आया था, उसके साथ ऐसा व्यवहार किया गया था।

अगले कमरे में से दरवाज़े के चरचराने की धीमी आवाज़ आयी, और नेदोप्यूस्किन ने प्रवेश किया, मिलनसारी के साथ माथा नवाते और मुसकराते हुए।

मैंने उठकर नमस्कार किया।

"अरे नहीं, अपने को परेशान न करें, अपने को परेशान न करें।" वह तुतलाया।

हम बैठ गये। चेरतोपखानोव अगले कमरे में चला गया।

"इधर, हमारे पड़ोस में, आपको आये अधिक दिन हुए ?" नेदोप्यूस्किन ने कहना शुरू किया, नम्र आवाज़ में, अहतियात के साथ मुंह पर हाथ रखकर खखारते और सलीक़े से अपनी उंगलियों को होंठों के सामने रखे हुए।

"हां मैं पिछले महीने आया था।"

"वही तो।"

कुछ क्षण हम चुप रहे।

"बड़ा प्यारा मौसम इस समय चल रहा है," नेदोप्यूस्किन ने फिर कहना शुरू किया, और कुछ ऐसे कृतज्ञता भरे अन्दाज़ में उसने मेरी ओर देखा जैसे मौसम को इतना अच्छा बनाने का श्रेय मुझे ही प्राप्त हो, "अनाज, कह सकते हैं कि खेतों में ख़ूब ख़ूब हरा-भरा है!"

सिर हिलाकर मैंने सहमति प्रकट की। इसके बाद हम फिर चुप हो गये।

"पान्तेलेई येरेमेइच ने कृपाकर कल दो ख़रगोश मारे," नेदोप्यूस्किन ने सप्रयास फिर कहना शुरू किया, प्रत्यक्षतः बातचीत को कुछ सजीव बनाने की इच्छा से, "और, सच, श्रीमान, बहुत ही बड़े ख़रगोश थे वे!"

"क्या मि० चेरतोपखानोव के पास अच्छे शिकारी कुत्ते हैं?"

"अत्यन्त अद्भुत, श्रीमान!" नेदोप्यूस्किन ने आह्लादित होते हुए जवाब दिया, "कह सकते हैं कि प्रान्त में सबसे अच्छे।" (वह मेरे और निकट खिसक आया।) "लेकिन, फिर, पान्तेलेई येरेमेइच भी तो एक अद्भुत आदमी हैं। बस उनके किसी चीज़ की इच्छा-भर करने की देर है, केवल उनके दिमाग़ में किसी बात के आने-भर की देर है – कि इससे पहले कि आप घूमकर देखें, उसे पूरा हुआ पाइयेगा। हर चीज़, आप कह सकते हैं, घड़ी की सूई की भांति चलती है। पान्तेलेई येरेमेइच, सच मानें ..."

चेरतोपखानोव कमरे में लौट आया। नेदोप्यूस्किन मुसकराया, उसका बोलना बंद हो गया, और एक ऐसी नज़र से उसने मुझे इंगित किया जो कहती प्रतीत होती थी, "यह लीजिये, अब ख़ुद अपनी आंखों से देखकर निश्चय कर लीजिये!" हम शिकार के बारे में बातें करने लगे।

"क्या आप मेरे कुत्तों को देखना चाहेंगे?" चेरतोपखानोव ने मुझसे पूछा, और जवाब की प्रतीक्षा किये बिना उसने कार्प को बुलाया।

एक हृष्ट-पुष्ट युवक ने अन्दर प्रवेश किया। उसने नानकिन का हरे रंग का लम्बा कोट पहन रखा था जिस पर नीले रंग का कालर तथा ऐसे बटन लगे थे जो नौकरों की वर्दियों पर लगाये जाते हैं।

"फ़ोम्का से कहो," चेरतोपखानोव ने एकाएक कहा, "कि अम्मलत और सैगा को ले आय, क़ायदे के साथ, समझ गये न?"

कार्प की पूरी बत्तीसी खिल गयी, एक अस्पष्ट-सी ध्वनि उसके मुंह से निकली, और वह चला गया। फ़ोम्का प्रकट हुआ, बालों को ख़ूब संवारे और बटनों को कसकर बंद किये, पांवों में बड़े बूट पहने और शिकारी कुत्तों को साथ लिये। शिष्टता के नाते मैंने मूर्ख जानवरों को सराहा (ग्रे हाउंड सबके सब, अत्यन्त मूर्ख होते हैं)। चेरतोपखानोव ने अम्मलत के ठीक नथुनों में थूका, लेकिन इससे – प्रत्यक्षतः – कुत्ते को

क़तई सन्तोष प्रदान नहीं हुआ। नेदोप्यूस्किन ने भी कुत्ते के पृष्ठ भाग को थपथपाया। हम फिर बातें करने लगे। धीरे धीरे चेरतोपखानोव पूर्णतया खुल चला। अब न तो उसे अपनी प्रतिष्ठा की टेक थामे रहने की ज़रूरत थी और न ही वह उद्धत भाव से नाक से फुंकार छोड़ता था। उसके चेहरे का भाव बदल गया था। वह मेरी और नेदोप्यूस्किन की ओर देख रहा था ...

"अरे," वह अचानक चिल्लाया, "वह भला वहां अकेली क्यों बैठी है? माशा! अरी ओ माशा! यहां आ जाओ!"

अगले कमरे में किसी ने हरकत की, लेकिन जवाब कुछ नहीं मिला।

"मा-आ-शा!" चेरतोपखानोव ने दुलार से दोहराया। "यहां चली आ! सब ठीक है, डर नहीं।"

दरवाज़ा धीमे से खुला, और बीसेक बरस की एक लम्बी छरहरी लड़की पर मेरी नज़र पड़ी – जिप्सियों जैसा सांवला चेहरा, भूरी आंखें, मुलायम काले बाल, मोतियों-से बड़े बड़े दांत जो लाल होंठों के बीच ख़ूब उजले चमक रहे थे। वह सफ़ेद कपड़े पहने थी, और नीले रंग का शाल, सोने के ब्रूच के सहारे उसके गले के इर्द-गिर्द सटा उसकी कोमल सुन्दर बांहों को – जो उसकी उत्कृष्ट जाति की सूचक थीं – आधा ढंके था। बन के जीव की भांति सलज्ज अटपटेपन के साथ वह दो डग बढ़ी, फिर थिर खड़ी होकर नीचे की ओर देखने लगी।

"आओ, इन से परिचय ..." पान्तेलेई येरेमेइच ने कहा। "यह ठीक मेरी पत्नी तो नहीं, लेकिन पत्नी जैसी ही समझो।"

माशा का चेहरा लाल हो गया और वह सकपकाकर मुसकराने लगी। मैंने ख़ूब झुककर उसका अभिवादन किया। मुझे वह बड़ी आकर्षक मालूम हुई। तोते जैसी नाक, आधी पारदर्शी नासिकांट, ख़ूब उभरी हुई कमान-सी भौंहें, क़रीब क़रीब अन्दर को धंसे पीतवर्ण गाल – उसके चेहरे का प्रत्येक नक़्श उसकी हठी रागात्मकता तथा उसकी बेलगाम शैतानियत

का सूचक था। उसके जूड़े के नीचे से छोटे छोटे आवदार बालों की दो पांतें जो उसकी प्रशस्त गरदन पर से होती नीचे तक चली गयी थीं– उसकी नस्ल तथा स्फूर्ति की परिचायक थीं।

वह खिड़की के पास आकर बैठ गयी। मैंने उसकी परेशानी को बढ़ाना नहीं चाहा, और चेरतोपखानोव से बातें करने लगा। माशा ने चतुराई के साथ अपना सिर मोड़ा, और अपनी पलकों की ओट में से मेरी ओर झांकने लगी–चोरी-छिपे, बिल्लियों की तरह और द्रुतगति से। उसकी नज़र सांप के डंक की भांति लपकती मालूम होती थी। नेदोप्यूस्किन ने उसकी बग़ल में बैठकर उसके कान में कुछ फुसफुसाया। वह फिर मुसकरा उठी। जब वह मुसकराती थी तो उसकी नाक थोड़ा ऊपर की ओर सिमट जाती और उसका ऊपर का होंठ ऊंचा हो जाता था, जिससे उसके चेहरे पर बिल्ली या शेर जैसा एक भाव छलक आता था ...

"ओह, लेकिन हो तुम 'छुई-मुई' क़िस्म की औरत," मैंने सोचा, अपनी बारी उसकी चपल काठी, पिचकी हुई छातियों और उसकी द्रुत नोक-नुकीली हरकतों पर चोरी-छिपे नज़र डालते हुए।

"माशा," चेरतोपखानोव ने पूछा, "अपने मेहमान की ख़ातिर करने का भी तुम्हें कुछ ख़याल है?"

"घर में कुछ मुरब्बा तो है," उसने जवाब दिया।

"अच्छा, तो मुरब्बा यहां ले आ, और जब कुछ लेने ही जा रही हो तो थोड़ी वोद्का भी। और सुनो, माशा," उसके पीछे चिल्लाकर उसने कहा, "अपनी गितार भी लेती आना।"

"गितार किस लिए? मैं गाऊं-बजाऊंगी कुछ नहीं!"

"क्यों?"

"मेरा जी नहीं है!"

"ओह, यह फ़िज़ूल की बात है। जी करने लगेगा जब ..."

"जब क्या?" माशा ने पूछा, तेज़ी से अपनी भौंहों में बल डालते हुए।

"जब तुमसे प्रार्थना की जायेगी," चेरतोपखानोव थोड़ी परेशानी के साथ कहता गया।

"ओह!"

वह चली गयी, जल्दी ही मुरब्बा और वोद्का लिये हुए लौट आयी और फिर खिड़की के पास जाकर बैठ गयी। उसके माथे पर भी एक रेखा खिंची थी, और दोनों भौंहें तत्तिये के नकुवों की भांति उठ और गिर रही थीं। क्या आपने, पाठको, कभी इस बात पर ध्यान दिया है कि तत्तिये का चेहरा कितना दुष्टतापूर्ण होता है? "हां तो," मैंने सोचा, "खुदा ही अब खैर करे!" बातचीत का सिलसिला लड़खड़ा चला। नेदोप्यूस्किन बिल्कुल चुप होकर बैठ गया, और चेहरे पर बाधित मुसकान सजा ली, चेरतोपखानोव हांफा, लाल हो उठा और अपनी आंखों को उसने बरबट्टा-सा खोल लिया। मैं विदा लेने ही वाला था कि अचानक माशा उठी, खिड़की के पल्लों को उसने फटाक् से खोला, अपना सिर बाहर निकाला और उधर से गुज़रती एक किसान स्त्री को ललकारकर आवाज़ दी – "अक्सीन्या!" स्त्री चौंकी, घूमकर देखने की उसने कोशिश की, लेकिन उसका पांव फिसला और वह धम्म से धरती पर आ गिरी। माशा ने अपने बदन को पीछे की ओर फेंका और ठहाका मारकर हंसी, चेरतोपखानोव भी हंसा। नेदोप्यूस्किन तो ख़ुशी से चीख़ उठा। हम सब फिर चेतन हो गये। बिजली की एक ही कौंध में तूफ़ान गुज़र गया ... वायुमण्डल अब फिर साफ़ था।

आध घंटा बाद हमें कोई पहचान तक न पाता। हम बच्चों की भांति खिलवाड़ कर रहे थे। माशा सबसे ज्यादा मग्न थी, चेरतोपखानोव की आंखें तो जैसे उसपर चिपक कर रह गयी थीं। उसका चेहरा अब अधिक पीतवर्ण हो गया था, उसके नथुने फूले थे, उसकी आंखें एक साथ दमक भी रही थीं और अंधियारी भी हो उठती थीं। बन का जीव जैसे खिलवाड़ कर रहा हो। नेदोप्यूस्किन अपनी छोटी, गावदुम नन्ही

टांगों पर, उसके पीछे इस तरह फुदक रहा था जैसे नर बत्तख़ मादा बत्तख़ के पीछे फुदकता है। यहां तक कि वेन्ज़ोर भी ड्योढ़ी में अपने छिपने की जगह से बाहर रेंग आया, क्षण-भर के लिए दरवाज़े पर ठिठका, हमारी ओर उसने देखा, और अचानक हवा में ऊंचे उछलने तथा भौंकने लगा। माशा दूसरे कमरे में तैर गयी, गितार को थामा, शाल को कंधों से उतार परे फेंका, फुर्ती के साथ आसन जमाया और, अपने सिर को ऊंचा उठाते हुए, एक जिप्सी गीत गाना शुरू कर दिया। उसकी आवाज़ गूंजी, वैसे ही कम्पन के साथ जैसा कि कांच की टूटी घंटी के बजाने पर कर्कश-सा शब्द उत्पन्न होता है, लपककर आकाश की ऊंचाइयों में खो गयी ... उसके गीत से हृदय माधुर्य और वेदना से भर उठा। "ओह, क्या ख़ूब!" चेरतोपखानोव ने नाचना शुरू किया। नेदोप्यूस्किन अपनी टांगों को झुलाकर तथा फ़र्श पर ठोक ठोककर ताल देने लगा। माशा का रोम रोम थिरक रहा था, आग की लपटों से घिरी बर्च की छाल की भांति। उसकी कोमल उंगलियां मगन भाव से गितार पर तैर रही थीं, उसका सांवला गला अम्बर की दो पांतों के नीचे धीमी उसास भर रहा था। कभी, एकदम अचानक, वह गाना बंद कर देती, थककर निढाल हो जाती, और गितार को – जैसे अनिच्छा से – टंकारा देती। चेरतोपखानोव थिर खड़ा हो जाता केवल अपने कंधों को हिलाता और उसी जगह पर घूमता हुआ। नेदोप्यूस्किन चीनी गुड्डे की भांति अपना सिर हिलाता। इसके बाद वह फिर गाना शुरू करती, उन्मत्त की भांति, अपने-आपको समेटते और अपने सिर को सीधा करते हुए, और चेरतोपखानोव फिर धरती को चूमता, उछलकर छत को छूता, लट्टू की भांति चकरघिन्नी बन जाता, कूकते हुए – "तेज़, और तेज़!"

"तेज़, तेज़, और भी तेज़!" नेदोप्यूस्किन स्वर में स्वर मिलाता, अत्यन्त तेज़ी से बोलते हुए।

काफ़ी रात बीत चुकी थी जब मैं बेस्सोनोवो से विदा हुआ ...

चेरतोपखानोव का अन्त

१

पान्तेलेई येरेमेइच के यहां मेरे जाने के दो वर्ष बाद उसकी मुसीबतों का – वास्तविक मुसीबतों का – आरम्भ हुआ। निराशाएं, दुर्घटनाएं, यहां तक कि भाग्य की चोटें तो इससे पहले भी उसपर पड़ी थीं, लेकिन उसने उनकी परवाह नहीं की और उसका 'राजसी' जीवन पहले की तरह चलता रहा। पहला आघात जो उसे लगा, वह उसके लिए अत्यन्त हृदयविदारक था। माशा उसे छोड़ गयी।

उसके घर को जिसमें वह इतने पूर्ण अपनत्व का अनुभव करती मालूम होती थी, छोड़ने के लिए किस चीज़ ने उसे प्रेरित किया, यह कहना कठिन है। चेरतोपखानोव को अपने जीवन के अन्तिम दिनों तक, यह विश्वास रहा कि माशा के भागने की तय में एक युवा पड़ोसी का हाथ था। वह ऊलान सेना का अवकाश-प्राप्त कप्तान था और उसका नाम याफ़ था। उसने, पान्तेलेई येरेमेइच के अनुसार, केवल अपनी मूंछों में निरन्तर बल डालकर, जरूरत से ज्यादा क्रीम थोपकर और अर्थपूर्ण ढंग से मुसकरा मुसकराकर उसका मन मोह लिया था; लेकिन यह मानना पड़ेगा कि इसके लिए माशा की रगों में प्रवाहित स्वेच्छाचारी जिप्सी रक्त अधिक ज़िम्मेदार था। जो भी इसका कारण रहा हो, एक सुहावनी सांझ माशा ने एक छोटी-सी पोटली में अपना रण्डीरा संभाला, और चेरतोपखानोव के घर से बाहर हो गयी।

इससे पहले तीन दिन तक वह एक कोने में दीवार के सहारे, घायल लोमड़ी की भांति, गुड़मुड़ी-सी बैठी रही, और किसी से एक शब्द तक नहीं बोली। वह केवल अपनी आंखों को इधर-उधर घुमाती, अपनी भौंहों को ऐंठती, अपनी बत्तीसी झलकाती और अपनी बांहों को इस तरह हिलाती जैसे वह अपने-आपको लपेट रही हो। इस तरह की मनस्थिति पहले भी उसपर सवार हो चुकी थी, लेकिन वह कभी ज़्यादा देर तक नहीं टिकी। चेरतोपखानोव यह जानता था, सो न तो वह ख़ुद परेशान होता था और न उसे ही परेशान करता था। लेकिन अब जब वह कुत्ता-घर से लौट रहा था, जहां, शिकारिये के शब्दों में, उसके अन्तिम दो शिकारी कुत्तों का 'निधन' हो गया था, रास्ते में एक चाकर-लड़की से उसकी भेंट हुई जिसने, कांपती हुई आवाज़ में उसे बताया कि मारीया आकीनफ़ियेवना ने उनके लिए अपना बहुत बहुत अभिवादन भेजा है, और कह गयी है कि वह उनके लिए हर सुख की कामना करती है, लेकिन अब उनके पास लौटकर आने की उसकी कोई इच्छा नहीं है। ठीक उसी जगह जहां वह खड़ा था घिन्नी काटने और एक भरभरी-सी चीख़ मारने के बाद, चेरतोपखानोव फ़ौरन भागनेवाली के पीछे लपका, जाते समय झटपट अपना पिस्तौल उठाते हुए।

घर से डेढ़-एक मील दूर, बर्च की एक बनखंडी के पास, ज़िला-नगर की सड़क पर, उसने उसे जा पकड़ा। सूरज क्षितिज पर छिप रहा था, और हर चीज़ अचानक गुलाबी आभा से रंजित हो उठी थी – पेड़, पौधे और धरती, सभी कुछ समान रूप से।

"याफ़! याफ़ के पास!" माशा पर जैसे ही नज़र पड़ी, चेरतोपखानोव चीख़ उठा, "याफ़ के पास जा रही है!" दौड़कर उसके पास पहुंचते हुए और प्रायः हर डग पर लड़खड़ाते हुए उसने दोहराया।

माशा थिर खड़ी हुई और घूमकर उसकी ओर उन्मुख हो गयी। उजाले की ओर उसकी पीठ थी और वह ऊपर से नीचे तक काली नज़र

आ रही थी, मानो आबनूस से काटकर उसे गढ़ा गया हो। केवल उसकी आंखों की सफ़ेदी रुपहले बादामों की भांति, उभरी थी, लेकिन ख़ुद आंखों का—पुतलियों का—जहां तक संबंध था, वे और भी काली हो उठी थीं।

उसने अपनी पोटली को फेंक दिया, और बांह पर बांह रखी।

"तुम याफ़ के पास जा रही हो, छिनाल!" चेरतोपखानोव ने दोहराया। वह उसे कंधों से दबोचने जा ही रहा था कि उनकी आंखें मिलीं, वह झिझका और बेचैनी के साथ वहीं का वहीं खड़ा रह गया।

"मैं मिस्टर याफ़ के पास नहीं जा रही हूं, पान्तेलेई येरेमेइच," कोमल, सम लहजे में माशा ने जवाब दिया, "बात केवल यह है कि मैं अब और अधिक तुम्हारे साथ नहीं रह सकती।"

"तुम मेरे साथ नहीं रह सकती? क्यों नहीं रह सकती? क्या मैंने तुम्हें किसी तरह नाराज़ किया है?"

माशा ने अपना सिर हिलाया।

"तुमने, पान्तेलेई येरेमेइच, किसी तरह भी मुझे नाराज़ नहीं किया है, केवल मेरा हृदय तुम्हारे घर में बोझल हो उठता है... अतीत के लिए धन्यवाद, लेकिन मैं रुक नहीं सकती, नहीं!"

चेरतोपखानोव चकित रह गया। उसने, ज़ोर से, अपनी जांघों पर हाथ पटके और उछला।

"यह कैसे हो सकता है? सारा वक़्त मेरे साथ रहती रही, और सिवा शान्ति तथा सुख के और कुछ इसने नहीं जाना, और एकदम अचानक—इसका हृदय बोझिल हो उठता है! और यह मुझे धत्ता बताती है। बस, उठती और अपने सिर पर रूमाल बांध चल देती है। हर तरह का सम्मान मैंने इसे दिया, कुलीन महिला की भांति!"

"ऊंह, मैं इसकी ज़रा भी पर्वाह नहीं करती," माशा ने बीच में टोका।

"पर्वाह नहीं करती? ख़ानाबदोश जिप्सी से कुलीन महिला बन गयी, और इसे पर्वाह नहीं। नीचे कुल में जन्मी दासी! तुम इसकी पर्वाह कैसे नहीं करती? क्या तुम उम्मीद करती हो कि मैं इसपर विश्वास करूंगा? इसके पीछे विश्वासघात है—विश्वासघात!"

उसने फिर बड़बड़ाना शुरू कर दिया।

"मेरे मन में कोई विश्वासघात नहीं है, और न ही कभी रहा," अपनी सुस्पष्ट गूंजती आवाज़ में माशा ने कहा। "मैं तुम्हें बता चुकी हूं कि मेरा हृदय बोझल हो उठा था।"

"माशा!" चेरतोपखानोव चीख़ा, अपने घूंसे से अपने वक्ष पर आघात करते हुए। "बस, बंद करो। तुमने मुझे यंत्रणा दी है... बस, बहुत हो चुका! ओ मेरे भगवान! ज़रा सोचो तो, तीखोन क्या करेगा, उसपर तो तरस खाती कम से कम!"

"तीखोन इवानिच को मेरी नमस्ते कहना और उनसे कहना..."

चेरतोपखानोव ने अपने हाथों को मरोड़ा।

"नहीं यह सब तुम बकवास कर रही हो—तुम कहीं नहीं जाओगी। तुम्हारा याफ़ बेकार तुम्हारी इन्तज़ार करता रहेगा!"

"मिस्टर याफ़..." माशा ने कहना शुरू किया।

"वाह, बड़ा आया मिस्टर याफ़!" चेरतोपखानोव ने नक़ल उतारते हुए कहा। "वह छिपा हुआ बदमाश है, कमीना कुत्ता—बनमानुष जैसी थूथनीवाला।"

पूरे आधे घंटे तक चेरतोपखानोव माशा से जूझता रहा। वह उसके निकट बढ़ आता, पीछे हटता, घूंसे तानकर उसे दिखाता, उसके आगे माथा नवाता, रोता, उसे झिड़कियां देता।

"नहीं, मैं नहीं चल सकती," माशा ने दोहराकर कहा—"मेरा हृदय इतना भारी है... ऊब मुझे मार डालेगी।"

थोड़ा थोड़ा करके उसके चेहरे ने कुछ ऐसी उदासीनता का, क़रीब

क़रीब उनींदा-सा, भाव धारण कर लिया कि चेरतोपखानोव को उससे पूछना पड़ा कि कहीं उन्होंने उसे अफ़ीम का सत तो नहीं दे दिया है।

"यह ऊब है," उसने दसवीं बार दोहराया।

"तो अगर मैं तुम्हें मार डालूं तो?" चेरतोपखानोव ने जेब में से पिस्तौल निकाल लिया।

माशा मुसकरायी, उसका चेहरा खिला।

"तो यह लो, मुझे मार डालो, पान्तेलेई येरेमेइच; करो जो तुम चाहो; लेकिन मैं वापिस चलूं, सो नहीं होगा।"

"तो तुम वापिस नहीं लौटोगी?" चेरतोपखानोव ने पिस्तौल ताना।

"मैं वापिस नहीं चलूंगी, मेरे प्रिय। जीवन-भर मैं कभी वापिस नहीं चलूंगी। इसे पत्थर की लकीर समझो।"

चेरतोपखानोव ने अचानक पिस्तौल को उसके हाथ में खोंसा, और धरती पर बैठ गया।

"तो फिर तुम मुझे ही मार डालो! तुम्हारे बिना मुझे जीने की इच्छा नहीं। मैं तुम्हारे लिए भार हो गया हूं, और हर चीज़ मेरे लिए भार हो गयी है।"

माशा नीचे झुकी, अपनी पोटली को उसने उठाया, पिस्तौल को घास पर रखा–उसका मुंह चेरतोपखानोव से दूसरी ओर करते हुए–और उसके पास गयी।

"ओह, मेरे प्रिय, क्यों अपने को दुःखी करते हो? क्या तुम नहीं जानते कि जिप्सी लड़कियां कैसी होती हैं? यह हमारा स्वभाव है और यह बात तुम्हें समझ लेनी चाहिए। जब दिल को बेचैन करनेवाली ऊब आती है और आत्मा का कहीं दूर अनजान देशों के लिए आह्वान करती है तो कोई कैसे रुक सकता है? अपनी माशा को नहीं भूलना, ऐसी माशूक़ा तुम्हें कोई नहीं मिलेगी, और मैं भी तुम्हें–मेरे प्यारे–

नहीं भूलूंगी; लेकिन हमारा एक साथ जीवन—वह एक बीती हुई बात है!"

"मैं तुम्हें प्यार करता हूं, माशा," चेरतोपखानोव अपनी उंगलियों में बुदबुदाया जिनसे वह अपना मुंह ढंके हुए था।

"मैं भी, प्यारे पान्तेलेई येरेमेइच, तुम्हें प्यार करती हूं।"

"मैं तुम्हें प्यार करता हूं, मैं तुम्हें प्यार करता हूं, पागलों की भांति प्यार करता हूं, बेसुध होकर... पर तुम, सारी सुध-बुध के रहते, बिना किसी तुक के, मुझे छोड़कर धरती की धूल छानने जा रही हो... मुझे लगता है, अगर मैं ग़रीब न होता तो तुम मुझे धत्ता न बतातीं।"

इन शब्दों पर माशा केवल हंस दी।

"और तुम कहा करते थे कि मैं धन की पर्वाह नहीं करती," उसने टिप्पणी की, और चेरतोपखानोव के कंधे को आवेग के साथ थपथपाया।

वह उछलकर अपने पांवों पर खड़ा हो गया।

"तो चलो, कम से कम मुझे इसकी तो अनुमति दो कि तुम्हें कुछ धन दे सकूं—भला इस तरह बिना एक कोपेक के, तुम कैसे जा सकती हो? लेकिन सब से अच्छा यही है कि तुम मुझे मार डालो। मैं तुमसे साफ़ साफ़ कहता हूं—मुझे अभी मार डालो।"

माशा ने फिर अपना सिर हिलाया। "तुम्हें मार डालूं? साइबेरिया की हवा खाने का मुझे चाव नहीं है, प्यारे!"

चेरतोपखानोव थरथराया। "तो केवल इसलिए—केवल काले पानी की सज़ा के डर से—तुम इससे हाथ खींच रही हो?"

वह फिर घास पर लुढ़क गया।

माशा चुपचाप उसके पास खड़ी रही।

"तुम्हारे लिए, मेरे राजा, मुझे अफ़सोस है," एक उसास भरते हुए उसने कहा। "तुम अच्छे आदमी हो... लेकिन कोई चारा नहीं। अच्छा तो विदा!"

वह मुड़ी और दो डग उठाये। रात अब उतर आयी थी, और चारों दिशाओं से साये घिरते आ रहे थे। चेरतोपखानोव तेज़ी से उछलकर खड़ा हुआ, और लपककर पीछे से माशा को कोहनियों से पकड़ लिया।

"तुम... सपोलिन... मुझे इस तरह छोड़कर जा रही हो, याफ़ के पास!"

"विदा!" माशा ने तेज़ी से और अर्थपूर्ण ढंग से दोहराया, अपने को उससे छुड़ाया और चल दी।

चेरतोपखानोव ने उसे जाते देखा, लपककर उस जगह पहुंचा जहां पिस्तौल पड़ा था, झपटकर उसे उठाया, निशाना साधा, और गोली दाग़ दी... लेकिन इससे पहले कि वह घोड़े को छूता, उसकी बांह ने ऊपर की ओर झोंका खाया, और गोली सनसनाती हुई माशा के सिर के ऊपर से निकल गयी। उसने, बिना रुके, कंधे के ऊपर से उसकी ओर देखा, और आगे बढ़ती रही—चलते समय, मानो चुनौती के अन्दाज़ में, बदन को झुलाते हुए।

उसने अपने चेहरे को ढंका, और भागने लगा...

लेकिन अभी वह पचास-एक डग ही चला होगा कि अचानक थिर खड़ा हो गया, जैसे पत्थर का बुत बन गया हो। एक सुपरिचित, अत्यन्त सुपरिचित, आवाज़ तैरती हुई उसके पास आयी। माशा गा रही थी। 'यौवन के मधुर दिन' वह गा रही थी। गीत का प्रत्येक स्वर, आवेगमय और क्रन्दन से भरा, सांझ की हवा में तैरता मालूम होता था। चेरतोपखानोव ध्यान से सुन रहा था। आवाज़ दूर, और दूर होती गयी। एक क्षण लगता जैसे वह खो गयी है, अगले क्षण वह फिर तिर आती, क़रीब क़रीब अस्पष्ट, लेकिन अभी भी आवेग की वैसी ही दमक लिये।

"मुझे चिढ़ाने के लिए वह यह सब कर रही है," चेरतोपखानोव ने सोचा, लेकिन फ़ौरन ही कराह उठा, "नहीं, यह उसकी अन्तिम विदा है—हमेशा के लिए अन्तिम विदा है," और उसकी आंखों से आंसू बह चले।

* * *

अगले दिन वह मि० याफ़ के घर जा पहुंचा जो, दुनियादारी में खूब पगे हुए आदमी की भांति देहात के एकाकीपन से ऊबकर ज़िला-नगर में आ बसा था, ताकि–जैसा कि वह ख़ुद कहा करता था, 'युवती महिलाओं का नैकट्य प्राप्त कर सके'। चेरतोपखानोव की याफ़ से भेंट नहीं हुई। उसके नौकर के शब्दों में, विगत सांझ मास्को के लिए रवाना हो चुका था।

"तो यह बात है!" चेरतोपखानोव ग़ुस्से से चीख़ा, "दोनों के बीच पहले से सांठ-गांठ थी। वह उसके साथ भागी है... लेकिन ज़रा ठहरो!"

नौकर के प्रतिरोध करने के बावजूद वह युवा कप्तान के कमरे में घुस गया। कमरे में, सोफ़े के ऊपर, ऊलान वर्दी में, मालिक का एक तैल-चित्र लटका हुआ था। "ओह, यह तुम हो, बिना दुम के बनमानुस!" चेरतोपखानोव गरजा, उछलकर सोफ़े पर खड़ा हो गया और अपने घूंसे से कनवास में एक रोशनदान खोल दिया।

"अपने दुकड़िया मालिक से कहना," वह नौकर की ओर संबोधित हुआ "कि उसके गंदे तोबड़े की ग़ैर हाज़री में कुलीन चेरतोपखानोव को तस्वीर को ही यह घूंसा देना पड़ा और अगर उसके जी में मुझसे निबटने का ख़याल हो तो वह जानता है कि कुलीन चेरतोपखानोव से कहां भेंट हो सकती है! या फिर मैं ख़ुद उसे खोज निकालूंगा! उस शैतान बनमानुस को मैं समुद्र की तलहटी में से भी खींच लाऊंगा!"

इन शब्दों के साथ चेरतोपखानोव सोफ़े पर से कूदकर नीचे उतरा और शान के साथ वहां से चला आया।

लेकिन घोड़सवार सेना के कप्तान याफ़ ने उससे निबटने की कोई मांग नहीं की–यहां तक कि उससे उसकी कभी भी कहीं भेंट नहीं हुई–और चेरतोपखानोव ने भी अपने दुश्मन को खोज निकालने का कोई ख़याल नहीं किया। फलतः कोई कुत्सा नहीं उठी। ख़ुद माशा भी इसके शीघ्र

बाद ऐसी लापता हुई कि उसका कोई चिन्ह् तक नहीं मिला। चेरतोपखानोव ने पीना शुरू किया, हालांकि बाद में, उसने अपने को 'सुधार' लिया। लेकिन, तभी, एक दूसरी गाज उसपर गिरी।

२

उसके हार्दिक मित्र तीखोन इवानिच नेदोप्यूस्किन की मृत्यु के रूप में यह गाज गिरी। मृत्यु से दो साल पहले से उसके स्वास्थ्य ने जवाब देना शुरू कर दिया था—उसे दमे के रोग ने सताना शुरू किया, नींद बराबर उसपर हावी रहती थी, और जब जागता था तो एकाएक अपने-आपे में नहीं आ पाता था। ज़िला डाक्टर का कहना था कि यह छोटे छोटे 'दौरों' का नतीजा है। माशा के भागने से पहले के तीन दिनों में—उन दिनों में जबकि माशा का हृदय बोझिल था—नेदोप्यूस्किन वहां मौजूद नहीं था, वह अपने घर बेस्सेलेन्देयेवका गया हुआ था, और ठंड ने उसे बुरी तरह जकड़ लिया था। परिणामतः माशा का व्यवहार उसके लिए और भी अधिक अप्रत्याशित सिद्ध हुआ—क़रीब क़रीब ख़ुद चेरतोपखानोव से भी अधिक गहरा असर उसपर हुआ। मृदु स्वभाव और संकोचशील होने के कारण अपने मित्र के प्रति खेद तथा अत्यन्त वेदनापूर्ण आश्चर्य के सिवा उसने अपने मुंह से और कुछ प्रकट नहीं होने दिया... लेकिन इसने उसके अन्तर की हर चीज़ को कुचल तथा मसोसकर रख दिया था। "वह मेरा हृदय नोचकर ले गयी," अपने प्रिय सोफ़े पर बैठते हुए वह मन ही मन बुदबुदाता और अपनी उंगलियों को मरोड़ता। उस समय भी जबकि चेरतोपखानोव इस दुःख पर क़ाबू पा चुका था, वह—नेदोप्यूस्किन—अपने को नहीं संभाल सका था, और 'अपने अन्तर में शून्य का' अभी तक अनुभव करता था। "यहां," पेट के ऊपर अपने वक्ष के मध्य भाग की ओर इशारा करते हुए वह कहता। जाड़ों के आने तक वह इसी तरह घिसटता रहा। पालों के आगमन

पर उसका दमा तो अच्छा हो गया, लेकिन एक दूसरे दौरे ने—और इस बार किसी छोटे-से दौरे ने नहीं, बल्कि सच्चे, असंदिग्ध दौरे ने—उसे आ पकड़ा। उसकी स्मृति फ़ौरन ग़ायब नहीं हुई। चेरतोपखानोव का, और अपने मित्र के इस हताशपूर्ण क्रन्दन का कि "तुम, तीखोन, मुझे छोड़कर कैसे जा सकते हो, बिना मेरी अनुमति के—माशा की भांति?" उसे अभी भी चेत था, और लड़खड़ाती तथा अनिश्चित-सी आवाज़ में उसने जवाब तक दिया—"ओ... पान्ते-लेई... ए-ए-इच... मैं... हमेशा... ख़ुशी से... तुम्हारे आदेश... पालन..."

लेकिन इस सबके बावजूद, उसी दिन वह मर गया। उसने ज़िला डाक्टर की भी प्रतीक्षा नहीं की, जिसके लिए अभी मुश्किल से ठंडे हुए उसके शरीर को देखकर अब कुछ करने को बाक़ी नहीं रहा था—सिवा इस दुनिया की हर चीज़ की क्षणभंगुरता को उदास भाव से स्वीकार करने तथा "वोद्का की एक बूंद और मछलियों का नाश्ता" तलब करने के। जैसा कि आशा थी, तीखोन इवानिच अपनी जागीर अपने श्रद्धेय पोषक तथा उदार संरक्षक 'पान्तेलेई येरेमेइच चेरतोपखानोव' के नाम छोड़ गया था, लेकिन श्रद्धेय संरक्षक के लिए वह कोई भारी लाभप्रद सिद्ध नहीं हुई, कारण कि कुछ ही दिन बाद उसे सार्वजनिक नीलामी के द्वारा बेच देना पड़ा—अंशतः इसलिए कि प्रस्तरीय स्मारक का—एक प्रतिमा का—ख़र्च पूरा करना था जिसे चेरतोपखानोव ने (और यहां उसके पिता की सनक को उसमें भी उभरता हुआ देखा जा सकता है) अपने मित्र की क़ब्र के ऊपर स्थापित करना उपयुक्त समझा था। इस प्रतिमा के लिए—जिसमें प्रार्थनारत एक फ़रिश्ते की छवि अंकित होनी थी—उसने मास्को आर्डर भेजा था, लेकिन एजेण्ट ने—यह सोचकर कि देहातों में प्रतिमाओं के प्रेमियों के विरले ही दर्शन होते हैं—फ़रिश्ते के बजाए फूलों की देवी की सिफ़ारिश की जो मास्को के निकट केथरीन के समय में लगाये गये उपेक्षित बाग़ों में से एक में सुशोभित थी। ऐसा

करने का उसके पास एक बहुत ही माक़ूल कारण था। यह प्रतिमा, अत्यन्त कलात्मक, रोकोको शैली में निर्मित तथा छोटी छोटी मांसल बांहों, लहराते हुए घुंघराले बालों, अनावृत्त वक्ष के इर्द-गिर्द गुलाब के एक हार और ख़मदार कमर होने पर भी उसे मुफ़्त में मिल गयी थी। और सो कथा-पुरानों की यह देवी, अपने एक पांव को नफ़ासत के साथ उठाये, तीख़ोन इवानिच की समाधि पर आज दिन भी खड़ी है और विशुद्ध पौम्पाडोर मुसकान के साथ, बछड़ों और भेड़ों की ओर—जो हमारे देहातों के क़ब्रिस्तानों में बिला नागा आते हैं—ताकती रहती है।

३

अपने फ़रमानबरदार मित्र के निधन के बाद चेरतोपखानोव ने फिर पीना शुरू कर दिया, और इस बार कहीं अधिक। उसकी हर चीज़ एकदम बद से बदतर होती गयी। शिकार के लिए उसके पास पैसे नहीं रहे, उसकी अल्प सम्पदा, आख़िरी पाई तक, स्वाहा हो गयी, उसके बचे-खुचे नौकर भाग गये। पान्तेलेइ येरेमेइच का एकाकीपन चरम सीमा को पहुंच गया। ऐसा कोई नहीं था जिससे वह एक शब्द भी कह सकता, अपना हृदय उंडेलकर रखने की तो बात ही छोड़िये। अकेले उसके अहंकार में कोई कमी नहीं आयी थी। इसके प्रतिकूल, उसकी स्थिति जितनी ही अधिक बदतर होती जाती थी, उतना ही अधिक वह ख़ुद उद्धत, ऊंचा और दुर्गम बनता जाता था। अन्त में वह मनुष्य मात्र से पूर्णतया घृणा करने लगा। बहलाव का एक साधन, एक सुख, उसके पास बच रहा था—दोन नस्ल का एक लाजवाब भूरे रंग का घोड़ा जिसे वह मालेक-आदेल नाम से पुकारता था। वह सचमुच एक अद्भुत जानवर था।

यह घोड़ा नीचे लिखे ढंग से उसके अधिकार में आया था।

एक दिन वह पड़ोस के एक गांव में से गुज़र रहा था। तभी चेरतोपखानोव ने एक सराय के सामने किसानों की एक भीड़ को चिल्लाते और होहल्ला मचाते सुना। भीड़ के बीच में किसी की बलिष्ठ बांहें बारबार उठ और गिर रही थीं।

"वहां क्या हो रहा है?" अपने उसी अटल लहजे में जो कि उसकी विशिष्टता बन गया था, एक वृद्धा किसान स्त्री से पूछा जो अपनी झोंपड़ी की देहली पर खड़ी थी। दरवाज़े की चौखट से टिकी, ऊंघती-सी मुद्रा में वह सराय की दिशा में ताक रही थी। सफ़ेद बालों वाला एक लड़का, छीट की क़मीज़ पहने और अपने उघड़े हुए छोटे-से वक्ष पर साइप्रेस लकड़ी का क्रॉस लटकाये, अपनी छोटी छोटी टांगों को फैलाये और छाल की उसकी चप्पलों के बीच अपनी भिंची हुई नन्ही मुट्ठियों को खोंसे बैठा था। पास ही मुर्ग़ी का एक चूज़ा रई-रोटी की पपड़ी पर चोंच मार रहा था।

"भगवान जाने, श्रीमान," वृद्धा स्त्री ने जवाब दिया। फिर आगे की ओर झुकते हुए उसने झुर्रियोंदार अपना गेहुंवा हाथ लड़के के सिर पर रखा, "कहते हैं कि हमारे लड़के किसी यहूदी को पीट रहे हैं।"

"यहूदी को? किस यहूदी को?"

"भगवान जाने, श्रीमान। हमारे बीच एक यहूदी आया था। कहां से वह आया—कौन जाने? वास्या, चलो अपनी मां के पास! शि-शि, नासखेत जंगली!"

वृद्धा ने चूज़े को दूर खदेड़ दिया, जबकि वास्या उसके पेटीकोट से चिपका रहा।

"सो, आप जानो सरकार, वे उसे मार रहे हैं।"

"उसे क्यों मार रहे हैं? किस लिए?"

भीड़ में हंसी की एक लहर-सी दौड़ गयी।

"ओहो, जिन्दा है!" पिछले हिस्से से सुनाई दिया, "यह तो पूरा बिल्ली निकला!"

"शरकार, मेरी रक्षा करो, मुझे बचाओ!" अभागा जीव इस बीच लड़खड़ाती आवाज़ में कह रहा था, और उसका समूचा बदन सिमटकर चेरतोपखानोव के पांव से चिपका था—"नहीं तो, शरकार, वे मुझे मार डालेंगे, मेरी हत्या कर डालेंगे।"

"तुम्हारे ख़िलाफ़ उन्हें ऐसी क्या शिकायत है?" चेरतोपखानोव ने पूछा।

"मैं नहीं कह सकता, भगवान मेरी मदद करे। इधर-उधर कुछ गाएं मर गयीं... सो वे मुझपर शक करते हैं... लेकिन मैं..."

"अच्छा अच्छा, इस सब की बाद में जांच करेंगे," चेरतोपखानोव ने बीच में टोका। "लेकिन इस समय तुम काठी को थामे रहो और मेरे साथ साथ चले चलो। और तुम!" भीड़ की ओर मुड़ते हुए उसने जोड़ा, "क्या तुम मुझे जानते हो? मैं हूं भूस्वामी पान्तेलेई चेरतोपखानोव। मैं बेस्सोनोवो में रहता हूं... और तुम, जब भी तुम्हारे मन में आय, मेरे ख़िलाफ़ और यहूदी के ख़िलाफ़ भी, जो तुमसे बने कार्रवाई कर सकते हो।"

"कार्रवाई हम भला क्यों करेंगे?" सफ़ेद दाढ़ी और भली शकल सूरतवाले एक किसान ने—जो प्राचीन पितृसत्ता का मूर्तिमान रूप मालूम होता था (हालांकि यहूदी के अंजर-पंजर ढीले करने में वह भी दूसरों से क़तई पीछे नहीं था) ख़ूब झुककर माथा नवाते हुए कहा। "हम, श्रीमान पान्तेलेई येरेमेइच, आपको अच्छी तरह जानते हैं। हम आपको धन्यवाद देते हैं कि आपने हमें एक अच्छी सीख दी।"

"कार्रवाई भला क्यों करेंगे?" दूसरों ने स्वर में स्वर मिलाया।

"जहां तक यहूदी की बात है, उससे हम फिर निबट लेंगे। वह हमसे बचकर नहीं जा सकता। हम उसकी टोह में रहेंगे।"

चेरतोपखानोव ने अपनी मूंछों को ताना, नाक से फुंकार छोड़ी, और पैदल-चाल से घर की ओर चल दिया, मय यहूदी के जिसे उसने ठीक वैसे ही उसके उत्पीड़कों के चंगुल से छुड़ाया था जैसे कि किसी ज़माने में तीखोन नेदोप्यूस्किन को छुड़ाया था।

४

इसके कुछ दिन बाद चेरतोपखानोव के एकमात्र चाकर ने जो कि अब तक उसके पास बच रहा था, सूचना दी कि कोई आदमी घोड़े पर आया है, और उससे बात करना चाहता है। चेरतोपखानोव बाहर पैड़ियों पर निकल आया और दोन नस्ल के एक शानदार घोड़े पर सवार यहूदी को उसने पहचान लिया। घोड़ा अहाते के बीच में गर्व के साथ निश्चल खड़ा था। यहूदी नंगे सिर था, अपनी टोपी को अपनी बग़ल के नीचे थामे हुए, और अपने पांवों को उसने रकाब की पट्टियों में–खुद रकाबों में नहीं–खोंस रखा था। उसके लम्बे कोट के फटे हुए छोर काठी के दोनों ओर नीचे लटक रहे थे। चेरतोपखानोव को देखते ही उसने होंठों से चुमकारा लिया और कोहनियों को बिचकाते तथा टांगों को झुकाते हुए बत्तखी अभिवादन किया। लेकिन चेरतोपखानोव ने, न केवल यह कि उसके इस अभिवादन का कोई जवाब नहीं दिया, बल्कि उससे क्रुद्ध भी हो उठा। क्षण-भर में, ऊपर से नीचे तक भभक उठा। एक कोढ़ियल यहूदी का यह साहस कि इतने शानदार घोड़े पर इस तरह सवार होकर आये... यह निश्चित रूप से अशिष्टता थी!

"ए, ईथोपिया के भुतने!" वह चिल्लाया–"फ़ौरन नीचे उतर, अगर कीचड़ में लिथड़ना नहीं चाहता तो!"

यहूदी ने फ़ौरन इसका पालन किया, बोरे की भांति घोड़े पर से लुढ़ककर नीचे आ गया, और रास को एक हाथ में थामे चेरतोपखानोव के निकट पहुंचा, मुसकराते और माथा नवाते हुए।

"बोल, क्या चाहता है?" पान्तेलेई येरेमेइच ने गर्व के साथ पूछा।

"शरकार, ज़रा देखने की कृपा करें, कितना बढ़िया घोड़ा है!" यहूदी ने कहा, क्षण-भर के लिए भी माथा नवाना न रोकते हुए।

"अर... हां तो... घोड़ा सब ठीक है। इसे कहां से उड़ा लाया? चोरी का माल है शायद?"

"यह आप क्या कहते हैं, शरकार! मैं एक ईमानदार यहूदी हूं। मैंने इसे चुराया नहीं, बल्कि इसे शरकार मैंने आपके लिए प्राप्त किया है, सच! और मुसीबत... मुसीबत जो इसे पाने में उठानी पड़ी! लेकिन, फिर, देखिये न, घोड़ा भी तो यह एक ही है। समूचे दोन-इलाक़े में इसके जोड़ का घोड़ा कहीं खोजे नहीं मिलेगा। देखिये न, शरकार, कितना बढ़िया घोड़ा है! इधर, किरपा कर इधर आकर देखिये! वो! वो! ए, घूमकर खड़ा हो और हम काठी उतार लेंगे। कहिये, क्या कहते हैं इसके बारे में, शरकार?"

"घोड़ा सब ठीक है," कृत्रिम उपेक्षा के साथ चेरतोपखानोव ने दोहराया, हालांकि उसका हृदय उसके वक्ष में हथौड़े की चोटों की भांति धड़क रहा था। उसे घोड़ों से गहरा अनुराग था, और अच्छी चीज़ को देखते ही पहचान लेता था।

"देखिये, ज़रा एक नज़र इस पर डालकर देखिये, शरकार! इसकी गरदन पर थपकी दीजिये! ठीक, ठीक हि-हि-हि! ऐसे ही, ऐसे ही!"

प्रत्यक्षतः अनमनेपन के साथ चेरतोपखानोव ने घोड़े की गरदन पर अपना हाथ रखा, उसे एक या दो थपकी दी, इसके बाद माथे के बालों

से लेकर कमर की रीढ़ तक अपनी उंगलियों को फेरा और गुर्दे के ऊपर – पारखी की भांति – एक स्थल विशेष पर पहुंचकर उस जगह को हल्के-से उसने दबाया। घोड़े ने उसी क्षण अपनी कमर को कमान बनाया, उसकी उद्धत काली आंखें घूमीं, सन्देह के साथ चेरतोपखानोव की ओर उसने देखा, अपने नथुनों को फरफराते तथा अपनी अगली टांगों को कसमसाते हुए।

यहूदी हंसा और अपने हाथों से ताली की धीमी आवाज़ की।

"अपने मालिक को यह पहचानता है, शरकार, अपने मालिक को पहचानता है!"

"बेकार न बको," चेरतोपखानोव ने खीजकर टोका। "इस घोड़े को तुम से ख़रीदने के लिए ... मेरे पास पैसे नहीं, और जहां तक भेंट लेने का संबंध है, न केवल किसी यहूदी से ही, बल्कि ख़ुद सर्वशक्तिमान से भी मैं उसे स्वीकार नहीं करूंगा।"

"मानो मेरी इतनी औक़ात हो जो आपको कुछ भेंट दे सकूं, ख़ुदा रहम करे!" यहूदी ने चिल्लाकर कहा। "आप इसे ख़रीद लें, शरकार... और जहां तक रक़म का सवाल है, उसके लिए मैं इन्तज़ार कर सकता हूं।"

चेरतोपखानोव सोच में डूब गया।

"तुम इसका क्या लोगे?" आख़िर अपनी बत्तीसी के बीच से वह बुदबुदाया।

यहूदी ने अपने कंधे बिचकाये।

"जो ख़ुद मैंने इसके लिए अदा किया। दो सौ रूबल!"

घोड़ा इससे दुगने – शायद तीन गुने – दामों में भी अच्छा था। चेरतोपखानोव ने अपना मुंह दूसरी ओर किया और उत्ताप के साथ जमुहाई ली।

"और पैसे ... कब?" उसने पूछा, तेवरों को कसकर चढ़ाये और यहूदी की ओर न देखते हुए।

"जब शरकार को ठीक जंचे।"

चेरतोपखानोव ने अपना सिर पीछे की ओर फेंका, लेकिन अपनी आंखों को नहीं उठाया।

"यह कोई जवाब नहीं हुआ। साफ़ साफ़ बोलो, हिरोद की नस्ल के! क्या तुम मुझे अपने अहसान से जकड़कर रखना चाहते हो?"

"अच्छा तो, कर लीजिये," यहूदी ने अविलम्ब कहा, "छः महीने में। आप राज़ी हैं?"

चेरतोपखानोव ने कोई जवाब नहीं दिया।

यहूदी ने उसके चेहरे पर एक नज़र डालने का प्रयत्न किया।

"आप राज़ी हैं न? तो इजाज़त दीजिये, इसे आपके अस्तबल में पहुंचा दूं।"

"ज़ीन मुझे नहीं चाहिए," चेरतोपखानोव ने एकबारगी कहा। "ज़ीन उतार लो। सुन रहा है न?"

"बेशक, बेशक, इसे मैं उतार लूंगा," खुश होकर यहूदी ने ज़ीन उतारकर अपने कंधे पर रखते हुए कहा।

"और धन," चेरतोपखानोव कहता गया, "छः महीने में। और दो सौ नहीं, बल्कि ढाई सौ। बस, बोलो नहीं। ढाई सौ, मैं तुमसे कहता हूं!"

चेरतोपखानोव अभी भी अपनी आंखों को उठाने में समर्थ नहीं हो सका। उसका अभिमान इतनी निर्ममता के साथ पहले कभी आहत नहीं हुआ था।

"स्पष्ट ही यह एक भेंट है," वह मन में सोच रहा था, "कृतज्ञतावश इसे लाया है, शैतान कहीं का!" और एक तरफ़ उसका दिल चाहता वह यहूदी को गले से लगा ले और दुलराये दूसरी तरफ़ वह उसे पीटना चाहता था।

"शरकार," यहूदी ने कहना शुरू किया, थोड़ा साहस बटोरते और

अपने समूचे चेहरे से मुसकराते हुए, "आपको, रूसी चलन के मुताबिक़, हाथों हाथ इसे ग्रहण करना चाहिए ..."

"अब और क्या? वाह! क्या सूझ है! एक यहूदी ... और रूसी रिवाज! ए, कोई है? घोड़े को लो, और इसे अस्तबल में लिवा ले जाओ। और इसे कुछ जई डाल देना। मैं खुद आऊंगा, और सब देख-भाल लूंगा। और इसका नाम होगा – मालेक-आदेल!"

चेरतोपखानोव ने पैड़ियों की ओर जाने का उपक्रम किया, लेकिन तेज़ी से मुड़ा और दौड़कर यहूदी के पास पहुंचा, हार्दिकता से उसका हाथ दबाया। यहूदी उसका हाथ चूमने के लिए झुका, लेकिन चेरतोपखानोव उछलकर फिर लौट आया, और यह बुदबुदाते हुए कि "किसी से कहना नहीं", वह दरवाज़े में विलीन हो गया।

५

ठीक उसी दिन से मालेक-आदेल चेरतोपखानोव के जीवन की मुख्य दिलचस्पी का, मुख्य खुशी का, आधार बन गया। वह उसे इतना चाहता था जितना कि उसने माशा को भी नहीं चाहा था, उसके साथ उसका इतना लगाव हो गया जितना कि नेदोप्यूस्किन के साथ भी नहीं था। और घोड़ा भी वह कैसा था! बिल्कुल आग था वह – एकदम बारूद की भांति विस्फोटक – और बोयार की भांति शानदार। अनथक, सहनशील, आज्ञाकारी – चाहे जहां भी उसे जोत दो; और उसके रख-रखाव का खर्च भी कुछ नहीं, अगर और कुछ न मिलता तो पांव के नीचे की धरती की घास को कुतरने से मुंह न मोड़ता। जब वह क़दम-चाल से डग भरता, तो ऐसा मालूम होता जैसे आया गोदी में लेकर सुला रही हो। जब दुलकी चलता तो लगता मानो तुम हिंडोले में झूल रहे हो, और जब वह सरपट दौड़ता, तो हवा को भी मात करता।

उसका दम कभी नहीं टूटता, उसका सांस पूर्णतया स्वस्थ रहता। इस्पाती टांगें – ठोकर खाना उसके लिए एक सर्वथा अनजानी चीज़ था – कभी ऐसा नहीं हुआ। खाई या बाड़े को लांघना उसके लिए मामूली बात थी; और कितना होशियार जानवर था वह! अपने मालिक की आवाज़ सुनते ही हवा में सिर उठाये दौड़ा चला आता; अगर उसे थिर खड़े होने के लिए कहो और उसके पास से दूर चले जाओ तो क्या मजाल जो वह ज़रा भी हरकत करे, जैसे ही तुम लौटने को मुड़ो तो वह धीमे से हिनहिनाये – जैसे कह रहा हो – "मैं यहां हूं"। और किसी चीज़ का डर नहीं – घटाटोप अंधकार हो, बर्फ़ का तूफ़ान हो, वह अपना रास्ता निकाल लेगा, और अजनबी आदमी को तो वह किसी भाव अपने पास तक नहीं फटकने देगा, अपने दांतों से उसकी ख़बर लेगा। और क्या मजाल जो कोई कुत्ता कभी उसके निकट पहुंच सके – क्षण-भर में उसकी अगली टांग उसके सिर का अभिनन्दन करती नज़र आयेगी और उसकी वहीं टें बोल जायेगी। और उचित ढंग से अभिमानी, शोभा की ख़ातिर भले ही तुम उसके ऊपर चाबुक फहरा लो, लेकिन – ख़ुदा न करे कि तुम उसे छुओ! लेकिन ज़्यादा बखान करने से क्या फ़ायदा? – घोड़ा नहीं, वह सच्चा हीरा था!

जब चेरतोपखानोव अपने मालेक-आदेल का वर्णन करता तो दमकते हुए शब्दों की झड़ी लगा देता। और किस तरह वह उसे थपकता तथा दुलराता था। उसके बदन की खाल चांदी की भांति चमकती थी – पुरानी नहीं, नयी चांदी की भांति जिसपर खूब पालिश हुई हो। अगर उसके ऊपर हाथ फेरो तो जैसे मख़मल हो। उसकी ज़ीन, उसका जामा, उसकी लगाम – उसका सारा साज़-सामान, सच पूछो तो, इतने फ़िट, इतनी अच्छी हालत में और इतने उजले थे कि जैसे चित्र खींचकर रख दिया गया हो, सर्वांग सुन्दर चित्र। चेरतोपखानोव – इससे अधिक हम और क्या कह सकते हैं – खुद अपने हाथों से अपने दुलारे के माथे और अयाल के बालों

को गूंथता था, उसकी अयाल और पूंछ को बीयर से पखारता था और, एक से अधिक बार, उसके खुरों में पालिश करता था। वह मालेक-आदेल पर सवार होता और बाहर निकलता, अपने पड़ोसियों से मिलने-जुलने के लिए नहीं – पहले की भांति वह अब भी उनसे कतराता था – बल्कि उनके खेतों के बीच से, उनके घरों को पार करते हुए ... ताकि वे, मूर्ख कंगले, दूर से ही मुग्ध होकर उसे देखा करें! या वह सुनता कि कहीं शिकार का आयोजन होने जा रहा है, कि किसी धनी भूस्वामी ने उसके इलाक़े के इर्द-गिर्द किसी हिस्से में शिकार-समारोह का बन्दोबस्त किया है, तो वह तुरंत चल देता, और दूर – क्षितिज के पास – थिरकने लगता, सारे दर्शकों को अपने घोड़े की तेज़ी तथा सौन्दर्य से चकित करते, और किसी को अपने निकट न फटकने देता। एक बार किसी शिकार करते भूस्वामी ने अपने समूचे दल-बल के साथ उसका पीछा तक किया, उसने देखा कि चेरतोपखानोव निकला जा रहा है, और उसने – पूरी तेज़ी के साथ घोड़ा दौड़ाते हुए – उसके पीछे चिल्लाना शुरू किया – "ए, तुम! ए, सुनो तो! अपने घोड़े के लिए जो चाहो ले लो! एक हज़ार से भी मैं गुरेज़ नहीं करूंगा! अपनी बीवी, अपने बच्चे, सब न्योछावर कर दूंगा! मेरा आख़िरी कोपेक तक तुम्हारी नज़र है!"

चेरतोपखानोव ने एकाएक मालेक-आदेल की रास खींची। शिकारी लपककर उसके पास पहुंचा। "प्रिय श्रीमान," चिल्लाकर उसने कहा, "बताइये न कि आप क्या चाहते हैं? मेरे प्रिय मित्र!"

"अगर आप ज़ार होते," चेरतोपखानोव ने धीरे से कहा (और उसने शेक्सपीयर का कभी नाम भी नहीं सुना था) "मेरे घोड़े के लिए तब शायद अपनी सारी सलतनत मुझे दे सकते, तो भी मैं उसे नहीं लेता!" इन शब्दों को उसने उच्चारित किया, मुंह ही मुंह हंसा, मालेक-आदेल को पीछे की ओर उचकाया, और लट्टू की भांति पिछली टांगों के बल

हवा में उसे मोड़ा, और बिजली की भांति ठूंठों को रौंदता हुआ उड़ चला। और शिकारी ने (कहते हैं कि वह धनी राजकुमार था) अपनी टोपी को उतारकर धरती पर फेंका, खुद भी नीचे आ गिरा, और टोपी में मुह धंसाये आध घंटा तक इसी तरह पड़ा रहा।

और चेरतोपखानोव क्यों न अपने घोड़े की क़द्र करता? अपनी असंदिग्ध श्रेष्ठता को क्या उसी की बदौलत उसने फिर से प्राप्त नहीं किया था, उस अन्तिम श्रेष्ठता को जिसने उसे उसके सारे पड़ोसियों से ऊंचा उठा दिया था?

६

इस बीच समय गुज़रता गया और पैसा अदा करने के लिए नियत दिन निकट आता गया, जबकि चेरतोपखानोव की गांठ में ढाई सौ रूबल तो दर किनार, पचास रूबल भी नहीं थे। अब क्या किया जाय? कैसे यह कर्ज़ अदा हो? "अच्छा तो," आखिर उसने निश्चय किया, "अगर यहूदी टस से मस नहीं होगा, अगर वह और अधिक इन्तज़ार नहीं करेगा तो मैं उसे अपना घर और अपनी ज़मीन दे दूंगा, और मैं अपने घोड़े पर चल दूंगा, चाहे जिधर, इसकी चिन्ता नहीं! मैं भूखों भले ही मर जाऊं, पर मालेक-आदेल को अपने से अलग नहीं करूंगा!" वह अत्यन्त विचलित और यहां तक कि उदासी में भी डूबा था, लेकिन इस मोड़ पर भाग्य ने, पहली और आखिरी बार, तरस खाया और मुसकान की उसपर वर्षा की -- दूर की कोई संबंधिन, जिसका नाम तक चेरतोपखानोव के लिए अपरिचित था, अपनी वसीयत में उसके लिए एक भारी -- उसकी दृष्टि से -- रक़म छोड़ गयी जो दो हज़ार रूबल से किसी क़द्र कम नहीं थी। और यह रक़म उसे, जैसे कि कहते हैं, ऐन मौक़े पर मिल गयी। यहूदी के आने से ठीक एक दिन पहले। चेरतोपखानोव खुशी के मारे क़रीब क़रीब पागल हो उठा, लेकिन

वोद्का का उसे ख़याल तक नहीं आया। ठीक उस दिन से जबकि मालेक-आदेल उसके हाथों में आया था, उसने अपने हाथों से वोद्का की एक बूंद भी नहीं छुयी थी। वह भागकर अस्तबल में गया, अपने दुलारे के — नथुनों से ऊपर जहां की खाल हमेशा इतनी मुलायम होती है — दोनों ओर उसने चूमा। "अब हम बिलग नहीं होंगे!" उसने चिल्लाकर कहा, और खूब संवारी हुई अयाल के नीचे मालेक-आदेल की गरदन को थपथपाया। वहां से लौटकर घर आया और ढाई सौ रूबल एक पैकेट में मोहर बन्द कर अलग रख दिये। इसके बाद, उस समय जबकि वह कमर के बल लेटा और पाइप से धुआं छोड़ रहा था, उसने सोचना शुरू किया कि बाक़ी धन का वह कैसे उपयोग करेगा — बढ़िया कुत्ते प्राप्त करेगा, असली कोस्त्रोमा के शिकारी कुत्ते, चित्तीदार और लाल, इसमें ज़रा भी शक नहीं! उसने पेर्फ़ीश्का से भी थोड़ी बात की, जिसे उसने एक नया कज़्ज़ाक कोट दिलाने का वादा किया था, जिसके सभी जोड़ों पर पीली गोट टंकी होगी, और मगन मन सोने के लिए चला गया।

उसने एक बुरा सपना देखा। उसने देखा कि वह शिकार के लिए जा रहा है, लेकिन मालेक-आदेल पर नहीं, बल्कि किसी अजीब जानवर पर जो एक ऊंट की भांति मालूम होता था। तभी एक सफ़ेद लोमड़ी, बर्फ़ की भांति सफ़ेद लोमड़ी दौड़ी हुई उसकी ओर लपकी ... उसने अपने चाबुक को फटकारने की कोशिश की, अपने कुत्तों को उसपर छोड़ने का प्रयत्न किया, लेकिन उसने देखा कि चाबुक की जगह उसके हाथ में छाल का एक पुलिन्दा है, और लोमड़ी है कि सामने ही दौड़ी आ रही है, उसकी ओर अपनी जीभ निकाले हुए। वह कूदकर नीचे आ गया, ठोकर खायी और गिर पड़ा ... सीधे एक पुलिसमैन की बांहों में जा गिरा, और वह उसे गवर्नर जेनरल के पास ले चला, और जिसे उसने पहचाना कि यह तो याफ़ है ...

चेरतोपखानोव जाग पड़ा। कमरा अंधियाला था, मुर्गों ने अभी दूसरी बार कुड़ंकुड़ाना शुरू किया था ...

कहीं दूर, बहुत दूर, कोई घोड़ा हिनहिनाया। चेरतोपखानोव ने अपना सिर उठाया। एक बार फिर हिनहिनाने की धुंधली, अस्पष्ट आवाज़ सुनाई दी।

"यह मालेक-आदेल हिनहिना रहा है," उसने सोचा, "यह उसकी हिनहिनाहट है। लेकिन इतनी दूर से क्यों? ख़ुदा रहम करे, हमें बरकत दे ... यह नहीं हो सकता ..."

चेरतोपखानोव के रोम रोम में अचानक एक जूड़ी-सी सरसरा गयी। उसी क्षण उछलकर वह बिस्तर से बाहर निकल आया, अपने जूतों और कपड़ों को उसने टटोला, कपड़े पहने और अपने तकिए के नीचे से झटपट अस्तबल की कुंजी उठायी, और अहाते में लपक चला।

७

अस्तबल अहाते के एकदम छोर पर था। उसकी एक दीवार खुले खेत की ओर थी। चेरतोपखानोव कुंजी को एकाएक ताले में फिट नहीं कर सका—उसके हाथ थरथरा रहे थे—और वह कुंजी को फ़ौरन घुमा नहीं सका। वह निश्चल खड़ा रहा, अपने सांस को रोके हुए, काश कि भीतर कोई चीज़ हरकत करे! "मालेक! मालेक!" धीमी आवाज़ में उसने पुकारा—मौत जैसा सन्नाटा! चेरतोपखानोव ने ऐसे ही अचेतावस्था में कुंजी को झटका, दरवाज़े में चरचराहट की आवाज़ हुई और वह खुल गया। सो उसमें ताला बंद नहीं था। उसने चौखट के उस पार डग रखा, और अपने घोड़े को फिर आवाज़ दी—इस बार उसके पूरे नाम मालेक-आदेल से। लेकिन उसके फ़रमानबरदार साथी की ओर से कोई जवाब नहीं आया, केवल भूसे में एक चूहे की सरसराहट सुनाई दी। तब

चेरतोपखानोव अस्तबल में घोड़े के तीन कटघरों में से एक की ओर लपका —जिसमें कि मालेक-आदेल रखा जाता था। वह सीधे कटघरे की ओर लपका, हालांकि चारों ओर घटाटोप अंधेरा था ... ख़ाली! चेरतोपखानोव का सिर चकराया, लगता था जैसे उसके मस्तिष्क के भीतर कोई ज़ोरों से घंटी टनटना रहा हो। उसने कुछ कहने का प्रयास किया, लेकिन एक तरह की सिसकारी के सिवा और कुछ उसके मुंह से नहीं निकल सका। और अपने हाथों से टटोलते हुए—ऊपर, नीचे, सभी दिशाओं में—बेदम और डगमगाते घुटनों से—एक के बाद दूसरे कटघरे की ओर वह बढ़ा ... फिर तीसरे की ओर जो क़रीब क़रीब ऊपर तक सूखी घास से अटा था, पहले एक दीवार से वह टकराया, फिर दूसरी से, सिर के बल लुढ़का, खड़ा हुआ और अचानक जैसे पत्ता तोड़कर भागा और अधखुले दरवाज़े में से बाहर अहाते में निकल आया।

"चोरी हो गया! पेफ़ींश्का! पेफ़ींश्का! चोरी हो गया!" अपनी समूची आवाज़ से वह चिल्ला उठा।

पेफ़ींश्का, केवल अपनी कमीज़ पहने, दालान में से जहां वह सोता था, बेतहाशा भागता हुआ आया।

नशा किये आदमियों की भांति वे—मालिक और उसका एकमात्र एकाकी नौकर—अहाते के मध्य में एक-दूसरे से टकराये, और पागलों की भांति वे एक-दूसरे के इर्द-गिर्द कूदने लगे। मालिक यह नहीं बता सका कि मामला क्या है, और नौकर यह नहीं समझ सका कि उसे क्या करना है। "नाश! सर्वनाश!" चेरतोपखानोव ने बुदबुदाया। "नाश! सर्वनाश!" नौकर ने उसके अनुसरण में दोहराया। "एक लालटेन! यहां! लालटेन! रोशनी! रोशनी!" आखिर चेरतोपखानोव के क्षीण फेफड़ों से निकला। पेफ़ींश्का घर में लपक गया।

लेकिन लालटेन रोशन करना, आग हासिल करना, आसान नहीं था। दियासलाइयां उन दिनों रूस के लिए एक दुर्लभ चीज़ थी। रसोई

में आग की आखिरी चिंगारियां कभी की बुझ चुकी थीं। चक़मक़ और इस्पात जल्दी से मिले नहीं, और वे कुछ कारगर भी सिद्ध नहीं हुए। अपने दांतों को चेरतोपखानोव ने पीसा और घबराये हुए पेर्फ़ीश्का के हाथ से उन्हें छीनकर खुद आग सुलगाने लगा। चिंगारियां प्रचुर परिमाण में झड़ीं, और उनसे भी अधिक परिमाण में गालियों और यहां तक कि कराहों की झड़ी लगी, लेकिन लकड़ी ने आग नहीं पकड़ी या फिर से बुझ गयी – बावजूद इसके कि चार फूले हुए गालों तथा होंठों के संयुक्त प्रयास लपक पैदा करने के लिए उसमें फूंक मार रहे थे। पर पांच मिनट बाद, इससे जल्दी नहीं, जर्जर लालटेन के तल में लगी मोमबत्ती का एक टुकड़ा रोशन हुआ, और चेरतोपखानोव, पेर्फ़ीश्का के साथ, लपककर अस्तबल में पहुंचा, लालटेन को उसने अपने सिर से ऊंचा उठाया, चारों ओर देखा ...

सब ख़ाली !

लपककर वह बाहर अहाते में आया, सभी दिशाओं में दौड़ा और वापिस लौटा – घोड़े का कहीं कोई चिन्ह नहीं ! बेंत का बाड़ा जो पान्तेलेई येरेमेइच के अहाते को घेरे था, एक मुद्दत से ख़स्ताहाल था, और कितनी ही जगहों में बैठ गया था तथा ज़मीन पर गिर गया था ... अस्तबल की बग़ल में, पूरे एक गज़ की चौड़ाई में, वह पूर्णतया ज़मीन से मिल गया था। पेर्फ़ीश्का ने इस स्थल की ओर चेरतोपखानोव को इशारा किया।

"मालिक ! यहां देखो ! आज दिन में तो यह ऐसा नहीं था। और खड़े बांस वहां पड़े हैं। इसका मतलब यह कि किसी ने उन्हें खींचकर उखाड़ा है।"

चेरतोपखानोव मय लालटेन के दौड़ा, धरती से सटाये उसे इधर से उधर घुमाया।

"खुर, खुर, घोड़े के खुरों के निशान, ताज़े निशान !" वह बुदबुदाया, उतावली के साथ बोलते हुए, "वे उसे इधर से ले गये, इधर से !"

उसी क्षण उसने बाड़े को कूदकर लांघा और "मालेक-आदेल! मालेक-आदेल!" चिल्लाता हुआ सीधे खुले खेत की ओर भाग चला।

पेर्फ़ीश्का, चकित और विमूढ़, बाड़े के पास ही खड़ा रहा। लालटेन की रोशनी का घेरा शीघ्र ही उसकी आंखों से ओझल हो गया – तारों से सूनी और चांद-विहीन रात के घने अंधकार ने उसे लील लिया।

चेरतोपखानोव के निराश क्रन्दन की ध्वनि धुंधली और अधिक धुंधली, पड़ती गयी...

८

जब वह फिर घर लौटकर आया, उस समय दिन का उजाला फैल चला था; वह मुश्किल से ही मानव-जीव मालूम होता था। उसके कपड़े कीचड़ में लथपथ थे, उसके चेहरे का भाव वहशियाना और आतंकप्रद था। उसकी आंखें धुंधली और सूजी हुई थीं। बैठी-सी फुसकार के साथ उसने पेर्फ़ीश्का को दुतकारा और अपने-आपको अपने कमरे में बंद कर लिया। थक वह इस क़दर गया था कि उसके लिए खड़े रहना मुश्किल था। लेकिन वह अपने बिस्तरे पर जाकर नहीं लेटा, बल्कि दरवाज़े के पास एक कुर्सी पर बैठ गया, और अपने सिर को उसने दबोच लिया।

"चोरी हो गया! चोरी हो गया!"

लेकिन रात को, जबकि अस्तबल में ताला लगा था, चोर मालेक-आदेल को चुराने में कैसे सफल हुआ? मालेक-आदेल जो दिन में भी किसी अजनबी को कभी अपने पास नहीं फटकने देता था, उसे भी चुरा ले जाना, बिना किसी आवाज़ के, बिना किसी आहट के? और इसका क्या रहस्य था कि अहाते का एक भी कुत्ता नहीं भोंका? यह सच है कि केवल दो ही बाक़ी रह गये थे – दो छोटे छोटे पिल्ले – और वे दोनों भी शायद ठंड और भूख के मारे किसी कचरे में धंसे होंगे – फिर भी!

"और मालेक-आदेल के बिना अब मैं क्या करूंगा?" चेरतोपखानोव

ने सोचा। "मेरी आख़िरी ख़ुशी भी अब मुझसे छिन गयी! अब जीने का कुछ लाभ नहीं! क्या कोई और घोड़ा ख़रीद लूं? अब जो धन आ गया है? लेकिन उस जैसा दूसरा घोड़ा मिलेगा कहां?"

"पान्तेलेई येरेमेइच! पान्तेलेई येरेमेइच!" उसे दरवाज़े पर किसी के पुकारने की सहमी-सी आवाज़ सुनाई दी।

चेरतोपखानोव उछलकर खड़ा हो गया।

"कौन है?" उसने चिल्लाकर कहा, ऐसी आवाज़ में जो ख़ुद उसकी आवाज़ नहीं मालूम होती थी।

"मैं हूं, आपका नौकर पेर्फ़ीश्का!"

"क्या चाहते हो? क्या वह मिल गया? क्या वह घर वापिस लौट आया?"

"नहीं, पान्तेलेई येरेमेइच, लेकिन वह यहूदी जिसने घोड़ा बेचा था ..."

"हां, तो?"

"वह आया है।"

"हो-हो-हो-हो!" चेरतोपखानोव चिल्लाया, और उसने एकबारगी दरवाज़ा खोल दिया। "खींच ले आओ उसे यहां। एकदम घसीटते हुए लाना उसे!"

अपने 'कृपालु' की अस्तव्यस्त, वहशियाना आकृति की अचानक प्रेत-छाया को देखकर यहूदी ने, जो पेर्फ़ीश्का की पीठ के पीछे खड़ा था, नज़र बचाकर खिसक भागने की कोशिश की, लेकिन चेरतोपखानोव ने दो छलांगों में उसे जा पकड़ा, और शेर की भांति सीधे उसकी गरदन पर झपटा।

"ओह, पैसा लेने के लिए आया है! पैसे के लिए!" वह चीख़ा, ऐसी भरभरी आवाज़ में मानो यहूदी का नहीं ख़ुद उसका गला घोंटा जा

रहा हो। "तुम रात को उसे चुरा ले गये, और अब दिन में उसकी क़ीमत लेने आये हो, क्यों? क्यों? क्यों?"

"रहम करें, शरकार, हम पर रहम करें," यहूदी ने किकियाने का प्रयास किया।

"बोलो, मेरा घोड़ा कहां है? तुमने उसका क्या किया? किसके हाथ उसे बेच डाला? बोलो, बोलो, बोलो!"

यहूदी अब किकिया तक नहीं सकता था। उसका चेहरा तेज़ी से नीला पड़ता जा रहा था, यहां तक कि भय की छाप भी उसपर से ग़ायब हो गयी थी। उसके हाथ नीचे गिर गये थे और बेजान से लटके थे, उसका समूचा शरीर, चेरतोपखानोव द्वारा बुरी तरह झंझोड़ा जाने के कारण नरकट की भांति आगे और पीछे झकोले खा रहा था।

"मैं तुम्हारे पैसे तुम्हें चुकता कर दूंगा, आख़िरी कोपेक तक तुम्हें अदा कर दूंगा," चेरतोपखानोव गरजा, "लेकिन अगर तुम फ़ौरन मुझे नहीं बताओगे तो चूज़े की भांति तुम्हारा गला घोंट दूंगा।"

"लेकिन, मालिक, आपने तो अभी ही गला घोंट दिया है," विनीत भाव से पेफ़ींश्का ने कहा।

केवल तभी चेरतोपखानोव को चेत हुआ।

उसने यहूदी की गरदन को छोड़ दिया, वह धम से ज़मीन पर गिर पड़ा। चेरतोपखानोव ने उसे उठाया, एक बेंच पर उसे बैठाया, वोद्का का एक गिलास उसके गले में उंडेला, और उसे होश में ले आया। जब वह होश में आया तो उससे बातें करने लगा।

मालूम हुआ कि यहूदी को मालेक-आदेल के चोरी हो जाने की तनिक भी ख़बर न थी। और दरअसल उसे स्वयं चुराने का अभिप्राय ही क्या हो सकता था जबकि वह स्वयं उसे 'अपने आदरणीय पान्तेलेई येरेमेइच' के लिए लेकर आया था।

तब चेरतोपखानोव उसे अस्तबल में ले गया।

दोनों ने मिलकर घोड़े के कटघरे को, उसकी नांद को, दरवाज़े पर पड़े ताले को देखा, घास और भूसे को हटाया, और फिर दोनों सहन में निकल आये। चेरतोपखानोव ने यहूदी को घोड़े के पांवों के निशान चारदीवारी के पास दिखाये और फिर सहसा जांघ पर हाथ मारते हुए बोला – "ठहरो, तुमने कहां से यह घोड़ा ख़रीदा था?"

"मालोआर्खान्गेलस्क ज़िला के वेर्ख़ोसेन्स्काया मेले में," यहूदी ने जवाब दिया।

"किससे?"

"एक कज़ाक से।"

"ठहरो! यह कज़ाक – वह युवा आदमी था या वृद्ध?"

"मझोली आयु का धीर-गंभीर आदमी था।"

"और किस तरह का था वह? कैसा दिखता था? काइयां धूर्त होगा मेरे ख़्याल में?"

"शायद धूर्त तो वह रहा होगा, शरकार!"

"और, मैं कहता हूं, उसने – उस धूर्त ने – क्या कहा? क्या उसके पास यह घोड़ा काफ़ी अर्से से था?"

"याद पड़ता है, उसने कहा था कि घोड़ा उसके पास काफ़ी अर्से से था।"

"अच्छा तो, फिर सिवा उसके और किसी ने नहीं चुराया। ख़ुद सोचकर देखो, सुनो, यहीं खड़े रहना! तुम्हारा क्या नाम है?"

यहूदी चौंका, और अपनी काली आंखों को उसने चेरतोपखानोव की ओर घुमाया।

"मेरा नाम क्या है?"

"हां, हां, तुम्हें क्या कहकर पुकारा जाता है?"

"मोशेल लेइबा।"

"अच्छा तो, मोशेल लेइबा, मेरे मित्र, तुम्हीं सोचो – तुम एक

समझदार आदमी हो–अपने पुराने मालिक के सिवा घोड़ा और किसे अपने ऊपर हाथ रखने दे सकता था? देखा न, निश्चय ही उसने उसकी ज़ीन कसी, लगाम ढाली, और उसका जामा उतारा–वहां घास पर वह पड़ा है। और उसने अपना सारा बन्दोबस्त एकदम ऐसे किया जैसे वह अपने ही घर में हो! अरे, अपने मालिक के सिवा अगर कोई और होता तो मालेक-आदेल उसे अपने पांवों से रौंद डालता! वह भारी कुहराम मचाता, गांव-भर को जगा डालता। बोलो, मेरी यह बात मानते हो न?"

"मानता हूं, शरकार, मैं तो मानता हूं ..."

"अच्छा तो, फिर, इसका मतलब यह कि सबसे पहले हमें उस कज़ाक को खोजना चाहिए।"

"लेकिन शरकार, हम उसका कैसे पता लगायेंगे? अपने जीवन में थोड़ी देर के लिए केवल एक बार मैंने उसे देखा है, और जाने वह अब कहां है, और उसका नाम जाने क्या है? अफ़सोस, अफ़सोस!" यहूदी ने अन्त में जोड़ा, अपनी लम्बी लटों को अपने कानों के ऊपर शोक से हिलाते हुए।

"लेइबा!" सहसा चेरतोपखानोव चिल्लाया; "लेइबा, मेरी ओर देखो! देखते हो मुझे कुछ सुध-बुध नहीं है, मैं आपे में नहीं हूं! अगर तुम मेरी मदद नहीं करोगे तो मैं ख़ुद अपनी जान से हाथ धो बैठूंगा!"

"लेकिन मैं कैसे मदद कर सकता हूं ..."

"मेरे साथ चलो, और हम चोर का पता लगायें।"

"लेकिन हम जायेंगे कहां?"

"हम मेलों में, सड़कों और गलियों में, घोड़ा-चारों के पास, नगरों, गांवों और बस्तियों में–हर जगह, हर स्थान पर! और धन की चिन्ता न करो–मुझे विरासत मिली है, भाई! मैं आख़िरी कोपेक तक ख़र्च कर दूंगा, लेकिन अपने दुलारे को वापिस लाकर रहूंगा! और वह, हमारा दुश्मन–वह कज़ाक–हमसे बचकर नहीं रह सकता! जहां

वह जायेगा, हम वहीं पहुंचेंगे! अगर वह धरती में समा जायेगा तो हम उसे वहां से भी खोद निकालेंगे! अगर वह जहन्नुम में होगा तो हम खुद शैतान के पास भी जा पहुंचेंगे!"

"ओह्, शैतान के पास क्यों?" यहूदी ने कहा। "उसके बिना भी चल जायेगा।"

"लेइबा," चेरतोपखानोव कहता गया, "लेइबा, हालांकि तुम यहूदी हो, और तुम्हारा धर्म अभिशप्त है, तुम्हारी आत्मा कितने ही ईसाइयों की आत्मा से अच्छी है! मुझपर तरस खाओ! अकेले मुझसे कुछ नहीं हो सकेगा। मैं एक गर्मदिमाग़ आदमी हूं, और तुम्हारे पास मस्तिष्क है, सोने से तोलने लायक़ मस्तिष्क। तुम्हारी नसल में यह बात है। बिना कुछ सिखाये ही तुम हर चीज़ में सफल होते हो। शायद तुम अचरज कर रहे हो कि मेरे पास धन कहां से आया? मेरे कमरे में चलो— मैं तुम्हें सब धन दिखाये देता हूं। तुम उसे ले सकते हो, तुम मेरे गले का क्रॉस तक उतार सकते हो, केवल मेरा मालेक-आदेल मुझे वापिस दे दो, उसे मुझे लौटा दो!"

चेरतोपखानोव ऐसे कांप रहा था जैसे उसे बुखार चढ़ा हो। पसीना बूंदें बनकर उसके चेहरे पर से ढुरक रहा था, और उसके आंसुओं के साथ मिलकर उसकी मूंछों में लुप्त हो जाता था। उसने लेइबा के हाथों को दबाया, उसने उसकी मनुहार की, क़रीब क़रीब उसे चूम तक लिया... सन्निपात जैसी उसकी अवस्था थी। यहूदी ने आपत्ति करने का प्रयास किया, यह घोषित करने का कि उसके लिए चलना एकदम असम्भव है, कि उसे काम है... सब बेकार! चेरतोपखानोव ने कुछ सुना तक नहीं। कोई उपाय नहीं था, बेचारे यहूदी को 'हां' करनी पड़ी।

अगले दिन, लेइबा के साथ, चेरतोपखानोव एक किसान के छकड़े में बेस्सोनोवो से रवाना हुआ। यहूदी कुछ त्रस्त-सी मुद्रा धारण किये था। एक हाथ से वह डंडा थामे था, और उसका समूचा मुरझाया हुआ ढांचा,

धचकोले खाती सीट के साथ, ऊपर-नीचे उछल रहा था। दूसरा हाथ वह अपने वक्ष से सटाये था, जहां अख़बारी काग़ज़ में लिपटे नोटों का एक बण्डल रखा था। चेरतोपखानोव एक बुत की भांति बैठा था, केवल अपनी आंखों से इधर-उधर टेरते और गहरी उसासें खींचते हुए। उसके कमरबन्द में एक ख़ंजर खोंसा हुआ था।

"बस, वह दुष्ट जिसने हमें बिलग किया, अब अपनी ख़ैर मनाये!" राजमार्ग पर जब गाड़ी ने बढ़ना शुरू किया, वह बुदबुदा उठा।

अपने घर की देख-रेख वह पेर्फ़ीश्का तथा पुरानी बावर्चिन को सौंप आया था। बावर्चिन एक बहरी किसान स्त्री थी जिसपर तरस खाकर उसने उसे अपने यहां रख लिया था।

"मालेक-आदेल पर सवार होकर ही मैं अब तुम्हारे पास लौटूंगा," विदा के समय उसने उनसे चिल्लाकर कहा, "या फिर कभी नहीं आऊंगा!"

"तब तो तुम मुझसे शादी कर लो," बावर्चिन की पसलियों में अपनी कोहनी से ठहोका देते हुए पेर्फ़ीश्का ने मज़ाक में कहा। "मालिक कभी लौटकर हमारे पास नहीं आयेगा, और ऊब के मारे एकदम एकाकी मेरी तो यहां जान ही निकल जायगी!"

९

एक साल गुज़र गया... पूरा एक साल। पान्तेलेई येरेमेइच की कोई ख़बर नहीं आयी। बावर्चिन मर गयी थी, ख़ुद पेर्फ़ीश्का ने भी घर को छोड़कर नगर जाने का निश्चय कर लिया जहां उसका चचेरा भाई एक नाई के यहां काम सीखता था। नगर आने के लिए वह उसपर बराबर ज़ोर देता था। तभी, अचानक यह अफ़वाह फैली कि उसका मालिक लौटकर आ रहा है। बस्ती के पादरी के पास ख़ुद पान्तेलेई येरेमेइच का एक पत्र आया था जिसमें उसने बेस्सोनोवो लौटने के अपने

इरादे की सूचना दी थी, और उससे अनुरोध किया था कि उसके नौकर को उसकी तुरंत वापसी के बारे में आगाह कर दे। इन शब्दों का पेर्फ़ीश्का ने जो अर्थ समझा वह यह कि उसे जगह को ज़रा झाड़-बुहारकर साफ़ कर देना होगा। लेकिन, इस ख़बर पर उसने कुछ ज़्यादा विश्वास नहीं किया। फिर भी, इस बात का कि पादरी ने सच कहा था, उस समय उसे विश्वास करना पड़ा जब—कुछेक दिन बाद—ख़ुद पान्तेलेई येरेमेइच, स्वयं मालेक-आदेल पर सवार, अहाते में जाकर प्रकट हो गया।

पेर्फ़ीश्का दौड़कर अपने मालिक के पास पहुंचा और, रकाब को थामकर उसे उतरने में सहारा देना चाहता ही था कि वह ख़ुद उतर आया, और उसके इर्द-गिर्द विजेता की नज़र से देखते हुए ज़ोरों से चिल्लाकर बोला—"मैंने कहा न था कि मैं मालेक-आदेल को खोज निकालूंगा, और अपने दुश्मनों तथा ख़ुद भाग्य के बावजूद मैंने उसे खोज निकाला!" पेर्फ़ीश्का उसका हाथ चूमने के लिए आगे बढ़ा, लेकिन चेरतोपख़ानोव ने अपने नौकर की स्वामीभक्ति की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। मालेक-आदेल की रास थामे, लम्बे डगों से अपने पीछे पीछे वह उसे अस्तबल की ओर लिवा ले चला। पेर्फ़ीश्का ने, और अधिक ध्यान से, अपने मालिक पर नज़र डाली, और उसका हृदय भारी हो गया। "ओह, एक ही साल में वह कितना दुबला और बूढ़ा हो गया है, और चेहरे पर कितनी कठोरता, भयानकता, छा गयी है!" चाहिए तो यह था कि अब जबकि अपना लक्ष्य उसने प्राप्त कर लिया है, पान्तेलेई येरेमेइच को ख़ुश होना चाहिए, और सचमुच वह ख़ुश था भी... फिर भी पेर्फ़ीश्का का हृदय बैठा जा रहा था, वह एक तरह के डर तक का अनुभव कर रहा था। चेरतोपख़ानोव ने घोड़े को उसकी अपनी पुरानी जगह पर खड़ा कर दिया, उसकी कमर को हल्के-से थपथपाया, और कहा—"हां तो, तुम फिर अपने घर आ गये। और देखो, अब ज़रा संभलकर रहना!" उसी दिन चेरतोपख़ानोव ने अलग-थलग किसान

को जिसके पास अपना कोई घोड़ा नहीं था और जो विश्वसनीय आदमी था, चौकीदार के रूप में रखा, अपने कमरों में फिर से अपने-आपको स्थापित किया, और पहले की भांति रहना शुरू कर दिया।

लेकिन नहीं, एकदम पहले की भांति नहीं... पर इसके बारे में बाद में।

अपनी वापसी के अगले दिन पान्तेलेई येरेमेइच ने पेर्फ़ीश्का को भीतर अपने पास बुलाया, और बातें करने के लिए और कोई न होने के कारण, उसे बताना शुरू किया–बिलाशक, अपने रोब तथा अपनी गहरी आवाज़ को बरकरार रखते हुए–कि मालेक-आदेल को खोजने में वह कैसे सफल हुआ। चेरतोपखानोव, अपनी कहानी को बताते समय, खिड़की की ओर मुंह किये बैठा था, और लम्बी नलीवाला पाइप पी रहा था, जबकि पेर्फ़ीश्का चौखट के पास खड़ा था, अपने हाथों को पीठ के पीछे किये और सम्मान की भावना के साथ अपने मालिक के सिर के पृष्ठ-भाग को देखते हुए। उसने सुना कि किस प्रकार, अनेक निष्फल प्रयासों तथा अभियानों के बाद, पान्तेलेई येरेमेइच आख़िर रोम्नी के मेले में पहुंचा, ख़ुद अपने-आप, बिना उस यहूदी लेइबा के जो, अपने चरित्र की कमज़ोरी के कारण, डटा नहीं रहा, बल्कि बीच में ही उसे छोड़कर चला गया। पांचवें दिन, जबकि वह वहां से विदा होनेवाला था, आख़िरी बार उसने गाड़ियों की पांतों का चक्कर लगाया और एकदम अचानक, बाड़े से बंधे अन्य तीन घोड़ों के बीच मालेक-आदेल पर उसकी नज़र जा पड़ी। ओह कैसे, एकदम देखते ही, उसने उसे पहचान लिया, और कैसे मालेक-आदेल ने भी उसे पहचाना, और उसने हिनहिनाना, अपनी रस्सी को खींचना और अपने खुर से धरती को खोदना शुरू कर दिया!

"और वह कज़ाक के साथ नहीं था," चेरतोपखानोव उसी धीमी गहरी आवाज़ में कहता गया, बिना अपने सिर को मोड़े, "बल्कि घोड़ों के एक जिप्सी सट्टेबाज के साथ था। मैंने बिलाशक, अपने घोड़े को थामा, और खींचकर उसे ले जाने का प्रयत्न किया, लेकिन वह जंगली जिप्सी

इस तरह चिल्लाने लगा जैसे लपटों से झुलसा जा रहा हो। सारे बाज़ार को उसने सिर पर उठा लिया, और क़समें खानी शुरू कीं कि एक अन्य जिप्सी से उसने इसे ख़रीदा है, और इसे सिद्ध करने के लिए गवाहों को ले आने की गुहार मचायी... मैंने थूका, और उसे—जहन्नुमी कहीं का—धन अदा कर दिया। मुझे अन्य पचड़ों से क्या मतलब मेरा दुलारा मुझे मिल गया था, और मेरा मन अब शान्त हो गया था। इसके अलावा, कराचेव ज़िले में, एक आदमी को मैं वही कज़ाक समझ बैठा—यहूदी लेइबा के शब्दों का मैंने भरोसा किया कि वही मेरे घोड़े का चोर है—और उसका मुंह तोड़कर रख दिया। लेकिन वह कज़ाक पादरी का लड़का निकला, और बतौर क्षतिपूर्ति एक सौ बीस रूबल उसने मुझसे रखवा लिये। हां तो, धन एक ऐसी चीज़ है जो फिर भी आ सकती है, लेकिन सबसे मुख्य बात तो यह थी कि मुझे मेरा मालेक-आदेल वापिस मिल गया था। मैं अब ख़ुश हूं—शान्ति के साथ अब मैं सुख से रहूंगा। और तुम्हारे लिए, पेर्फ़ीश्का मेरा एक आदेश है—अगर कभी भी तुम्हें—ख़ुदा न करे—आस-पास कहीं वह कज़ाक दिखाई पड़ जाय, तो उसी क्षण बिना एक शब्द कहे दौड़कर जाना और मेरी बन्दूक़ लाकर मुझे दे देना। फिर मैं अपने-आप देख लूंगा कि क्या करना चाहिए।"

इस प्रकार पान्तेलेई येरेमेइच ने पेर्फ़ीश्का से कहा, इस प्रकार, इन शब्दों में उसकी ज़बान ने अपने-आपको व्यक्त किया। लेकिन अपने हृदय में वह उतना शान्त नहीं था जितना कि उसने घोषित किया था।

अफ़सोस! अपने हृदय के अन्तर्तम में उसे इस बात का पूर्ण विश्वास नहीं था कि जो घोड़ा वह लाया है, वह सचमुच में मालेक-आदेल ही है!

१०

पान्तेलेई येरेमेइच के लिए मुसीबतों के दिन शुरू हो गये। उसकी आत्मा को शान्ति तो बिल्कुल ही नहीं थी। यह सच है कि कुछ दिन उसके सुखद भी रहे, उसके मन का सन्देह उसे निराधार मालूम होता

ग्रौर उस हास्यास्पद ख़याल को – वह ज़िद्दी मक्खी की भांति – मन से निकाल बाहर करता अपने पर हंसता भी। लेकिन बुरे दिन भी उसे देखने पड़ते – वह चमचीचड़ ख़याल उसके हृदय को भीतर ही भीतर फिर नोचने ग्रौर कुरेदने लगता, फ़र्श के नीचे घुसे चूहे की भांति, ग्रौर गुप्त यंत्रणा में उसके दिन कटते। उस स्मरणीय दिन जब चेरतोपखानोव ने मालेक-ग्रादेल को खोज निकाला था निरे हार्दिक ग्रानन्द का उसने अनुभव किया था। लेकिन अगली सुबह उस समय जब सराय के नीची छतवाले सायबान में फिर से प्राप्त अपनी ग्रांखों के तारे को – जिसकी बग़ल में उसने सारी रात बितायी थी – उसने उसकी पीठ पर ज़ीन लगानी शुरू की, तब पहली बार एक गुप्त कसक का उसने अनुभव किया... उसने केवल अपने सिर को झटका दिया, लेकिन बीज पड़ चुका था। घर की यात्रा के दौरान में (पूरे सात दिन में जो सम्पूर्ण हुई) सन्देहों ने विरले ही उसके मन में कभी सिर उठाया हो। लेकिन जैसे ही वह बेस्सोनोवो पहुंचा, जैसे ही वह घर में उस जगह पहुंचा जहां पहलेवाला असल मालेक-ग्रादेल रहता था, वैसे ही वे अधिक सबल ग्रौर अधिक सुस्पष्ट हो उठे। शान्त, झूमती हुई चाल से, चारों दिशाग्रों में नज़र फेंकते ग्रौर अपने छोटे पाइप पर कश लगाते हुए उसने घर का रास्ता पार किया था, चिन्ता से सर्वथा मुक्त, सिवा एक ख़याल के जो कभी कभी उसके मन में ग्रा जाता था कि "जब चेरतोपखानोव परिवार के लोगों का दिल किसी चीज़ पर ग्रा जाय तो चाहे जो शर्त बद लीजिये, वे उसे पाकर रहते हैं!" ग्रौर वह मुसकरा उठता। लेकिन घर वापिस लौटने पर स्थिति ने एक बहुत ही भिन्न रूप धारण कर लिया। लेकिन, यह सब वह अपने तक ही रखता था। उसका दम्भ ही उसे अपने ग्रान्तरिक भय को मुंह से निकालने से रोके रहता। अगर कोई अत्यन्त अस्पष्ट रूप में भी इस बात का संकेत करता कि नया मालेक-ग्रादेल सम्भवत: पहलेवाला नहीं है, तो वह उसके टुकड़ टुकड़े कर

डालता। अपने घोड़े को फिर से पाने में सफलता प्राप्त करने के लिए उसने बधाइयां स्वीकार कीं, उन गिनेचुने लोगों से जिनसे मिलने का उसे संयोग हुआ। लेकिन वह ऐसी बधाइयों का आकांक्षी नहीं था, सदा की भांति वह लोगों से किसी भी प्रकार का सम्पर्क रखने से परहेज़ करता था—जो कि एक बुरा चिन्ह था! वह, क़रीब क़रीब हमेशा—अगर ऐसा कहा जा सके तो—मालेक-आदेल की परीक्षाएं लेता रहता। वह उसपर सवार होता और खुले खेत में दूर किसी स्थल पर उसे ले जाता, और उसे कसौटी पर परखता, या चोरी-छिपे अस्तबल जाता, भीतर से ताला बंद कर देता, और ठीक घोड़े के सिर के सामने खड़े होकर उसकी आंखों में देखता, और फुसफुसाकर उससे पूछता—"तुम्हीं हो न? तुम्हीं? तुम्हीं?" या फिर चुपचाप और इरादतन लगातार घंटों तक उसे ताकता रहता, और इसके बाद, प्रसन्नता से खिलकर बुदबुदाता—"हां, यह वही है! बेशक, वही है!" या फ़िर चेहरे पर एक हैरानी का, यहां तक कि परेशानी का भी, भाव लिये बाहर निकल आता।

दोनों घोड़ों के आकार-प्रकार में जहां कहीं कोई भेद था तो उसे देखकर चेरतोपखानोव को ऐसी कुछ ज्यादा परेशानी नहीं थी... हालांकि इस तरह के कई-एक भेद मौजूद थे—यह कि पहलेवाले की पूंछ और अयाल के बाल थोड़ा अधिक हल्के थे, उसके कान अधिक नोकदार, टखने अधिक छोटे और उसकी आंखें अधिक चमकदार थीं—लेकिन यह सब तो केवल भ्रम भी हो सकता था। उसे जो चीज़ सबसे ज़्यादा उलझन में डालती थी वह थी, जैसा कि कहते हैं नैतिक भेद। उसकी आदतें भिन्न थीं, उसके तमाम तौर-तरीक़े उस जैसे नहीं थे। मिसाल के लिए मालेक-आदेल, जब भी चेरतोपखानोव अस्तबल में जाता, हर बार घूमकर देखता और हल्के-से हिनहिनाता; जबकि यह घास को चबाता रहता है, मानो कुछ हुआ ही न हो, या अपना सिर लटकाये ऊंघता रहता है। दोनों ही, उस समय जब उनका मालिक ज़ीन पर से उतरता था, थिर खड़े

रहते थे; लेकिन वह उसकी आवाज़ पर फ़ौरन चला आता था जब उसे पुकारा जाता था, जबकि यह पत्थर के बुत की भांति खड़ा रहता है। वह दौड़ता इतना ही तेज़ था, लेकिन अधिक ऊंची और लम्बी छलांगें भरता हुआ, जबकि यह अधिक आज़ादाना डगों से और अधिक झटके देनेवाली दुलकी चाल से चलता है, और कभी कभी अपने खुरों से 'मुरकियां' लेता है—अर्थात् पिछलों को अगलों से टकराता है। उसने—खुदा न करे—कभी इस तरह की लज्जास्पद हरकत नहीं की। चेरतोपखानोव को लगता बराबर अपने कानों को कसमसाता रहता है, बहुत ही मूर्खतापूर्ण ढंग से, जबकि उसके साथ इससे एकदम उलटा था—वह एक कान को पीछे कर लेता था, और इसी स्थिति में उसे रखता था, मानो अपने मालिक के लिए चौकस हो। वह, जैसे ही वह देखता कि इधर-उधर गोबर फैला है, फ़ौरन अपनी पिछली टांग से अपने कटघरे के पार्टीशन पर खटखट करता, जबकि इसके कान पर जूं तक नहीं रेंगती, चाहे लीद का ढेर उसके पेट तक ऊंचा क्यों न जमा कर दिया जाय। उसे, मिसाल के लिए, अगर हवा के खिलाफ़ मुंह कर दिया जाता तो गहरी सांसें लेता और अपने-आपको हिलाता, जबकि यह केवल नथुनों से फुंकार छोड़ता है। वह सीलन से बेचैन होता, इसे जैसे इसकी कोई सुध नहीं... यह औघड़ जानवर है—कहीं अधिक औघड़! और इसमें वह कोमलता नहीं थी, बड़ा मुंहज़ोर था, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। वह घोड़ा आंखों का तारा था, और यह...

यही सब कभी कभी चेरतोपखानोव सोचता और इस तरह के ख़याल उसके लिए अत्यन्त कटु होते थे। कभी कभी वह अपने घोड़े को किसी नये जोते हुए खेत में पूरी तरह सरपट छोड़ देता, या उसे किसी खोखले खड्ड की एकदम तलहटी में कूदने और सबसे गहरे स्थल से उछलकर फिर बाहर निकल आने की मुहिम में डालता, और उसका हृदय आनन्दातिरेक से थरथराता, एक ज़ोरों की 'हुप' उसके मुंह से निकलती।

उसे पता चल जाता, निश्चित रूप से यक़ीन हो जाता कि यह असली, प्रामाणिक मालेक-आदेल ही है जिसपर वह सवार है। नहीं तो फिर अन्य किस घोड़े में यह सब करने की सकत है जो कि यह कर रहा है!

लेकिन, कभी कभी, त्रुटियां और दुर्भाग्य यहां भी पीछा न छोड़ते। मालेक-आदेल की सुदीर्घ खोज चेरतोपखानोव के लिए बहुत महंगी पड़ी थी – भारी रक़म इसमें ख़र्च हो गयी थी। कोस्त्रोमा के शिकारी कुत्ते रखने के अब वह सपने तक नहीं देख सकता था, और पहले की भांति अकेला आसपास के इलाक़े में सवारी करता था। सो एक दिन सुबह, बेस्सोनोवो से तीन-एक मील दूर, संयोगवश चेरतोपखानोव की उसी राजकुमार की शिकार-मण्डली से भेंट हो गयी जिसके सामने, डेढ़-एक साल पहले, इतने विजयी ठाठ के साथ वह पेश आया था। और, भाग्य की बात तो देखो, ठीक उसी दिन की भांति पहाड़ी ढलुवान के नीचे झाड़ी में से उछलकर एक ख़रगोश बाहर लपका – कुत्तों के आगे आगे। पकड़ो! पकड़ो! पूरी शिकार-मण्डली ने हवा की भांति उसका पीछा किया, चेरतोपखानोव भी लपका, लेकिन बाक़ी मण्डली की संगत में नहीं, बल्कि एक बाज़ू, उससे दो सौ डग हटकर, ठीक वैसे ही जैसे कि उसने पहली बार किया था। पानी का एक भीमाकार झरना, बल खाता, पहाड़ी ढलुवान के बीच बह रहा था और ऊंचाई के रुख, क्रमश: अधिकाधिक सकरा होता गया था। वह चेरतोपखानोव के रास्ते को काटता था। उस स्थल पर जहां छलांग मारकर उसे वह पार करना चाहता था और जहां, अठारह महीने पहले, सचमुच में उसने इसे पार किया था, यह अभी भी आठ फ़ुट चौड़ा तथा चौदह फ़ुट गहरा था। विजय की पूर्व-कल्पना कर – उस विजय की जिसकी इतनी आह्लादपूर्ण पुनरावृत्ति हो रही थी – चेरतोपखानोव हुलसकर मुंह ही मुंह हंसा, अपने चाबुक को चटकारते हुए। शिकार-मण्डली भी सरपट दौड़ रही थी, अपनी

आंखों को दुःसाहसी घुड़सवार पर जमाये। उसका घोड़ा गोली की भांति सनसनाता हुआ लपका, और नाला अब ठीक उसकी नाक के नीचे था— अब, अब, पहले की भांति एक छलांग लगाने की देर थी! लेकिन मालेक-आदेल एकदम चमका, बाईं ओर घूमा और बावजूद इसके कि चेरतोपखानोव उसे कगारे की ओर, नाले की ओर खींच रहा था, वह खड्ड के किनारे किनारे, सरपट दौड़ चला।

तो वह कायर साबित हुआ; उसे अपने पर भरोसा नहीं था।

इसके बाद चेरतोपखानोव ने, शर्म तथा ग़ुस्से से जलते हुए, लगभग रोने की हालत में, रासों को ढीला छोड़ दिया और घोड़े को सीधे सामने चढ़ाव की ओर, शिकार-मण्डली से दूर—बहुत दूर—तेज़ी से ले चला, अगर और किसी बात के लिए नहीं तो केवल इसी लिए कि उनके खिल्ली उड़ाने की आवाज़ उसके कानों तक न पहुंच सके, उनकी बदबख़्त नज़रों की पकड़ से वह अपने-आप को बचा सके।

बुरी तरह झाग से लथपथ, चाबुक की बेरहम बौछारों को अपनी पीठ पर सहता, मालेक-आदेल सरपट घर पहुंचा, और चेरतोपखानोव ने फ़ौरन कमरे में अपने-आपको बंद कर लिया।

"नहीं, यह वह नहीं है, यह मेरा दुलारा नहीं है! वह अपनी जान से भले ही हाथ धो बैठता, पर मेरे साथ यों विश्वासघात न करता!"

११

और जिस परिस्थिति ने, जैसा कि कहते हैं, अन्तिम रूप से चेरतोपखानोव को 'चित्त' कर दिया, वह इस प्रकार थी। एक दिन, मालेक-आदेल पर सवार, इलाक़े के गिरजे के इर्द-गिर्द—बेस्सोनोवो इसी के अन्तर्गत था—वह पादरियों के क्वार्टरों के पिछवाड़े घूम रहा था। अपनी कज़ाक रोएंदार टोपी को नीचे आंखों के ऊपर तक खींचे,

गुड़गुड़ी-सा बना, अपने हाथों को ज़ीन की कमान पर ढीला लटकाये हृदय में कुछ कुछ बेचैनी महसूस करते हुए वह धीरे धीरे टुरक रहा था। सहसा किसी ने उसे पुकारा।

उसने अपने घोड़े को रोका, अपना सिर उठाया, और उस पादरी पर उसकी नज़र पड़ी जिस के साथ उसका व्यावहारिक सम्बन्ध रहता था। अपने भूरे बालों पर जो पीछे की ओर एक टुंटी चोटी में गुंथे थे, एक भूरी टोपी रखे, पीले-से रंग का नानकिन का लम्बा कोट पहने जिसके ऊपर, कमर से काफ़ी नीचे, नीले कपड़े की पट्टी की एक पेटी कसी थी, देववेदी का यह सेवक पिछवाड़े के अपने बग़ीचे में टहल रहा था। पान्तेलेई येरेमेइच पर नज़र पड़ते ही उसके प्रति सम्मान प्रकट करना उसने अपना कर्त्तव्य समझा, यह सोचकर कि ऐसा करने के इस अवसर से लाभ उठाते हुए, किसी कृपा के लिए भी वह उससे मनुहार करेगा। हम जानते हैं कि इस तरह के किसी गुप्त उद्देश्य के बिना, धर्म-जगत् के लोग इस दुनिया के लोगों को संबोधित नहीं करते।

लेकिन चेरतोपखानोव पादरी से मिलने के मूड में नहीं था। उसने पादरी के नमस्कार का यों ही-सा जवाब दिया और दांतों के बीच से कुछ बुदबुदाते हुए अपने चाबुक को उसने चटकारना शुरू भी कर दिया था कि तभी...

"कितना शानदार है आपका यह घोड़ा!" पादरी ने उतावली के साथ जोड़ा, "और सचमुच, इसके लिए आप अपने पर बजा गर्व कर सकते हैं। सचमुच, आप अद्‌भुत चातुर्य के धनी हैं, एकदम सिंह राशि, इसमें शक नहीं।"

धर्मप्राण पादरी अपनी वाक्पटुता के लिए प्रसिद्ध था। यह बात धर्मप्राण बड़े पादरी के लिए भारी परेशानी का स्रोत था जिसे विधाता ने शब्दों का धनी नहीं बनाया था–वोद्का तक से उसकी ज़ुबान नहीं खुल पाती थी।

"दुष्ट लोगों की चालाकी द्वारा एक जानवर से हाथ धोने के बाद," पादरी कहता गया, "उसके दुःख में आपने हिम्मत नहीं हारी, बल्कि —इसके प्रतिकूल—और भी अधिक विश्वास के साथ ईश्वरीय सत्ता में भरोसा करते हुए अपने लिए एक अन्य जानवर आपने प्राप्त किया, जो किसी तरह भी पहलेवाले से हेय नहीं है, बल्कि—कहना चाहिए कि—उससे बढ़कर है, क्योंकि..."

"क्या फ़िज़ूल की बात करते हो?" चेरतोपखानोव ने उदास भाव से बीच में टोका। "दूसरे घोड़े से तुम्हारा क्या मतलब है? यह वही तो है, वही मालेक-आदेल... मैंने उसे खोज निकाला है। लेकिन तुम हो कि जो मुंह में आया, बक दिया!"

"अये, अये, अये!" पादरी ने जवाब में विलम्बित स्वर अलापा, निश्चयात्मक अन्दाज़ में, उंगलियों से अपनी दाढ़ी को भीतर से ठकोरते और अपनी उजली उत्सुक आंखों से चेरतोपखानोव की ओर देखते हुए, "यह कैसे हो सकता है, श्रीमान? आपका घोड़ा, ख़ुदा मेरी स्मृति को सलामत रखे, पिछले साल इंटरसेशन के कोई पन्द्रह दिन बाद चोरी हो गया था, और अब नवम्बर का महीना ख़त्म हो रहा है।"

"तो इससे क्या?"

पादरी अभी भी अपनी दाढ़ी में उंगलियां नचा रहा था।

"क्यों, इसका मतलब यह कि तब से अब तक एक साल से भी अधिक गुज़र चुका है, और तब—ठीक जैसा कि अब है—आपका घोड़ा चितकबरा भूरे रंग का था—सच पूछो तो, वह अब और भी गहरा मालूम होता है। सो कैसे? भूरे घोड़ों का रंग तो साल-भर में काफ़ी हल्का पड़ जाता है..."

चेरतोपखानोव चौंका... मानो किसी ने उसके हृदय को खंजर से बींध दिया हो। यह सच था—भूरा रंग बदल जाता है। यह कैसे हुआ कि यह सीधी-सी बात पहले कभी उसके दिमाग़ में नहीं आयी?

"मेरी जान न खाश्रो! कमबख़्त सूश्रर की पूंछ!" सहसा वह चिल्लाया, श्रांखों से गुस्से की चिंगारियां निकलने लगीं श्रौर पलक झपकते न झपकते चकित पादरी की श्रांखों से श्रोझल हो गया।

तो श्रब कुछ शेष नहीं रहा था!

श्रब, श्राख़िर, सचमुच कुछ भी शेष नहीं रहा था, हर चीज़ चकनाचूर हो गयी थी, श्राख़िरी पासा पड़ चुका था। हर चीज़ श्रानन-फ़ानन ढह गयी, एक 'हल्का' शब्द के सामने।

भूरे घोड़ों का रंग हल्का पड़ जाता है।

"चल, सरपट चल, बदबख़्त जानवर! लेकिन इस सत्य से तू कभी पीछा नहीं छुड़ा सकेगा!"

चेरतोपखानोव हवा की तरह घर लौटा, श्रौर श्रपने-श्रापको उसने फिर श्रपने कमरे में बंद कर लिया।

१२

उसे श्रब तनिक भी शक नहीं था कि यह टुकड़ियल बेदम घोड़ा मालेक-श्रादेल नहीं है, कि उसमें श्रौर मालेक-श्रादेल में ज़रा-सी भी समानता नहीं है, कि कोई भी श्रादमी जिसमें ज़रा भी समझबूझ है पहले क्षण में ही इस बात को भांप लेगा, कि वह चेरतोपखानोव, निहायत बेहूदा ढंग से ठगा गया – नहीं, बल्कि उसने जानबूझकर, निश्चित इरादे से, श्रपने-श्रापको ठगा, खुद श्रपनी श्रांखों पर पर्दा डाला – इस सबके बारे में श्रब उसे हल्का-सा भी सन्देह नहीं था।

चेरतोपखानोव इस छोर से उस छोर तक, श्रपने कमरे को नाप रहा था, प्रत्येक दीवार के श्राने पर एड़ियों के बल एक ही तरह घूमते हुए, पिंजड़े में बंद वन्य जीव की भांति। उसका स्वाभिमान श्रसह्य वेदना का श्रनुभव कर रहा था; लेकिन वह केवल श्राहत-स्वाभिमान से

ही पीड़ित नहीं था, बल्कि निराशा ने भी उसे अभिभूत कर लिया था, ग़ुस्से से उसका गला रुंधा था और प्रतिशोध की आग में वह जल रहा था। लेकिन ग़ुस्सा वह किस पर उतारे? किससे वह बदला ले? यहूदी से, याफ़ से, माशा से, पादरी से, कज़ाक-चोर से, अपने तमाम पड़ोसियों से, समूची दुनिया से, ख़ुद अपने-आप से? उसका दिमाग़ जवाब दे रहा था। आख़िरी पासा पड़ चुका था! (इस उपमा से वह सन्तुष्ट हुआ।) वह अब फिर अत्यन्त निकम्मा, अत्यन्त हेय जीव बन गया था–सबकी हंसी का पात्र, रंगबिरंगा विदूषक, एक बदबख़्त मूर्ख, और एक पादरी की फ़ब्तियों का निशाना! उसने कल्पना की, सुस्पष्ट चित्र उसने मूर्त किया, कि सूअर की पूंछनुमा चोटीवाला वह घृणित पादरी किस प्रकार भूरे रंग के घोड़े और मूर्ख श्रीमन्त की कहानी का प्रचार करेगा। ओह, भाड़ में जाय सब! चेरतोपखानोव ने अपने उमड़ते हुए उद्वेग को रोकने की कोशिश की, लेकिन बेकार, और बेकार ही उसने अपने को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि यह... यह घोड़ा, हालांकि मालेक-आदेल नहीं था, फिर भी... एक अच्छा घोड़ा था, और अभी भी कितने ही सालों तक वह काम दे सकता था। इस ख़याल को, ग़ुस्से के साथ, उसने वहीं के वहीं खदेड़कर अलग कर दिया, मानो इसमें उस मालेक-आदेल के लिए जिसे वह, अपनी समझ से, पहले ही काफ़ी आहत कर चुका था, कोई नया अपमान निहित हो... और सच, इसमें शक नहीं! इस मरियल को, इस मुर्दे को, उसने–एक अंधे मूर्ख की भांति–उसके, मालेक-आदेल के–समकक्ष रखा! और यह बात कि वह उससे काम ले सकता है... मानो वह कभी उसपर सवार होने की कृपा करेगा? कभी नहीं! किसी हालत में भी नहीं! कुत्ते के मांस के बदले किसी तातार के हाथ वह उसे बेच देगा–यह इसी योग्य है... हां, यह सबसे अच्छा रहेगा।.

दो घंटे से अधिक समय तक चेरतोपखानोव अपने कमरे के अन्दर घूमता रहा।

"पेर्फ़ीश्का!" अचानक निश्चयात्मक आवाज़ में वह चिल्लाया, "इसी क्षण लपककर शराबख़ाने में जाओ, और एक गैलन वोद्का ले आओ! सुन रहा है न? एक गैलन, और ज़रा फुर्ती से! मैं इसी क्षण यहां, इस मेज़ पर, वोद्का चाहता हूं!"

पान्तेलेई येरेमेइच की मेज़ पर वोद्का के नमूदार होने में देर नहीं लगी, और उसने पीना शुरू कर दिया!

१३

अगर उस समय चेरतोपख़ानोव को कोई देखता, अगर कोई उसकी उस विक्षुब्ध उद्विग्नता का साक्षी होता जिससे कि वह एक के बाद एक गिलास ख़ाली कर रहा था, तो वह अदबदाकर अपने-आप भय से कांप उठता। रात घिर आयी थी। मोम की बत्ती मेज़ पर धुंधली जल रही थी। चेरतोपख़ानोव ने इस छोर से इस छोर तक मंडराना बंद कर दिया था। वह, ऊपर से नीचे तक, भभूका बना बैठा था। उसकी आंखें धुंधलायी थीं, जिन्हें कभी वह फ़र्श पर और कभी अंधियाली खिड़की पर हठपूर्वक जमा लेता था। वह उठा, कुछ वोद्का उंडेली, उसे गले के नीचे उतारा, फिर बैठ गया, फिर एक स्थल पर अपनी आंखें जमायीं, और थिर हो गया—केवल उसके सांस की गति में तेज़ी थी और उसका चेहरा अधिक तमतमा उठा था; ऐसा मालूम होता था जैसे कोई निश्चय उसके भीतर ही भीतर पक रहा हो, ऐसा जिससे वह ख़ुद शरमा रहा था, लेकिन जिसका वह क्रमशः आदी होता जा रहा था। केवल एक विचार हठपूर्वक और बिना डिगे, उसके अधिकाधिक निकट आता जा रहा था, केवल एक चित्र अधिकाधिक स्पष्ट रूप में उभर रहा था, और भारी ज्वलन्त नशे के नीचे क्रुद्ध चिड़चिड़ाहट के स्थान पर अब हिंसक भावना उसके हृदय में घर कर रही थी, और एक प्रतिशोधपूर्ण मुसकान उसके होंठों पर उभर रही थी...

"हां, तो समय आ गया," उसने यथातथ्य, क़रीब क़रीब थके हुए लहजे में, घोषणा की। "मुझे अब काम में जुटना चाहिए।"

उसने वोद्का का आख़िरी गिलास ख़ाली किया, अपने बिस्तर के ऊपर से पिस्तौल उठाया – वही जिससे उसने माशा पर गोली दाग़ी थी – उसे भरा, कुछ कारतूस अपनी जेब में डाले – कौन जाने क्या ज़रूरत पड़ जाय – और अस्तबल की ओर चल दिया।

उसने दरवाज़ा खोलना शुरू किया ही था कि चौकीदार दौड़ा हुआ उसके पास पहुंचा, लेकिन उसने उसे दुत्कार दिया – "मैं हूं क्या दिखता नहीं? दफ़ा हो यहां सें!" चौकीदार थोड़ा एक ओर हट गया। "दफ़ा हो यहां से और जाकर सो जा!" चेरतोपखानोव फिर उसपर चिल्लाया – "यहां तेरे चौकीदारी करने के लिए कुछ नहीं है! कौनसा अजूबा है यहां चौकीदारी करने के लिए कौनसा ख़ज़ाना गड़ा है!" उसने अस्तबल में प्रवेश किया। मालेक-आदेल... नक़ली मालेक-आदेल, पुआल के अपने बिछौने पर पड़ा था। चेरतोपखानोव ने उसके एक ठोकर लगायी, यह कहते हुए – "खड़ा हो, जंगली कहीं का!" इसके बाद उसने कील से अटकी बाग निकाली, घोड़े का जामा उतारा और उसे फ़र्श पर फेंक दिया, और रुखेपन के साथ विनत घोड़े को कटघरे में घुमाकर मोड़ते हुए उसे बाहर अहाते में निकाल लाया, और अहाते से खुले खेत की ओर ले चला। चौकीदार भारी अचरज में पड़ा। वह क़तई नहीं समझ पा रहा था कि बिना ज़ीन के घोड़े को अपने साथ लिये रात के इस समय उसका मालिक कहां जा रहा है। उससे, कहने की आवश्यकता नहीं, कुछ पूछते डर लगता था। वह केवल अपनी आंखों से उसका अनुसरण करता रहा, जब तक कि वह सड़क के उस मोड़ पर जो पास के एक जंगल की ओर जाता था, नज़र से ओझल नहीं हो गया।

१४

चेरतोपखानोव लम्बे डग भर रहा था, बिना रुके और बिना मुड़कर देखे। मालेक-आदेल – अन्त तक हम उसे इसी नाम से पुकारेंगे – मेमने की भांति उसका अनुसरण कर रहा था। रात अपेक्षाकृत निर्मल थी।

चेरतोपखानोव जंगल की असम वाह्य-रेखा को पहचान सकता था जो काले समूह की भांति सामने दिखाई दे रही थी। रात की ठंडी हवा में प्रवेश करने पर निश्चय ही वोद्का का नशा तेज़ हो जाता अगर एक दूसरा, उससे भी ज्यादा जबर, नशा उसे पूर्णतया अभिभूत न किये होता। उसका सिर भारी था, उसका रक्त उसके कानों और गले में धक धक कर रहा था, लेकिन वह अडिग गति से बढ़े जा रहा था, और वह जानता था कि वह कहां जा रहा है।

उसने मालेक-आदेल को मार डालने का निश्चय किया था। समूचे दिन सिवा इसके और कुछ उसने नहीं सोचा था। और अब उसका मन निश्चय पर पहुंच चुका था।

और इस काम को करने के लिए वह बाहर केवल शान्ति के साथ, बल्कि विश्वास के साथ निकल आया था, बिना किसी अचकचाहट के, उस आदमी की भांति जो किसी चीज़ को अपना कर्त्तव्य समझकर करने जा रहा हो। यह 'काम' उसे बहुत ही 'सरल' मालूम होता था, एक धोखेबाज़ का अन्त करके एकबारगी 'सभी कुछ' निबट जायेगा—अपनी मूर्खता के लिए उसे दण्ड मिल जायेगा, अपने असली दुलारे के प्रति किये गये अपमान का परिमार्जन हो जायेगा और समूची दुनिया के सामने यह प्रकट हो जायेगा कि ('समूची दुनिया' का फ़िक्र चेरतोपखानोव को अत्यधिक चिन्तित किया करता था) वह ऐसा नहीं है जिसके साथ खेलवाड़ किया जा सके... और वह खुद भी मरने जा रहा था, इस कपटी के साथ अपना भी अन्त करने—क्योंकि अब वह जिये तो किस लिए? किस प्रकार इस सबने उसके मस्तिष्क में आकार ग्रहण किया, और क्यों उसे यह इतना सरल मालूम होता था, यह बताना सहज नहीं है, हालांकि एकदम असम्भव भी नहीं है। बुरी तरह मर्माहत, एकाकी, पास में कोई इन्सान तक नहीं—बिना संगी-साथी और बिना फूटी कौड़ी के, और खुद वोद्का की आग में लपलपाता हुआ—वह पागलपन की सीमा तक जा पहुंचा

था, और इसमें शक नहीं कि पागलों की बेहूदा से बेहूदा सनक में भी, उनकी नज़र से, एक तरह का संगति का – बल्कि कहना चाहिए कि न्याय का– समावेश होता है। न्याय का जहां तक संबंध था, कमोबेश रूप में, चेरतोपखानोव पूर्णतया आश्वस्त था। उसे कोई दुविधा नहीं थी और अपराधी को सज़ा देने के लिए वह तुरंत चल पड़ा, इस बात की अपने सामने कोई सुस्पष्ट व्याख्या किये बिना कि इस शब्द से उसका क्या अभिप्राय है – कौन है वह जिसे वह अपराधी समझता है। सच तो यह है कि उसने इसपर बहुत ही कम सोचा था कि वह क्या करने जा रहा है। "ज़रूर, ज़रूर, मैं ज़रूर अन्त करूंगा," हठपूर्वक और कठोरता के साथ इसी को वह अपने मन में दोहरा रहा था, "ज़रूर मुझे अन्त करना होगा।"

और निरपराध अपराधी, विनत दुलकी चाल से, उसके पीछे पीछे चल रहा था। लेकिन चेरतोपखानोव के हृदय में उसके लिए ज़रा भी तरस नहीं था।

१५

जंगल के अन्दर एक खुली जगह से थोड़ी ही दूर जहां वह अपने घोड़े को लिवा ले जा रहा था, एक छोटी-सी घाटी थी। बलूत की किशोर झाड़ियां उसे आधा घेरे थीं। चेरतोपखानोव उसमें उतर चला। मालेक-आदेल ने ठोकर खायी और क़रीब था कि उसके ऊपर ही आ गिरता।

"सो तुम मुझे कुचल डालोगे, क्यों, नासखेत वहशी!" चेरतोपखानोव चिल्लाया और, जैसे अपना बचाव करने के लिए, उसने अपनी जेब में से पिस्तौल बाहर खींच लिया। क्रुद्ध उत्तेजना का वह अब अनुभव नहीं कर रहा था, बल्कि एक ख़ास बेहिसी उसकी इंद्रियों में समायी थी जो, कहते हैं कि, अपराध करने से पहले आदमी पर छा जाती है। लेकिन वह खुद अपनी आवाज़ से भयभीत हो उठा – वन्य घाटी की घनी, सड़ांध-भरी

सीलन में काली टहनियों के आच्छादन के नीचे वह इतनी वहशियाना और अजीब मालूम हो रही थी! इसके अलावा, उसकी चिल्लाहट के जवाब में, उसके सिर के ऊपर किसी पेड़ की छत पर कोई बड़ा पक्षी अचानक फड़फड़ा उठा... चेरतोपखानोव कांपा। उसने, जैसे, अपने कृत्य के एक साक्षी को चौकस कर दिया था – सो भी कहां? उस निस्तब्ध जगह में जहां कोई भी जीवित प्राणी उसे नहीं दिखाई पड़ना चाहिए था...

"दफ़ा हो, शैतान, जिस दिशा में भी हवा तुझे ले जाय!" वह बुदबुदाया, और मालेक-आदेल की बाग को छोड़ते हुए, पिस्तौल के पिछले हिस्से से उसने उसके कंधे पर ज़ोरों से आघात किया। मालेक-आदेल तुरंत उलटा मुड़ा, जैसे-तैसे घाटी से बाहर निकला... और दुलकियाता चल दिया। लेकिन उसके खुरों की चाप अधिक देर तक सुनाई नहीं दी। उमड़ती हुई हवा में सभी आवाज़ें घुलमिल गयी थीं।

चेरतोपखानोव भी, धीरे धीरे, घाटी में से निकला, जंगल में पहुंचा और सड़क के सहारे सहारे घर की ओर चल दिया। वह अपने-आप में बेचैन था। वह बोझ जो उसके मस्तिष्क और हृदय को भारी बनाये था, उसके सभी अंगों में फैल गया था। झुंझलाया हुआ, उदास, असन्तुष्ट और भूख का मारा वह लौट रहा था, जैसे किसी ने उसका अपमान किया हो, उसका शिकार, उसका खाद्य, उससे छीन ले गया हो...

आत्महत्या करनेवाला विफल-मनोरथ होने पर, निश्चय ही इस तरह की उत्तेजना का अनुभव करता होगा।

अचानक किसी चीज़ ने, पीछे से, उसके कंधों के बीच में टहोका दिया। उसने घूमकर देखा... मालेक-आदेल सड़क के बीचोंबीच खड़ा था। वह अपने मालिक के पीछे पीछे चला आ रहा था। अपनी उपस्थिति की घोषणा करने के लिए अपने नथुनों से उसने उसका स्पर्श किया था...

"ओह!" चेरतोपखानोव चिल्लाया, "तुम खुद, तुम अपने-आप, अपनी मौत को भेंटने चले आये। तो यह लो!"

कमिश्नर अपनी बग्घी से बाहर आ गया।

"पादरी को तो कम से कम तुमने बुला भेजा है न? क्या तुम्हारे मालिक अपने गुनाहों को क़बूल कर चुके हैं? प्रायश्चित तो करा दिया है?"

"नहीं, सरकार!"

कमिश्नर ने भौंहें चढ़ायीं।

"सो कैसे, मेरे मुनुवा? यह भला कैसे हो सकता है, जरा बताओ तो? क्या तुम नहीं जानते कि इसके लिए... तुम्हें भारी भुगतान करना पड़ सकता है?"

"इसमें शक नहीं, और उनसे मैंने परसों पूछा था, और कल फिर पूछा था," भय से मारे लड़के ने प्रतिवाद किया, "'अगर आप, पान्तेलेई येरेमेइच,' मैंने कहा, 'मुझे इजाज़त दें तो दौड़कर पादरी को बुला लाऊं, सरकार?' पर उन्होंने कहा, 'तू अपनी ज़ुबान बंद रख, मूर्ख। अपना काम देख!' लेकिन आज, अपने मालिक से जब मैंने बात की तो वह बस देखते रहे, और अपनी मूंछों को उन्होंने फरफराया।"

"और क्या वह बहुत ज़्यादा वोद्का पीते रहे हैं?" कमिश्नर ने पूछा।

"काफ़ी से ज़्यादा! लेकिन, सरकार, बड़ा भला हो अगर आप उनके कमरे में चले चलें।"

"अच्छा तो चलो!" कमिश्नर बड़बड़ाया और पेर्फ़ीश्का के साथ चल दिया।

अन्दर जाकर जो दृश्य उसने अपनी आंखों से देखा उससे वह स्तब्ध रह गया। पीछे के एक सीलन-भरे अंधेरे कमरे में, घोड़े का जामा बिछा था जिसपर एक मनहूस-से बिस्तरे पर, नमदे के एक ख़ुरदरे चोग़े का तकिया लगाये, चेरतोपखानोव पड़ा था। उसका रंग अब सफ़ेद नहीं, हरा-ज़र्द हो गया था, लाश की भांति, चिकनी पलकों के नीचे आंखें गढ़ों में धंसी हुई और, उसकी अस्तव्यस्त मूंछों के ऊपर, पैनी कचोटी

हुई सी नाक – जो अभी भी कुछ लाली लिये थी। वह अपना वही पुराना – कभी न उतरनेवाला – काकेशी कोट पहने लेटा था, वक्ष पर कारतूसों की पट्टी और नीले रंग का काकेशी शलवार। गुलाबी कलगी से युक्त एक कज़ाक टोपी उसके माथे को, ठीक भौंहों तक, ढके थी। एक हाथ में चेरतोपखानोव अपना शिकारवाला चाबुक थामे था, दूसरे में क़सीदा कढ़ा तम्बाकू का बटुवा – माशा का आख़िरी उपहार। बिस्तरे के पास एक मेज़ पर शराब की एक ख़ाली बोतल रखी थी, और बिस्तरे के सिरहाने की ओर दो जलरंग चित्र दीवार में कीलों से जड़े थे। इनमें से एक में, जहां तक पता चलता था, अपने हाथ में गितार लिये एक मोटा-सा आदमी अंकित था। यह सम्भवतः नेदोप्यूस्किन था। दूसरे में एक घोड़सवार चित्रित था जो पूरी तेज़ी के साथ सरपट चाल से लपका जा रहा था। घोड़ा कल्पना-लोक के उन जानवरों की भांति मालूम होता था जो बच्चे दीवारों और बाड़ों पर बनाते रहते हैं, लेकिन उसके बालों का सावधानी के साथ किया गया चितकबरा भूरा रंग और घोड़सवार के वक्ष पर कारतूस रखने की जेबें, उसके जूतों के नुकीले पंजे, और भीमाकार मूछें – सन्देह के लिए कोई गुंजाइश नहीं रह जाती थी कि इस चित्र का अभिप्राय मालेक-आदेल पर सवार पान्तेलेई येरेमेइच को अंकित करना था।

चकित पुलिस कमिश्नर की समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। कमरे में मृत्यु की निस्तब्धता छायी थी। "यह तो पहले ही मर चुका मालूम होता है!" उसने सोचा, और अपनी आवाज़ को ऊंचा करते हुए बोला – "पान्तेलेई येरेमेइच! पान्तेलेई येरेमेइच!"

तभी एक असाधारण घटना घटी। चेरतोपखानोव की आंखों की पलकें उठीं, उसकी आंखें – जो तेज़ी से पथराती जा रही थीं – पहले दाहिनी ओर से बाईं ओर, और फिर बाई से दाहिनी ओर घूमीं, और कमिश्नर पर टिक गयीं – उसे ताकने लगीं... उनकी धुंधली सफ़ेदी में कोई चीज़ थी जो चमक रही थी, लगता था जैसे किसी चीज़ की याद

उनमें कौंध गयी हो, चिपके हुए नीले होंठ धीरे धीरे खुले और एक मरमरी-सी, जैसे क़बर में से आती हुई आवाज़ सुनाई दी।

"प्राचीन पुश्त दर पुश्त से कुलीन पान्तेलेई येरेमेइच मर रहा है – उसे कौन रोक सकता है? उसे किसी का कुछ देना नहीं है, किसी से कुछ मांगना नहीं है... उसे परेशान न करो, लोगो! जाओ, अपना रास्ता देखो!"

चाबुकवाले हाथ को उसने उठाने का प्रयास किया, लेकिन बेकार! होंठ फिर एक-दूसरे से चिपक गये, आंखें मुंद गयीं, और चेरतोपखानोव पहले की भांति अपने अटपटे बिस्तर पर पड़ रहा, ख़ाली बोरे की भांति सपाट, अपने पांवों को कसकर सटाये।

"इसके मरने की मुझे ख़बर देना," कमरे से बाहर निकलते हुए कमिश्नर ने पेर्फ़ीश्का से फुसफुसाकर कहा, "और मेरी समझ में तुम अब पादरी को बुलवा लाओ। तुम्हें विधि-विधान का यथोचित पालन करना चाहिए। और देखो, मृत्यु-समय के इनके अन्तिम संस्कार में क़तई कोई कसर नहीं छोड़ना!"

पेर्फ़ीश्का उसी दिन पादरी को बुलाने के लिए गया, और अगली सुबह उसने कमिश्नर को जाकर ख़बर दी – पान्तेलेई येरेमेइच का रात को देहान्त हो गया।

दफ़नाने के समय, दो आदमी उसके ताबूत के साथ थे – पेर्फ़ीश्का, और मोशेल लेइबा। चेरतोपखानोव के मरने की ख़बर, जाने कैसे यहूदी तक पहुंच गयी थी, और अपने हितैषी के प्रति सम्मान प्रकट करने के इस अन्तिम कृत्य को निभाने से वह नहीं चूका।

जीवित समाधि

ओ जन्म भूमि,
चिर पीड़ित रूसी जनता की धरती!

फ़० त्यूत्चेव

एक फ़्रांसीसी कहावत है कि 'सूखा मछियारा और भीगा हुआ शिकारी दयनीय होते हैं'। मछलियों के शिकार का मुझे कभी शौक़ नहीं रहा, सो मैं यह निश्चय नहीं कर सकता कि बढ़िया उजले मौसम में मछियारे के हृदय पर क्या गुज़रती है, और जब मौसम बुरा हो तो मछलियों की बहुतात से प्राप्त होनेवाली खुशी भीगने की बदमज़गी को किस हद तक पूरा करती है। लेकिन शिकारी के लिए बारिश वास्तव में एक मुसीबत है। येरमोलाई और मैं ऐसी ही एक मुसीबत में फंस गये—उस समय जबकि हम बेलेव ज़िले में ग्राउज़-पक्षियों का शिकार करने निकले थे। बारिश एकदम सुबह से घड़ी-भर के लिए भी नहीं रुकी थी। उससे बचने के लिए क्या कुछ हमने नहीं किया। अपनी बरसातियों को क़रीब क़रीब ठीक सिर के ऊपर तक हमने खींचा, और बारिश की बूंदों से बचने के लिए पेड़ों के नीचे हम जा खड़े हुए। बरसाती कोट—इस बात को छोड़िये कि बन्दूक़ चलाने में वे बाधक होते थे, अत्यन्त निर्लज्जता के साथ पानी को अन्दर घुसने दे रहे थे। पेड़ों के नीचे शुरू शुरू में बारिश निश्चय ही हम तक नहीं पहुंच पाती थी, लेकिन बाद में पत्तियों पर जमा पानी अचानक गिरने लगता, प्रत्येक टहनी हमारे ऊपर पिचकारी-सी छोड़ती,

और एक ठंडी धारा हमारे गुलूबन्दों के नीचे सरसरा जाती और हमारी पीठ पर से बह चलती... यह, येरमोलाई के शब्दों में हद थी।

"नहीं, प्योत्र पेत्रोविच," आख़िर वह चीख़ा – "यों नहीं चलेगा! आज शिकार-विकार कुछ नहीं होना है। बारिश इतनी ज़्यादा है कि कुत्ते अपने शिकार की गन्ध खो बैठते हैं। गोलियां चूक जाती हैं... ओह, क्या मुसीबत है!"

"तो क्या किया जाय?" मैंने पूछा।

"चलो, आलेक्सेयेवका चलें। शायद आप नहीं जानते – इस नाम का एक पुरवा है जो आपकी मां की सम्पत्ति है। यहां से चार-एक मील दूर होगा। रात को हम वहां ठहरेंगे, और कल..."

"फिर यहां लौट आयेंगे?"

"नहीं, यहां नहीं। आलेक्सेयेवका के उधर कुछ स्थानों को मैं जानता हूं... आउज़-पक्षियों के लिए वे यहां से हर घड़ी अच्छी हैं!"

मैंने अपने फ़रमानबरदार साथी से यह सब पूछना-ताछना शुरू नहीं किया कि इन इलाक़ों में वह मुझे पहले क्यों नहीं ले गया। उसी दिन हमने उस पुरवे की राह पकड़ी जो मेरी मां की मिल्कियत था और जिसके अस्तित्व के बारे में, मुझे स्वीकार करना चाहिए, मुझे गुमान तक नहीं था। इस पुरवे में, पता चला, एक छोटा-सा बंगला था। वह बहुत ही पुराना था, लेकिन चूंकि उसमें कोई रहता नहीं था, इसलिए साफ़ था। काफ़ी शान्त रात मैंने उसमें बितायी।

अगले दिन मैं बहुत जल्दी उठ खड़ा हुआ। सूरज अभी निकला ही था। आकाश में एक भी बादल नहीं था। चारों ओर की हर चीज़ दूनी आभा से चमक रही थी। एक तो सुबह की ताज़ा किरनों की उजियाली से, दूसरे कल की बारिश के निखार से। इस बीच जबकि वे मेरे लिए गाड़ी जोत रहे थे, मैं छोटे-से बग़ीचे में टहलने निकल गया। यह अब उपेक्षित पड़ा था और उसमें झाड़-झंखाड़ उग आये थे। इसकी सुगंधित,

रसीली हरियाली बंगले को चारों ओर से घेरे थी। ओह, खुली हवा में, उजले आकाश के नीचे जहां लार्क-पक्षी कूक रहे थे और उनके घंटी जैसे स्वर रुपहले मनकों की भांति नीचे धरती पर बरस रहे थे, कितना प्यारा मालूम होता था! अपने परों पर, शायद, वे ओस की बूंदें वहन किये थे और उनके गीत ओस में भीगे मालूम होते थे। मैंने सिर पर से अपनी टोपी उतारी और एक आह्लादपूर्ण गहरा सांस खींचा। छिछली घाटी के ढलुवान पर, बाड़ के निकट, एक मधुमक्खियों का बाग़ दिखाई दे रहा था और एक सकरा पथ सांप की भांति बल खाता उस तक चला गया था–ऊंची घास और कंटीली झाड़ियों की घनी दीवारों के बीच–जिनके ऊपर, ख़ुदा जाने वे यहां कहां से आये, गहरे हरे सन के नुकीले सरकंडे जूझ रहे थे।

मैं इस पथ पर मुड़ चला। मधुमक्खियों के छत्तों के पास पहुंचा। उनके बराबर में बेंत की बनी छोटी-सी झोंपड़ी थी जिसमें, जाड़ों के दिनों में, छत्तों को रखा जाता था। मैंने अधखुले दरवाज़े में से झांककर देखा। भीतर अंधेरा, चुपचाप और सूखा था। पुदीने और लेप की सुगंध आ रही थी। कोने में कुछ पाटियां एक-दूसरे से जुड़ी थीं और उनके ऊपर, रज़ाई से ढकी, कोई एक छोटी आकृति-सी बैठी थी। मैं वहां से चलने को हुआ...

"मालिक ! मालिक! प्योत्र पेत्रोविच!" मुझे एक आवाज़ सुनाई दी–धुंधली, धीमी और मरमरी, दलदली घासों की कानाफूसी की भांति।

मैं रुक गया।

"प्योत्र पेत्रोविच! कृपा कर भीतर चले आइये!" उस आवाज़ ने दोहराया। यह कोने में से आ रही थी जहां मैंने पाटियों को देखा था।

मैं निकट पहुंचा और आश्चर्य से स्तब्ध रह गया। मेरे सामने एक जीवित मानव-प्राणी पड़ा था। लेकिन किस प्रकार का जीव था यह?

एकदम मुरझाया हुआ चेहरा, एकरस ताम्बे जैसा रंग, किसी अत्यन्त प्राचीन देव-प्रतिमा की भांति, काल के प्रभाव से जो पीली पड़ गयी हो, तेज़ चाकू की भांति पैनी नाक, होंठ लगभग ग़ायब–केवल सफ़ेद दांत

चमक रहे थे, और आंखें, और पीले बालों के कुछ पतले लट रूमाल के नीचे से माथे पर निकल आये थे। ठोड़ी के पास, जहां रज़ाई सिमटी हुई थी, उसी ताम्बे जैसे रंग के दो छोटे छोटे हाथ हरकत कर रहे थे, उंगलियां छोटी तीलियों की भांति धीरे धीरे बल खा रही थीं। मैंने और ध्यान से देखा। चेहरा, बदसूरत होने की बात छोड़ो, निश्चित रूप से सुन्दर था, लेकिन अजीब और भयावह। और यह चेहरा मुझे इसलिए और भी अधिक भयावह मालूम हुआ कि उसपर – उसके धातुवी गालों पर – एक मुसकान पर मेरी नज़र पड़ी – जो संघर्ष करती हुई . . . जूझती हुई . . . लेकिन अपने-आपको मूर्त करने में असमर्थ हो रही थी।

"आप मुझे पहचानते नहीं, मालिक?" वह आवाज़ फिर फुसफुसायी– लगा जैसे वह क़रीब क़रीब बेहिस होंठों से निःसृत हुई हो। "और, बेशक, आप पहचानते भी कैसे? मैं लुकेरिया हूं . . . याद है न आपको, वही जो स्पास्कोये में, आपकी मां के यहां झूम झूमकर अपनी सहेलियों के साथ नाचा-गाया करती थी . . . याद है, मैं सब के आगे आगे गाया करती थी?"

"लुकेरिया!" मैं चीखा। "अरे, तो क्या वह तुम हो? क्या ऐसा हो सकता है?"

"हां, मालिक, मैं वही हूं, मैं वही लुकेरिया हूं।"

मेरी समझ में नहीं आया कि क्या कहूं, और विमूढ़-सा उसके अंधेरे गतिशून्य चेहरे की ओर ताकता रहा जिसकी सुस्पष्ट, मृत्यु-सदृश आंखें मुझपर जमी थीं। क्या यह सम्भव था? यह पिण्ड, लुकेरिया – हमारे समूचे घराने में सबसे सुन्दर – वह लम्बी, गुंदगुदी, श्वेत और गुलाबी, गाती, हंसती और नाचती जीव! लुकेरिया, हमारी वह चपल-चंचल लुकेरिया, जिसका प्रेम पाने के लिए हमारे सभी लड़के ललकते थे, जिसे लेकर अनेक गुप्त उसासें मैंने भरी थीं, जब मैं सोलह वर्ष का लड़का था।

"ख़ुदा रहम करे, लुकेरिया!" आख़िर मैंने कहा, "यह तुम्हें क्या हुआ है?"

"ओह, ऐसी गाज मुझपर आकर गिरी! लेकिन, बुरा न मानें, मालिक! मेरी हालत को देखकर बुरा न मानें। यहां, उस छोटे-से टब पर बैठ जायं–थोड़ा और पास, नहीं तो आप मुझे सुन नहीं सकेंगे। मेरी आवाज़ अब न के बराबर रह गयी है... आपको मिलकर मुझे बड़ी ख़ुशी हुई। कहो, आलेक्सेयेवका की ओर कैसे आ निकले?"

लुकेरिया बहुत ही धीमे और क्षीण स्वर में, लेकिन बिना रुके बोल रही थी।

"येरमोलाई, मेरा शिकारी-चाकर मुझे यहां लिवा लाया। लेकिन तुम सुनाओ..."

"आपको अपनी मुसीबत के बारे में सुनाऊं? ज़रूर सुनाऊंगी मालिक। एक जमाना हुआ जब यह घटना घटी थी–छः या सात साल पहले। केवल तभी, ठीक उन्हीं दिनों, जब वासीली पोल्याकोव से मेरी मंगनी होकर चुकी थी। आपको याद है न, कितना ख़ूबसूरत दिखता था वह, अपने घुंघराले बालों के साथ? वह आपकी मां के बुफ़े का कर्मचारी था। लेकिन आप तब देहात में नहीं थे, पढ़ने के लिए मास्को चले गये थे। हम एक दूसरे से बहुत बहुत प्रेम करते थे, वासीली और मैं। एक घड़ी के लिए भी मैं उसे अपने मन से अलग नहीं कर पाती थी। वसन्त के दिन थे जब यह सब हुआ। एक रात... सूरज निकलने से कुछ ज़्यादा पहले का पहर नहीं रहा होगा... मैं सो नहीं पा रही थी। बाग़ में एक बुलबुल गा रही थी। इतनी मधुर कि अद्भुत! मुझसे नहीं रहा गया। मैं उठी और उसका संगीत सुनने के लिए बाहर पैड़ियों पर निकल आयी। वह कूक और कूक रही थी... और एकदम अचानक मुझे लगा जैसे किसी ने पुकारा हो। वह वासीली की आवाज़ की भांति मालूम होती थी, इतनी कोमल–'लुकेरिया!' मैंने घूमकर देखा, अधनींद में होने

के कारण—मैं समझती हूं—मेरा पांव चूक गया और ऊपर की पैड़ी से एकदम सीधे नीचे, धम्म से धरती पर जा लुढ़की। और मैंने सोचा कि ऐसी कोई ज़्यादा चोट नहीं लगी है, क्योंकि मैं एकदम उठ खड़ी हुई और वापिस अपने कमरे में लौट आयी। केवल ऐसा मालूम होता था जैसे मेरे भीतर—मेरे शरीर के भीतर—कोई चीज़ टूट गयी हो। ओह, ज़रा मुझे दम लेने दो... बस आधा मिनट... मालिक।"

लुकेरिया रुक गयी और मैंने अचरज के साथ उसकी ओर देखा। अचरज की खास बात यह थी कि वह अपनी कहानी क़रीब क़रीब आह्लाद के साथ, बिना आहों और कराहों के, बिना किसी शिकायत के या सहानुभूति की मांग किये सुना रही थी।

"उसी दिन से जब यह घटना घटी," वह कहती गयी, "मैं घुलने और क्षीण होने लगी। मेरी चमड़ी काली पड़ गयी, चलना-फिरना मेरे लिए मुश्किल हो गया और इसके बाद, मेरी टांगें एकदम बेकार हो गयीं, न मैं खड़ी हो सकती थी, न बैठ सकती थी, हर घड़ी पड़ी रहती थी। खाने या पीने की भी मुझे कोई सुरत नहीं थी। दिन दिन मेरी हालत ख़राब होती गयी। आपकी मां ने, हृदय की बड़ी दयालु थीं वह, डाक्टरों को दिखाने के लिए ज़ोर दिया और मुझे एक अस्पताल में भेजा। लेकिन मैं जैसे लाइलाज थी। और कोई भी डाक्टर यह तक नहीं बता सका कि मेरा रोग क्या था। उन्होंने मुझे लेकर क्या कुछ नहीं किया! गर्म लोहे से उन्होंने मेरी रीढ़ दाग़ी, बर्फ़ के डलों में उन्होंने मुझे रखा, लेकिन लाभ इस सब का कुछ नहीं हुआ। अंत में मैं एकदम सुन्न हो गयी... सो मालिकों ने निश्चय किया कि मेरी और अधिक डाक्टरी करना बेकार है और गढ़ी में अपाहिजों को रखने में कोई तुक नहीं थी... उन्होंने मुझे यहां भेज दिया—क्योंकि यहां मेरे सगे-संबंधी हैं। सो यहां मैं रहती हूं, जैसा कि आप देख रहे हैं।"

लुकेरिया फिर चुप हो गयी और उसने फिर मुसकराने का प्रयास किया।

"लेकिन तुम्हारी यह स्थिति तो भयानक है!" मैंने चिल्लाकर कहा। और यह न समझ पाने के कारण कि आगे क्या कहूं, मैंने पूछा, "और वासीली पोल्याकोव का क्या हुआ?" एक अत्यन्त मूर्खतापूर्ण सवाल था यह।

लुकेरिया ने अपनी आंखों को थोड़ा दूसरी ओर कर लिया।

"पोल्याकोव का क्या हुआ? उसे बड़ा रंज हुआ—थोड़े दिन तक रंज रहा—फिर उसने दूसरी लड़की से शादी कर ली, ग्लिन्नोये की एक लड़की से। क्या आप ग्लिन्नोये को जानते हैं? यहां से ज़्यादा दूर नहीं है। उसका नाम अग्राफ़ेना है। वह मुझे बहुत प्यार करता था, लेकिन, आप जानो, युवा आदमी, वह कुंवारा कैसे बैठा रह सकता था? फिर मैं संगिनी भी किस क़िस्म की हो सकती थी? एक अच्छी प्यारी बीवी उसने अपने लिए खोज ली है और उनके बच्चे हैं। वह यहीं रहता है। एक पड़ोसी के यहां कारिन्दा है। आपकी मां ने उसे पासपोर्ट के साथ मुक्त कर दिया और वह—भगवान भला करे—मज़े में है।"

"और सो तुम सारा वक़्त यहीं पड़ी रहती हो?" मैंने फिर पूछा।

"हां, मालिक, सात साल से मैं यहीं पड़ी हूं। गर्मियों में मैं यहां इस झोंपड़ी में पड़ी रहती हूं और जब ठंड होने लगती है तो वे मुझे बाहर हमाम में ले जाते हैं और मैं वहां पड़ रहती हूं।"

"तुम्हारी हाज़िरी कौन देता है? क्या कोई देख-संभार करनेवाला है?"

"ओह, सब जगह की भांति यहां भी कुछ दयालु लोग हैं। उन्होंने मुझे त्यागा नहीं हैं। मेरी देख-भाल थोड़ी-सी होती रहती है। जहां तक खाने का संबंध है, मैं ऐसा कुछ खाती नहीं, लेकिन पानी यहां है, इस कूज़े में। झरने का शुद्ध पानी इसमें बराबर भरा रहता है। मैं खुद उसतक पहुंच सकती हूं। मेरी एक बांह अभी भी कुछ काम

देती है। यहां एक छोटी-सी लड़की है, अनाथ है। जब-तब वह मेरे पास आ जाती है, मुझे देखने-भालने। बड़ी दयालु लड़की है। अभी अभी वह यहां थी... क्या आपको नहीं मिली? बहुत ही प्यारी, गोरे रंग की लड़की है। वह मेरे लिए फूल लाती है जिन्हें मैं बहुत चाहती हूं। हमारे बाग़ में फूल नहीं हैं—थे कभी—लेकिन अब ग़ायब हो गये। लेकिन, आप जानो, जंगली फूल भी बढ़िया होते हैं—बाग़ के फूलों से उनकी महक और भी मीठी होती है। लिली, अब... भला उनसे अधिक मधुर और क्या होगा?"

"और क्या तुम्हारा जी नही ऊबता, तुम दुखी अनुभव नहीं करती, लुकेरिया?"

"क्यों, और चारा भी क्या है? मैं झूठ ज़रा नहीं कहूंगी। शुरू शुरू में तो बड़ी ऊब लगती थी, लेकिन बाद में मैं इसकी आदी हो गयी, अधिक धीरज मुझमें आ गया—यह कुछ नहीं है, कितनों की हालत तो इससे भी बुरी है।"

"यह कैसे कहती हो तुम?"

"कयों, कुछ हैं जिनके पास सिर छिपाने के लिए जगह तक नहीं है, और कुछ अंधे या बहरे हैं, जबकि मेरी—भगवान का शुक्र है—आंखों की जोत ठीक है, और हर चीज़ मैं सुन सकती हूं, हर चीज़। जब छछून्दर धरती में बिल बनाती है तो मैं वह भी सुन सकती हूं। और मैं प्रत्येक गंध—धुंधली से धुंधली भी—सूंघ सकती हूं। जब चरागाह में मोथी या बाग़ में लीपा का पेड़ खिलता है—तो मुझे इसकी ख़बर देने की भी ज़रूरत नहीं होती। मुझे सीधे, सवसे पहले, पता चल जाता है। बशर्तेकि, उस ओर से—चाहे कितना ही हल्का क्यों न हो—हवा का एक झोंका इधर बह आय। मैं क्यों भगवान को परेशान करूं? मुझसे भी अधिक यन्त्रणा सहनेवाले लोग मौजूद हैं। फिर, आप ही देखो—अच्छी सेहतवाला आदमी आसानी से पाप में फंस सकता है, लेकिन

मैं तो पाप से भी दूर हो गयी हूं। उस दिन, पिता अलेक्सेई—पादरी—मुझसे प्रायश्चित कराने आये और उन्होंने कहा—'तुम्हें कोई प्रायश्चित करने की ज़रूरत नहीं। अपनी इस हालत में तुम पाप में नहीं फंस सकती, नहीं फंस सकती न?' लेकिन मैंने उनसे कहा, 'मन के पाप के बारे में आप क्या कहते हैं, पिता?'—'ओह वह,' उन्होंने कहा, और वह हंसे, 'वह कोई बड़ा पाप नहीं है!'"

"लेकिन मुझे लगता है, उस तरह भी—कल्पना में भी—मैं ऐसी कुछ ज्यादा गुनाहगार नहीं हूं।" लुकेरिया कहती गयी, "क्योंकि मैंने कुछ न सोचने की, और सबसे बढ़कर, कुछ न याद करने की आदत डाल ली है। समय को बीतते देर नहीं लगती।"

मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मैं चकित था।

"तुम हमेशा अकेली रहती हो, लुकेरिया। विचारों को अपने दिमाग़ में आने से भला तुम कैसे रोक सकती हो? या तुम हर घड़ी सोती रहती हो?"

"ओह, नहीं, मालिक। मैं हर घड़ी नहीं सो सकती। हालांकि मुझे कोई ख़ास पीड़ा नहीं है फिर भी एक हल्का-सा दर्द रहता है, यहां—ठीक मेरे भीतर—और मेरी हड्डियों में भी। वह मुझे सोने नहीं देता, जितना कि मुझे सोना चाहिए। नहीं... लेकिन देखो न, मैं फ़क़तदम अकेली यहां हूं। मैं यहां पड़ी रहती हूं और कुछ नहीं सोचती। मैं अनुभव करती हूं कि मैं जीवित हूं—मैं सांस लेती हूं और मैं अपने-आपको इसी में खोये रहती हूं। मैं देखती और सुनती हूं। मधुमक्खियां छत्ते में कानाफूसी करती भनभनाती हैं, एक कबूतर छत पर आकर बैठता और कूकता है, एक मुर्ग़ी मय अपने चूज़ों के चुगा चुनने के लिए यहां टुरक आती है, या एक गौरैया, या एक तितली उड़कर भीतर आ जाती है—मेरे लिए यह एक बहुत बड़ा मन-बहलाव है। दो साल हुए, वहां उस कोने में अबाबील ने एक घोंसला तक बना लिया था और अपने नन्हे

मुन्ने बच्चों का लालन-पालन किया था। ओह, कितना मनोरम था वह सब! एक उड़कर घोंसले के पास आती, उससे सट जाती, नन्हों को चुगा देती, और फिर उड़ जाती। फिर पलटकर देखो तो दूसरी अपनी जगह पर मौजूद। कभी कभी वह भीतर नहीं आती, केवल खुले दरवाज़े के सामने से तिर जाती, और नन्हे-मुन्ने एकदम चींचीं करना और अपनी चोंचों को खोलना शुरू कर देते... मैं आस लगाये थी कि अगले साल वे फिर आयेंगे, लेकिन कहते हैं कि किसी शिकारी ने उन्हें अपनी बन्दूक़ से यहां मार डाला। और उसे इससे मिला क्या? वह, अबाबील, ले-देकर तिलचट्टे जितनी बड़ी तो होती है... ओह, कितने दुष्ट होते हो, तुम शिकारी लोग!"

"मैं अबाबील का शिकार नहीं करता," मैंने फ़ौरन कहा।

"और एक बार," लुकेरिया ने फिर कहना शुरू किया, "सच बड़ा मज़ा आया। एक ख़रगोश भीतर दौड़ आया, सचमुच दौड़ आया। मैं समझती हूं शिकारी कुत्ते उसका पीछा कर रहे थे। जो हो, ऐसा मालूम होता था जैसे वह दरवाज़े में से सीधे भीतर लुढ़क आया हो... वह एकदम मेरे निकट निहुराकर बैठ गया, और बहुत देर तक ऐसे ही बैठा रहा। वह निरन्तर अपने नथुनों को फरफरा रहा था, और अपनी मूछों में बल डाल रहा था—एक अफ़सर की भांति! और वह मेरी ओर देख रहा था। वह समझ गया था—इसमें शक नहीं—कि मुझसे उसे कोई ख़तरा नहीं है। आख़िर वह उठा और कुदक कुदककर दरवाज़े पर पहुंचा, चौखट से झांककर चारों ओर देखा और पलक झपकते ग़ायब हो गया। ऐसा मज़ेदार जीव था वह!"

लुकेरिया ने मेरी ओर देखा, मानो कह रही हो, "क्यों, क्या मज़ेदार नहीं था?" उसे तसल्ली देने के लिए मैं हंसा। उसने अपने सूखे होंठों को नम किया।

"हां, तो जाड़ों में, बिलाशक, मुझे कष्ट होता है क्योंकि अंधेरा

तिर आता है। बत्ती भला जलाने से खेद न होगा? और इससे फ़ायदा भी क्या? बेशक, मैं पढ़ सकती हूं, और पढ़ने की मैं हमेशा शौक़ीन थी, लेकिन मैं पढ़ती क्या? यहां किताबें नहीं हैं और अगर वे होतीं भी, तो मैं उन्हें थामती कैसे? पादरी अलेक्सेई मेरा जी बहलाने के लिए एक कैलेंडर लाये थे, लेकिन उन्होंने देखा कि उससे कोई लाभ नहीं, सो उसे वह उठाकर वापिस ले गये। लेकिन, अंधेरा होते हुए भी, हर घड़ी कुछ न कुछ यहां सुनने को मिल जाता है; झींगुर की आवाज़ या कोई चूहा कहीं खुदरफुदर करने लगता है। यह अच्छा है—उस समय जब सोचने से ध्यान हटाना हो!"

"और मैं प्रार्थना भी करती हूं," थोड़ी सांस लेने के बाद लुकेरिया कहती गयी, "केवल इतना है कि वे—प्रार्थनाएं, मेरा मतलब—मैं अधिक नहीं जानती। और इसके अलावा, सर्वप्रभु भगवान को मैं क्यों तंग करूं? मैं उससे भला क्या मांग सकती हूं? मेरी ज़रूरतों को वह मुझसे ज्यादा जानते हैं। उन्होंने मुझे कष्ट सौंपा है, इसका मतलब यह कि वह मुझे चाहते हैं। ऐसा ही उनका आदेश है जो हमें निबाहना है। मैं ईश वन्दना करती हूं, मां मरियम की वन्दना, सारे पीड़ितों के त्राण की वन्दना और इसके बाद मैं थिर हो जाती हूं, क़तई कुछ नहीं सोचती, और बिल्कुल स्वस्थ अनुभव करती हूं।"

दो मिनट बीत गये। मैंने निस्तब्धता को भंग नहीं किया और ज़रा भी नहीं हिला—उस सकरे-से टब पर जो मेरे लिए आसन का काम दे रहा था; मेरे सामने लेटे इस जीवित, अभागे प्राणी की निर्मम, पथरायी हुई निस्तब्धता जैसे मेरे अन्तर में भी सरसरा रही थी, और मैं भी जैसे सुन्न हो चला था।

"सुनो, लुकेरिया," आखिर मैंने कहना शुरू किया—"मेरा एक सुझाव सुनो जो मैं देना चाहता हूं। अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हें एक अस्पताल में—नगर के एक अच्छे अस्पताल में—भिजवाने का

प्रबंध कर दूं? कौन कह सकता है, शायद तुम अब भी चंगी हो जाओ, कम से कम तुम वहां अकेली तो न रहोगी।"

लुकेरिया की भौंहें अस्पष्ट-सी फरफरायीं। "ओह, नहीं, मालिक," त्रस्त-सी फुसफुसाहट में उसने जवाब दिया। "मुझे अस्पताल में न डालो; मुझे न छेड़ो। वहां मुझे केवल और अधिक वेदना भोगनी पड़ेगी। वे अब मुझे क्या अच्छा करेंगे? सच, एक बार यहां एक डाक्टर आया था। वह मुझे देखना चाहता था। मैंने उससे बिनती की, भगवान के लिए, मुझे न छेड़ो। बेकार है यह। उसने मुझे उलटना-पलटना शुरू किया, मेरे हाथों और टांगों को ठोका-बजाया, और मुझे इधर से उधर करता रहा। उसने कहा—'मैं यह विज्ञान के हित में कर रहा हूं। मैं विज्ञान का सेवक हूं—एक वैज्ञानिक आदमी। और तुम्हें वास्तव में मेरा विरोध नहीं करना चाहिए, क्योंकि मुझे अपने काम के लिए एक पदकर प्रदान किया गया है, और तूम जैसे निरीह लोगों के लिए श्रम कर हा हूं।' उसने मुझे धुन डाला, मेरी बीमारी का मुझे नाम बताया—बहुत ही उजीब लम्बा-सा नाम था वह—और यह सब करके चला गया, और मेरी ग़रीब हड्डियां इसके बाद एक हफ़्ते तक दुःखती रहीं। आप कहते हैं कि मैं एकदम अकेली हूं, हर घड़ी अकेली। ओह, नहीं, हर समय नहीं। लोग मेरे पास आते हैं—मैं चुप रहती हूं—उन्हें परेशान नहीं करती। किसान लड़कियां आती हैं और थोड़ा बतिया लेती हैं। कोई स्त्री—तीर्थ-यात्रा करती—इधर आ निकलती है और मुझे यरूशलम की, कीयेव नगर की, तीर्थ-यात्राओं की कहानियां सुनाती है। और अकेलेपन से मुझे डर नहीं लगता। सच पूछो तो, यह अच्छा है, क्यों! मुझे नहीं छेड़ना, मालिक, मुझे अस्पताल न भिजवाना... धन्यवाद, आपके हृदय में तरस है। बस, मुझे छेड़ो नहीं। ओह, कितने भले हैं आप!"

"अच्छा, जैसा तुम चाहो, जैसा तुम चाहो, लुकेरिया। तुम जानो, तुम्हारे भले के लिए ही मैंने यह सुझाव दिया था।"

"मैं जानती हूं, मालिक, मेरे भले के लिए ही आपने यह कहा था। लेकिन, मालिक, दूसरे की मदद क्या कोई कर सकता है? क्या कोई दूसरे की आत्मा में पैठ सकता है? हर आदमी को खुद अपनी मदद करनी चाहिए। आप शायद मेरा विश्वास न करें। कभी कभी मैं यहां इतनी अकेली पड़ी रहती हूं... और ऐसा मालूम होता है जैसे इस दुनिया में और कोई नहीं है, बस एक मैं ही हूं। जैसे एक मैं ही जीवित हूं। और मुझे लगता है जैसे कोई चीज़ मुझे वरदान दे रही है... ओह, वास्तव में अद्भुत सपनों में मैं तिरने लगती हूं।"

"अच्छा, तो लुकेरिया, तुम सपनों में क्या देखती हो?"

"सो तो, मालिक, मैं नहीं बता सकती। उनका भेद कोई कैसे जान सकता है। इसके अलावा, बाद में वे भूल भी जाते हैं। जैसे एक बादल-सा आता और चटक जाता है। तब वह इतना ताज़ा और इतना मधुर हो उठता है कि बस! लेकिन वह ठीक ठीक क्या था, कौन जाने। केवल मुझे ऐसा लगता है कि अगर लोग मेरे निकट होते, तो यह सब कुछ मुझे प्राप्त न होता, और सिवा अपने दुर्भाग्य के और कुछ मैं अनुभव न करती।"

लुकेरिया ने एक दुःख से भरी उसास ली। उसका श्वास-प्रश्वास, उसके अंगों की भांति, उसके क़ाबू में नहीं था।

"और जब मैं, मालिक, आपके बारे में सोचती हूं," उसने फिर कहना शुरू किया, "आप मेरे लिए बहुत दुःखी हैं। लेकिन सच पूछो तो आपको इतना दुःख नहीं करना चाहिए। मैं आपको एक बात बताती हूं। कभी कभी, मैं अब भी... क्या आपको याद है कि अपने समय में मैं कितनी प्रसन्न रहा करती थी? दीन दुनिया से बिल्कुल बेखबर... सो क्या आप सोच सकते हैं कि मैं अब भी गीत गाती हूं?"

"गाती हो? तुम?"

"हां, मैं पुराने गीत गाती हूं, खेलों के गीत, दावतों के गीत, बड़े दिन के गीत, सभी तरह के। आप जानो, कितने अधिक गीत मैं जानती थी, और मैं उन्हें भूली नहीं हूं। केवल नाच के गीत मैं नहीं गाती। जो हालत मेरी अब है, उसमें मुझे यह ठीक नहीं मालूम होता।"

"तुम उन्हें गाती कैसे हो? मन ही मन?"

"मन ही मन, हां, और स्वर से भी। मैं ज़ोर से नहीं गा सकती, लेकिन फिर भी समझ में आ सकता है। मैंने आपको बताया था कि एक छोटी लड़की मेरे पास आती है। बड़ी चतुर, नन्ही अनाथ लड़की है। सो मैं उसे सिखाती हूं। चार गीत वह मुझसे सीख भी चुकी है। क्या आपको विश्वास नहीं होता? एक मिनट ठहरिये, मैं अभी आपको सुनाती हूं..."

लुकेरिया ने सांस लिया... इस ख़याल-मात्र से कि यह अर्द्धमृत जीव गीत शुरू करने के लिए तैयार हो रही है, अनायास ही मैं भय से थरथरा उठा। लेकिन इससे पहले कि मैं शब्द भी अपने मुंह से निकालूं एक दीर्घ खिंचा हुआ, मुश्किल से सुनाई पड़नेवाला, लेकिन विशुद्ध और सच्चा स्वर मेरे कानों में थरथराने लगा... इसके बाद दूसरे और फिर तीसरे स्वर ने उसका अनुसरण किया। 'चरागाहों में' लुकेरिया गा रही थी। वह गा रही थी, पथराये हुए अपने चहरे के भाव में बिना कोई परिवर्तन लाये, और अपनी आंखों तक को एक उसी स्थल पर जमाये। लेकिन कितनी हृदयस्पर्शी थी उसकी वह दीन, संघर्ष करती, नन्ही आवाज़ जो धुवें के एक धागे की भांति थरथरा रही थी और वह कितनी लालायित थी उसमें अपनी समूची आत्मा को उंडेलकर रख देने के लिए... किसी भय का अब मैं अनुभव नहीं कर रहा था और मेरा हृदय अकथनीय अनुकम्पा से भर उठा था।

"ओह, मैं नहीं गा सकती," अचानक उसने कहा, "मुझमें सकत नहीं। खुशी ने–आपको देखने की खुशी ने–मुझे इतना विचलित कर दिया है।"

उसने आंखें बंद कर लीं।

मैंने उसकी नन्ही शीत-सी उंगलियों पर अपना हाथ रखा ... उसने मेरी ओर देखा, और उसकी आंखों की सांवली पलकें किसी प्राचीन-प्रतिमा की भांति सुनहरी बरौनियों की झालर लगी, फिर बंद हो गयीं। क्षण-भर बाद अध-अंधियाले में वे फिर चमकने लगीं... एक आंसू ने उन्हें गीला कर दिया था।

पहले की भांति मैं थिर बैठा रहा।

"कितनी पागल हूं मैं!" अचानक, अप्रत्याशित ज़ोर के साथ, लुकेरिया ने कहा, और उसने अपनी आंखें पूरी खोलीं–उसने आंसुओं को उनमें से हटा देने का प्रयास किया। "मुझे शर्म आनी चाहिए! यह मैं क्या कर रही हूं? एक मुद्दत हुई मेरी ऐसी हालत हुए... उस दिन के बाद जब, पिछले वसन्त में, वास्या पोल्याकोव यहां आया था, ऐसा नहीं हुआ। जब तक वह मेरे पास बैठा और बातें करता रहा, मैं बिल्कुल ठीक रही। लेकिन जब वह चला गया, कितना मैं रोयी थी अपने इस एकाकीपन में! जाने कहां से इतने आंसू उमड़ पड़े। हम लड़कियां तो यूं ही रोने लगती हैं। मालिक," लुकेरिया ने अंत में कहा, "आपके पास रूमाल तो होगा शायद... अगर बुरा न मानें तो मेरी आंखों को पोंछ दें।"

मैंने, बिना देर किये, उसकी इच्छा का पालन किया, और रूमाल उसके पास ही रहने दिया। पहले तो उसने इन्कार किया... "भला, ऐसा उपहार मेरे किस काम आयेगा?" उसने कहा। रूमाल बहुत साधारण, लेकिन साफ़ और उजला था। बाद में उसने अपनी क्षीण उंगलियों में उसे दबोचा और फिर उन्हें ढीला नहीं किया। और जब

मैं उस अंधेरे का अभ्यस्त हो गया जिसमें कि हम दोनों बैठे थे, मेरे लिए उसकी आकृति को साफ़ साफ़ पहचानना सम्भव हो गया, यहां तक कि उस हल्की लाली की भी मैं अब झलक पा सकता था जो उसके चेहरे के ताम्बई रंग की ओट में से झांक रही थी और मैं – कम से कम मुझे मालूम ऐसा ही होता था – उसके भूतपूर्व सौन्दर्य के चिन्हों तक का पता लगा सकता था।

"आपने, मालिक, मुझसे पूछा था," लुकेरिया ने फिर कहना शुरू किया, "मुझे नींद आती है या नहीं। मैं बहुत कम सोती हूं, लेकिन हर बार जब मैं सोती हूं, मैं सपने देखती हूं, बहुत ही अच्छे सपने। अपने सपनों में मैं कभी बीमार नहीं पड़ती – हमेशा ख़ूब चंगी रहती हूं, और युवा... दुःख एक ही बात का होता है – जब मैं जागती हूं तो मेरा ख़ूब अच्छी अंगड़ाई लेने को जी चाहता है, पर मुझे लगता है जैसे मैं चारों ओर ज़ंजीरों से जकड़ी हूं। एक बार बहुत ही प्यारा सपना मैंने देखा। आपको बताऊं? अच्छा तो सुनिये। मैंने सपने में देखा कि मैं एक चरागाह में खड़ी हूं, और मेरे चारों ओर रई लहरा रही है – ख़ूब ऊंची, पकी हुई, सोने की भांति! और मेरे साथ एक कुत्ता था, लाल-से रंग का। ओह, बड़ा दुष्ट था वह! वह बार बार मुझे काटने की कोशिश कर रहा था। और मेरे हाथों में एक हंसिया था, मामूली हंसिया नहीं, लगता था जैसे ख़ुद चांद मेरे हाथों में आ गया हो – चांद जैसा कि वह हंसिया के आकार का होने पर होता है। और इसी चांद से मुझे रई का खेत क़ाटकर एकदम साफ़ कर देना था। केवल मैं गर्मी के मारे बुरी तरह ऊब गयी थी और चांद ने मेरी आंखों को चौंधिया दिया था और मैं आलस का अनुभव कर रही थी। चारों ओर नीलपोथे खिले थे। ख़ूब बड़े बड़े। और वे सब मेरी ओर अपना मुंह किये थे। सपने में मैंने सोचा कि उन्हें तोड़ना चाहिए। वास्या ने वचन दिया था कि वह आयेगा। सो पहले एक हार चुन लूं। रई काटने के

लिए अभी बहुत समय है। सो मैंने फूलों को चुनना शुरू किया, लेकिन वे बराबर, चाहे जितना भी जतन मैं करती, मेरी उंगलियों के बीच पिघलकर रह जाते। और इसी बीच किसी की आहट मैंने सुनी, बहुत ही निकट, और फिर पुकारने की आवाज़ आयी—'लुकेरिया! लुकेरिया!'—'ओह,' मैंने सोचा, 'कितने दुःख की बात है कि मुझे समय नहीं मिला। लेकिन कोई हर्ज नहीं। फूलों के बजाय उस चांद को मैंने अपने सिर पर रख लिया—मुकुट की भांति। और उसे रखने ही मैं ऊपर से नीचे तक चमचमा उठी। समूचे खेत में अपने चारों ओर मैंने उजाला कर दिया। और, देखती क्या हूं, कि बालों की ठीक चोटियों के ऊपर से, बड़ी तेज़ी के साथ, वह मेरी ओर तिरता आ रहा है—वास्या नहीं, बल्कि खुद प्रभु ईसा! और मैंने कैसे यह जाना कि वह प्रभु ईसा थे, नहीं कह सकती; चित्रों में वे उन्हें वैसा नहीं बनाते, लेकिन थे वह प्रभु ही। दाढ़ी विहीन, लम्बा क़द, युवा, ऊपर से नीचे तक सफ़ेद लबादा, केवल उनकी पेटी सोने की थी। और उन्होंने अपना हाथ मेरी ओर बढ़ाया। 'डरो नहीं,' उन्होंने कहा, 'मेरी बांकी बहुरिया, मेरे पीछे चली आओ। देव-लोक में तुम गोलाकार नृत्य में सबसे आगे नाचोगी और स्वर्ग के गीत गाओगी।' और मैं उनके हाथ से चिपक गयी। मेरा कुत्ता एकबारगी मेरी एड़ियों की ओर झपटा... लेकिन तभी हमने ऊपर की ओर तिरना शुरू कर दिया था। वह आगे आगे थे... उनके पंख खूब प्रशस्त समूचे आकाश में छाये थे और समुद्री चिल्ली की भांति लम्बे थे... और मैं उनके पीछे पीछे। और मेरे कुत्ते को वहीं रह जाना पड़ा। केवल तब मेरी समझ में आया कि वह कुत्ता मेरी बीमारी है और देव-लोक में उसके लिए कोई स्थान नहीं।"

लुकेरिया ने क्षण-भर विराम लिया।

"और मैंने एक और सपना भी देखा," उसने फिर कहना शुरू किया, "लेकिन शायद वह देव-दर्शन था। वास्तव में मैं नहीं जानती।

मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मैं इसी झोंपड़ी में पड़ी हूं, और मेरे मृत माता-पिता मेरे पास आये हैं, नीचे झुके हैं, लेकिन बोले कुछ नहीं। मैंने उनसे पूछा, 'माता जी, पिता जी, आप मुझे माथा क्यों नवाते हो?' 'क्योंकि,' उन्होंने कहा, 'तुम इस दुनिया में बहुत कष्ट सह रही हो, जिससे तुमने न केवल अपनी आत्मा को ही मुक्त कर लिया है, बल्कि हमारे कंधों पर से भी भारी भार उतार लिया है। और हमारे लिए दूसरी दुनिया अब काफ़ी आसान हो गयी है। तुम अपने गुनाहों का अंत कर चुकी हो, और अब तुम हमारे गुनाह धो रही हो।' और यह कहकर मेरे माता-पिता ने मुझे फिर माथा नवाया, और मैं उन्हें नहीं देख सकी—सिवा दीवारों के अब और कुछ नज़र नहीं आता था। बाद में, इस घटना को लेकर मैं भारी संदेह में पड़ी। गुनाह-क़बूली के समय पादरी तक से मैंने उसका ज़िक्र किया। केवल उसका ख़याल है कि वह देव-दर्शन नहीं था। क्योंकि उसकी प्रतीति केवल पादरी लोगों को ही होती है।"

"और मैं आपको एक और सपना बताती हूं," लुकेरिया कहती गयी, "मैंने सपना देखा कि मैं एक बेंत-वृक्ष के नीचे राजमार्ग पर बैठी हूं। मेरे हाथ में एक लाठी है, कंधों पर एक पोटली और मेरे सिर पर एक रूमाल बंधा है—ठीक तीर्थ-यात्रा करनेवाली स्त्रियों की भांति। और मुझे कहीं जाना है, दूर, बहुत दूर, तीर्थ-यात्रा के लिए। और तीर्थ-यात्री बराबर उधर से, मेरे पास से, गुज़र रहे हैं। वे धीरे धीरे चले आ रहे हैं और सब एक ही दिशा में जा रहे हैं। उनके चेहरे थके हैं और सब बहुत कुछ एक जैसे मालूम होते हैं। और मैंने सपने में देखा कि उनके बीच एक स्त्री इधर से उधर कसमसा रही है। वह सबसे एक बीता ऊंची थी और विचित्र-से कपड़े पहने थी, जो हमारे जैसे—रूसियों जैसे नहीं थे। और उसका चेहरा भी अजीब था—कृश और कठोर। और अन्य सब उससे दूर हट जाते थे। लेकिन वह अचानक मुड़ी और

सीधे मेरे पास चली आयी। वह थिर खड़ी हो गयी और मेरी ओर उसने देखा। उसकी आंखें बाज़ की आंखों की भांति पीतवर्ण, बड़ी बड़ी और उजली थीं। और मैंने उससे पूछा—"तुम कौन हो?" वह मुझसे कहने लगी—"मैं तुम्हारी मौत हूं।" और बजाय डरने के, ठीक इससे उलटा हुआ। मैं इतनी खुश हुई जितनी कि हो सकती थी। मैंने क्रॉस का निशान बनाया। और वह स्त्री—मेरी मौत—मुझसे कहती है—'मुझे तुमपर रहम आता है, लुकेरिया, लेकिन मैं तुम्हें अपने साथ नहीं ले जा सकती। अच्छा विदा।' हे, भगवान, कितना दुःख हुआ मुझे तब! 'मुझे ले चलो,' मैंने कहा, 'नेक मां, मुझे ले चलो, प्यारी मां!' और मेरी मौत मेरी ओर मुड़ी और मुझसे बोलने लगी... मैं जानती थी कि वह मेरे लिए मेरी घड़ी नियत कर रही है, लेकिन अस्पष्ट और समझ में न आये इस तरह... 'सन्त पीटर दिवस के बाद...' उसने कहा। और इसके बाद मेरी आंख खुल गयी... सच, ऐसे ऐसे अद्‌भुत सपने मुझे दिखाई देते हैं!"

लुकेरिया ने ऊपर की ओर देखा और अपने विचारों में खो गयी।

"केवल दुःख की बात यह है कि कभी कभी सारा-का-सारा हफ़्ता गुज़र जाता है और एक बार भी मेरी आंख नहीं लगती। पिछले साल कुलीन घराने की एक स्त्री यहां से गुज़र रही थी। नींद दिलाने की दवाई की एक छोटी-सी शीशी उसने मुझे दी थी। उसने मुझे बताया कि एक बार में दस बूंदें लेनी चाहिएं। उस दवा ने मुझे बहुत फ़ायदा किया और मैं सोने लगी। केवल यह कि वह बहुत दिन हुए सारी चुक गयी। क्या आप जानते हैं कि वह क्या दवा थी, और वह कैसे मिल सकती है?"

उस महिला ने स्पष्ट ही लुकेरिया को अफ़ीम दी थी। मैंने उसे वैसी ही एक दूसरी शीशी लाने का वचन दिया, और उसके धीरज पर सस्वर आश्चर्य प्रकट किये बिना नहीं रह सका।

"ओह, मालिक!" उसने जवाब दिया, "आप ऐसा क्यों कहते हैं? धीरज से आपका क्या मतलब है? अब, आप ही देखो, वास्तव में धीरज सिमेओन स्ताईलाइत के पास था — भारी धीरज। तीस साल तक वह एक खम्भे पर खड़ा रहा। और एक अन्य सन्त ने अपने-आपको धरती में गड़वा दिया, ठीक अपने वक्ष तक और चींटियां उसके चेहरे को खाती थीं... और बाइबल के एक छात्र ने मुझे जो बताया था, वह — मैं आपको बताती हूं — किसी ज़माने में एक देश था, और अगार्यान लोगों ने उसपर युद्ध छेड़ दिया, और उन्होंने सारे निवासियों को यंत्रणाएं दीं और उन्हें मार डाला, और लाख जतन करने पर भी लोग उनसे छुटकारा नहीं पा सके। और इन लोगों में एक पवित्र कुमारी का उदय हुआ। उसने एक भारी तलवार उठायी, एक मन वज़न का कवच पहना, अगार्यान लोगों के ख़िलाफ़ मोर्चा लिया और उस समय उन सबको समुद्र के उस पार खदेड़ दिया और केवल जब वह उन्हें खदेड़कर बाहर कर चुकी, उसने उनसे कहा, 'अब मुझे जला डालो, क्योंकि यही मेरी प्रतिज्ञा थी, कि मैं अपनी जनता के लिए अग्नि में जलकर मरूंगी।' और अगार्यान लोगों ने उसे उठाया और जला डाला, और लोग तबसे आज़ाद हैं। वह एक शुभ कृत्य था, आप जानो। लेकिन मैं... मैं भला क्या हूं!"

मैं मन ही मन अचरज कर रहा था कि कहां से और किस रूप में जॉन आफ़ आर्क की पुरानी कथा उसके पास पहुंची है, और थोड़ी देर चुप रहने के बाद मैंने लुकेरिया से पूछा कि उसकी उम्र क्या है।

"अठाईस... या उनतीस... तीस नहीं हो सकती। लेकिन वर्षों को गिनकर क्या करेंगे? आपको सुनाने के लिए मेरे पास एक और..."

अचानक लुकेरिया ऐसे खांसी जैसे उसका गला रुंध गया हो, और कराह उठी।

"तुम बहुत ज़्यादा बातें कर रही हो," मैंने कहा, "तुम्हारे लिए यह नुक़सानदेह हो सकता है।"

"यह सच है," वह फुसफुसायी, मुश्किल से सुनाई पड़नेवाली आवाज़ में, "बातें ख़त्म करने का समय हो गया। लेकिन हुआ करे, इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। अब, जब तुम चले जाओगे, जितनी देर भी मैं चाहूं चुप रह सकती हूं। जो हो, मैंने अपना हृदय हल्का कर लिया..."

मैंने उससे विदा ली। उसके लिए दवाई भेजने के अपने वचन को दोहराया और उससे एक बार फिर पूछा कि अच्छी तरह सोचे और मुझे बताय – कोई ऐसी चीज तो नहीं जो उसे चाहिए?

"मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं सब से संतुष्ट हूं, भला करें भगवान!" अत्यधिक प्रयास करते हुए उसने एक एक शब्द का उच्चारण किया, लेकिन भावना के साथ। "भगवान सबको अच्छा स्वास्थ्य प्रदान करें। लेकिन, मालिक, अपनी मां से एकाध शब्द आप कह सकते हैं – यहां के किसान बड़े ग़रीब हैं – अगर वह उनके लगान में कम से कम भी कमी कर सकें! उनके पास काफ़ी ज़मीन नहीं है और कोई जंगल नहीं है, कुछ नहीं है... वे आपके लिए भगवान से दुआ करेंगे... लेकिन मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं बिल्कुल संतुष्ट हूं।"

लुकेरिया को मैंने वचन दिया कि उसके अनुरोध का पालन करूंगा और दरवाज़े की ओर बढ़ भी चला था कि तभी उसने मुझे फिर बुलाया।

"क्या आपको याद है, मालिक," उसने कहा, और उसकी आंखों और होंठों पर एक अद्भुत चमक तैर गयी, "मेरे बाल कितने अच्छे थे? याद है न आपको – कैसे एकदम घुटनों को छूते थे! उनके बारे में फ़ैसला करने में काफ़ी दिन मुझे लगे... ओह, क्या बाल थे वह भी! लेकिन उन्हें कंघी से संवारकर भला कैसे रखा जा सकता था? मेरी इस हालत में! सो मैंने उन्हें कटा डाला... हां... अच्छा तो, मालिक, क्षमा कीजिये! अब और अधिक बोलने की मुझमें सकत नहीं..."

उस दिन, शिकार के लिए रवाना होने से पहले, गांव के कान्स्टेबल से लुकेरिया के बारे में मेरी बातचीत हुई। उससे मालूम हुआ कि गांव

के लोग लुकेरिया को 'जीवित समाधि' कहते हैं, कि वह उन्हें कोई कष्ट नहीं देती, 'न ही उन्होंने कभी उसे कोई शिकायत करते या रोते-झींकते सुना। वह कुछ मांगती नहीं, हर चीज़ के लिए कृतज्ञता प्रकट करती है। "बड़ी शान्त स्वभाव है, यह मानना पड़ेगा, भाग्य की मारी," अपनी बात को ख़त्म करते हुए कान्स्टेबल ने कहा, "लगता है अपने पापों का फल भोग रही है; लेकिन इस सबसे हमारा कोई मतलब नहीं। और जहां तक निन्दा करने की बात है, नहीं, हम उसकी निन्दा नहीं करते। वह जो है सो रहे।"

इसके कुछ सप्ताह बाद मैंने सुना कि लुकेरिया मर गयी। सो उसकी मौत उसे लेने आ गयी... और 'सन्त पीटर दिवस के बाद' ही। उन्होंने मुझे बताया कि अपनी मृत्यु के दिन उसके कानों में बराबर घंटियों की आवाज़ सुनाई देती रही, हालांकि आलेक्सेयेवका से गिरजा पांच मील से भी ज़्यादा दूर था और वह इतवार का दिन नहीं था। लेकिन ख़ुद लुकेरिया का कहना था, घंटियों की आवाज़ गिरजे की ओर से नहीं, बल्कि 'ऊपर से' आ रही थी। शायद यह कहने का उसे साहस नहीं हुआ कि स्वर्ग से आ रही थी।

पहियों की खड़खड़

"मुझे आपसे एक बात कहनी है," मुझसे मिलने के लिए झोंपड़ी में आते हुए येरमोलाई ने कहा। मैं अभी दिन का भोजन करके हटा था। ग्राउज़-पक्षियों के शिकार के काफ़ी सफल तथा थका देनेवाले दिन के बाद थोड़ा सुस्ताने के लिए सफ़री बिस्तरे पर लेटा था। क़रीब दस जुलाई के आसपास का दिन था, और तेज़ गर्मी पड़ रही थी। "मुझे आपसे कुछ कहना है—जितने छर्रे हमारे पास थे, सब ख़त्म हो गये!"

मैं बिस्तर पर से उछलकर खड़ा हो गया।

"सब ग़ायब हो गये? सो कैसे? क्यों, कुछ नहीं तो क़रीब तीस पौंड हम अपने साथ गांव से लाये थे—पूरा एक थैला भरा था!"

"वही तो; और बड़ा थैला था वह—एक पखवारे के लिए काफ़ी होता। लेकिन कौन जाने! ज़रूर उसमें कोई छेद-वेद रहा होगा, या और कुछ। जो भी हो छर्रे नहीं रहे... इतने बचे होंगे कि दसेक बार के लिए काम आ सकें!"

"अब हम क्या करें? एकदम अच्छी जगह तो अभी बाक़ी पड़ी है—कल के लिए ही छः झुण्ड ग्राउज़-पक्षियों के मिलने का हमें विश्वास दिलाया गया है..."

"अच्छा हो यदि आप मुझे तूला भेज दें। यहां से ज़्यादा दूर नहीं है। केवल तीस-पैंतीस मील होगा। उड़कर जाऊंगा, और चालीस पौंड छर्रे ले आऊंगा। बस, आपके कहने-भर की देर है।"

"लेकिन तुम जाओगे कब?"

"क्यों, अभी। देर क्यों की जाय। केवल, हमें घोड़े किराये पर लेने होंगे।"

"घोड़े किराये पर क्यों लिये जायं? खुद अपने घोड़ों से क्यों न काम लें?"

"अपनों को हम वहां नहीं ले जा सकते। जोतवाला घोड़ा लंगड़ा गया है... बुरी तरह!"

"सो कब?"

"कई दिन हुए। कोचवान उसे नाल लगवाने ले गया था। सो उसके नाल जड़ी गयी, लेकिन लगता है, लोहार नालायक़ था। अब वह एक डग तक नहीं भर सकता। अगली टांग है। उसे कुत्ते की भांति उठाता है।"

"तो फिर? नाल तो उन्होंने, मैं समझता हूं, निकाल ही ली होगी, क्यों?"

"नहीं, उन्होंने नहीं निकाली; लेकिन, बिलाशक, उन्हें निकाल लेनी चाहिए थी। यों कहना चाहिए कि एक कील सीधे मांस में ठोक दी गयी है।"

मैंने कोचवान को बुलाने का आदेश दिया। येरमोलाई की बात सच निकली। जोतवाला घोड़ा सचमुच अपना खुर ज़मीन पर नहीं टेक सकता था। मैंने तुरंत हुक्म दिया कि उसकी नाल निकाल ली जाय, और नम मिट्टी पर उसकी टांग रखी जाय।"

"तो क्या इच्छा है? तूला जाने के लिए मैं किराये पर घोड़े ले लूं?"

"क्या तुम समझते हो इस वीराने में हमें घोड़े मिल सकते हैं?" झुंझलाहट के साथ बरबस मेरे मुंह से निकला।

एक वीरान अभागा-सा गांव था वह जहां हम जा निकले थे। उसके सभी निवासी ग़रीब थे। बड़ी कठिनाई से हमें एक झोंपड़ी मिली जो किसी क़द्र खुलासा थी।

"हां," अपनी उसी हस्बमामूल स्थिरता के साथ येरमोलाई ने जवाब दिया, "आपने जो इस गांव के बारे में कहा वह बहुत-कुछ सच है; लेकिन ठीक इसी जगह एक समय एक किसान रहा करता था—बहुत ही चतुर आदमी था! और धनी भी। उसके पास नौ घोड़े थे। वह तो मर गया, अब उसका सबसे बड़ा लड़का उनकी देख-भाल करता है। आदमी निरा बुद्धू है, लेकिन अपने पिता की सम्पत्ति उड़ाने का अभी उसे मौक़ा नहीं मिला। हमें उससे घोड़े मिल सकते हैं। अगर आप कहें तो उसे आपके पास पकड़ लाऊं। उसके भाई, मैंने सुना है, बड़े काइयां हैं, लेकिन फिर भी वही उनका मुखिया है।"

"सो कैसे?"

"क्योंकि वह सबसे बड़ा जो है! बिलाशक, छोटों को उसका हुक्म मानना चाहिए!" और यहां, समष्टि रूप में छोटे भाइयों का उल्लेख करते हुए, कुछ इतने जोश के साथ उसने कुछ शब्द कहे जो कि छापे में नहीं दिये जा सकते। "मैं उसे पकड़ लाऊंगा। वह सीधा-सा आदमी है। उसके साथ मामला तय हुए बिना नहीं रह सकता।"

उस समय जब येरमोलाई अपने उस 'सीधे-से आदमी' की टोह में चला गया, मेरे मस्तिष्क में विचार आया कि ज़्यादा अच्छा हो अगर मैं खुद तूला चला जाऊं। सर्वप्रथम, अपने अनुभव के मुताबिक़ येरमोलाई में मेरा ऐसा कुछ अधिक विश्वास नहीं था। एक बार कुछ चीज़ें ख़रीदने के लिए मैंने उसे शहर भेजा। उसने वायदा किया कि एक ही दिन में वह सारा काम निबटा लेगा, और वह पूरे सात दिन तक ग़ायब रहा, सारा पसा उसने दारू में उड़ा दिया, और पैदल घर लौटा, हालांकि वह मेरी

बग्घी में गया था। और दूसरे, तूला में मेरा एक परिचित सट्टेबाज़ भी था। मैं उससे जोत के पंगु घोड़े की जगह एक अन्य घोड़ा ख़रीद सकता था।

"तो यह तय रहा," मैंने सोचा, "मैं खुद ही जाऊंगा। चाहूं तो रास्ते-भर सोता हुआ भी जा सकता हूं—भाग्य से बग्घी आरामदेह है।"

* * *

"मैं उसे लिवा लाया!" कोई पन्द्रह मिनट बाद लपककर झोंपड़ी में आते हुए येरमोलाई ने चिल्लाकर कहा। उसके पीछे लम्बे क़द के एक किसान ने प्रवेश किया—सफ़ेद क़मीज़, नीली बिरजिस और छाल की चप्पलें पहने हुए। उसके बाल सफ़ेद थे, आंखों से कम दिखता था, खूंटेनुमा लाल दाढ़ी, लम्बी सूजी हुई नाक और खुला हुआ मुंह था। वह निश्चय ही 'सीधा-सा' दिखता था।

"यह लीजिये, मालिक," येरमोलाई ने कहा, "इसके पास घोड़े हैं, और यह देने को राज़ी है।"

"जो है सो, निश्चय, मैं..." अचकचाते हुए मरमरी-सी आवाज़ में किसान ने कहना शुरू किया, अपने बालों के क्षीण गुच्छों को हिलाते और अपनी उंगलियों से टोपी की पट्टी पर जिसे वह अपने हाथों में थामे था तबला-सा बजाते हुए वह बोला—"निश्चय मैं ..."

"तुम्हारा नाम क्या है?" मैंने पूछा।

किसान ने नीचे की ओर देखा, और ऐसे लगा जैसे गहरी सोच में हो।

"मेरा नाम?"

"हां, तुम्हें क्या कहकर पुकारते हैं?"

"क्यों नहीं, मेरा नाम फ़िलोफ़ेई।"

"अच्छा तो, मित्र फ़िलोफ़ेई, मैंने सुना है कि तुम्हारे पास घोड़े हैं। जोड़ के तीन घोड़े यहां ले आओ, उन्हें अपनी बग्घी में हमें जोतना है—बग्घी हल्की है—और तुम मुझे तूला ले चलना। इस समय चांद निकला

हुआ है। उजाला है, और मौसम भी ठंडा-सा है – गाड़ी हांकने के लिए अच्छा है। इधर की तुम्हारी सड़क कैसी है ? "

" सड़क ? सड़क रत्ती-भर भी ख़राब नहीं। बड़ी सड़क सोलह-एक मील होगी – ज्यादा नहीं... वहां एक छोटी-सी जगह है... थोड़ी अटपटी लेकिन सो कुछ नहीं ! "

" तो यह छोटी अटपटी-सी जगह क्या चीज है ? "

" नदी है, जिसे हमें चलकर पार करना पड़ेगा। "

" लेकिन क्या आप ख़ुद तूला जाने की सोच रहे हैं ? " येरमोलाई ने पूछा।

" हां। "

" ओह ! " मेरे फ़रमानबरदार चाकर ने अपना सिर हिलाते हुए टिप्पणी की। " ओह-ओह ! " उसने दोहराया; इसके बाद उसने फ़र्श पर थूक की पिचकारी छोड़ी, और कमरे से बाहर चला गया।

तूला की यात्रा में स्पष्ट ही, अब उसके लिए कोई दिलचस्पी नहीं रही थी।

" क्या तुम सड़क से अच्छी तरह परिचित हो ? " मैंने फ़िलोफ़ेई को संबोधित करते हुए कहा।

" निश्चय, सड़क हमारी जानी-पहचानी है। केवल जो है सो, मालिक किरपा, मैं... इतनी अचानक... भला कैसे... जो है सो... "

मालूम हुआ कि येरमोलाई ने फ़िलोफ़ेई के वचन देने पर, उससे कहा था कि वह यक़ीन रखे – कि उसके बेवक़ूफ़ होने के बावजूद – उसे पैसा मिलेगा... बस और कुछ नहीं। फ़िलोफ़ेई – जिसे येरमोलाई बुद्धू समझता था – अकेले इस वक्तव्य से सन्तुष्ट नहीं था। उसने मुझसे पचास रूबल मांगे, जो बहुत ज्यादा दाम थे। मैंने अपनी तरफ़ से दस कहे – जो कम थे। सौदेबाज़ी की घिसघिस शुरू हुई। पहले तो वह अड़ा रहा, फिर उसने नीचे उतरना शुरू किया, पर धीरे धीरे। क्षण-भर के लिए भीतर

आकर येरमोलाई ने मेरी दिलजमई शुरू की, "वह बुद्धू" – ("प्रकटतः उसे यह शब्द प्यारा मालूम होता है," फ़िलोफ़ेई ने धीमी आवाज़ में टिप्पणी की) – "वह बुद्धू धन का हिसाब-किताब क़तई नहीं जानता," और उसने मुझे याद दिलाया कि किस प्रकार बीस साल पहले मेरी मां ने दो राजमार्गों के चौराहे पर एक चौकी-सराय स्थापित की थी जो इस वजह से ठप्प हो गयी कि उसका प्रबंध करने के लिए जिस बूढ़े गृह-दास को रखा गया था वह, निश्चित रूप से, हिसाब-किताब रखना नहीं जानता था, और निरे सिक्कों की संख्या से रक़मों का मूल्य आंकता था – सच पूछो तो वह ताम्बे के कई सिक्कों के बदले में चांदी का सिक्का दे डालता था, हालांकि सारा वक़्त वह बुरी तरह कोसता और बड़बड़ाता रहता था।

"ओह, फ़िलोफ़ेई! तुम भी पूरे फ़िलोफ़ेई निकले!" येरमोलाई ने अन्त में उसे चिढ़ाया, और गुस्से से दरवाज़े को बंद करता हुआ बाहर निकल गया।

फ़िलोफ़ेई ने उसे कोई जवाब नहीं दिया, मानो वह स्वीकार करता हो कि फ़िलोफ़ेई कहलाना सचमुच – उसके लिए कुछ ज़्यादा चतुराई की बात नहीं है, कि ऐसे नाम के लिए आदमी को जायज़ तौर से झिड़का जा सकता है, हालांकि इस मामले में वस्तुतः दोष गांव के पादरी का था जिसे, नामकरण के समय, उचित मुआवज़ा नहीं मिला था।

जो हो, अन्त में बीस रूबल पर हमारा सौदा पटा। वह घोड़ों को लाने के लिए चला गया, और एक घंटा बाद पांच घोड़े लेकर आया कि उनमें से मैं कोई तीन चुन लूं। घोड़े काफ़ी अच्छे निकले, हालांकि उनकी अयालें और पूंछें उलझी थीं, और उनके पेट ढोल की भांति गोल तथा तने हुए थे। फ़िलोफ़ेई के साथ उसके दो भाई भी आये, जो ज़रा भी उससे नहीं मिलते थे। छोटी छोटी, काली आंखें, नुकीली नाक – सचमुच वे 'काइयां' जीव नज़र आते थे। उन्होंने, बहुत तेज़ी के साथ,

बहुत कुछ कहा – खूब 'टिटियाये' – जैसा कि येरमोलाई ने उसे व्यक्त किया – लेकिन बड़े भाई की आज्ञा मान ली।

वे बग्घी को खींचकर खपरैल से बाहर ले आये और उसमें घोड़े जोतने में डेढ़ घण्टे तक जुटे रहे। पहले उन्होंने रस्सियों की जोत को ढीला किया, इसके बाद उसे फिर जरूरत से ज्यादा कस दिया। दोनों भाई बहुत कुछ इसपर अड़े थे कि चितकबरे को बीच में जोता जाय, क्योंकि 'वह पहाड़ी ढलुवान पर से सबसे अच्छा जायेगा'। लेकिन फ़िलोफ़ेई ने 'झबराले' के लिए निश्चय किया। सो, तदनुसार झबराले को ही बमों में जोता गया।

उन्होंने बग्घी को ऊपर तक घास से भर दिया, लंगड़े घोड़े के कालर को सीट के नीचे रखा – तूला में घोड़ा ख़रीदने की हालत में उसकी ज़रूरत पड़ सकती थी... फ़िलोफ़ेई जो इस बीच जाने कैसे समय पाकर घर दौड़ गया था और वहां से एक लम्बा, सफ़ेद, ढीला-ढाला ख़ानदानी चोग़ा, एक ऊंची डबलरोटी नुमा टोपी तथा कोलतारी जूते पहने लौट आया था, विजयी अन्दाज़ में कोचवान की गद्दी पर जा बैठा। मैंने अपनी सीट ग्रहण की और अपनी घड़ी पर नज़र डाली – सवा दस बजे थे। येरमोलाई ने मुझे विदाई-अभिवादन तक नहीं किया – वह अपने कुत्ते वालेत्का को पीटने में व्यस्त था। फ़िलोफ़ेई ने रासों को झटका दिया और पतली, महीन आवाज़ में चिल्लाया, "चल, चल, नन्हे-मुन्ने!"

उसके भाई दोनों ओर उछल पड़े, बाज़ूवाले घोड़ों के पेट के निचले हिस्से पर चाबुक फटकारा, बग्घी ने हरकत की, और फाटक से बाहर निकल सड़क की ओर घूम चली – झबराले ने अपने घर की ओर मुड़ने का प्रयास किया, लेकिन फ़िलोफ़ेई के चाबुक की दो-चार फटकारों ने उसके होश ठिकाने लगा दिये। और यह लो, हम अब गांव से बाहर आ चुके थे और खूब पास पास उगी अखरोट की घनी झाड़ियों के बीच काफ़ी हमवार सड़क पर से गुज़र रहे थे।

थिर, शानदार रात थी, सवारी के लिए बहुत ही बढ़िया, लाजवाब!

रह रहकर हवा का एक झोंका झाड़ियों में सरसराता, टहनियों को झुलस्ता और फिर शांत पड़ जाता। आकाश में निश्चल रुपहले बादल देखे जा सकते थे। चांद खूब ऊंचे चढ़ा था और चारों ओर उजली चान्दनी बिखेर रहा था। मैंने घास पर अपने बदन को सीधा किया, और अभी ऊंघना शुरू ही किया था ... लेकिन मुझे उस 'अटपटी जगह' का ध्यान हो आया, और चौंककर उठ बैठा।

"सुनो, फ़िलोफ़ेई, क्या वह जगह दूर है जहां नदी को चलकर पार करना है?"

"वह जगह जो है सो पांच-एक मील होगी।"

"पांच-एक मील," मैंने मन में सोचा। "वहां हम अभी एक घंटे से पहले नहीं पहुंचेंगे। तब तक मैं एक झपकी ले सकता हूं। "फ़िलोफ़ेई, तुम रास्ता तो अच्छी तरह जानते हो न?" मैंने फिर पूछा।

"निश्चय। भला, उसे भी न जानूंगा? मैं कोई पहली बार ही गाड़ी थोड़े ले जा रहा हूं।"

उसने कुछ और भी कहा, लेकिन मैं अब सुन नहीं रहा था—मैं सो गया था।

* * *

मैं जागा, लेकिन—जैसा कि अक्सर होता है—अपने इस इरादे के परिणामस्वरूप नहीं कि ठीक एक घंटे बाद मुझे जागना है, बल्कि एक दम अपने कान के पास एक तरह की अजीब, किन्तु अस्पष्ट छपछप तथा कलकल की आवाज़ सुनकर। मैंने अपना सिर उठाया।

और अद्भुत दृश्य था वह, इतना कि वर्णन करते नहीं बनता। मैं, पहले की भांति, बग्घी पर लेटा था, लेकिन बग्घी के चारों ओर—हर तरफ़—उसके पार्श्व से आधा फ़ुट—आधा फ़ुट ही, ज्यादा नहीं—पानी की एक चादर बिछी थी, चांदनी में चमचम करती, छोटी छोटी, सुस्पष्ट, थरथराती लहरियों में छितरायी हुई। मैंने सामने की ओर देखा। कोचवान

की गद्दी पर कमर को दोहरा किये और सिर को झुकाये, फ़िलोफ़ेई बैठा था, प्रतिमा की भांति, और उससे थोड़ा आगे, लहरियां लेते पानी के ऊपर, जुए की कमान-सी मेहराब, घोड़ों के सिर और उनकी पीठ नज़र आ रही थी। और हर चीज़ इतनी निश्चल, इतनी निःशब्द थी मानो वह कोई जादू भरा स्थल हो, सपना हो, परियों के देश का सपना ... क्या मतलब हो सकता है इसका? बग्घी की छत के नीचे से मैंने पीछे की ओर देखा। अरे, यह तो हम बीच नदी में हैं! तट हमसे तीसेक डग दूर है!

"फ़िलोफ़ेई!" मैं चिल्लाया।

"क्या है?" उसने जवाब दिया।

"क्या है—वाह! ख़ुदा बचाय! हम कहां हैं?"

"नदी में।"

"यह तो देख रहा हूं कि हम नदी में हैं। लेकिन, इस तरह तो हम सीधे नदी में डूब जायेंगे। क्या इसी तरह तुम नदी को चलकर पार करते हो, क्यों? अरे, क्या तुम सो रहे हो, फ़िलोफ़ेई? बोलो, जवाब दो!"

"मुझसे एक छोटी-सी ग़लती हो गयी," मेरे पथप्रदर्शक ने कहा, "मैं एक बाज़ू ज़रा ग़लत चला आया। लेकिन अब थोड़ा रुकना पड़ेगा।"

"रुकना पड़ेगा? सो क्यों, भला किस लिए हमें यहां रुकना पड़ेगा?"

"ज़रा झबराले को अपने इर्द-गिर्द की टोह ले लेने दीजिये। जिधर को वह अपना सिर मोड़ेगा, उसी ओर हमें जाना होगा।"

घास पर मैंने अपने-आपको ऊंचा उठाया। जोतवाले घोड़े का सिर एकदम निश्चल था। सिर के ऊपर, उजली चान्दनी में, केवल उसका एक कान नज़र आ रहा था जिसे वह न-मालूम-सा आगे-पीछे की ओर हिला रहा था।

"अरे वह—तुम्हारा वह झबराला—भी सो रहा है!"

"नहीं," फ़िलोफ़ेई ने जवाब दिया। "वह अब पानी को सूंघ रहा है।"

और हर चीज़ फिर स्थिर हो गयी। केवल, पहले की भांति पानी की धुंधली कलकल सुनाई दे रही थी। मुझपर एक जड़ता-सी छा गयी।

चांदनी, और रात, और नदी, और हम उसमें ...

"यह फुंकार जैसी आवाज़ क्या है?" मैंने फ़िलोफ़ेई से पूछा।

"वह? सरकंडों में बत्तखें हैं – या फिर सांप।"

और एकदम अचानक जोतवाले घोड़े का सिर हिला, उसके कान खड़े हुए, उसने एक फुंकार छोड़ी, और हरकत में आ गया। "हो-हो-हो हो!" फ़िलोफ़ेई ने अचानक सप्तम स्वर में हांक लगानी शुरू की। वह सीधा होकर बैठा और अपने चाबुक को फहराया। बग्घी उस जगह से उचकी जहां वह जाम हो गयी थी, नदी के पानी को चीरती आगे की ओर उसने एक डुबकी लगायी और अग़ल-बग़ल झकोले खाती तथा लचलचाती बढ़ चली। शुरू में मुझे ऐसा लगा जैसे हम डूब रहे हों और अधिकाधिक गहराई में उतरते जा रहे हों, लेकिन दो या तीन झटकों और धचकोलों के बाद पानी का विस्तार अचानक नीचा होता प्रतीत हुआ ... वह नीचा, और अधिक नीचा होता गया, बग्घी उसमें से उबरकर ऊपर उठती मालूम हुई। देखते न देखते पहिए तथा घोड़ों की पूंछें नज़र आने लगीं, और अब – चांद की धुंधली रोशनी में – बड़ी बड़ी बूंदों से, ज़ोरदार छपाकों से उत्तेजित, हीरों की – नहीं, हीरों की नहीं – नील-मणियों की बौछारों को बिखेरते हुए, संयुक्त रूप में पूरा ज़ोर लगाकर घोड़े हमें रेतीले तट पर खींच लाये, और दुलकी चाल से पहाड़ी ढलुवान की ओर जानेवाली सड़क पर बढ़ चले। उनकी उजली बुर्राक टांगें जैसे होड़ में कौंध रही थीं।

"फ़िलोफ़ेई अब क्या कहेगा?" यह ख़याल मेरे मस्तिष्क में कौंधा। "देखा आपने, मेरी बात ठीक निकली!" या ऐसे ही कुछ और। लेकिन उसने कुछ नहीं कहा। सो मैंने भी लापर्वाही के लिए उसे कोंचना आवश्यक नहीं समझा, और घास पर लेटते हुए फिर सोने की कोशिश करने लगा।

* * *

लेकिन मुझे नींद नहीं आयी, इसलिए नहीं कि मैं शिकार से थका हुआ नहीं था, न ही इसलिए कि जो विचलित कर देनेवाला अनुभव मुझे अभी हुआ था उसने मेरी नींद को छिन्न-भिन्न कर दिया था, बल्कि

इसलिए कि हम अतीव सुन्दर प्रदेश के बीच से गुज़र रहे थे। विस्तृत, दूर दूर तक फैले, नदी के तट पर घास की हरियाली से भरे चरागाह, प्रचुर परिमाण में छोटी छोटी तलैयां, झीलें, नन्ही नदियां-खाड़ियां जो छोरों पर टहनियों तथा बेंतों से आच्छादित थीं—एक बाक़ायदा रूसी दृश्यपट, ऐसा जिसे रूसी प्यार करते हैं, उन दृश्यों की भांति जिनमें हमारी पुरानी गाथाओं के वीर नायक सफ़ेद हंसों तथा भूरी बत्तखों का शिकार करने घोड़ों पर निकलते थे। सड़क जिसपर हम जा रहे थे, पीले फ़ीते की भांति बल खाती चली गयी थी। घोड़े आसानी से दौड़ रहे थे, और मैं अपनी आंखें बंद नहीं कर सका। मैं मुग्ध था। और यह सब, चांद के सहृदय आलोक से मृदु, एक-लय आंखों के सामने तैर रहा था। फ़िलोफ़ेई तक उससे आर्द्र हो उठा था।

"ये सन्त येगोर के चरागाह कहलाते हैं," मेरी ओर मुड़ते हुए उसने कहा। "और इनसे परे बड़े राजकुमार के चरागाह हैं। सारे रूस में इनके जोड़ के चरागाह और कहीं नहीं हैं ... ओह, कैसे सुन्दर हैं!" जोतवाले घोड़े ने नथुने फरफराये और अपने बदन को थरथराया। "ख़ुदा बख़्शे तुम्हें!" दबे स्वर में गम्भीरता के साथ फ़िलोफ़ेई ने टिप्पणी की। "कितने सुन्दर हैं!" उसास लेते हुए उसने दोहराया। इसके बाद उसने एक लम्बी-सी हुंकार भरी। "कटाई का समय एकदम सिर पर आ लगा है, और सोचो तो, कितनी घास वे वहां बटोरेंगे! पहाड़ के पहाड़! और खाड़ियों में ढेर की ढेर मछलियां! ओह, इत्ती ब्रीम मछलियां!" सुरदार आवाज़ में उसने अन्त में कहा। "बस समझ लो, जीवन मधुर है—मरने को जी नहीं चाहता!"

अचानक उसने अपना हाथ उठाया।

"वह देखो, झील के ऊपर ... वहां वह बगुला ही तो खड़ा है न? क्या वह रात को मछलियां पकड़ रहा है? ख़ुदा बख़्शे! यह तो टहनी है, बगुला नहीं! ओह, ग़लती हुई। लेकिन चांद हमेशा ऐसे ही आंखमिचौनी खेला करता है!"

सो हम चलते गये, चलते गये। लेकिन अब चरागाह ख़त्म होने लगे थे, पेड़ों के छोटे छोटे झुरमुट तथा जोते हुए खेत नज़र आने लगे थे। एक बाज़ू एक छोटा-सा गांव कौंध गया जिसमें दो या तीन बत्तियां जल रही थीं। बड़ी सड़क अब केवल तीन-एक मील दूर थी। मैं नींद की गोद में ढुरक गया।

मैं फिर अपनी इच्छा से नहीं जागा। इस बार फ़िलोफ़ेई की आवाज़ ने मुझे जगाया।

"मालिक ... मालिक हो!"

मैं उठ बैठा। बग्घी समतल भूमि पर, राजमार्ग के ठीक बीचोंबीच, थिर खड़ी थी। फ़िलोफ़ेई जो कोचवान की गद्दी पर घूमकर मेरी ओर मुंह किये था, आंखों को ख़ूब फाड़े (उन्हें देखकर मुझे वाक़ई आश्चर्य हुआ, मैं सोच तक नहीं सकता था कि उसकी आंखें इतनी बड़ी हैं) रहस्यमय अन्दाज़ के साथ फुसफुसा रहा था–

"खड़खड़ ... पहियों की खड़खड़!"

"क्या कहते हो तुम?"

"मैं कहता हूं, खड़खड़ हो रही है! ज़रा झुककर सुनिये। क्यों, सुनाई देती है?"

मैंने अपना सिर बग्घी से बाहर निकाला, अपना सांस रोका, और सचमुच कहीं दूर, हमारे बहुत पीछे, धुंधली टूटी हुई आवाज़ मुझे सुनाई दी, पहियों के लुढ़कने जैसी।

"क्यों, सुनाई देती है?" फ़िलोफ़ेई ने दोहराया।

"हां, सुनाई देती है," मैंने जवाब दिया, "कोई गाड़ी आ रही है।"

"और आपको सुनाई देती है ... शू-ऊ-ऊ! घंटियां ... और साथ में सीटी की आवाज़ ... सुनाई देती है न? अपनी टोपी उतार लीजिये ... ज़्यादा अच्छा सुनाई देगा।"

था। चारों ओर सपाट, नीरस प्रदेश। बस खत ही खेत, खेतों के सिवा और कुछ नहीं – इक्की-दुक्की झाड़ियां और खड्ड – और फिर खेत, ज़्यादातर परती ज़मीन, कहीं कहीं विरल जंगली घास उगता हुआ। बिल्कुल वीरान... मौत की भांति। काश, किसी लवा-पक्षी की ही आवाज़ सुनाई दे जाती!

हम आधे घंटे तक तेज़ी से बढ़ते रहे। फ़िलोफ़ेई बराबर अपने चाबुक को फटकार और होंठों से टिटकार रहा था। लेकिन न तो उसने एक शब्द कहा, और न मैंने। पहाड़ी ढलुवान पर हमने चढ़ना शुरू किया... फ़िलोफ़ेई ने घोड़ों को खींचा, और तुरंत फिर कहा –

"यह पहियों की खड़खड़ है, मालिक। हां, सचमुच है!"

मैंने फिर बग्घी में से अपना सिर बाहर निकाला, लेकिन ऐसा करने की कोई ज़रूरत नहीं थी, छत के नीचे रहते हुए भी – इतनी सुस्पष्टता से, हालांकि अभी भी दूर से, गाड़ी के पहियों के खड़खड़ाने की, लोगों के सीटियां बजाने की, घंटियों की टनटन की, यहां तक कि घोड़ों की पदचाप की भी आवाज़ आ रही थी। इतना ही नहीं, मुझे कुछ ऐसा भास हुआ जैसे गाने तथा हंसने की आवाज़ें भी सुनाई दे रही हों। यह सच है कि हवा उधर से ही आ रही थी, लेकिन इसमें शक नहीं कि वे अब हमसे पौन, या शायद डेढ़-एक मील से ज़्यादा दूर नहीं थे।

फ़िलोफ़ेई और मैंने एक-दूसरे की ओर देखा। उसने केवल अपनी टोपी को पीछे से चुटकिया कर माथे पर खिसकाया, और फ़ौरन रासों के ऊपर झुकते हुए, घोड़ों पर चाबुक बरसाना शुरू कर दिया। वे सरपट भाग चले, लेकिन अधिक देर तक वे सरपट नहीं दौड़ सके, और फिर दुलकी चलने लगे। फ़िलोफ़ेई उनपर चाबुक फटकारता रहा। हमें निकल भागना चाहिए!

कह नहीं सकता कि क्यों, लेकिन – बावजूद इसके, शुरू में फ़िलोफ़ेई की आशंकाओं में मैंने योग नहीं दिया था – अब अचानक मेरे मन में भी यह बात बैठ गयी कि राहज़न सचमुच हमारा पीछा कर रहे हैं...

कोई नयी चीज़ मैंने नहीं सुनी थी – वही घंटियां, वही ख़ाली गाड़ी की खड़खड़, वही बीच बीच में सीटियों की आवाज़, वही अस्पष्ट शोर... लेकिन अब मुझे कोई शक नहीं था। फ़िलोफ़ेई ग़लत नहीं कह सकता!

और अब बीस मिनट और बीत गये। इन आख़िरी बीस मिनटों के दौरान में, अपनी गाड़ी की खड़खड़ तथा घरघर को वेधकर, हम एक अन्य खड़खड़ तथा घरघर को सुन सकते थे।

"रुको, फ़िलोफ़ेई," मैंने कहा, "इससे कोई लाभ नहीं – अन्त तो एक ही होना है।"

फ़िलोफ़ेई ने एक सहमी-सी 'वो!' का उच्चार किया। घोड़े उसी क्षण रुक गये, मानो सुस्ताने का मौक़ा पाकर वे ख़ुश हुए हों।

ख़ुदा रहम करे! घंटियां अब ठीक हमारी पीठ के पीछे कुहराम मचाये थीं, गाड़ी खड़खड़ा और चरचरा रही थी, और लोग सीटियां बजा रहे थे, चिल्ला रहे थे, और गा रहे थे, घोड़े फुंकार और अपने खुरों से धरती को धुन रहे थे...

वे हमारे निकट आ लगे!

"आफ़त आयेगी," फ़िलोफ़ेई ने निश्चय के साथ दबे स्वर में टिप्पणी की, और अनिश्चितता के साथ घोड़ों को टिटकारते हुए उन्हें फिर आगे बढ़ने के लिए उकसाने लगा। लेकिन ठीक उसी क्षण अचानक एक लपका-झपकी-सी हुई और एक बहुत बड़ी तथा चौड़ी गाड़ी, जिसमें तीन सींकिया घोड़े जुते थे, तेज़ी से कन्नी काटती बराबर में आयी, सरपट आगे निकली और फ़ौरन हमारी राह को रोककर क़दम चाल से चलने लगी।

"बिल्कुल लुटेरों की ही चाल खल रहे हैं!" फ़िलोफ़ेई बुदबुदाया।

मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मैंने अपने हृदय में एक ठंडी कंपकंपी का अनुभव किया ... धुंधली चांदनी के अध-अंधियारे में, उद्विग्नचित्त, मैं सामने की ओर ताकने लगा। हमारे सामने गाड़ी में – अध-बैठे और

अध-लेटे – क़मीज़ और बटन-खुले कोट पहने, लगभग छः आदमी थे। उनमें से दो टोपी नहीं लगाये थे। भीमाकार पांव, बड़े बूट पहने, गाड़ी की रेलिंग के ऊपर से झूल और लटक रहे थे, बांहें उठ और गिर रही थीं, बदन आगे और पीछे की ओर हिचकोले खा रहे थे ... यह बिल्कुल साफ़ था ... मण्डली नशा किये है ... कुछ यूं ही बेमतलब ऊंची आवाज़ में गाये जा रहे थे, उनमें से एक बहुत ही सही तथा तेज़ सीटी बजा रहा था, दूसरा गालियां बक रहा था। कोचवान की जगह पर, भेड़ की खाल का कोट पहने, एक दानव-सा बैठा गाड़ी को हांक रहा था। वे क़दम चाल से चल रहे थे, मानो हमारी ओर उनका कोई ध्यान ही न हो।

क्या किया जाय? हम भी क़दम चाल से उनके पीछे पीछे चल रहे थे... कुछ और हम कर भी नहीं सकते थे।

क़रीब चौथाई मील तक हम ऐसे ही चलते रहे। इस तनाव में रहना भारी यन्त्रणा थी ... अपने-आपको बचाने, रक्षा करने का सवाल ही नहीं था। वे छः थे, और मेरे पास एक छड़ी तक नहीं थी। तो क्या हम वापिस मुड़ चलें? लेकिन वे हमें उसी क्षण धर दबोचेंगे। मुझे जुकोवस्की की एक पंक्ति याद हो आयी (उस प्रसंग की जहां वह फ़ील्डमार्शल कामेन्स्की की हत्या का ज़िक्र करता है) –

कुटिल कुल्हाड़ी, बदमाश राहज़न की ...

या फिर – घिनौनी रस्सी का फंदा ... एक खाई में पटका जाना ... वहां जाल में फंसे ख़रगोश की भांति छटपटाना और दम घुटकर ...

उफ़, भयानक!

और वे, पहले की भांति, क़दम चाल से टुरक रहे थे, हमारी ओर कोई ध्यान न देते हुए।

"फ़िलोफ़ेई!" मैं फुसफुसाया, "ज़रा कोशिश तो करो, थोड़ा दाहिनी ओर दबकर; देखो, अगर आगे निकला जा सके।"

फ़िलोफ़ेई ने कोशिश की—दाहिनी ओर को वह दबा, लेकिन वे भी तुरंत दाहिनी ओर को हो गये। बराबर में से निकलना असम्भव था।

फ़िलोफ़ेई ने एक और प्रयास किया। बाईं ओर को वह दबा। लेकिन, इस बार भी, उन्होंने उसे गाड़ी से आगे नहीं निकलने दिया। वे ज़ोरों से हंसने भी लगे। इसका मतलब यह था कि वे हमें निकलने नहीं देंगे।

"ये बुरे लोग हैं," अपने कंधे के ऊपर से फुसफुसाते हुए फ़िलोफ़ेई ने कहा।

"लेकिन ये इन्तज़ार किसका कर रहे हैं?" मैंने फुसफुसाकर पूछा।

"पुल पर पहुंचने का—वह सामने—तलहटी में, नदी के ऊपर। वे वहां हमारी ख़बर लेंगे! हमेशा ऐसा ही करते हैं ... पुलों की ओट में। अब हमारी ख़ैर नहीं, मालिक!" उसास भरते हुए फिर उसने जोड़ा, "वे हमें शायद ही जीता छोड़ें। यह उनके लिए एक बहुत बड़ी बात है कि सब कुछ छिपा रहे। मुझे एक बात का अफ़सोस है, मालिक, मेरे घोड़े चले जायेंगे, और मेरे भाई उन्हें नहीं पा सकेंगे!"

मुझे उस समय आश्चर्य होना चाहिए था कि फ़िलोफ़ेई अभी भी, ऐसे क्षणों में भी, अपने घोड़ों के लिए चिन्तित हो सकता है, लेकिन—मुझे स्वीकार करना चाहिए, मुझे उसकी कोई सुध नहीं थी। "क्या वे सचमुच मुझे मार डालेंगे?" बार बार यही मैं अपने मन में सोच रहा था। "वे मुझे क्यों मारेंगे? मैं उन्हें हर चीज़ दे दूंगा जो मेरे पास है ..."

और पुल निकट और अधिक निकट आता जा रहा था, और उसे अधिकाधिक स्पष्टता के साथ देखा जा सकता था।

अचानक एक तेज़ हुप-सी आवाज़ सुनाई दी। हमारे सामने की गाड़ी, जैसे, आगे की ओर उड़ चली, तीर की भांति और पुल के पास पहुंच, सड़क के थोड़ा एक ओर, फ़ौरन रुककर एकदम थिर खड़ी हो गयी। मेरा हृदय, सीसे की भांति डूब रहा था।

"ओह, भाई फ़िलोफ़ेई," मैंने कहा, "हम अब मौत के मुंह में जा रहे हैं। माफ़ करना यदि मैं ही तुम्हें इस मुसीबत में खींच लाया हूं।"

"इसमें, मालिक, आपका क्या क़सूर है! भाग्य से भी भला कोई बच सकता है! चलो, झबराले, बेटा, तुमपर मुझे विश्वास है," फ़िलोफ़ेई ने जोतवाले घोड़े को संबोधित किया, "ज़रा बढ़ तो चलो, भाई! अपनी आख़िरी सेवा कर डालो! जो होना है, सो तो होगा ही, भगवान हमपर कृपा कीजिये!"

और उसने अपने घोड़ों को दुलकी चाल में डाल दिया।

हम पुल के निकट पहुंचने लगे – उस निश्चल, भयावनी गाड़ी के निकट। उसमें हर चीज़ निस्तब्ध थी, मानो इरादतन। एक हुंकार तक नहीं। यह पाइक या बाज़ की, शिकार करनेवाले प्रत्येक पक्षी की, ख़ामोशी थी – उस समय की ख़ामोशी जब शिकार निकट आ रहा होता है। और अब हम गाड़ी के बराबर में पहुंच गये थे ... अचानक, भेड़ की खाल का कोट पहने एक दानव, गाड़ी में से उछला और सीधा हमारी ओर लपका!

उसने फ़िलोफ़ेई से कुछ नहीं कहा, लेकिन फ़िलोफ़ेई ने – अपनी मर्ज़ी से – रासों को झटका। बग्घी रुक गयी।

दानव ने अपनी दोनों बांहें बग्घी के दरवाज़े पर रखीं और मुस्कराते हुए अपने झबराले सिर को आगे की ओर झुकाते हुए, फ़ैक्टरी-मज़दूर के लहजे में धीमी, समतल आवाज़ में कहा –

"माननीय श्रीमान, हम एक अच्छी दावत से – शादी की दावत से – लौट रहे हैं; हम अपने एक बहुत ही बढ़िया साथी को ब्याह कर आ रहे हैं – यानी हमने उसे सुला दिया है; हम सब जवान लड़के हैं, लापरवाह जीव – जी भरकर पीना-पिलाना हुआ, ख़ुमार दूर करने के लिए थोड़ी-सी शराब और पी लें। सो श्रीमान, बड़ा अच्छा हो अगर आप थोड़ी, बहुत ही थोड़ी – बस हरेक साथी के लिए एक एक वोद्का का पौआ ख़रीदने की किरपा करें। हम आपके स्वास्थ्य का जाम पियेंगे, और

आपको याद करेंगे। लेकिन अगर आप हमपर मेहरबानी नहीं करेंगे तो, हमारी बिनती है कि हम पर नाराज़ न होना!"

"क्या मतलब है इसका?" मैंने सोचा। "क्या यह मज़ाक है? हंसी-ठिठोली है?"

दानव सिर झुकाये खड़ा रहा। ठीक उसी क्षण चांद धुंध में से उबरा और उसके चेहरे को आलोकित कर दिया। उसके चेहरे पर, उसकी आंखों में, उसके होंठों पर, मुसकान खेल रही थी। लेकिन उसमें ऐसी कोई चीज़ नहीं थी जो डरानेवाली हो ... केवल ऐसा मालूम होता था जैसे वह, ऊपर से नीचे तक, चौकस हो ... और उसके दांत इतने सफ़ेद और इतने बड़े बड़े ...

"ख़ुशी से ... यह लीजिये ..." उतावली के साथ मैंने कहा, और अपनी जेब में से बटुवा निकालते हुए चांदी के दो रूबल – तब रूस में चांदी का प्रचलन था – दो रूबल मैंने बाहर निकाले – "लीजिये, अगर इनसे काम चल जाय।"

"बहुत शुक्रिया!" सैनिक ढंग से दानव ने कहा, और उसकी मोटी उंगलियों ने आनन-फ़ानन में मुझसे झपट लिया – समूचे बटुवे को नहीं, बल्कि केवल दो रूबलों को। "बहुत शुक्रिया!" उसने अपने बालों को पीछे की ओर झटका और गाड़ी की ओर दौड़ गया।

"लड़को!" वह चिल्लाया, "महानुभाव ने हमें चांदी के दो रूबल भेंट किये हैं!" वे सब, जैसे, एकबारगी चहक उठे। दानव लुढ़ककर कोचवान की जगह पर जा बिराजा।

"ख़ुदा आपको ख़ुश रखे, मालिक!"

इसके बाद वे फिर दिखाई नहीं दिये। घोड़े आगे की ओर लपके, गाड़ी ढलुवान पर चढ़ी। धरती को आकाश से अलग करनेवाली रेखा पर एक बार फिर उसने उभारा लिया, नीचे उतरी और आंखों से ओझल हो गयी।

ग्रौर ग्रब पहियों की खड़खड़, चिल्लाने ग्रौर घंटियों की ग्रावाज़, कुछ भी नहीं सुनी जा सकती थी।

मृत्यु जैसी निस्तब्धता छायी थी।

* * *

फ़िलोफ़ेई ग्रौर मैं एकाएक ग्रपनी होश में नहीं ग्रा सके।

"ग्रोह, कैसे हंसी-मज़ाक के शौक़ीन निकले!" ग्राखिर उसने टिप्पणी की, ग्रौर ग्रपनी टोपी उतारकर क्रॉस के चिन्ह बनाने लगा। "हंसी-मज़ाक का शौक़ीन, सच," उसने फिर कहा ग्रौर मेरी ग्रोर घूम गया, खुशी से छलछलाता हुग्रा। "कैसा बढ़िया जीव था वह, सच। बस, बस, बस, मेरे नन्हे-मुन्ने, ग्रब जरा होशियार हो जाग्रो! ग्रब कोई ख़तरा नहीं। ग्रब कोई ख़तरा नहीं! यही था वह जो हमें ग्रागे नहीं निकलने देता था, यही था वह जो घोड़ों को हांक रहा था। ग्रौर उसका मज़ाक करना तो देखो! बस, बस, ग्रब चले चलो, खुदा के नाम पर!"

मैं कुछ नहीं बोला, लेकिन मैं भी खुश था। "ग्रब कोई ख़तरा नहीं!" मैंने मन ही मन दोहराया, ग्रौर घास के ऊपर लेट गया। "चलो, सस्ते छूटे!"

बल्कि, जुकोवस्की की उस पंक्ति को याद करने पर, मैंने ग्रापेक्षाकृत शर्म का भी ग्रनुभव किया।

ग्रचानक मुझे एक ख़याल ग्राया।

"फ़िलोफ़ेई!"

"क्या है?"

"क्या तुम विवाहित हो?"

"हां"।

"ग्रौर क्या तुम्हारे बाल-बच्चे हैं?"

"हां।"

"तो यह कैसे हुआ कि तुम्हें उनका ख़याल नहीं आया? तुमने अपने घोड़ों के लिए अफ़सोस प्रकट किया; क्या तुम्हें अपनी घरवाली और बच्चों के लिए अफ़सोस नहीं हुआ?"

"उनके लिए अफ़सोस किस बात का? आप जानो, वे कोई चोरों के चंगुल में तो फंसने जा नहीं रहे थे। लेकिन वे बराबर मेरे ध्यान में रहे, और अब भी हैं... निश्चय!" फ़िलोफ़ेई रुका। "हो सकता है ... उनकी ख़ातिर ही सर्वशक्तिमान प्रभु ने हमपर तरस खाया हो!"

"लेकिन वे लुटेरे नहीं भी तो हो सकते थे?"

"यह हम कैसे कह सकते हैं? क्या कोई दूसरे की आत्मा में पैठ सकता है? दूसरे की आत्मा, आप जानो, एक अंधेरी जगह है। लेकिन, हृदय में भगवान का ध्यान हो, तो हमेशा भला होता है। नहीं, नहीं! मुझे बराबर अपने बीवी-बच्चों का ख़याल था ... ए, हो ... ज़रा तेज़ी से ... मेरे नन्हे-मुन्ने, ख़ुदा के नाम पर!"

क़रीब क़रीब दिन का उजाला फैल चला था। हम तूला के निकट पहुंचे। मैं लेटा था, स्वप्निल और उनींदा।

"मालिक," अचानक फ़िलोफ़ेई ने मुझसे कहा, "वह देखो, वे वहां सराय में रुके हैं ... उनकी गाड़ी!"

मैंने अपना सिर उठाया। वे वहां थे, और उनकी गाड़ी, और घोड़े। शराबख़ाने की चौखट पर अचानक हमारा परिचित – भेड़ की खाल का कोट पहने वही दानव – नमूदार हुआ। "श्रीमान!" अपनी टोपी फहराते हुए वह चिल्लाया, "हम आपकी सेहत का जाम छलका रहे हैं! ए कोचवान," उसने फिर कहा, फ़िलोफ़ेई की ओर अपना सिर हिलाते हुए, "तुम थोड़ा डर गये थे, क्यों?"

"आदमी मज़ेदार है!" फ़िलोफ़ेई ने अपना मत प्रकट किया, लेकिन तभी जब हम सराय से पचास-एक गज़ आगे निकल गये।

आख़िर हम तूला पहुंचे। मैंने छर्रे ख़रीदे, लगे हाथ चाय और दारू पिया, और यहां तक कि घोड़े के सट्टेबाज़ से एक घोड़ा भी ख़रीद लिया।

दोपहर को हम फिर घर के लिए रवाना हुए। जब हम उस जगह के पास से गुजरे जहां हमने पहले-पहल अपने पीछे गाड़ी की खड़खड़ सुनी थी तो फ़िलोफ़ेई, जो तूला में थोड़ा रंग-पानी कर चुका था, बड़ा बातूनी निकला – उसने मुझे परियों की कहानियां तक सुनानी शुरू कर दीं – और उस जगह से गुज़रते समय अचानक हंसने लगा।

"आपको याद है, मालिक, किस प्रकार मैंने आप से रट लगाये रखी, 'खड़खड़ ... पहियों की खड़खड़,' मने कहा।"

उसने कई बार हवा में अपना हाथ फहराया। यह फ़िकरा उसे अत्यन्त रोचक लगा था।

उसी सांझ हम उसके गांव वापिस जा पहुंचे।

येरमोलाई से उस जोखिम का मैंने वर्णन किया जिसमें हम पड़ गये थे। चूंकि उस वक़्त वह शराब नहीं पिये हुए था, इसलिए उसने कोई सहानुभूति प्रकट नहीं की। उसने केवल एक हुंकारा-सा भरा – समर्थन का अथवा झिड़की का, मेरा ख़याल है कि यह वह ख़ुद भी नहीं जानता था। लेकिन दो दिन बाद उसने, भारी सन्तोष के साथ, मुझे सूचित किया कि ठीक उसी रात जबकि फ़िलोफ़ेई और मैं तूला की ओर प्रयाण कर रहे थे, ठीक उसी सड़क पर, एक सौदागर को लूटा गया और उसकी हत्या कर डाली गयी। पहले तो मैंने इसपर कुछ ज़्यादा विश्वास नहीं किया, लेकिन बाद में मुझे इसपर विश्वास करने के लिए बाधित होना पड़ा – जब कान्स्टेबल द्वारा इसकी पुष्टि हुई जिसे, घटना के सिलसिले में, अपने घोड़े को सरपट दौड़ाकर आना पड़ा था। कौन जाने, कहीं यही तो वह 'शादी' नहीं थी जिसे मनाकर हमारे वे वीर लौट रहे थे? क्या यही तो वह 'बढ़िया जीव' नहीं था जिसे उन्होंने सुला दिया था – उस हंसमुख दानव के शब्दों में। मैं फ़िलोफ़ेई के गांव में पांच दिन तक और रुका। जब भी मैं उससे मिलता, हमेशा कहता –

"कहो भाई, पहियों की खड़खड़?"

"कैसा ज़िन्दादिल आदमी था!" वह हमेशा कहता, और हंसने लगता।

बन और स्तेप

... और जाने किस प्रेरणा ने
उसके हृदय को
वापिस देहात की ओर खींचना शुरू किया,
उस अंधियारे बाग़ की ओर
जहां लीपा के पेड़—
इतने भीमाकार, और छाया से भरपूर,
जहां लिली के फूल अपनी सुगन्धि बिखेरते हैं,
और जहां पानी के किनारे इर्द-गिर्द
उगे थे बेंत-वृक्ष—
बांध पर से झुके पांतों में,
और जहां बलूत का पेड़ ज़ोरावर उगता है ज़ोरावर खेत में,
सन की गंध और बिछुए की पांतों के बीच ...
वहां, दूर तक फैले खेतों में
जहां की धरती सम्पन्न और मख़मल-सी काली,
जहां रई, दूर जहां तक जाती आंख
सरसराती निःशब्द मृदु तरंगित लहरियों में
और जहां गोल-मटोल, उजले, पारदर्शी बादलों से
झरता है भारी स्वर्णिम प्रकाश, रमता है मन वहीं...
(एक कविता से जो लपटों को अर्पित कर दी गयी।)

बहुत सम्भव है कि पाठक मेरे शब्द-चित्रों से पहले ही ऊब चुके हों, उन्हें तुरंत आश्वस्त करने के लिए मैं वचन देता हूं कि अब तक जो अंश छप चुके हैं, उन्हीं तक मैं अपने-आपको सीमित रखूंगा।

लेकिन जब विदा ही ले रहा हूं तो शिकारी के जीवन के बारे में दो-चार शब्द कहने का मोह मैं संवरण नहीं कर सकता।

कुत्ते और बन्दूक़ के साथ शिकार पर जाना स्वयं अपने में एक आह्लादपूर्ण चीज़ है – 'für sich'* जैसा कि पुराने दिनों में कहा करते थे, लेकिन मान लो कि आप जन्मजात शिकारी नहीं हैं, लेकिन – फिर भी – प्रकृति और आज़ादी से आपको प्रेम है। तब, आप, हम शिकारियों पर रश्क किये बिना नहीं रह सकते ... सुनिये।

मिसाल के लिए, क्या आप वसन्त-ऋतु में दिन निकलने से पहले ही रवाना होने के आनन्द से परिचित हैं? आप बाहर पैड़ियों पर निकल आते हैं ... सांवले-भूरे आकाश में जहां-तहां तारे टिमटिमा रहे हैं, सुबह की नम हवा के धुंधले झोंके जब-तब लपककर आपका स्पर्श करते हैं, रात की गुप्त, धुंधली, फुसफुसाहट सुनाई पड़ रही है। अंधियारे में लिपटे पेड़ धीमे धीमे सरसरा रहे हैं। और अब लोग गाड़ी में एक दरी और आपके पांवों के पास एक बक्सा जमा देते हैं जिसमें समोवार रखा हुआ है। बाजूवाले घोड़े कसमसाते हुए हरकत करते हैं, नथुनों को फरकाते और नफ़ासत के साथ धरती को अपने खुरों से खुरचते हैं। श्वेत कलहंसों का एक जोड़ा, अभी भी नींद में मदमाता, अलस भाव से और चुपचाप, सड़क के इस ओर से उस ओर निकल जाता है। बाड़े के उस ओर, बग़ीचे में, चौकीदार निश्चिन्तता के साथ ख़र्राटे भर रहा है। प्रत्येक ध्वनि, ऐसा मालूम होता है, जैसे ठण्डी हवा में थिर हो गयी हो – निश्चल लटक गयी हो। आप गाड़ी में अपनी जगह ग्रहण करते हैं, घोड़े तुरंत चल पड़ते हैं, और गाड़ी ज़ोरों से गड़गड़ाती लुढ़कने लगती है ... आप बढ़ चलते हैं – गिरजे के पास से, पहाड़ी ढलुवान पर से दाहिनी ओर को मुड़ते, बांध को पार करते हैं ... तलैया पर धुंध का बिछावन अभी

* अपने-आप के लिए।

बिछना ही शुरू हुआ है। आपको अपेक्षाकृत कुछ ठंड मालूम होती है, ग्रेटकोट के कालर को आप मोड़ लेते हैं। आप उनींदे हो चलते हैं। सड़क पर जगह जगह खड़े पानी में से घोड़े छप-छप करते जा रहे हैं। कोचवान मुंह से सीटी बजाना शुरू करता है। लेकिन अब तक आप तीन मील से अधिक पार कर चुकते हैं... आकाश का कगारा गुलाबी आभा से दमक उठा है, बर्च-वृक्षों में भद्दे ढंग से पर फड़फड़ाते कौवों की कांव कांव कानों से आकर टकराती है। पुआल के ढेरों के इर्द-गिर्द गौरैयां चूं चूं करती हैं। हवा में अब अधिक निखार है, सड़क ज़्यादा साफ़ नज़र आती है, आकाश खिल उठा है और बादल अधिक उजले तथा खेत अधिक हरे नज़र आते हैं। झोंपड़ियों में जलती हुई छेपटियों का लाल आलोक फैला है, फाटकों के पीछे उनींदी आवाज़ें सुनाई देती हैं। और इस बीच उषा की लाल आभा फूटना शुरू होती है। आकाश के आर-पार सोने की पारियां खिंच गयी हैं। खाई-खड्डों के ऊपर वाष्पीय धुंध के बादल घने हो रहे हैं। लार्क-पक्षी प्रभातगीत गा रहे हैं। मन्द समीर जो ऊषा की पेशवाई करती है, बह रही है, और रक्तवर्ण सूर्य धीरे धीरे ऊपर उठ रहा है। प्रकाश की जैसे एक पूरी बाढ़ आ जाती है, और आपका हृदय पक्षी की भांति फड़क उठता है। हर चीज़ ताज़ा, मगन और आह्लाद भरी है। चारों ओर खूब दूर तक, हर चीज़ अब देखी जा सकती है। उधर बनखण्ड के उस पार, एक गांव; और वहां, और आगे, एक और गांव – अपने सफ़ेद गिरजे से शोभित, और वहां पहाड़ी पर बर्च के पेड़ों का एक जंगल; उसके पीछे दलदल जहां आपको पहुंचना है ... जल्दी, घोड़ो, जल्दी! बढ़े चलो, ज़रा अच्छी दुलकी चाल से बढ़े चलो! डेढ़-दो मील ही अब और रह गये हैं, अधिक नहीं। सूरज तेज़ी से अधिकाधिक ऊंचा उठ रहा है। आकाश साफ़ है। दिन आज का शानदार होगा। ढोर-डंगरों का एक रेवड़ गांव से आपकी ओर चला आ रहा है। आप पहाड़ी के ऊपर पहुंचते हैं ... ओह, क्या दृश्य है! नदी पांच-छः मील तक बल खाती चली गयी है, धुंध ने उसे धुंधले नीले रंग

में रंग दिया है। नदी के उस पार हरे रंग के चरागाह हैं, और चरागाहों से परे ढलुवां, पहाड़ियां। दूर, दलदल के ऊपर, प्लोवर-पक्षी ज़ोरों से चिचियाते चक्कर लगा रहे हैं। नमदार उजाले में दूरी सुस्पष्ट नज़र आती है ... गर्मियों की भांति नहीं। ओह, कितने उन्मुक्त भाव से वायु सांसों में भरती है, कितनी चपलता से अंग हरकत करते हैं, और समूचा मानव-वसन्त के ताजा श्वासों से परिवेष्टित – अपने-आपको कितना सबल अनुभव करता है!

और गर्मियों की सुबह – जुलाई मास की सुबह! शिकारी के सिवा भला और कौन जानता है कि भोर के समय झाड़ियों के बीच घूमना कितना सुहावना होता है! आपके पांव की छाप, ओस से सफ़ेद बनी घास पर, एक हरी-सी लीक छोड़ती जाती है। भीगी झाड़ियों में से आप देखते हैं और रात में संचित सुहावनी सुगंधि का एक झोंका आपसे आकर लिपट जाता है। वायु चिरायते के ताज़ा चरमरेपन से, मोथी और क्लोवर की शहद जैसी मिठास से, पगी है। दूर, बलूत के वृक्षों का एक जंगल दीवार की भांति खड़ा है और सूरज की किरनों में दमक और चमक रहा है। किरनों में अभी ताज़ापन है, लेकिन गर्मी के सान्निध्य का भी अनुभव होने लगा है। मीठी सुगंधों की अति मस्तिष्क में बेसुधी और मादकता का संचार करती है। झाड़ियों का अन्तहीन विस्तार है ... केवल कहीं कहीं, दूर, पकती हुई रई की पीली झलक और लाल मोथी की सकरी धारियां दिखाई देती हैं। तभी किसी गाड़ी के पहियों की चूं-चरर-मरर सुनाई पड़ती है। एक किसान झाड़ियों के बीच से राह बनाता आ रहा है और दिन की गर्मी के मारे अपने घोड़े को पहले से छांह में खड़ा कर देता है। आप उसका अभिवादन करते हैं, और दूसरी ओर घूम जाते हैं। पीछे से हंसिये की संगीतमय 'श-श-श' की सी ध्वनि आ रही है। सूरज ऊंचा, और ऊंचा, उठ रहा है। घास जल्दी ख़ुश्क हो जाती है। और गहरी उमस अब घिर आती है। एक घंटा बीतता है, फिर दूसरा ... क्षितिज पर आकाश संवलने लगता है। निस्तब्ध हवा चुनचुना देनेवाली

गर्मी से तप जाती है। "क्यों भाई, यहां पीने का पानी कहां मिल सकता है?" कटाई करते किसान से आप पूछते हैं। "उधर, खाई में एक कुवां है।" घास के आल-जाल में उलझी अखरोट की घनी झाड़ियों को पार कर आप एकदम खाई की तलहटी में उतर जाते हैं। ठीक चट्टान के नीचे एक छोटा-सा झरना छिपा है। बलूत की एक झाड़ी अपनी टहनियों को, बड़ी बड़ी लोलुप उंगलियों की भांति, पानी के ऊपर फैलाये है। बड़े बड़े रुपहले बुलबुले थरथराते हुए तलहटी से उठते हैं जो महीन मखमली काई से छायी है। आप धरती पर पसर जाते हैं, पानी पीते हैं, लेकिन आप इतने शिथिल हो गये हैं कि हिलने को जी नहीं चाहता। आप छांह की शरण लेते हैं, नमी भरी गंध का रस लेते हैं, सुस्ताने लगते हैं, जबकि झाड़ियां आपकी ओर ताकती रहती हैं, दमकती और जैसे सूरज की धूप में पीली पड़ती हुई। लेकिन वह क्या है? अचानक हवा का एक उड़ता हुआ झोंका आता है, चारों ओर का वायुमण्डल विचलित हो उठता है – क्या वह गड़गड़ाहट थी? आप खाई में से बाहर निकल आते हैं ... क्षितिज पर सुरमीले रंग की पट्टी के क्या माने? क्या वह गहन होती हुई गर्मी थी? कहीं तूफ़ान तो नहीं आ रहा? और अब बिजली की एक हल्की कौंध नज़र आती है ... हां, तूफ़ान आयेगा। सूरज अभी दमक रहा है। आप अभी भी शिकार के लिए जा सकते हैं। लेकिन तूफ़ान का बादल गहरा हो चला है। इसका अगला किनारा, एक लम्बी आस्तीन की भांति खिंचकर, मेहराब की शकल में ऊपर झुक आता है। घास, झाड़ियां, इर्द-गिर्द की प्रत्येक चीज़, अंधियारी हो उठती है ... जल्दी करो! वहां, उधर ऐसा मालूम होता है जैसे सूखी घास की कोठड़ी नज़र आ रही हो... जल्दी करो! दौड़कर वहां पहुंचते, भीतर जाकर शरण लेते! उफ़, ऐसी बारिश! बिजली की ऐसी चकाचौंध! बेंत की छत के किसी छेद में से भीनी गंधयुक्त सूखी घास पर पानी टपकने लगता है ... लेकिन अब सूरज फिर उजला चमक रहा है। तूफ़ान बीत गया। आप

बाहर निकल आते हैं। ओ मेरे भगवान, कितनी आनन्दपूर्ण चमक है हर चीज़ में! ताज़ा स्वच्छ वायु, स्ट्राबेरी और कुकुरमुत्तों की गंध!

और तब सांझ तिर आती है। आग की लपटों की दमक फैलती और आधे आकाश को घेर लेती है। सूरज छिप जाता है। आसपास की वायु एक विचित्र बिल्लौरी पारदर्शिता से युक्त है। दूर एक मृदु, आंखों को सुहावना लगनेवाला, नमी से भरा धुंधलका छाया है। अभी कुछ देर पहले तक स्वच्छ सोने की बाढ़ से प्लावित खेत, नीहार के साथ, रक्तवर्ण आभा में रंग जाते हैं। पेड़ों, झाड़ियों और पुआल के बड़े बड़े ढेरों से लम्बी छायाएं दौड़ चलती हैं ... सूरज छिप चुका है, सूर्यास्त के अग्निमय सागर में एक तारा टिमटिमा और थरथरा रहा है ... अब वह – अग्निमय सागर – पीला हो चला है। आकाश नीला रंग जाता है। पृथक् परछाइयां विलीन हो जाती हैं, वायु अंधेरे में डूब चलती है। अब समय है कि घर की ओर लौट चला जाय – गांव की उस झोंपड़ी की ओर जहां आप रात को टिकेंगे। अपनी बन्दूक़ को आप कंधियाते हैं, और – बावजूद थकान के – तेज़ डगों से आप चल पड़ते हैं ... इस बीच, रात घिर आती है। अब आप बीस डग आगे की चीज़ भी नहीं देख सकते। कुत्ते अंधियाले में धुंधले सफ़ेद नज़र आते हैं। वहां उधर, काली झाड़ियों के ऊपर, क्षितिज पर एक अस्पष्ट-सी चमक नज़र आती है। यह क्या है? आग तो नहीं? नहीं, यह चांद है जो ऊपर उठ रहा है। और इससे नीचे, दाहिने हाथ, गांव की रोशनियां अभी से टिमटिमा रही हैं ... और यह लीजिये, आख़िर आपकी झोंपड़ी आ गयी। खिड़की में से एक मेज़ दिखाई दे रही है, जिसपर सफ़ेद कपड़ा बिछा है, एक मोमबत्ती जल रही है, सांझ का भोजन ...

किसी एक अन्य अवसर पर, आप आदेश देते हैं कि बग्घी को बाहर लाया जाय, और ब्लैक ग्राउज़ का शिकार करने के लिए जंगल की ओर रवाना हो जाते हैं। रई की दो ऊंची दीवारों के बीच सकरे पथ से राह

बनाते गुज़रना बड़ा सुखद मालूम होता है। रई की बालें आपके चेहरे पर मृदु आघात करती हैं, नीलपोथे आपकी टांगों के इर्द-गिर्द चिपक जाते हैं, लवा-पक्षी चारों ओर गुहार मचाते हैं। घोड़ा असल दुलकी चाल अपनाये है। और यह लीजिये, जंगल आ गया – पूर्ण छाया, और निस्तब्धता। सिर के ऊपर खूब ऊंचे एस्प के सुडौल वृक्ष सरसरा रहे हैं, बर्च-वृक्षों की लम्बी लटकी हुई टहनियां मुश्किल से ही हिलती नज़र आती हैं, लीपा के एक सुन्दर वृक्ष की बग़ल में, विजेता की भांति, बलूत का एक शक्तिशाली पेड़ खड़ा है। छाया की धारियां पड़े हरे पथ के सहारे आप आगे बढ़ते हैं। बड़ी बड़ी पीली मक्खियां सुनहरी हवा में निश्चल रुकती और फिर, अचानक, उड़ जाती हैं। छोटी छोटी मक्खियां, झुंड बांधकर, मंडरा रही हैं – छाया में उजले, और धूप में अंधियाले। पक्षी, बिना किसी विघ्न बाधा के, गा रहे हैं। वार्बलर-पक्षी की मधुर लघु आवाज़ अनवरत हृदयोल्लास का गीत गाती है, जो घाटी में खिले लिली के फूलों की गंध के अनुरूप है। आगे, और आगे, जंगल की अधिक गहराइयों में ... जंगल अधिकाधिक गहन होता जाता है ... एक अकथ निस्तब्धता भीतर आत्मा पर छा जाती है। बाहर भी सभी कुछ स्थिर और स्वप्निल है। लेकिन अब हवा ज़ोर पकड़ती है, और पेड़ों की चोटियां उद्वेलित लहरों की भांति गूंजने लगती हैं। जहां-तहां, पिछले साल के भूरे पत्तों के बीच, लम्बी घास उगी है। कुकुरमुत्ते अपनी चौड़ी किनारों वाली टोपियां लगाये अलग खड़े हैं। अचानक एक ख़रगोश उछलकर बाहर निकलता है, कुत्ता उसके पीछे लपकता है, अपनी गूंजती आवाज़ में भूंकता हुआ ...

और यही जंगल, शरद् के आख़िर में, जब स्नाइप-पक्षी उड़ते हैं, कितना भला मालूम होता है! स्नाइप-पक्षी – जंगल के हृदय में नहीं रहते, उनकी टोह बाह्य छोरों में लेनी चाहिए। न हवा होती है, न सूरज, न रोशनी, न छाया, न कोई हरकत, न ध्वनि। शरद् की गंध, मदिरा की गंध की भांति मृदु वायु में घुली होती है। दूर, पीले खेतों के ऊपर, एक

मृदु धुंध लटकी है। नंगी भूरी टहनियों की झिलमिल में से थिर आकाश बहुत ही शान्त नज़र आता है। लीपा के पेड़ों पर, कहीं कहीं, अन्तिम सुनहरी पत्तियां हिलती हैं। नम धरती पांव के नीचे लचलचाती है। घास की ऊंची सूखी पत्तियां थिर हैं। सफ़ेद पड़ी घास पर लम्बे सूत चमकते दिखाई पड़ते हैं। शान्तचित्त से आप सांस लेते हैं, लेकिन आत्मा में एक विचित्र कम्पन का आभास होता है। आप जंगल के छोर के सहारे सहारे चलते हैं, अपने कुत्ते पर नज़र रखते हैं, और इस बीच प्रिय आकार, प्रिय चेहरे, मृत और जीवित, आपके मस्तिष्क में उभरने लगते हैं। मुद्दत से सोयी हुई स्मृतियां अप्रत्याशित रूप में जाग उठती हैं, और कल्पना तेज़ी से लपकती और पक्षी की भांति ऊंची उड़ानें भरने लगती है, और यह सब इतनी सुस्पष्टता के साथ गतिशील होता है और आपकी आंखों के सामने उभरकर आता है। कभी हृदय धड़कता और थरथराता है, गहरे अनुराग में उमड़कर आगे की ओर लपकता है, और कभी स्मृतियों में इतना डूब जाता है कि उबारे नहीं उबरता। आपका समूचा जीवन, जैसे सहज ही और तेज़ गति से, आपकी आंखों के सामने बिछ जाता है। ऐसे क्षणों में मानव अपने समूचे अतीत, अपनी समूची भावनाओं और अपनी शक्तियों का – अपनी समूची आत्मा का – स्वामी होता है, और इर्द-गिर्द कोई चीज़ ऐसी नहीं होती जो बीच में बाधा डाले – न सूरज, न हवा, न ध्वनि ...

और एक स्वच्छ, शरद् का अपेक्षाकृत ठंडा दिन, भोर में धुंध-पाले से युक्त – जब बर्च के वृक्ष, परियों की कहानी के पेड़ों की भांति ऊपर से नीचे तक स्वर्णिम, हल्के नीले आकाश की पृष्ठभूमि में चित्रवत उभरे नज़र आते हैं, जब सूरज – नीचे आकाश में स्थित – लापता नहीं बल्कि गर्मियों से भी अधिक उज्ज्वल चमक देता है, एस्प-वृक्षों का छोटा-सा बनखण्ड जब चमक की साकार प्रतिमा बन जाता है मानो अपनी नग्नता में वह खुश और आराम का अनुभव कर रहा हो, खाई-खड्डों की तलहटियों

में धुंध-पाले की सफ़ेदी जबकि अभी तक नज़र आती है, ताजा हवा गिरते हुए, चुरमुर पत्तों को जब मृदु भाव से सहलाती और उन्हें अपने साथ खदेड़ ले जाती है, जब नीलवर्ण लहरियां, खुशी से छलछलाती, नदी में किल्लोल करती और इधर-उधर छितरे कलहंसों तथा बत्तखों को ताल-लय के साथ झूला झुलाती हैं; दूर, नरसलों से आधी ढकी, चक्की चूं-चररर-मरर की आवाज़ करती है, और स्वच्छ वायु में बदलते हुए रंगों के साथ कबूतर तेज़ गति से उसके ऊपर चक्कर लगाते हैं...

गरमियों के धुंध भरे दिन भी, हालांकि शिकारी उन्हें पसन्द नहीं करते, मधुर होते हैं। ऐसे दिनों में उस पक्षी को भला कोई कैसे गोली का निशाना बना सकता है जो ठीक आपके पांवों के नीचे से फड़फड़ाकर निकलता और अधर लटकी धुंध के सफ़ेदी-मायल अंधियारे में पलक झपकते ओझल हो जाता है। लेकिन हर कहीं कितनी शान्ति है, कितनी अकथनीय शान्ति! हर चीज़ सजग है, और हर चीज़ निस्तब्ध है। आप एक पेड़ के पास से गुज़रते हैं। वह अपनी एक पत्ती तक नहीं हिलाता, वह अपने विराम में लीन है। क्षीण वाष्पीय धुंध के बीच से जो वायु में एकसार घुली है, सामने एक लम्बी काली रेखा दिखाई देती है। आप समझते हैं कि वह पास-पड़ोस का कोई बन है जो बिल्कुल आपके नज़दीक है। आप उसकी ओर बढ़ते हैं—और वह मेड़ पर उगे चिरायते के पौधों की एक ऊंची पांत में परिवर्तित हो जाता है। आपके ऊपर, आपके इर्द-गिर्द, सभी दिशाओं में—धुंध... लेकिन अब हवा धीमी हिलोरें ले रही है, पीले-नीले आकाश का एक अंश धुंधला-सा झांककर देखता है। क्षीण होती हुई, जैसे वाष्पीय, धुंध को वेधकर सूरज की रोशनी की स्वर्णिम-पीत किरन अचानक फूट पड़ती है, एक लम्बी धारा में बहती है, खेतों और बनों का स्पर्श करती है—और अब हर चीज़ पर फिर घटाटोप अन्धेरा छा जाता है। बहुत देर तक यह संघर्ष चलता है, लेकिन उस समय दिन कितना अकथनीय रूप में उजला तथा शानदार बन जाता

है जब अन्त में प्रकाश विजयी होता है और गरमायी हुई धुंध की अन्तिम लहरों की तहें खुलती और मैदानों के ऊपर फैल जाती हैं, या हवा के साथ उड़ती और गहरी, मृदु चमकती ऊंचाइयों में ग़ायब हो जाती हैं...

इस बार आप बाहिरी इलाक़े के लिए, स्तेप के लिए, रवाना होते हैं। कोई सात-आठ मील तक आप कच्ची सड़कों पर से गुज़रते हैं, और अन्त में, यह लीजिये, राजमार्ग पर आ जाते हैं। गाड़ियों की अन्तहीन पांतों, और खुले फाटकों, एक कुवें तथा सायबान के नीचे खौलते हुए समोवार से युक्त सड़क-किनारे की सरायों और एक के बाद दूसरे क़स्बे को आर-पार करते हैं, अन्तहीन खेतों के बीच से और सन के हरे खेतों के किनारे—देर तक, बहुत बहुत देर तक—आप चलते हैं। एक बेंत-वृक्ष से दूसरे पर मैगपाइ फरफराते हैं, किसान स्त्रियां हाथों में लम्बे पंजे लिए खेतों में चल रही हैं। पुराना नानकिन का लम्बा कोट पहने एक आदमी, कंधे पर झल्ली रखे, थका-सा अपने पांवों को घसीट रहा है। एक भारी ज़मींदार की बग्घी जिसमें छः ऊंचे दम-उखड़े घोड़े जुते हैं, सामने से चली आ रही है। गद्दी का एक कोना खिड़की से बाहर निकला है, पीछे ऊपर की ओर एक बोरे पर, पतली रस्सी से हिलगा, ग्रेटकोट पहने और भौंहों तक कीचड़ के छपाकों से लिथड़ा एक नौकर गुड़मुड़ी-सा बना है। और यह लीजिये, ज़िले का एक छोटा-सा नगर आ गया—लकड़ी के टेढ़े-मेढ़े छोटे छोटे घरों, अन्तहीन बाड़ों, सूनी पत्थर की इमारतों और गहरी खाई के ऊपर पुराने ढंग के अपने पुल से युक्त... आगे और आगे! आख़िर स्तेप के प्रदेश में आप आ पहुंचे। पहाड़ी की एक चोटी पर से आप देखते हैं—क्या दृश्य है! गोल नीची पहाड़ियां एकदम ऊपर तक जोती और बोयी हुईं, प्रशस्त उतार-चढ़ावों में हिलोरें लेतीं। झाड़ियों से आच्छादित चक्करदार खाइयां उनके बीच अपना व्यूह रचे हुए। छोटे छोटे बनखण्ड आयताकार द्वीपों की भांति छितरे हैं। एक गांव से दूसरे गांव तक सकरी पगडंडियों का जाल बिछा

है। गिरजों की सफ़ेदी नज़र ग्राती है। बेंत के झुरमुट की झाड़ियों की झिलमिल में से एक छोटी नदी चमचमा रही है, जिसमें चार जगह बांध बंधे हैं। खूब दूर, एक खेत में, एक पांत में, द्राखवा-वृक्ष खड़े हैं। अपने ग्राउट हाउसों, बग़ीचे और खलिहान से युक्त ज़मींदार का पुराना-सा घर नज़र ग्राता है जो एक छोटे-से ताल के किनारे दुबका-सिमटा है। लेकिन आप आगे, और आगे चलते हैं। पहाड़ियां छोटी, अधिकाधिक छोटी, होती जाती हैं। मुश्किल से कहीं कोई पेड़ नज़र ग्राता है। यह लीजिये, आख़िर हम आ पहुंचे — असीम, अनन्त स्तेप हमारे सामने फैली है!

और जाड़ों के दिनों में ऊंचे बर्फ़ के ढेरों पर से ख़रगोशों का पीछा करना, पाले में डूबी पैनी हवा अपने सांसों में भरना, मृदु बर्फ़ की चौंधिया देनेवाली सूक्ष्म चमचमाहट के मारे अपनी आंखों को अनायास आधा मूंदे हुए; लाली-मायल जंगल के ऊपर छाये मरकतमणी रंग के आकाश को मुग्ध भाव से निहारना! और वसन्त के पहले दिन जब हर चीज़ चमकती और प्रस्फुटित होती है, जब पिघलती बर्फ़ के भारी वाष्प से हिम-मुक्त धरती की गंध आनी शुरू हो चुकी होती है, जब उन स्थलों पर से जहां बर्फ़ पिघल चुकी है, सूरज की तिरछी किरनों के नीचे, लार्क-पक्षी विश्वास के साथ अपना स्वर छेड़ते और पानी की प्रबल धाराएं, प्रसन्नता से छलछलाती और गरजती-गूंजती, एक खाई से दूसरी में उमड़ती-बढ़ती हैं...

लेकिन अब ख़त्म करना चाहिए। एक बात और। वसन्त का मैंने ज़िक्र किया; वसन्त में विदा लेना आसान होता है; वसन्त में जो सुखी हैं वे भी कहीं दूर जाने के लिए ललकते हैं... अच्छा तो, पाठको, विदा। मेरी कामना है, अखण्ड सुख का आप उपभोग करें।

पाठकों से

विदेशी भाषा प्रकाशन गृह इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिज़ाइन सम्बन्धी आपके विचारों के लिए आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। हमारा पता है:

२१, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।

,ये किताबें पढ़िये!

मक्सिम गोर्की, 'इटली की कथाएं', पृष्ठ-संख्या २७६

गोर्की १६०६-१६१३ तक इटली में रहे। वहां के जीवन के अनुभव इस पुस्तक में दिये गये हैं। "मैंने इटली के जीवन की झांकियों को कथाओं का नाम दिया है," गोर्की ने लिखा, "क्योंकि वहां का प्राकृतिक सौन्दर्य और लोगों के रीति-रिवाज, वास्तव में वहां का समूचा जीवन ही, रूस के जीवन से इतना अधिक भिन्न है कि एक साधारण रूसी उसे परियों की कथाओं जैसा मान सकता है।"

कुल मिलाकर, इस पुस्तक में सत्ताईस कहानियां हैं और उनके विषय बहुत अलग अलग हैं। कई छोटी कहानियां हैं जिनका सम्बन्ध सामाजिक जीवन से या लोककथाओं से है या फिर वे इटली के साधारण जीवन के शब्द-चित्र हैं। एक कहानी में 'सिम्पलोन सुरंग' की खुदाई का वर्णन है, दूसरी कहानी में मां की महिमा की स्तुति गायी गयी है और इसी प्रकार एक अन्य कहानी का विषय है :- इटली के कंगालों में शादी कैसे होती है। कपरीओट्स की बहुत ही सुन्दर और रंग-बिरंगी झांकियां भी इस पुस्तक में हैं।

* * *

व० कोरोलेंको, 'अन्धा संगीतज्ञ' पृष्ठ-संख्या ३५१

व्लादीमिर कोरोलेंको (१८५३-१९२१) की इस प्रख्यात कहानी का विषय है—एक अन्धे लड़के का मानसिक विकास। लड़के को अपनी हीनता की पूरी चेतना है। यही चेतना उसके मानसिक संघर्ष का कारण बनती है। लेखक ने इसी मानसिक संघर्ष के मनोविज्ञान की गहराई में जाने की कोशिश की है। कहानी का नायक अपनी मानसिक हलचल पर क़ाबू पाकर, जिन्दगी में अपनी सही जगह तलाश कर लेता है। प्रतिभासम्पन्न संगीतज्ञ के रूप में, वह अपनी कला में, जन-साधारण की भावनाएं अभिव्यक्त करता है, उन्हीं के सुख-दुख को संगीत के स्वरों में बांधता है। इसी में वह अपने जीवन की सार्थकता समझता है, इसी में उसे सन्तोष और सुख मिलता है।

* * *

लेव तोल्स्तोय, 'बचपन', 'किशोरावस्था', 'युवावस्था',

पृष्ठ-संख्या ५१२

'बचपन' की कहानी, यह लेव तोल्स्तोय (१८२८-१९१०) की पहली साहित्यक रचना थी। उस समय उनकी उम्र थी—छब्बीस बरस। इसी कृति को वे एक लम्बे उपन्यास के रूप में बदलना चाहते थे। इस उपन्यास का शीर्षक होता—'विकास के चार चरण'। चौथा भाग कभी लिखा ही न गया। 'बचपन', 'किशोरावस्था' और 'युवावस्था', तोल्स्तोय की आत्मकथा, इन्हीं तीन हिस्सों में समाप्त हो जाती है। इन तीनों भागों का मुख्य पात्र है—निकोलेन्का इर्तेनयेव। उसके मानसिक विकास में स्वयं तोल्स्तोय के मानसिक विकास की कहानी छिपी है। अन्य पात्रों का सम्बन्ध तोल्स्तोय के रिश्तेदारों, परिवार के मित्रों, उनके अपने दोस्तों और शिक्षकों से है।

* * *

लेव तोल्स्तोय, 'कज्ज़ाक', पृष्ठ-संख्या २७९

'कज्ज़ाक' (१८६२), यह लेव तोल्स्तोय (१८२८-१९१०) की अत्यधिक काव्यमयी रचना है।

कहानी का नायक है ओलेनिन। वह कुलीन है। कुलीनों के निठल्ले और बेकार के जीवन से उसे बहुत निराशा होती है। वह खुशी और आज़ादी की खोज में काकेशिया जा पहुंचता है। ओलेनिन सदा के लिए कज्ज़ाकों के बीच रहने की सोचता है। वह चाहता है कि वहीं एक घर बना ले और सुन्दरी मर्यान्का से शादी कर ले।

मगर गर्वीली मर्यान्का उसे ठुकरा देती है। ओलेनिन के व्यवहार-आचरण से कज्ज़ाक बुरी तरह चिढ़ जाते हैं, तिलमिला उठते हैं। 'भगवान की सारी सुखी दुनिया' में वह अजनबी और अनजाना-सा ही रह जाता है।

* * *